प्रकाशकीय वक्तव्य

बन्धुओ ! इस कार्यालय द्वारा जिनवाणी मालाका प्रचार करनेके लिये घर २ में "जिनवाणी संग्रह" का रखना अत्यन्त आवश्यक होने लगा है इस अन्य प्रकाशकोंकी अपेक्षा अपने सम्माननीय ग्राहकोंको जैसा वे चाहते हैं बराबर सुविधा देते रहे हैं, यही कारण है कि आज सिर्फ ५ वर्षोंमें यह छठवीं आवृत्ति करानी पड़ी। छपाई और कागजके लिये यह कार्यालय सदा ध्यान देता रहा है और भविष्यमें भी देता रहेगा।

अन्तमें निवेदन है कि दृष्टि दोषसे जो कुछ अशुद्धियां रह गई हों उनके लिये पाठक क्षमा करेंगे।

विनीत—

विषय सूची।

पहला अध्याय

दूसरा अध्याय

तीसरा अध्याय

१

भारतवर्षमें

दिगम्बर धर्म सम्बन्धी

उत्तमोत्तम रंगीन चित्रोंको प्रकाशित

करनेवाला

जिनवाणी प्रचारक कार्य्यालय कलकत्ता

—की है—

चित्र-सूची देखें

१ सम्मेद शिखरजी	॥)	९ सम्राट् चन्द्रगुप्त	॥)
२ संसार दर्शन	।=)	१० पावापुरी क्षेत्र	।=)
३ चम्पापुरी क्षेत्र	।=)	११ सीताका अग्निकुण्ड	॥)
४ भारतके १६ स्वप्न	॥)	१२ गिरनारजी क्षेत्र	।=)
५ षट्लेश्या दर्शन	।=)	१३ आचार्य शांतिसागर	॥)
६ मुनिदर्शन	।)	१४ आचार्य संघ दर्शन	=)
७ भीष्मपरीषह	॥)	१५ तीर्थंकर चित्रावली	॥)
८ जैन चित्रावली	॥)	१६ कर्म चित्रावली	।=)

नोट—बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाकर देखें।

श्रीपरमात्मने नमः ।

पहला अध्याय ।

१—णमोकार मंत्र ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।

इस णमोकार मन्त्रमें पाँच पद, पैंतीस अक्षर, अट्ठावन मात्राय हैं ॥

२—णमोकार मंत्रका माहात्म्य ।

(प० सतीशचन्द्रजी न्यायतीर्थ)

णमोकार है मंत्र सर्व पापोंका हर्ता ।
मङ्गल सबसे प्रथम यही शुचि ज्ञान सुकर्ता ॥
संसार सार है मन्त्र जगतमें अनुपम भाई ।
सर्व पाप अरिनाश मंत्र सबको सुखदाई ॥ १ ॥
संसार छेदके लिये मन्त्र है सर्व प्रधाना ।
विषको अमृत करे जगतने यह सब माना ।
कर्मनाश कर ऋद्धि सिद्धि शिव सुखका दाता ॥
मत्र प्रथम जिन मंत्र सदा तू क्यों नहिं ध्याता ॥ २ ॥

सुर सम्पत्ति प्रधान मुक्ति लक्ष्मी भी होती।
सर्व विपत्ति विनाश हमको क्योंकी होती॥
पशु पक्षी नर नारि स्वपद को धारण करते।
काम, मान सम्मान और सुख सम्पति भरते॥ ३॥
जीवन्धर ने स्वामि एक श्वान करुणा धारी।
कुत्ते को दे मन्त्र शीघ्र गति सभी सुधारी॥
मन्त्र प्रभाव स्वर्गमें जाकर सब सुख पाये।
ध्यावें जो मन बसे सब सुख हों मन भाये॥ ४॥

३—पञ्च परमेष्ठीके नाम।

अरहंत सिद्ध, आचार्य उपाध्याय, सर्व साधु।
ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा। ओं नमः सिद्धेभ्यः॥
नोट—अ सि आ उ सा नाम पञ्चपरमेष्ठीका है।
ॐ में पञ्च परमेष्ठीके नाम व २४ तीर्थंकरोंके नाम गर्भित हैं।

४—चौबीस तीर्थकरों के नाम

१ ऋषभनाथ	२ अजितनाथ,	३ सम्भवनाथ,
४ अभिनन्दननाथ	५ सुमतिनाथ	६ पद्मप्रभ
७ सुपार्श्वनाथ	८ चन्द्रप्रभ	९ पुष्पदंत
१० शीतलनाथ	११ श्रेयांसनाथ	१२ वासुपूज्य
१३ विमलनाथ	१४ अनन्तनाथ	१५ धर्मनाथ
१६ शान्तिनाथ,	१७ कुन्थुनाथ,	१८ अरहनाथ
१९ मल्लिनाथ	२० मुनिसुव्रतनाथ	२१ नमिनाथ
२२ नेमिनाथ	२३ पार्श्वनाथ	२४ वर्द्धमान।

५—दर्शनपाठ ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्व साहूण ॥ १ ॥

मंदिरजीकी वेदीगृहमें प्रवेश करते ही "ॐ जय जय जय निसहि निसहि निसहि" इस प्रकार उच्चारण करके उपर्युक्त महामंत्रका ६ वार पाठ करे तत्पश्चात्—

चत्तारि मंगलं, अरहन्त मगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहन्तलोगुत्तमा सिद्धलोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ॥ २ ॥ चत्तारि सरण पव्वज्जामि, अरहन्त सरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहु सरण पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॐ ह्रौं ह्रौं स्वाहा ॥

वर्त्तमान चौबीस तीर्थंकरोंके नाम ।

श्रीऋषभ १ अजित २ संभव ३ अभिनन्दन ४ सुमति॰ ५ पद्मप्रभः ६ सुपार्श्व॰ ७ चन्द्रप्रभ॰ ८ पुष्पदत. ९ शीतलः १० श्रेयाँसः ११ वासुपूज्यः १२ विमलः १३ अनन्तः १४ धर्मः १५ शांतिः १६ कुन्थुः १७ अर॰ १८ मल्लि. १९ मुनिसुव्रत. २० नमिः २१ नेमि॰ २२ पार्श्वनाथ. २३ महावीर २४ इति वर्तमानकाल सम्बन्धि [illegible]विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमोनम ।

अद्य मे सफल जन्म, नेत्रे च सफले मम । त्वामद्राक्षं यतो देव, हेतुमक्षयसम्पद.॥ १ ॥ अद्य संसारगंभीरपारावार सुदुस्तर॰ । सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥ अद्य मे क्षालितंगात्र

सुर सम्पति प्रधान मुक्ति लक्ष्मी भी होती ।
सर्व विपत्ति विनाश ज्ञानकी ज्योती होती॥
पशु पक्षी नर नारि स्मरण जो धारण करते ।
नाम, मान सम्मान और सुख सम्पति भरते ॥ ३ ॥
जीवन्धर ने स्वामि एक श्वान करुणा धारी ।
कुत्ते को है मन्त्र शीघ्र गति सको सुधारी ॥
मन्त्र प्रभाव स्वर्गमें जाकर सब सुख पाये ।
ध्याये जो मन उसे सर्व सुख हों मन भाये ॥ ४ ॥

३—पञ्च परमेष्ठीके नाम ।

अर्हंत सिद्ध, आचार्य उपाध्याय सर्व साधु ।
ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा । ओं नमः सिद्धेभ्यः ॥
नोट—अ सि आ उ सा नाम पञ्चपरमेष्ठीका है ।
ॐ में पञ्च परमेष्ठीके नाम व २४ तीर्थंकरोंके नाम गर्भित हैं ।

४—चोबीस तीर्थकरों के नाम

१ ऋषभनाथ २ अजितनाथ, ३ सम्भवनाथ
४ अभिनन्दननाथ ५ सुमतिनाथ ६ पद्मप्रभ
७ सुपार्श्वनाथ, ८ चन्द्रप्रभ ९ पुष्पदंत
१० शीतलनाथ ११ श्रेयांसनाथ १२ वासुपूज्य
१३ विमलनाथ १४ अनन्तनाथ १५ धर्मनाथ
१६ शांतिनाथ १७ कुन्थुनाथ, १८ अरहनाथ
१९ मल्लिनाथ २० मुनिसुव्रतनाथ २१ नमिनाथ
२२ नेमिनाथ २३ पार्श्वनाथ २४ वर्द्धमान ।

५—दर्शनपाठ ।

णमो अरहताण, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्व साहूण ॥ १ ॥

मंदिरजीकी वेदीगृहमें प्रवेश करते ही "ॐ जय जय जय नि:सहि नि सहि नि सहि" इस प्रकार उच्चारण करके उपर्युक्त महामंत्रका ६ वार पाठ करे तत्पश्चात्—

चत्तारि मगल, अरहन्त मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहन्तलोगुत्तमा सिद्धलोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा ॥ २ ॥ चत्तारि सरण पव्वज्जामि, अरहन्त सरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहु सरण पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ॐ ह्रौं ह्रौं स्वाहा ॥

वर्त्तमान चौबीस तीर्थंकरोंके नाम ।

श्रीऋषभः १ अजित: २ संभव: ३ अभिनन्दनः ४ सुमतिः ५ पद्मप्रभः ६ सुपार्श्वः ७ चन्द्रप्रभः ८ पुष्पदत: ९ शीतलः १० श्रेयाँसः ११ वासुपूज्यः १२ विमलः १३ अनन्तः १४ धर्मः १५ शांतिः १६ कुन्थुः १७ अरः १८ मल्लि. १९ मुनिसुव्रत. २० नमिः २१ नेमिः २२ पार्श्वनाथ: २३ महावीर: २४ इति वर्तमानकाल सम्बन्धि चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमोनमः ।

अद्य मे सफलं जन्म, नेत्रे च सफले मम । त्वामद्राक्षं यतो देव, हेतुमक्षयसम्पद: ॥ १ ॥ अद्य संसारगंभीरपारावारः सुदुस्तर: । सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥ अद्य मे क्षालितगात्र

मैत्रे च विमले कृते। स्नातोऽहं धर्म तीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ३ ॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम्। संसारार्णवतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥ अद्य कर्माष्टकज्वालं विधूतं सकषायकम्। दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥ अद्य सौम्या ग्रहाःसर्वाः शुभाश्चैकादशस्थिताः। नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः। सुखसङ्गं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ७ ॥ अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम्। सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥ अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञान दिवाकरः। उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥ अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः। भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥ चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने। परमात्मप्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥११॥ अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम। तस्मात्कारुण्य भावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥१२॥ नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये। वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥१३॥ जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने। सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु भवे भवे ॥१४॥ जिनधर्मविनिर्मुक्तो मा भव चक्रवर्त्यपि। स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासितः ॥१५॥

इस प्रकार बोलकर साष्टांग नमस्कार करना चाहिये। नमस्कारके पश्चात् पूजनके लिये चावल चढ़ाना हो तो नीचे लिखा श्लोक तथा मन्त्र पढ़कर चढ़ावे।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्य तरीन्सुभक्त्या।
दीर्घाक्षताङ्गैर्धवलाक्षतौघैर्जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन्यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं अक्षयपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योअक्षतान् । निर्वपामि ।

यदि पुष्पोंसे पूजन करना हो तो नीचे लिखा श्लोक पढ़े—

विनीतभव्याब्जविबोधसूर्यान् वर्यान् सुचर्याकथनैकधूर्यान् ।
कुन्दारविन्दप्रमुखैःप्रसूनै जिनेन्द्र सिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥२॥

ॐ ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय देवशास्त्रगुरुभ्यः पुष्प निर्वपामि

यदि किसीको लौंग, बदाम, इलायची या कोई प्रासुक हरा फल चढाना हो तो, नीचे लिखा श्लोक और मन्त्र पढ़कर चढ़ावे।

क्षुभ्यद्विलुभ्यन्मनसाऽप्यगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान्
फलैरलं मोक्षफलाभिसारै जिनेन्द्रसिद्धातयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं मोक्षफलप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्य· फलं निर्वपामि० ॥

यदि किसीको अर्घ चढ़ाना हो, तो नीचे लिखा श्लोक पढ़े ।

सद्वारिगन्धाक्षतपुष्पजातै नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।
फलै विचित्रैर्घनपुण्ययोग्यान् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं अनर्घ्यपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घं ।

इस प्रकारके द्रव्योंमेंसे जो द्रव्य हो, उसी द्रव्यका श्लोक व मन्त्र पढ़कर वह द्रव्य चढ़ाना चाहिये । तत्पश्चात् नीचे लिखी दोनों स्तुतिया अथवा दोनोंमें से कोई एक स्तुति अवश्य पढ़नी चाहिये ।

६—दौलतरामकृत स्तुति ।

दोहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्दरसलीन ।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरिरजरहसविहीन ॥

जय वीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको हरनसूर ॥ जय ज्ञान अनन्तानन्तधार । दृग सुख वीरजमण्डित अपार ॥ १ ॥ जय

परमशांति मुद्रा समेत। भविजनको निज अनुभूति हेत॥ भवि
भागनवश जोगे वशाय। तुम धुनि ह्वै सुनि विभ्रम नशाय॥२॥
तुम गुण चिन्तत निज परविवेक। प्रगटै, विघटै आपद अनेक॥
तुम जगभूषण दूषण वियुक्त। सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त॥३॥
अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप। परमात्म परमपावन अनूप॥ शुभ
अशुभ विभाव अभाव कीन। स्वाभाविक परिणतिमय अछीन॥४॥
अष्टादशदोष विमुक्त धीर। स्वचतुष्टयमय राजत गंभीर॥ मुनि
गणधरादि सेवत महन्त। नवकेवल लब्धिरमा धरन्त॥५॥
तुम शासन सेय अमेय जीव। शिव गये जाहिं जैहैं सदीव॥ भव
सागरमें दुख छारवारि। तारनको और न आप टारि॥६॥ यह
लखि निजदुख गदहरणकाज। तुमही निमित्त कारण इलाज॥
जाने तातें मैं शरण आय। उचरों निज दुख जो चिर लहाय॥७॥
मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप। अपनाये विधिफल पुण्य-पाप॥
निजको परको करता पिछान। परमें अनिष्टता इष्ट ठान॥८॥
आकुलित भयो अज्ञान धारि। ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि॥
तन परिणतिमें आपो चितारि। कबहू न अनुभवो स्वपदसार॥९॥
तुमको बिन जाने जो कलेश। पाये सो तुम जानत जिनेश॥ पशु
नारक नर सुरगति मंझार। भव धर धर मर्यो अनन्त बार॥१०॥
अब काललब्धि बलतें दयाल। तुम दर्शन पाय भयो खुशाल॥ मन
शान्त भयो मिट सकलद्वंद। चाख्यो स्वातमरस दुखनिकन्द॥११॥
तातें अब ऐसी करहु नाथ। बिछुरै न कभी तुव चरण साथ॥
तुम गुणगणको नहिं छेव देव। जग तारनको तुव विरद एव॥१२॥
आतमके अहित विषय कषाय। इनमें मेरी परिणति न जाय॥

मैं रहूं आपमें आप लीन। सो करो होहुं ज्यों निजाधीन ॥ २३ ॥ मेरे न चाह कछु और ईश। रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ कारजके कारण सु आप। शिव करहु हरहु मम मोहताप ॥ १४ ॥ शशि शांतकरन तपहरन हेत। स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पीयूष ज्यों रोग जाय। त्यों तुम अनुभवतें भव नशाय ॥ १५ ॥ त्रिभुवन तिहुंकाल मंझार कोय। नहिं तुम बिन निज सुखदाय होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज। दुखजलधि उतारन तुम जिहाज ॥ १६ ॥

दोहा—तुमगुणगणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार।
'दौल' स्वल्पमति किम कहैं, नमूं त्रियोग संभार ॥

७—बुधजनकृत स्तुति।

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरण आयो शरणजी। यो विरद आप निहार स्वामी मेट जामन मरनजी ॥ तुम ना पिछान्या आन-मान्या, देव विविध प्रकारजी। या बुद्धिसेती निज न जाण्या, भ्रम गिण्या हितकारजी ॥ १ ॥ भवविकट वनमें करम वैरी, ज्ञानधन मेरो हरयो। तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्टगति धरतो फिरयो ॥ धन घडी यो धन दिवस योही, धन जनम मेरो भयो। अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लख लयो ॥ २ ॥ छवि वीतरागी नगनमुद्रा, दृष्टि नासापै धरैं। वसुप्रातिहार्य अनन्त गुणयुत, कोटि रविछविको हरैं ॥ मिटगयो तिमिर मिथ्यात मेरो, उदयरवि आतम भयो। मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रङ्क चिन्तामणि लयो ॥३॥ मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊं तव चरनजी। सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनो तारन तरन जी ॥ जाचूं नहीं सुरवास पुनि

नरराज परिजन साथजी । "बुध" जाचहुं तुम भक्ति भवभव, दीजिये शिवनाथजी ॥ ४ ॥

इसप्रकार एक या दोनों स्तुति पढ़कर पुनः साष्टांग नमस्कार करना चाहिये । तत्पश्चात् नीचे लिखा श्लोक पढ़कर गंधोदक मस्तकपर तथा हृदयादि उत्तम अङ्गोंमें लगाना चाहिये ।

निर्मलं निर्मलीकरणं पवित्रं पापनाशनम् ।
जिनगन्धोदकं वंदे अष्टकर्मविनाशकम् ॥ १ ॥

यदि भाषाका प्रेमी हो तो यह दोहा पढ़कर लेनी चाहिये ।

दोहा—श्रीजिनवरकी आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।
भवभवके पातक कटैं, दुःख दूर हो जाय ॥ १ ॥

तत्पश्चात् नीचे लिखे दो अथवा एक कवित्त पढ़कर शास्त्र जीको साष्टांग नमस्कार करके उनको खुलना चाहिये । अथवा थोड़ी बहुत किसी भी शास्त्रकी स्वाध्याय करना चाहिये ।

८—जिनवाणी माताकी स्तुति ।

वीरहिमाचलतें निकसी, गुरुगौतमके मुख कुंड ढरी है । मोह महाचल भेद चली जगकी जड़ता तप दूर करी है ॥ ज्ञानपयोनिधिमांहि रली बहुभङ्ग तरंगनिसों उछरी है । ता शुचि शारद गंगनदी प्रति मैं अंजुलीकर शीश धरी है ॥ १ ॥ या जगमन्दिरमें अनिवार अज्ञान अन्धेर छयो अति भारी । श्रीजिनकी धुनि दीपशिखासम, जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥ तो किह भांति पदारथ पांति कहां लहते रहते अविचारी । या विधि संत कहैं धनि हैं धनि हैं जिन बैन बड़े उपकारी ॥ २ ॥

रात्रिको भी इसी प्रकार दर्शन करके तत्पश्चात् दीप-धूपसे आरती करनी चाहिये।

६—जिनदर्शन।

दोहा—दर्शन श्रीजिनदेवका नाशक है सब पाप। दर्शन सुर गतिदाय हैं, साधन शिव सुख आप ॥ १ ॥ जिनदर्शन गुरुवंदना इनसे अघ क्षय होय। यथा छिद्रयुत कर विषै चिर तिष्टै ना तोय ॥२॥ वीतराग मुख दर्शियो पद्मप्रभा सम लाल। जन्म जन्म कृत पाप भी, दर्शन नाशे हाल ॥ ३ ॥ जिन दर्शन रवि सारखा, होय जगत तम नाश। विकशित चित्त सरोज लख, करता अर्थ प्रकाश ॥४॥ धर्मामृतको वृष्टिको इन्दु दर्श जिनराय। जन्म ज्वलन नाशे बढ़े सुख सागर अधिकाय ॥ ५ ॥ सप्त तत्व दरशेंग्रहे वसुगुण सम्यक सार, शान्ति दिगम्बर रूप जिन दर्शि नमों बहु वार ॥६॥ चेतनरूप जिनेश किय आतम तत्व परकाश। ऐसे श्री सिद्धान्तको नित्य नमों सुख आश ॥ ७ ॥ अन्य शरण वांछौ नहीं तुम्हीं शरण स्वयमेव। यासे करुणाभाव धर रखो शरण जिनदेव ॥ ८ ॥ त्रिजगतमें इस जीवको तारणहार न कोय। वीतराग वरदेव बिन भया न आगे होय ॥ ९ ॥ श्रीजिन भक्ति सदा मिलो प्रतिदिन भव-भव माहिं। जबतक जगवासी रहों अन्तर वांछो नाहिं ॥ १० ॥ बिन जिन वृष शिव हो नहीं चाहे हो चक्रीश। धनी दरिद्री होत सब जिन वृषसे शिव ईश ॥ ११ ॥ जन्म जन्म कृत पाप भव कोटि उपार्जा होय। जन्म जरादिक मूलसे जिन वन्दन क्षय होय ॥१२॥ यह अनूप महिमा लखी जिन दर्शनको व्यक्त। यासे पद शरणा लिया नाथूराम जिन भक्त ॥१३॥ जिन दर्शन लखि संस्कृत भाषा

किया क्षमाय। भव्य जीव निज उर धरो यह भव भय सुखदाय ॥१४॥ इति॥

१०—भक्तामर-स्तोत्र।

वसन्ततिलका वृत्तम्।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्। सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादावालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥ १॥ यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधादुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः। स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥ २॥ बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम्। बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्बमन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्॥ ३॥ वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र शशाङ्ककान्तान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या। कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्रं को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम्॥ ४॥ सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः। प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम्॥ ५॥ अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्। यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतु॥ ६॥ त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम्। आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम्॥ ७॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेदमारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात्। चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिन्दुः॥८॥ आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं

त्वत्संकथापि जगता दुरितानि हन्ति। दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥ ९ ॥ नात्यद्भुत भुवन भूषण भूतनाथ भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्त । तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा भूत्याश्रित य इह नात्मसम करोति ॥१०॥ दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीय नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्यचक्षुः पीत्वा पय. शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धो. क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क इच्छेत् ॥११॥ यैःशान्तरागरुचिभि. परमाणुभिस्त्वंनिर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत ! तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां यत्तेसमानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥ वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम्। बिम्बं कलंकमलिनं क्व निशाकरस्य यद्वासरे भवति पाण्डुपलाश-कल्पम् ॥१३॥ सम्पूर्णमण्डलशशांककलाकलाप शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तवलङ्घयन्ति।ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथ मेकं कस्तान्निवारयति सञ्चरतो यथेष्टम् ॥१४॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभिर्नीत मनागपि मनो न विकारमार्गम्। कल्पान्तकालमरुता चलिताचलेन किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥ निर्धूमवर्त्तिरपवर्जिततैलपूर. कृत्स्नं जगत्त्रय मिदं प्रकटीकरोषि। गम्यो नजातु मरुता चलिताचलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाश ॥१६॥ नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्य· स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति। नाम्भोधरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासिमुनीन्द्र लोके ॥१७॥ नित्योदय दलितमोहमहान्धकार गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम्। विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ॥१८॥ किं शर्वरीषु शशिनान्हि विवस्वता वा युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तम·सु नाथ। निष्प-

ष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥१९॥
ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु
तेजोमहामणिषु याति यथा महत्त्वं, नैवं तु काचशकले किरणा
कुलेऽपि॥२०॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि
तोषमेति। किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति
नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥ स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता। सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र
रश्मिं प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥ त्वामामनन्ति मुन
यः परमं पुमांसमादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात्। त्वामेव सम्यगु
पलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः
॥२३॥ त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वरमनन्तम
नङ्गकेतुम्। योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति
सन्तः ॥२४॥ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्त्वं शङ्करोऽसि भुव
नत्रयशङ्करत्वात्। धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद्व्यक्तं त्वमे-
व भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि॥ २५॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ!
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय। तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशोषणाय ॥२६॥को विस्मयोऽत्र यदि नाम
गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश। दोषैरुपात्तविविधाश्रय
जातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि॥२७॥उच्चैरशोक
तरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं भवतो नितान्तम्। स्पष्टोल्लस
त्किरणमस्ततमोवितानं बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति॥२८। सिंहा
सने मणिमयूखशिखाविचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः

॥२६॥ कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कान्तम्। उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधारमुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥ छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्तमुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकर प्रतापम्। मुक्ताफलप्रकरजाल विवृद्धशोभं प्रख्यापय-त्त्रिजगत परमेश्वरत्वम् ॥३१॥गम्भीरताररवपूरितदिग्विभागस्त्रैलो-क्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः। सद्धर्मराजजयघोषणघोषकः सन् खेदु-न्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥ मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजा-तसन्तानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा। गन्धोदबिन्दु शुभमन्दमरुत्प्रया ता दिव्या दिवः पतति ते वयसां ततिर्वा ।३३। शुम्भत्प्रभावलयभूरि विभा विभोस्ते लोकत्रये द्यु तिमतां द्यु तिमाक्षिपन्ति। प्रोद्यद्दिवाकर निरन्तर भूरि संख्या दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्याम् ॥३४॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटुस्त्रि-लोक्याः दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्वभाषास्वभावपरिणामगुणै प्रयोज्यः ॥३५॥ उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ती पर्यु ल्लसन्नखमयूख-शिखाभिरामौ। पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्रधत्तः पद्मानि तत्र वि-बुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र धर्मो-पदेशनविधौ न तथा परस्य। यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा तादृक्कु तो ग्रहगणस्य विकासिनोऽपि ।।३७॥श्च्योतन्मदाविलविलो-लकपोलमूलमत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम्। ऐरावताभमिभमुद्धतमा पतन्तं दृष्ट्वा भयं भवतिनो भवदाश्रितानाम् ।३८।भिन्नेभकुम्भगलदु-ज्ज्वलशोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभाग। बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोपि नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥३६॥ कल्पान्त-कालपवनोद्धतवह्निकल्पंदावानलज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम्। विश्वं

निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥१९॥
ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु
तेजोमहामणिषु याति यथा महत्त्वं, नैवं तु काचशकले किरणा
कुलेऽपि॥२०॥ मन्येवरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि
तोषमेति। किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति
नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥ स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता। सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र
रश्मिं प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥ त्वामामनन्ति मुन
यः परमं पुमांसमादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात्। त्वामेव सम्यगु
पलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः
॥२३॥ त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमन
ङ्गकेतुम्। योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति
सन्तः ॥२४॥ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात् त्वं शङ्करोऽसि भुव
नत्रयशङ्करत्वात्। धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानात् व्यक्तं त्वमे
व भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ।
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय। तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशोषणाय ॥२६॥ को विस्मयोऽत्र यदि नाम
गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश। दोषैरुपात्तविविधाश्रय
जातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥ उच्चैरशोक
तरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं भवतो नितान्तम्। स्पष्टोल्लस
त्किरणमस्ततमोवितानं बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥२८॥ सिंहा
सने मणिमयूखशिखाविचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः

॥२६॥ कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कान्तम्। उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधारमुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥ छत्रत्रय तव विभाति शशाङ्ककान्तमुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकर प्रतापम्। मुक्ताफलप्रकरजाल विवृद्धशोभं प्रख्यापयत्त्रिजगत परमेश्वरत्वम् ॥३१॥गम्भीरतारवपूरितदिग्विभागस्त्रैलोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्ष.। सद्धर्मराजजयघोषणघोषक सन् खेदुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥ मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजातसन्तानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा। गन्धोदविन्दु शुभमन्दमरुत्प्रयाता दिव्या दिवः पतति ते वयसां ततिर्वा ।३३। शुम्भत्प्रभावलयभूरि विभा विभोस्ते लोकत्रये द्यु तिमतां द्यु तिमाक्षिपन्ति। प्रोद्यद्दिवाकर निरन्तर भूरि संख्या दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्याम् ॥३४॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्याः दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्वभाषास्वभावपरिणामगुणै. प्रयोज्यः ॥३५॥ उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ती पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ। पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥ इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य। यादृक्प्रभा दिनकृत. प्रहतान्धकारा तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकासिनोऽपि ॥३७॥श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूलमत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम्। ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ।३८।भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वलशोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभाग। बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोपि नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥३६॥ कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पंदावानलज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम्। विश्वं

जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम्
॥४०॥ रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फण
मापतन्तम् । आक्रामति क्रमयुगेण निरस्तशङ्कस्त्वन्नामनागदमनी
हृदि यस्य पुंसः ॥ ४१ ॥ वल्गत्तुरंगगजगर्जितभीमनादमाजौ बलं
बलवतामपि भूपतीनाम् । उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं त्वत्कीर्तनात्तम
इवाशु भिदामुपैति॥४२॥ कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाहवेगावतार-
तरणातुरयोधभीमे । युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्त्वत्पादपङ्कज
वनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥ अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपाठीन
पीठभयदोल्बणवाडवाग्नौ । रंगत्तरंगशिखरस्थितयानपात्रास्त्रासं वि
हाय भवतः स्मरणाद्व्रजन्ति ॥४४॥ उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः
शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः । त्वत्पादपंकजरजोऽमृतदिग्धदे
हा मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥४५॥ आपादकण्ठमुरुशृङ्-
खलवेष्टिताङ्गा गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः । त्वन्नाममन्त्रमनिशं
मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥ ४६ ॥
मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहि संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव यस्तावकं स्तवमिमं मतिमान
धीते ॥ ४७ ॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां भक्त्या मया
विविधवर्णविचित्रपुष्पाम् । धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं तं
मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥ ४८ ॥

॥ इति श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितं भक्तामरस्तोत्रं ॥

११—भाषा भक्तामर।

आदिपुरुष आदीश जिन आदि सुविधिकरतार।
धरमधुरंधर परमगुरु नमो आदि अवतार ॥ १ ॥

भक्तामरके प्रभावसे ४८ ताले टूट गये

सुरनत मुकुट रतन छवि करैं। म तर पापतिमिर सब हरैं॥ जिनपद वंदों मन वचकाय। भवजलपतित-उधरनसहाय॥ श्रुति पारग इन्द्रादिक देव। जाकी थुति कीनी कर सेव॥ शब्द मनोहर अर्थ विशाल। तिस प्रभुकी वरनों गुनमाल॥ विबुधवंद्यपद मैं मतिहीन। होय निलज्ज थुति-मनसा कीन। जलप्रतिबिंब बुधको गहै। शशिमंडल बालक ही चहै॥ गुनसमुद्र तुम गुन अविकार। कहत न सुरगुरु पावैं पार॥ प्रलयपवनउद्धत जलजन्तु। जलधि तिरैको भुजबलवन्तु॥ सो मैं शक्तिहीन थुतिकरूं। भक्तिभाववश कछु नहिं डरूं॥ ज्यों मृग निज सुत पालन हेत। मृगपति सन्मुख जाय अचेत॥ मैं शठ सुधीहि हंसनको धाम। मुझ तव भक्ति बुलावै राम॥ ज्यों पिक अम्बकलीपरभाव। मधुऋतु मधुर करै आराव॥ तुम जसजंपत जन छिन माहिं। जनम जनमके पाप नशाहिं॥ ज्यों रवि उगै फटै तत्काल। अलिवत नील निशातमजाल॥ तव प्रभाव तैं कहूं विचार। होसी यह थुति जनमन हार॥ ज्यों जल कमल पत्र पै परै। मुक्ताफलकी दुति विस्तरै॥ तुम गुन महिमा हतदुखदोष सो तो दूर रहो सुखपोष॥ पाप विनाशक है तुम नाम कमल विकाशी ज्यों रविधाम॥ नहिं अचंभ जो होहिं तुरन्त। तुमसे तुमगुण वरणत संत॥ जो अधीनको आप समान। करै न सो निंदित धनवान॥ इकटक जन तुमको अविलोय॥ और विषै रति करै न सोय॥ को करि क्षीरजलधिजलपान। क्षीरनीर पीवैं मतिमान॥ प्रभु तुम वीतराग गुन लीन। जिनपरमाणु देह तुम कीन॥ हैं तितने ही ते परमानु। यातैं तुम सम रूप न आन॥ कहं तुममुख अनुपम अविकार। सुरनरनागनयनमनहार॥ कहाँ

चन्द्रमण्डल सकलङ्क । दिनमें ढाक पत्र समरंक ॥ पूरनचन्द्र ज्योति छविवंत । तुमगुन तीनजगत लंघंत ॥ एक नाथ त्रिभुवन अधार । तिनविच रतको करै निवार ॥ जो सुरतिय विभ्रम आरम्भ । मन न डिग्यो तुम तौ न अचम्भ ॥ अचल चलावै प्रलय समीर । मेरु शिखर डगमगे न धीर ॥ धूमरहित बाती गतनेह । परकाशे त्रिभुवन घर येह ॥ बात गम्य नाहीं परचण्ड । अपर दीप तुम बलो अखण्ड । छिपहु न लुपहु राहुकी छाहि । जग परकाशक हो छिन माहि ॥ घन अनवर्त दाह विनिवार । रवितैं अधिक धरो गुणसार सदा उदित विदलिततममोह । विघटित मेघ राहु अविरोह ॥ तुम मुख कमल अपूरवचन्द । जगत विकाशी जोति अमंद ॥ निशदिन शशि रविको नहिं काम । तुम मुखचन्द हरै तम धाम ॥ जो स्वभावतैं उपजै नाज । सजल मेघ तो कौनहु काज ॥ जो सुबोध सोहै तुम माहि । हरिहर आदिकमें सो नाहिं ॥ जो द्युति महारतनमें होय । काचखण्ड पावै नहिं सोय ।

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया, स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया ।कछू न तोहि देखके जहां तुही विशेखिया मनोग चित्तचोर और भूलहू न देखिया ॥ अनेक पुत्र वंतिनी नितंविनी सपूत हैं, न तो समान पुत्र और माततै प्रसूत हैं । दिशा धरन्त तारिका अनेक कोटिको गिनै, दिनेश तेजावन्त एक पूर्वही दिशा जनै ॥ पुरान हो पुमान हो पुनीत पुन्यवान हो, कहै मुनीश अन्धकारनाशको सुभान हो ॥ महन्त तोहि जानके न होय वश्य कालके, न और मोहि मोखपथ देय तोहि टालके ॥ अनंत नित्य चित्तकी अगम्य रम्य आदि हो, असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो

समाधि हो ॥ महेश कामकतु याग ईश योग नाम हो, अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संत नाम हो। तुम्हीं जिनेश बुद्ध हो सुबुद्धिके प्रमानतें, तुही जिनेश शंकरो जगत्रयी विधानतें ॥ तुहो विधात हैं सही सुमोक्षपन्थ धारतें, नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके विचारतें ॥ नमों करूं जिनेश तोहि आपदा निवार हो, नमों करूं सुभूरि भूमि लोककेि सिंगार हो। नमों करूं भवाब्धिनीर राशिशोषहेतु हो, नमों करूं महेश तोहि मोक्षपन्थ देतु हो।

—तुम जिन पूरणगुनगनभरे। दोष गर्वकरि तुम परिहरे ॥ और देवगण आश्रय पाय। स्वप्न न देखे तुम फिर आय ॥ तरु अशोकतल किरनउदार। तुमतन शोभित है अविकार ॥ मेघ निकट ज्यों तेज फुरन्त। दिनकर दिपे तिमिर निहनन्त ॥ सिंहासन मनिकिरन विचित्र। तापर कंचनवरन पवित्र ॥ तुमतन शोभित किरनविथार। ज्यों उदयाचल रवितमहार। कुन्दपुहुपसितचमर ढरन्त। कनक वरन तुमतन शोभंत ॥ ज्यों सुमेरुतट निर्मल कांति। झरना झरै नीर उमगांति। ऊंचे रहैं सूर दुति लोप। तीन छत्र तुम दिपैं अगोप ॥ तीन लोककी प्रभुता कहैं। मोती झालरसों छवि लहैं। दुंदुभि शब्द गहर गंभीर। चहुंदिशि होय तुम्हारे धीर ॥ त्रिभुवनजन शिवसंगम करै। मानों जय जय रव उच्चरै ॥मंद पवन गंधोदक इष्ट। विविध कल्पतरु पुहुपसुवृष्ट ॥देवकरैं विकसित दल सार। मानों द्विजपंकति अवतार ॥ तुमतन भामंडल जिनचंद सब दुतिवंतकरत हैं मंद ॥ कोटि शंख रवितेज छिपाय। शशिनिर्मल निशि करै अछाय। स्वर्गमोक्षमारगसंकेत। परमधरम उपदेशन हेत ॥ दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध। सबभाषागर्भित हितसाध।

विकसितसुवरनकमलद्युति, नखद्युतिमिल चमकाहिं। तुमपद पदवी जह धरै, तहं सुर कमल रचाहिं। ऐसो महिमा तुम विषै, और धरै नहिं कोय। सूरजमें जो जोत है, नहि तारागण होय॥

षट्पद—मदअवलिप्तकपोल मूल अलिकुल झंकारे। तिनसुन शब्द प्रचण्ड, क्रोध उद्धत अति धारै॥ काल वरन विकराल कालवत सनमुख आवै। ऐरावत सो प्रवल, सकल जनभय उपजावै॥ देखि गयंद न भय करै, तुम पद महिमा लीन। विपति रहित सम्पति सहित वरतैं भक्त अदीन॥ अति मदमत्त गयंद कुम्भथल नखन विदारै। मोती रक्त समेत डारि भूतल सिंगारै॥ वांकी दाढ़ विशाल, वदनमें रसना लोलै। भीम भयानकरूप देखि जन थरहर डोलै। ऐसे मृगपतिपग तले जो नर आयो होय। शरण गहे तुम चरनकी, वाधा करै न सोय॥ प्रलय पवनकर उठी आग जो तास पटंतर। वमैं फुलिंग शिखा, उतंग परजलै निरन्तर॥ जगत समस्त निगल्ल भस्मकर हैगी मानों। तड़ तडाट द्व अनल जोर चहुंदिशा उठानो॥ सो इक छिनमें उपशमैं, नामनीर तुम लेत। होय सरोवर परिनमैं, विकसित कमल समेत।। कोकिलकंठ समान श्याम तन क्रोध जलंता। रक्तनयन फुंकार मारविषकण उगलंता॥ फणको ऊंचो करै वेग ही सनमुख धाया। तव जन होय निशंक देख फणपतिको आया॥ जो चापै निज पांवतैं व्यापै विष न लगार। नागदमनि तुम नामकी है जिनके आधार॥ जिस रनमाहि भयानक शब्द कर रहें तुरङ्गम। घन से गज गर जाहि मत मानों गिरि जंगम॥ अति कोलाहलमाहिं वात जहं नाहिं सुनीजे। राजनको परचंड देख वल धीरज छीजै॥ नाथ

निहारै नामतैं सो छिनमाहि पलाय। ज्यों दिनकर परकाशतैं अन्धकार विनशाय॥ मारै जहाँ गयन्द, कुम्भ हथियार विदारै। उमगै रुधिर प्रवाह, वेग जलसे विस्तारै॥ होय तिरन असमर्थ, महाजोधा बल पूरै। तिस रनमें जिन तोय, भक्त जे हैं नर सूरै॥ दुर्जय अरिकुल जीतके जय पावैं निकलंक। तुम पदपंकज मन बसैं, ते नर सदा निशंक॥ नक्र चक्र मगरादि, मच्छकरि भय उपजावै। जामें बड़वा अग्नि दाहतैं नीर जलावै। पार न पावै जास थाह नहिं लहिये जाकी। गरजै अतिगम्भीर लहरकी गिनति न ताकी॥ सुखसौं तिरैं समुद्रको जे तुमगुन सुमराहिं। लोल कलोलनके शिखर, पार यान ले जाहिं। महा जलोदर रोग, भार पीड़ित नर जे हैं। वात पित्त कफ कुष्ट आदि जो रोग गहै हैं॥ सोचत रहैं उदास नाहिं जीवनकी आशा। अति घिनावनी देह, धरैं दुर्गंधनिवासा॥ तुम पदपंकजधूलको जो लावैं निज अंग। ते नीरोग शरीर लहि, छिनमें होय अनंग॥ पांव कंठतैं जकड़, बांध सांकल अतिभारी। गाढ़ी बेड़ी पैरमाहिं, जिन जांघ विदारी। भूख प्यास चिन्ता शरीर, दुख जे विललाने। शरन नाहिं जिन कोय भूपके बन्दीखाने॥ तुम सुमरत स्वयमेव ही, बन्धन सब खुल जाहिं। छिनमें ते सम्पति लहैं, चिन्ता भय विनसाहिं॥ महामत्त गजराज और मृगराज दवानल। फणपति रण परचण्ड, नीरनिधि रोग महाबल॥ बन्धन ये भय आठ डरपकर मानो नाशै। तुम सुमिरत छिनमाहिं, अभय थानक परकाशै॥ इस अपार संसारमें शरन नाहिं प्रभु कोय। यातैं तुम पदभक्तको भक्ति सहाई होय॥ यह गुनमाल विशाल नाथ तुम गुनन सवारी

विविध वर्णमय पुहुप, गूंथ मैं भक्ति विथारी। जे नर पहिरैं कंठ, भावना मनमें भावैं। मानतुङ्ग ते निजाधीन, शिवलछमी पावैं॥
भाषा भक्तामर कियौ, हेमराज हितहेत। जे नर पढ़ैं सुभावसों, ते पावैं शिवखेत॥ ४८॥

१२—मोक्षशास्त्रम्

(आचार्य श्रीमदुमास्वामिविरचितम्)

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥ २ ॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥ जीवाजीवास्रव-बन्धसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वम् ॥ ४ ॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्त न्न्यासः ॥ ५ ॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाऽधिकरणस्थितिविधानतः ॥ ७ ॥ सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥ आद्ये परोक्षम् ॥ ११ ॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥ मति स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽभिनिबोधइत्यनर्थान्तरम् ॥ १३ ॥ तदिंद्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥ १४ ॥ अवग्रहेहाऽवायधारणाः ॥१५॥ बहुबहुविधक्षिप्राऽनिःसृताऽनुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥ १६ ॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुतंमतिपूर्वं द्व्यनेकद्वादशभेदम्॥२०॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥२१॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ॥२५॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥ २६ ॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनिभाज्या

ति युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मतिश्रुतावधयोविपर्ययश्च
॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैगमसंग्रह
व्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः ॥ ३३ ॥

ज्ञानदर्शनयोस्तत्त्वं नयानां चैव लक्षणम् ।
ज्ञानस्य च प्रमाणत्वमध्यायेऽस्मिन्निरूपितम् ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिकपारि
णामिकौ च ॥१॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥
सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च
॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपंचभेदाः सम्यक्त्वचारित्र सं
यमासंयमाश्च ॥ ५ ॥ गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतास्
सिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः॥६॥जीवभव्याऽभव्यत्वानि
च॥७॥उपयोगो लक्षणम् ॥८॥ सद्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥संसारि
णो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्काऽमनस्काः॥११॥संसारिणस्त्रसस्था
वराः ॥१२॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः॥१३॥ द्वीन्द्रिया
दयस्त्रसाः ॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥१५॥ द्विविधानि ॥१६॥ निर्वृत्यु
पकरणेद्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥१८॥स्पर्शन
रसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि॥१९॥ स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः॥२०॥
श्रुतमनिन्द्रियस्य॥२१॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२२॥कृमिपिपीलिका
भ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि॥२३॥संज्ञिनःसमनस्काः ॥२४॥विग्र
हगतौकर्मयोगः ॥२५॥अनुश्रेणि गतिः॥२६॥अविग्रहाजीवस्य ॥२७॥
विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥ एकसमयाऽविग्रहा
॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः ॥३०॥ सम्मूर्छनगर्भोपपादाजन्म

॥३१॥ सचित्तशीतसंवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥ जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः ॥ ३३ ॥ देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥ शेषाणां सम्मूर्छनम् ॥ ३५ ॥ औदारिकवैक्रियकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥ ३७ ॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक्तैजसात् ॥ ३८ ॥ अनन्तगुणे परे ॥ ३९ ॥ अप्रतीघाते ॥४०॥ अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भसम्मूर्छनजमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४६॥ लब्धिप्रत्ययंच ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥ नारकसम्मूर्छिनो नपुंसकानि ॥ ५० ॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥ ५२ ॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

रत्नशर्करावालुकापंकधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥ १ ॥ तासु त्रिंशत्पंचविंशतिपंचदशदशत्रिपंचोनैकनरकशतसहस्राणि पंचचैव यथाक्रमम् ॥२॥ नारकानित्याऽशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥ ६ ॥ जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥९॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १० ॥

तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिख
रिणो वर्षधरपर्वताः ॥ ११ ॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः
॥ १२ ॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥
पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि
॥ १४ ॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो ह्रदः ॥ १५ ॥
दशयोजनावगाहः ॥ १६ ॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥ १७ ॥ तद्द्विगुण
द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥ १८ ॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृति
कीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपारिषत्काः ॥ १९ ॥
गङ्गासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्ता
सुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयो
र्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥ चतुर्दशनदी-
सहस्रपरिवृता गङ्गासिन्ध्वादयो नद्यः ॥ २३ ॥ भरतः षड्विंशति
पञ्चयोजनशतविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥ २४ ॥
तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥ २५ ॥ उत्तरा
दक्षिणतुल्याः ॥ २६ ॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामु-
त्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥ २७ ॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः
॥ २८ ॥ एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकु
रवकाः ॥ २९ ॥ तथोत्तराः ॥ ३० ॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥ ३१ ॥
भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥ ३२ ॥ द्विर्धा-
तकीखण्डे ॥ ३३ ॥ पुष्करार्द्धे च ॥ ३४ ॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्म
नुष्याः ॥ ३५ ॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥ ३६ ॥ भरतैरावतविदेहाः कर्म
भूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥ ३७ ॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्यो
पमान्तर्मुहूर्ते ॥ ३८ ॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

देवाश्चतुर्णिकाया. ॥ १ ॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्या ॥ २ ॥ दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्य्यन्ताः ॥३॥ इन्द्रसामानिक त्रायस्त्रिंशत्पारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥ त्रायस्त्रिंशल्लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्का ॥ ५ ॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्रा ॥ ६ ॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥ ७ ॥ शेषा स्पर्शरूपशब्दमन. प्रवीचारा ॥ ८ ॥ परेऽप्रवीचारा ॥ ९ ॥ भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तरा किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचा ॥ ११ ॥ ज्योतिष्काः सूर्य्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ तत्कृतः कालविभाग ॥१४॥ वहिरवस्थिता. ॥१५॥ वैमानिका ॥ १६ ॥ कल्पोपपन्ना कल्पातीताश्च ॥ १७ ॥ उपर्युपरि ॥ १८ ॥ सौधर्मैशानसानत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक्र महाशुक्र शतारमहस्रारेष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसुग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्तजयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ १९ ॥ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिका ॥ २० ॥ गतिशरीरपरिग्रहाऽभिमानतो हीना. ॥ २१ ॥ पीतपद्मशुक्लेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्य. कल्पाः ॥ २३ ॥ ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥ २४ ॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥ २५ ॥ विजयादिषु द्विचरमा ॥ २६ ॥ औपपादिकमनुष्येभ्य शेषास्तिर्यग्योनय ॥ २७ ॥ स्थितिरसुरनाग सुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिता ॥ २८ ॥ सौधर्मैशानयो सागरोपमे अधिके ॥ २९ ॥ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः

सप्त ॥३०॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चदशभिरधिकानि तु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ ३२ ॥ अपरापल्योपममधिकम् ॥ ३३ ॥ परतः परतः पूर्वा पूर्वानन्तराः ॥ ३४ ॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥ दशवर्ष सहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६ ॥ भवनेषु च ॥ ३७ ॥ व्यन्तराणां च ॥ ३८ ॥ परापल्योपममधिकम् ॥ ३९ ॥ ज्योतिष्काणां च ॥ ४० ॥ तदष्टभागोऽपरा ॥ ४१ ॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्ष शास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥ जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥ आआकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥ असङ्ख्येयाः प्रदेशाः धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥८॥ आकाशस्यानन्ताः ॥ ९ ॥ सङ्ख्येयासङ्ख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असङ्ख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥ प्रदेशसंहार विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गति स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ॥ १७ ॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥ शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥ सुखदुःखजीवित मरणोपग्रहाश्च ॥२०॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥ २१ ॥ वर्तनाप रिणामक्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥ स्पर्शरसगन्धवर्ण वन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्य स्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छा याऽऽतपोद्योतवन्तश्च ॥२४॥ अणवः स्कन्धाश्च ॥२५॥ भेदसङ्घातेभ्य

उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥२७॥ भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥ सद्द्रव्यलक्षणम् ॥ २९ ॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥ ३० ॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१ ॥ अर्पितानर्पित सिद्धेः ॥ ३२ ॥स्निग्ध-रूक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥ न जघन्यगुणानाम् ॥ ३४ ॥ गुणसाम्ये स-दृशानाम् ॥ ३५ ॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥ ३६ ॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥ ३७ ॥ गुणपर्य्ययवद्द्रव्यम् ॥ ३८ ॥ कालश्च ॥ ३९ ॥ सोऽनन्तसमयः ॥ ४० ॥ द्रव्याश्रया निर्गुणागुणाः ॥४१॥ तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

कायवाङ्मनः कर्म्मयोगः ॥ १ ॥ स आश्रवः ॥ २ ॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिके-र्य्यापथयोः ॥४॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशति संख्याःपूर्वस्य भेदाः ॥ ५ ॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्य विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाऽजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषाय विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रि श्चतुश्चैकशः ॥८॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥ ९ ॥ तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञान-दर्शनावरणयोः ॥ १० ॥ दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्म-परोभयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥ ११ ॥ भूतव्रत्यनुकम्पादान सरागसं-यमादियोग क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥ केवलिश्रुतसङ्घ-धर्म्म देवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥ १३ ॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणा-मश्चारित्रमोहस्य ॥ १४ ॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥ मायातैर्यग्योनस्य ॥ १६ ॥ अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७ ॥

स्वभावमार्दवं च ॥ १८ ॥ निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥ १९ ॥ सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ॥२०॥ सम्यक्त्वं च ॥२१॥ योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥ २२ ॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥ २३ ॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥ तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥ २७ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्ष शास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥ १ ॥ देशसर्वतोऽणुमहती ॥ २ ॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥ ३ ॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पञ्च ॥ ४ ॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पञ्च ॥५॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्माऽविसंवादाः पञ्च ॥६॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पञ्च ॥७॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पञ्च ॥८॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥ ९ ॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि च सत्त्वगुणाधिकक्लिश्यमानाऽविनयेषु ॥११॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥१३॥ असदभिधानमनृतम् ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥ १५ ॥ मैथुनम-

ब्रह्म ॥ १६ ॥ मूर्च्छा परिग्रहः ॥ १७ ॥ निःशल्यो व्रती ॥ १८ ॥ अगार्यनगारश्च ॥ १६ ॥ अणुव्रतोऽगारी ॥ २० ॥ दिग्देशानर्थदण्ड विरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥ मारणान्तिकीं सल्लेखना जोषिता ॥२२॥ शङ्काकांक्षाविचिकित्साऽन्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥ २३ ॥ व्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथा क्रमम् ॥ २४ ॥ वधबन्धच्छेदातिभारारोपणान्न पाननिरोधाः ॥ २५ ॥ मिथ्योपदेश रहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकार मन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥ स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥ २७ ॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीताऽपरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥ २८ ॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्य सुवर्णधनधान्य दासीदासकुप्यप्रमाणाऽतिक्रमाः ॥२६॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्र वृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ॥ ३० ॥ आनयनप्रेष्यप्रयोगशब्दरूपानुपात पुद्गलक्षेपाः ॥ ३१ ॥ कन्दर्पकौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥ ३१ ॥ योगदुःप्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥ अप्रत्यवेक्षिताऽप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३४ ॥ सचित्तसम्बन्धसन्मिश्राभिषवदु पक्वाहाराः ॥३५॥ सचित्तनिक्षेपापिधान परव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ॥ ३६ ॥ जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥ ३७ ॥ अनुग्रहार्थं स्वस्याति सर्गोदानम् ॥ ३८ ॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥ ३६ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्ष शास्त्रे सप्तमोऽध्याय ॥ ७ ॥

मिथ्यादर्शनाविरति प्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥ १ ॥ सक-

पायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥२॥ प्रकृति
स्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥३॥आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमो
हनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥ पञ्चनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्वि च
त्वारिंशद्द्विपञ्चभेदायथा क्रमम् ॥५॥ मतिश्रुतावधिमनः पर्ययकेवला
नाम्॥६॥चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचला
स्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥ सदसद्वेद्ये ॥८॥ दर्शन चारित्रमोहनीयाकषा
यकषायवेदनीयाख्या स्त्रिद्विनवषोडशभेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदु
भयान्यकषायकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुंनपुंसक-
वेदाः अनंतानुबन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः
क्रोधमानमायालोभाः ॥९॥ नारकतैर्यग्योनमानुषदैवानि ॥१०॥ गति-
जातिशरीराङ्गोपाङ्गनिर्माणबन्धनसंघातसंस्थान संहननस्पर्शरसगंध
वर्णानुपूर्व्य गुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वास विहायोगतय
प्रत्येक शरीरत्रससुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्तिसेत
राणि तीर्थकरत्वं च ॥११॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥१२॥ दानलाभभोगोपभोग
वीर्याणाम् ॥१३॥ आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोप
मकोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥ १४ ॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥ १५ ॥
विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥१७॥
अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥ नामगोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥
शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥ २० ॥ विपाकोऽनुभवः ॥२१॥ स यथानाम
॥२२॥ ततश्च निर्जरा ॥२३॥नामप्रत्ययाः सर्वतोयोगविशेषात्सूक्ष्मै
कक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥२४॥ सद्वेद्य
शुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

आस्रवनिरोधः संवरः ॥१॥ स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीषह जयचारित्रैः ॥ २ ॥ तपसा निर्जरा च ॥३॥ सम्यग्योगनिग्रहोगुप्तिः ॥४॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥५॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणिधर्मः ॥ ६ ॥ अनित्याशरणससारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरा लोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्याततत्त्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः॥७॥मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासा शीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाचना लाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाऽज्ञानाऽदर्शनानि ॥ ९॥ सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥१०॥ एकादश जिने ॥११॥बादरसाम्पराये सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ॥१४॥ चारित्र मोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्काराः ॥१५॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतिः ॥१७॥ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्पराययथाख्यातमिति चारित्रम् ॥१८॥ अनशनावमौदर्य्यवृत्तिपरिसङ्ख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यंतप ॥१९॥प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्त्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥२०॥ नवचतुर्दशपञ्चद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥ आलोचनप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥२३॥ आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्ष्यग्लानगणकुलसघसाधुमनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥ वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्यो ॥२६॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमाऽन्तमुहूर्तात् ॥ २७ ॥ आर्त्तरौद्रध-

र्म्यशुक्लानि ॥ २८ ॥ परे मोक्षहेतू ॥ २९ ॥ आर्तममनोज्ञस्य सम्प्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥३०॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥३२॥ निदानं च ॥३३॥ तदविरतदेशविरतप्रमत्तसंयतानाम् ॥३४॥ हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यम् ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥ परे केवलिनः ॥ ३८ ॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥३९॥ त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम् ॥ ४० ॥ एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे ॥ ४१ ॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥ ४२ ॥ वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥ वीचारोऽर्थव्यञ्जनयोगसंक्रान्तिः ॥ ४४ ॥ सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्तमोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जराः ॥४५॥ पुलाकबकुशकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातका निर्ग्रन्थाः ॥४६॥ संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिङ्गलेश्योपपातस्थानविकल्पतः साध्याः ॥४७॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् ॥ १ ॥ बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥ २ ॥ औपशमिकादिभव्यत्वानां च ॥ ३ ॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥६॥ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥ ८ ॥ क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥ ९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यञ्जनसन्धिविवर्जितरेफम्। साधु भिरत्र मम क्षन्तव्यं को न विमुह्यति शास्त्र समुद्रे ॥१॥ दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति। फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनि पुंगवै ॥२॥ तत्त्वार्थसूत्रकर्त्तारं गृध्रपिच्छोपलक्षितम्। वन्दे गणीन्द्र सञ्जातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥ ३ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे अपरनाम मोक्षशास्त्र समाप्तम्।

भगवज्जिनसेनाचार्यकृतं

१३—श्रीजिन सहस्र नाम स्तोत्रम्।

प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरा पतिम्। नाम्नामष्टसहस्रेणनोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ॥१॥ श्रीमान्स्वयम्भूर्वृषभः शंभवः शम्भुरात्मभूः। स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥२॥ विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः। विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनीश्वरः ॥३॥ विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः। विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥४॥ विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः। विश्वदृग्विश्व भूतेशो विश्वज्योति रनीश्वरः ॥ ५ ॥ जिनो जिष्णु रमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः अनन्तचिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥६॥ युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः। परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥७॥ स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः। मोहारिविजयी जेता धर्मचक्रीदयाध्वजः ॥८॥ प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः। ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥९॥ सिद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः। सिद्धः सिद्धांतविद्ध्येयः सिद्धसाध्योजगद्धितः ॥१०॥ सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः। प्रभूष्णु—

तरोऽजय्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥११॥ विभावसुरसंभूष्णुः
स्वयंभूष्णुः पुरातनः । परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥१२॥

इतिश्री मदादि शतम् ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः । पूतात्मा परम
ज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥ १॥ श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः
शुचिः । तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥ अनन्त
दीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः । मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो
भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥ निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिरनामयः ।
अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ४ ॥ अग्रणीर्ग्रामणीर्ने
ता प्रणेता न्यायशास्त्रवित् । शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्म
तीर्थकृत् ॥ ५ ॥ वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः । वृषो वृष
पतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥ ६ ॥ हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भू
तभावनः । प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥ ७ ॥
हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोऽभवः । स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूत
नाथो जगत्प्रभुः ॥ ८ ॥ सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः
सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्व लोकजित् ॥९॥ सुगतिः सुश्रुतः
सुश्रुत् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः । विश्रुतो विश्वतः पादो विश्वशीर्षः
शुचिश्रवाः ॥ १० ॥ सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
भूत भव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥ २ ॥

स्थविष्ठस्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः । स्थेष्ठो गरिष्ठो
बंहिष्ठः श्रेष्ठो निष्ठो गरिष्ठगीः ॥ १ ॥ विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेट्
विश्वभुग्विश्वनायकः । विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजिता
न्तकः ॥२॥ विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन् । विरागो

विरतोसङ्गो विविक्तो वीतमत्सर ॥३॥ विनेयजनताबन्धुर्विलीना शेषकल्मष. । त्रियोगो योगविद्विद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥ क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्ति. शान्तिभाक्सलिलात्मक· । वायुमूर्तिरसङ्गा त्मा वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ॥५॥ सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः । ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञाङ्गममृतं हवि ॥ ६ ॥ व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचल. । सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥७॥ मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तक. । स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वान्त· कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥ ८ ॥ कृती कृतार्थ. सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः । नित्यो मृत्युंजयो मृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥ ९ ॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः । महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वर. ॥ १० ॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्म दमप्रभुः । प्रशमात्मा प्रशांतात्मा पुराणपुरुषोत्तम ॥ ११ ॥

इति स्थविष्ठादिशतम् ॥३॥

महाशोकध्वजोशोकः क. स्रष्टा पद्मविष्टरः । पद्मेश. पद्मसम्भूति· पद्मनाभिरनुत्तर. ॥ १ ॥ पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्य. स्तुत्यः· स्तुतीश्वर· । स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेय· कृतक्रियः ॥ २ ॥ गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्योगणाग्रणी । गुणाकारो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो गुणनायक· ॥३॥ गुणादरी गुणोच्छेदीनिर्गुणः पुण्यगीर्गुणः । शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायक ॥ ४ ॥ अगण्यः पुण्यधीर्गण्य पुण्यकृत्पुण्यशासनः । धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्य निरोधक. ॥ ५ ॥ पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मष· । निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रव ॥६॥ निर्निमेषो निराहारो नि क्रियो निरुपप्लवः । निष्कलङ्को निरस्तैना निर्धूताङ्गो

निरास्रवः ॥ ७ ॥ विशालो विपुलज्योतिरतुलोऽचिन्त्यवैभवः । सुसं
वृतः सुगुप्तात्मा सुभुत्सुनयतत्त्ववित् ॥ ८ ॥ एकविद्यो महाविद्यो
मुनिः परिवृढः पतिः । धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहता
न्तकः ॥ ९ ॥ पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनोगतिः । त्राता
भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥ १० ॥ कविः पुराणपुरुषो
वर्षीयान्वृषभः पुरुः । प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥ ११ ॥

इति श्रीमहादिशतम् ॥४॥

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः । निरक्षः पुण्डरी-
काक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥१॥ सिद्धिदः सिद्धसंकल्पः सिद्धात्मा
सिद्धिसाधनः । बुद्धबोध्योमहाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ॥२॥ वेदांगो
वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांवरः । वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वद
तांवरः ॥ ३ ॥ अनादिनिधनो व्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः । युगा
दिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥ ४ ॥ अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो
महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक् । अनीन्द्रियोऽहमिन्द्रार्च्यो महेन्द्रमहितो
महान् ॥ ५ ॥ उद्भव कारणं कर्ता पारगो भवतारकः । अगाह्यो
गहनं गुह्य परार्घ्यः परमेश्वरः ॥६॥ अनन्तर्द्धि रमेयर्द्धि रचिन्त्यर्द्धि
समग्रधी । प्राग्र्य प्राग्रहरोऽभ्यग्र प्रत्यग्रोऽग्र्योग्रिमोग्रजः ॥ ७ ॥
महातपा महातेजामहोदर्को महोदय । महायशो महाधामा महा
सत्वो महाधृतिः ॥ ८ ॥ महाधैर्यो महावीर्यो महासम्पन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥ ९ ॥ महामतिर्महानीति
र्महाक्षान्तिर्महोदयः । महाप्राज्ञो महाभागो महानंदो महाकविः ॥१०॥
महामहा महाकीर्तिर्महाकान्तिर्महावपुः । महादानो महाज्ञानो
महायोगो महागुणः ॥ ११ ॥ महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याण-
पंचकः । महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥ ५ ॥

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः। महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥ १ ॥ महाव्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः। महामैत्री महामेयो महापायो महोदय ॥ २ ॥ महाकारुण्यको मंता महामंत्रो महायतिः। महानादो महाघोषो महेज्यो महसापतिः ॥३ ॥ महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक्। महात्मा महासांधाम महर्षिर्महितोदय ॥ ४ ॥ महाक्लेशांकुश शूरो महाभूतपतिर्गुरुः। महापराक्रमोऽनतो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥ ५ ॥ महाभवाब्धिसंतारिर्महामोहाद्रि सूदनः। महागुणाकरः क्षातो महायोगीश्वरः शमी ॥ ६ ॥ महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥ ७ ॥ सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः। असख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥८॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्य श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः। दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥ ९ ॥ प्रधानमात्मा प्रकृतिर्परमः परमोदय । प्रक्षीणबन्धःकामारि क्षेमकृत्क्षेमशासन ॥ १० ॥ प्रणवः प्रणयः प्राणः प्रणादः प्रणतेश्वर । प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोध्वर्युरध्वरः ॥११॥ आनन्दोनन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिंद्योऽभिनन्दनः। कामहा कामद काम्य कामधेनुररिंजयः ॥ १२ ॥

इति महामुन्यादिशतम् ॥ ६ ॥

असंस्कृत सुसंस्कार प्राकृतो वैकृतांतकृत्। अंतकृत्कांतगुःकांतश्चिन्तामणिरभीष्टद ॥१॥अजितो जिनकामारिरमितोऽमितशासनः। जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतक ॥२॥ जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वन । महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ॥ ३ ॥ नाभेयो नाभिजो जातः सुव्रतोमनुरुत्तमः। अभेद्योनत्ययोनश्वानधिकोऽधिगुरु सुधीः ॥४॥ सुमेधा विक्रमी स्वामी

दुराधर्षो निरुत्सुकः । विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥५॥ क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी । अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः॥६॥सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥७॥सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः । सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः सत्यपरायणः ॥८॥स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः । अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ॥९॥ सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः । सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥१०॥ सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् । सुगुप्तो गुप्तिभृद्गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥ ११ ॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥ ७ ॥

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः । मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः॥१॥नैकरूपो नयोत्तुङ्गो नैकात्मा नैकधर्मकृत् ।अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥२॥ ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः । पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ॥३॥लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता । मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गंभीरशासनः ॥४॥ धर्मयूपो दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः । धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ॥ ५ ॥ अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः । सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥६॥ सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः । अलेपो निष्कलंकात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥७॥ वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः । प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मंगलं मलहानघः ॥८॥ अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः । अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ॥९॥ अध्यात्मगम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः । सर्वत्रगःसदा

भावो त्रिकालविषयार्थदृक् ॥१०॥शंकरःशवदो दान्तो दमी क्षान्ति-परायण । अधिपः परमानन्द परात्मज्ञ परात्पर ॥ ११ ॥ त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदय । त्रिजगत्पतिपूज्यांघ्रिस्त्रिलोकाग्र शिखामणि ॥ १२ ॥

इति वृहदादिशतम् ॥ ८ ॥

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रत । सर्वलोकातिगः पूज्य सर्वलोकैकसारथिः ॥१॥ पुराणपुरुष पूर्व कृत्पूर्वांगविस्तर आदिदेव पुराणाद्य. पुरुदेवोऽधिदेवता ॥२॥ युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशक। कल्याणवर्णः कल्याण कल्यः कल्याणलक्षण. ॥३॥ कल्याणप्रकृतिर्दीप्तः कल्याणात्मा विकल्मष । विकलङ्क कलातीत.कलिलघ्न.कलाधर ॥ ४ ॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभु । जगद्धितैषी लोकज्ञ सर्वगो जगदग्रज ॥५॥ चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः। सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभ ॥६॥ आदित्यवर्णो भर्माभ सुप्रभ कनकप्रभ. । सुवर्णवर्णो रुक्माभ. सूर्यकोटिसमप्रभ ॥७॥ तपनीयनिभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनलप्रभ संध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छवि ॥ ८ ॥ निष्टप्त कनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः । हिरण्यवर्ण स्वर्णाभ शातकुम्भनिभप्रभः ॥९॥ द्युम्नभाजातरूपाभो दीप्तजाम्बूनदद्युतिः । सुधौतकलधौत-श्री.प्रदीप्तोहाटकद्युतिः ॥१०॥ शिष्टेष्ट पुष्टिद. पुष्ट. स्पष्ट स्पष्टाक्षरक्षम । शत्रुघ्नोप्रतिघोऽमोघ प्रशास्ता शासिता स्वभु ॥ ११ ॥ शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठ शिवताति शिवप्रद. । शान्तिद शान्तिकृच्छान्ति कान्तिमान्कामितप्रद ॥१२॥ श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठ प्रतिष्ठित. । सुस्थित स्थावर स्थाणु प्रथीयान्प्रथित पृथु ॥ १३ ॥

इति त्रिकाल दर्श्यादिशतम् ॥ ९ ॥

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः। निष्किंचनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥ तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः। तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥२॥ जगच्चूडामणिर्दीप्तः शंवान् विघ्नविनायकः। कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ॥३॥ अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जागरूकः प्रमामयः। लक्ष्मी पतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥४॥ मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः। प्रशान्तरसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ॥ ५ ॥ मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः। आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥ ६ ॥ प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित्। सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥७॥ श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयंकरः। उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥ ८ ॥ लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः। धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥९॥ प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः। भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥१०॥ समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः। कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥११॥ अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः। त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥ १२ ॥ समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः॥ सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥१३॥ शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः। धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वाससाद्यष्टोत्तरशतम् ॥१०॥

धाम्नांपते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः। समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥१॥ गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः। स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलंभवेत् ॥२॥ त्वमतोऽसि

जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक् । त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वम-तोऽसि जगद्धित ॥३॥ त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यङ्ग सोत्थानन्तचतुष्टयः ॥४॥ त्वं पञ्चब्रह्मतत्वात्मा पञ्चकल्याणनायक । षड्भेदभावतत्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ॥ ५ ॥ दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिक । दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥६॥युष्मन्नामावलीदृब्धविलसत्स्तोत्रमालया ।भवंतं वरिवस्याम प्रसीदानुगृहाण नः ॥७॥ इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतोभव ति भाक्तिकः । य सपाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनम् ॥ ८ ॥ तत सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधी । पौरुहूतीं श्रिय प्राप्तुं परमामभिलाषुक ॥ ९ ॥ स्तुत्वेति मघवा देव चराचरजगद्गुरुम् । ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥ १० ॥ स्तुति पुण्य-गुणोत्कीर्ति स्तोता भव्य प्रसन्नधीः । निष्ठितार्थोभवान्स्तुत्यः फल नैश्रेयस सुखम् ॥ ११ ॥ य स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुन स्तोता स्वयं कस्यचित् । ध्येयो योगिजनस्य यश्चनितरां ध्याता स्वय कस्यचित् ॥ यो नेतॄनपि तेनमन्ननमलं नन्तव्यपक्षेक्षण । सश्रीमाञ्जगतां त्रयस्य च गुरुर्देव पुरु पावन ॥१२॥ तं देव त्रिद-शाधिपार्चितपदं घातिक्षयानन्तरं । प्रोत्थानन्तचतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जनीनामिनम् ॥ मानस्तम्भविलोकनानतजगन्मान्यं त्रिलोकी पतिं । प्राप्ताचिन्त्यबहिर्विभूतिमनघ भक्त्या प्रवन्दामहे ॥ १३ ॥

इति भगवज्जिनसेनाचार्यविरचितादिपुराणान्तर्गत
जिनसहस्रनामस्तवनं समाप्तम् ।

१४—अद्याष्टकस्तोत्रम् ।

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम । त्वामद्राक्ष यतोदेव हेतुमक्षयसम्पद. ॥१॥ अद्य ससारगम्भीरपारावार. सुदुस्तरः । सु-

तरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥ अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते। स्नातोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥३॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम्। संसारार्णवतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥४॥ अद्यकर्माष्टकज्वालं विधूतं सकषायकम्। दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥ अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे शुभाश्चैकादशस्थिताः। नष्टानि विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ६ ॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः। सुखसङ्गं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७॥ अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम्। सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥८॥ अद्यमिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञानदिवाकरः। उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥९॥ अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मषः। भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥१०॥ अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमानसः। तस्य सर्वार्थसंसिद्धिर्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ११ ॥ इति अद्याष्टक स्तोत्र संपूर्णम् ॥

१५—दृष्टाष्टकस्तोत्रम्।

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापहारि भव्यात्मनां विभवसम्भवभूरिहेतुः। दुग्धाब्धिफेनधवलोज्ज्वलकूटकोटीनद्धध्वजप्रकरराजिविराजमानम् ॥ १ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भुवनैकलक्ष्मीधामर्द्धिवर्द्धितमहामुनिसेव्यमानम्। विद्याधरामरवधूजनमुक्तदिव्यपुष्पाञ्जलिप्रकरशोभितभूमिभागम् ॥ २ ॥ दृष्टं जिनेन्द्र भवनं भवनादिवासविख्यातनाकगणिकागणगीयमानम्। नानामणिप्रचयभासुररश्मिजालव्यालीढनिर्मलविशालगवाक्षजालम् ॥३॥ दृष्टं जिनेन्द्र भवनं सुरसिद्ध

यक्षगन्धर्वकिन्नरकरार्पितवेणुवीणा। सङ्गीतमिश्रितनमस्कृतधीरनादै रापूरिताम्बरतलोरुदिगन्तरालम् ॥ ४ ॥ दृष्टं जिनेन्द्र भवनं विलसद्विलोलमालाकुलालिललितालकविभ्रमाणम् । माधुर्यवाद्यलयनृत्यविलासिनीनां लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यम् ॥५॥ दृष्टं जिनेन्द्र भवनं मणिरत्नहेमसारोज्ज्वलैः कलशचामरदर्पणाद्यैः। सन्मङ्गलैः सततमष्टशतप्रभेदैर्विभ्राजितं विमलमौक्तिकदामशोभम् ॥ ६ ॥ दृष्टं जिनेद्र भवनं वरदेवदारुकर्पूरचन्दनतरुष्कसुगन्धिधूपैः। मेघायमानगगने पवनाभिघातचञ्चलद्विमलकेतनतुङ्गशालम् ॥ ७ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं धवलातपत्रच्छायानिमग्नतनुयक्षकुमारवृन्दैः। दोधूयमानसितचामरपङ्क्तिभास भामण्डलद्युतियुतप्रतिमाभिरामम् ॥८॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवन विविधप्रकारपुष्पोपहाररमणीयसुरत्नभूमि। नित्य वसन्ततिलकश्रियमादधानं सन्मङ्गल सकलचन्द्रमुनीन्द्रवन्द्यम् ॥६॥ दृष्टं मयाद्यमणि काञ्चनचित्रतुङ्गसिंहासनादिजिनबिम्बविभूतियुक्तम्। चैत्यालय यदतुल परिकीर्तितं मे सन्मङ्गलं सकलचन्द्रमुनीन्द्रवन्द्यम् ॥ १० ॥

॥ इति दृष्टाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

१६—सुप्रभातस्तोत्रम्।

श्रीपरमात्मने नमः ॥ यत्स्वर्गावतरोत्सवेयद भवज्जन्माभिषेकोत्सवे यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे। यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपते पूजाद्भुतं तद्भवैः सङ्गीतस्तुतिमङ्गलैः प्रसरता मे सुप्रभातोत्सव ॥१॥ श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभिरालीढपादयुगदुर्धरकर्मदूर। श्रीनाभिनन्दनजिनाजितशम्भवाख्य! त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥ २ ॥ छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमान देवाभि

नन्दनमुने सुमते जिनेन्द्र ! पद्मप्रभारुणमणि द्युतिभासुराङ्ग त्व० ॥ ३॥ अर्हन् सुपार्श्वकदलीदलवर्णगात्र प्रालेयतारगिरिमौक्तिकवर्ण गौर । चन्द्रप्रभस्फटिकपाण्डुर पुष्पदन्त त्व० ॥४॥ संतप्तकाञ्चनरुचे जिन शीतलाख्य श्रेयान्विनष्ट दुरिताष्टकलङ्कपङ्क । बन्धूकबन्धुररुचे जिनवासुपूज्य त्व०॥५॥उद्दण्डदर्पकरिपो विमलामलाङ्ग स्थेमन्ननन्तजिदनन्तसुखाम्बुराशे । दुष्कर्मकल्मषविवर्जित धर्मनाथ त्व० ॥६॥ देवामरीकुसुमसन्निभ शान्तिनाथ कुन्थो दयागुणविभूषणभूषिताङ्ग । देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ त्व० ॥७॥ यन्मोहमल्लमदभञ्जन मल्लिनाथ क्षेमङ्करावितथशासनसुव्रताख्य । यत्सम्पदा प्रशमितो नमिनामधेय त्व० ॥८॥ तापिच्छगुच्छरुचिरोज्ज्वल नेमिनाथ घोरोपसर्गविजयिन् जिन पार्श्वनाथ । स्याद्वादसूक्तिमणिदर्पणवर्धमान त्व० ॥९॥ प्रालेयनीलहरितारुणपीतभासं यन्मूर्तिमव्ययसुखावसथं मुनीन्द्राः । ध्यायन्ति सप्ततिशतं जिन वल्लभानां त्व० ॥१०॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं मांगल्यं परिकीर्तितम् । चतुर्विंशतितीर्थानां सुप्रभातं दिने दिने ॥११॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम् । देवता ऋषयः सिद्धाः सुप्रभातं दिने दिने ॥१२॥ सुप्रभातं तवैकस्य वृषभस्य महात्मनः । येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्यसत्त्वसुखावहम् ॥ १३ ॥ सुप्रभातं जिनेन्द्राणां ज्ञानोन्मीलित चक्षुषाम् । अज्ञानतिमिरान्धानां नित्यमस्तमितो रविः ॥१४॥ सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य वीरः कमललोचनः । येन कर्माटवी दग्धा शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥ १५ ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकल्याणं सुमङ्गलम् । त्रैलोक्यहितकर्तॄणां जिनानामेव शासनम् ॥ १६ ॥

॥ इति सुप्रभातस्तोत्रं समाप्तम् ॥

दूसरा अध्याय ।

श्रीसमन्तभद्र स्वामी विरचित

१५—श्रीरत्नकरण्ड श्रावकाचार ।

नमः श्रीवर्द्धमानाय निर्धूतकलिलात्मने । सालोकानां त्रिलोकाना यद्विद्यादर्पणायते ॥ १ ॥ देशयामि समीचीन धर्मं कर्मनिवर्हणम् । ससार दुःखत. सत्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे ॥ २ ॥ सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः । यदीयप्रत्यनीकानि भवन्ति भव पद्धति ॥ ३ ॥ श्रद्धान परमार्थाना माऽप्तागमतपोभृताम् । त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥ ४ ॥ आप्तेनोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना । भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ॥५॥ क्षुत्पिपासाजरातङ्कजन्मान्तकभयस्मयाः । न रागद्वेषमोहाश्चयस्याप्त स प्रकीर्त्यते ॥ ६ ॥ परमेष्ठी परंज्योतिर्विरागो विमल, कृती । सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्व. शास्तोपलाल्यते ॥ ७ ॥ अनात्मार्थं विना रागै शास्ता शास्ति सतो हितम् । ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शान्मुरज. किमपेक्षते ॥ ८ ॥ आप्तोपज्ञमनुल्लङ्घ्यमदृष्टेष्टविरोधकम् । तत्वोपदेशकृत्सार्वं शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥ ९ ॥ विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः । ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते ॥१०॥ इदमेवेदृशमेव तत्त्वं नान्यन्न चान्यथा । इत्यकम्पायसाम्भोवत्सन्मार्गेऽसशया रुचि ॥ ११ ॥ कर्मपरवशे साते दु खैरन्तरितोदये । पापवीजे सुखेऽनास्था श्रद्धानाकाङ्क्षणा स्मृता ॥ १२ ॥ स्वभावतोऽशुचौ काये रत्नत्रयपवित्रिते । निर्जुगुप्सागुणप्रीतिर्मता निर्वि-

विचिकित्सता ॥१३॥ कापथे पथि दुःखानां कापथस्थेऽप्यसम्मतिः।
असम्पृक्तिरनुत्कीर्तिरमूढा दृष्टिरुच्यते ॥ १४ ॥ स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य
बालाशक्तजनाश्रयाम्। वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति तद्वदन्त्युपगूहनम्
॥१५॥ दर्शनाच्चरणाद्वापि चलतां धर्मवत्सलैः। प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः
स्थितिकरणमुच्यते ॥१६॥ स्वयूथ्यान्प्रति सद्भावसनाथापेतकैतवा।
प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं वात्सल्यमभिलप्यते ॥ १७ ॥ अज्ञानतिमिरव्या
प्तिमपाकृत्य यथायथम्। जिनशासनमाहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना
॥ १८ ॥ तावदञ्जनचौरोऽङ्गे ततोऽनन्तमतिःस्मृता। उद्दायनस्तृ
तीयेऽपि तुरीये रेवती मता ॥ १९ ॥ ततो जिनेन्द्रभक्तोऽन्यो वारि
षेणस्ततः परः। विष्णुश्च वज्रनामा च शेषयोर्लक्ष्यतां गतौ ॥ २० ॥
नाङ्गहीनमलं छेत्तुं दर्शनं जन्मसन्ततिम्। न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो
निहन्ति विषवेदनाम् ॥ २१ ॥ आपगासागरस्नानमुच्चयः सिकता
श्मनाम्। गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥ २२ ॥ वरो
पलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलीमसाः। देवता यदुपासीत देवता
मूढमुच्यते ॥ २३ ॥ सग्रन्थारम्भहिंसानां संसारावर्तवर्तिनाम्।
पाषण्डिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाषण्डिमोहनम् ॥ २४ ॥ ज्ञानं पूजां
कुलं जातिं बलमृद्धिं तपोवपुः। अष्टावाश्रित्य मानित्वं स्मयमाहु
र्गतस्मयाः ॥ २५ ॥ स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान् गर्विताशयः।
सोऽत्येति धर्ममात्मीयं न धर्मो धार्मिकैर्विना ॥२६॥ यदि पापनि
रोधोऽन्यसम्पदा किं प्रयोजनम्। अथ पापास्रवोऽस्त्यन्यसम्पदा
किं प्रयोजनम् ॥ २७ ॥ सम्यग्दर्शनसम्पन्नमपि मातङ्गदेहजम्।
देवा देवं विदुर्भस्मगूढाङ्गारान्तरौजसम् ॥ २८ ॥ श्वापि देवोऽपि
देवः श्वा जायते धर्मकिल्बिषात्। कापि नाम भवेदन्या सम्पद्धर्मा

च्छरीरिणाम् ॥ २९ ॥ भयाशास्नेहलोभाच्च कुदेवागमलिंगिनाम् । प्रणामं विनयं चैव न कुर्युः शुद्धदृष्टयः ॥ ३० ॥ दर्शनं ज्ञानचारित्रात्साधिमानमुपाश्नुते । दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गे प्रचक्ष्यते ॥ ३१ ॥ विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः । न सन्त्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव ॥३२॥ गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान् । अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः ॥३३॥ न सम्यक्त्वसमं किञ्चित्त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि । श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्वसमं नान्यत्तनूभृताम् ॥ ३४ ॥ सम्यग्दर्शनशुद्धा नारकतिर्यङ्नपुंसकस्त्रीत्वानि । दुष्कुलविकृताल्पायुर्दरिद्रता च व्रजन्ति नाप्यव्रतिकाः ॥३५॥ ओजस्तेजोविद्यावीर्ययशोवृद्धिविजयविभवसनाथाः । महाकुला महार्था मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः ॥ ३६ ॥ अष्टगुणपुष्टितुष्टा दृष्टिविशिष्टाः प्रकृष्टशोभाजुष्टाः । अमराप्सरसां परिषदि चिरं रमन्ते जिनेन्द्रभक्ताः स्वर्गे ॥ ३७ ॥ नवनिधिसप्तद्वयरत्नाधीशाः सर्वभूमिपतयश्चक्रम् । वर्तयितुं प्रभवन्ति स्पष्टदृशः क्षत्रमौलिशेखरचरणाः ॥ ३८ ॥ अमरासुरनरपतिभिर्यमधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः । दृष्ट्या सुनिश्चितार्था वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः ॥ ३९ ॥ शिवमजरमरुजमक्षयमव्याबाधं विशोकभयशंकम् । काष्ठागतसुखविद्याविभवं विमलं भजन्ति दर्शनशरणाः ॥ ४० ॥ देवेन्द्रचक्रमहिमानममेयमानम् राजेन्द्र चक्रमवनीन्द्रशिरोर्चनीयम् । धर्मेन्द्रचक्रमधरीकृतसर्व लोकम् लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरुपैति भव्यः ॥ ४१ ॥ अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात् । निःसन्देहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः ॥ ४२ ॥ प्रथमानुयोग[illegible]

निमर्म बोधयति बोधः समीचीनः ॥ ४३ ॥ लोकालोकविभक्तेर्युग
परिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च । आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं
च ॥ ४४ ॥ गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षांगम् । चर
णानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥ ४५ ॥ जीवाजीवसुतत्वे
पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च । द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोक-
मातनुते ॥ ४६ ॥ मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभादवाप्तसंज्ञानः ।
रागद्वेषनिवृत्त्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥ ४७ ॥ रागद्वेषनिवृत्ते
र्हिंसादिनिवर्तना कृता भवति । अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुष
सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥ हिंसानृतचौर्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां
च । पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रम् ॥ ४९ ॥ सकलं
विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानाम् । अनगाराणां विकल-
सागाराणां ससंगानाम् ॥५०॥ गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणशिक्षा
व्रतात्मकं चरणम् । पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासंख्यमाख्यातम् ॥५१
प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्च्छाभ्यः । स्थूलेभ्यः पापेभ्यो
व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥ संकल्पात्कृतकारितमननाद्योग-
त्रयस्य चरसत्वान् । न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः
॥ ५३ ॥ छेदनबन्धनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः । आहार
वारणापि च स्थूलवधाद्व्युपरतेः पञ्च ॥ ५४ ॥ स्थूलमलीकं न
वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे । यत्तद्वदन्ति सन्तःस्थूल-
मृषावादवैरमणम् ॥ ५५ ॥ परिवादरहोभ्याख्या पैशुन्यं कूटलेख
करणं च । न्यासापहारितापि च व्यतिक्रमाः पञ्च सत्यस्य ॥ ५६॥
निहितं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं । न हरति
यन्न च दत्ते तदकृशचौर्यादुपारमणम् ॥ ५७ ॥ चौर प्रयोग

चौरार्थादान विलोपसदृशसन्मिश्राः । हीनाधिकविनिमानपञ्चास्तेये व्यतीपाताः ॥ ५८ ॥ न तु परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत् । सा परदारनिवृत्तिः स्वदारसन्तोषनामापि ॥ ५९ ॥ अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीड़ाविटत्वविपुलतृष । इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पञ्च व्यतीचाराः ॥ ६० ॥ धनधान्यादिग्रन्थं परिमायततोऽधिकेषु निस्पृहता । परमितपरिग्रहः स्यादिच्छापरिमाणनामापि ॥ ६१ ॥ अतिवाहनातिसग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि परिमित परिग्रहस्य च विक्षेपाः पञ्च लक्ष्यन्ते ॥ ६२ ॥ पञ्चाणुव्रतनिधयो निरतिक्रमणा. फलन्ति सुरलोकम् । यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ६३ ॥ मातङ्गो धनदेवश्चवारिषेणस्ततः परः । नीली जयश्च संप्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमम् ॥ ६४ ॥ धनश्री सत्यघोषौ च तापसा रक्षकावपि । उपाख्येयास्तथा श्मश्रुनवनीतो यथाक्रमम् ॥ ६५ ॥ मद्यमासमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकम् । अष्टौ मूलगुणानाहुर्गृहीणा श्रमणोत्तमा. ॥ ६६ ॥ दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रत च भोगोपभोगपरिमाणम् । अनुवृहणाद्गुणनामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्या. ॥ ६७ ॥ दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं वहिर्नयास्यामि । इतिसंकल्पो दिग्व्रतमामृत्यणुपापविनिवृत्त्यै ॥ ६८ ॥ मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादा । प्राहुर्दिशां दशाना प्रतिसहारे प्रसिद्धानि ॥ ६९ ॥ अवधेर्वहिरणुपापप्रतिविरते र्दिग्व्रतानि धारयताम् । पञ्चमहाव्रतपरिणतिमणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ॥ ७० ॥ प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामा । सत्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥ ७१ ॥ पञ्चाना पापाना हिंसादीना मनोवचःकायै । कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रत महताम्

॥७२॥ऊर्ध्वाधस्तात्तिर्यग्व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनाम्। विस्मरणं दिग्विरतेरत्याशाः पञ्च मन्यन्ते ॥७३॥ अभ्यन्तरं दिगवधेरपार्थिकेभ्यः सपापयोगेभ्यः। विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्व्रतधराग्रण्यः ॥७४॥ पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पञ्च। प्राहुः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः ॥७५॥ तिर्यक्क्लेशवणिज्याहिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम्। कथाप्रसङ्गप्रसवः स्मर्तव्यः पाप उपदेशः ॥७६॥ परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधशृङ्गिशृङ्खलादीनाम्। वधहेतूनां दानं हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधाः ॥७७॥ वधबन्धच्छेदादेर्द्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादेः। आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः॥७८॥ आरम्भसङ्गसाहसमिथ्यात्वद्वेषरागमदमदनैः। चेतःकलुषयतां श्रुतिरवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥७९॥ क्षितिसलिलदहनपवनारम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदं। सरणं सारणमपि च प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥८०॥ कन्दर्पं कौत्कुच्यं मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च। असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥८१॥ अक्षार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम्। अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥८२॥ भुक्त्वापरिहातव्यो भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः। उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पञ्चेन्द्रियो विषयः ॥८३॥ त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये। मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥८४॥ अल्पफलबहुविघातान्मूलकमार्द्राणि शृङ्गबेराणि। नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येवमवहेयम् ॥८५॥ यदनिष्टं तद्व्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात्। अभिसन्धिकृता विरतिर्विषयाद्योग्याद्व्रतं भवति ॥८६॥ नियमो यमश्च विहितौ द्वेधा भोगोप

भोजनवाहनशयनस्नानपवित्राङ्गरागकुसुमेषु । ताम्बूलवसनभूषण मन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८८ ॥ अद्य दिवा रजनी वा पक्षो मासस्तथ-र्तु रयनं वा। इति काल परिच्छित्त्या प्रत्याख्यान भवेन्नियम ॥८९॥ विषयविषतोऽनुपेक्षानुस्मृतिरतिलौल्यमति तृषाऽनुभवो। भोगोपभोगपरिमाण्यतिक्रमा पञ्च कथ्यन्ते ॥ ९० ॥ देशावकाशिकं वा सामयिकं प्रोषधोपवासो वा। वैयावृत्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ ९१ ॥ देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य। प्रत्यहमणुव्रताना प्रति संहारो विशालस्य ॥ ९२ ॥ गृहहारिग्रामाणा क्षेत्रनदीदावयोजनाना च। देशावकाशिकस्य स्मरन्ति सोम्ना तपो वृद्धा ॥ ९३ ॥ सवत्सरमृतुरयन मासचतुर्मासपक्षमृक्ष च। देशा-वकाशिकस्यप्राहु· कालावधि प्राज्ञा ॥ ९४ ॥ सोमान्तानां परतः स्थूलेतरपञ्चपापसत्यागात्। देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यन्ते ॥ ९५ ॥ प्रेषणशब्दानयनंरूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ। देशा वकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्यया पञ्च ॥ ९६ ॥ आसमयमुक्ति मुक्तंपञ्चाघानामशेषभावेन। सर्वत्र च सामयिका· सामयिक नाम शंसन्ति ॥ ९७ ॥ मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्यंकबन्धनं चापि। स्थानमुपवेशनं वा समयं जानन्ति समयज्ञा. ॥ ९८ ॥ एकान्ते सामयिक निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च। चैत्यालयेषु वापिच परि चेतव्य प्रसन्नधिया ॥ ९९ ॥ व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्यामन्तरात्म विनिवृत्त्या। सामयिकं बध्नीयादुपवासे चैकभुक्ते वा ॥ १०० ॥ सामयिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यं। व्रतपञ्चकपरि-पूरणकारणमवधानयुक्तेन ॥ १०१ ॥ सामयिके सारम्भा· परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेपि। चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यति भावं

॥ १०२ ॥ शीतोष्णदंशमशकपरीषहमुपसर्गमपि च मौनधराः। सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥ १०३ ॥ अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम्। मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ १०४ ॥ वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे। सामायिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ १०५ ॥ पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु। चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदेच्छाभिः ॥ १०६ ॥ पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणाम्। स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात् ॥ १०७ ॥ धर्मामृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान्। ज्ञानध्यानपरो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥ १०८ ॥ चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः। स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥ १०९ ॥ ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे। यत्प्रोषधोपवासव्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदम् ॥ ११० ॥ दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये। अनपेक्षितोपचारोपक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १११ ॥ व्यापत्तिव्यपनोदः पदयोः संवाहनं च गुणरागात्। वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम् ॥ ११२ ॥ नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन। अपसूनारम्भाणामार्याणामिष्यते दानम् ॥ ११३ ॥ गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानाम्। अतिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ॥ ११४ ॥ उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा। भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ ११५ ॥ क्षितिगतमिव वटबीजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले। फलतिच्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृताम् ॥ ११६ ॥ आहारौषधयोरप्युपकरणा

वासयोश्च दानेन। वैयावृत्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्राः ॥ ११७ ॥ श्रीषेणवृषभसेने कौण्डेश शूकरश्च दृष्टान्ताः। वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्या ॥ ११८ ॥ देवाधिदेवचरणे परिचरण सर्वदुखनिर्हरणम्। कामदुहि कामदाहिनि परिचिनुयादादृतो नित्यम् ॥ २१६ ॥ अर्हच्चरणसपर्यामहानुभावं महात्मनामवदत्। भेक. प्रमोदमत्त. कुसुमेनैकेन राजगृहे ॥ १२० ॥ हरितपिधाननिधानेह्यनादरास्मरणमत्सरत्वानि। वैयावृत्यस्यैतेव्यतिक्रमा पञ्च कथ्यन्ते ॥ १२१ ॥ उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे। धर्माय तनुविमोचनमाहुः सल्लेखनामार्या ॥ १२२ ॥ अन्तःक्रियाधिकरणं तपःफलं सकलदर्शिन स्तुवते। तस्माद्यावद्विभव समाधिमरणे प्रयनितव्यं ॥ १२३ ॥ स्नेह वैरं सङ्गं परिग्रहं चापहाय शुद्धमनाः। स्वजनं परिजनमपि च क्षान्त्वा क्षमयेत्प्रियैर्वचनैः ॥१२४॥ आलोच्य सर्वमेन कृतकारितमनुमत च निर्व्याजं। आरोपयेन्महाव्रतमामरणस्थायि निःशेष ॥ १२५ ॥ शोकं भयमवसादंक्लेदं कालुष्यमरतिमपि हित्वा। सत्वोत्साहमुदीर्य च मनःप्रसाद्यं श्रुतेरमृते ॥ १२६ ॥ आहारं परिहाप्य क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम्। स्निग्धं च हापयित्वा खरपान पूरयेत्क्रमशः ॥ १२७ ॥ खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या। पंचनमस्कारमनास्तनुं त्यजेत्सर्वयत्नेन ॥ १२८ ॥ जीवितमरणाशंसा भयमित्रस्मृतिनिदाननामानः। सल्लेखनातिचाराः पञ्च जिनेन्द्रैः समादिष्टा. ॥ १२६ ॥ निःश्रेयसमभ्युदयं निस्तीरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम्। निष्पिबन्ति पीतधर्मा सर्वैर्दुःखैरनालीढः ॥ १३० ॥ जन्मजरामयमरणे शोकैर्दुःखैर्भयैश्च परिमुक्तम्।

निर्वाणं शुद्धसुखं निःश्रेयसमिष्यते नित्यम् ॥ १३१ ॥ विद्यादर्शन
शक्तिस्वास्थ्यप्रह्लादतृप्तिशुद्धियुजः । निरतिशया निरवधयो निःश्रे
यसमावसन्ति सुखं ॥ १३२ ॥ काले कल्पशतेऽपि च गते शिवानां
न विक्रिया लक्ष्या । उत्पातोऽपि यदि स्यात् त्रिलोकसंभ्रान्ति
करणपटुः ॥ १३३ ॥ निःश्रेयसमधिपन्नास्त्रैलोक्यशिखामणिश्रियं
दधते ॥ निष्किट्टिकालिकाच्छविचामीकरभासुरात्मानः ॥ १३४ ॥
पूजार्थाज्ञैश्वर्यैर्बलपरिजनकामभोगभूयिष्ठं । अतिशयितभुवनमद्
भुतमभ्युदयं फलति सद्धर्मः ॥ १३५ ॥ श्रावकपदानि देवैरेकादश
देशितानि येषु खलु । स्वगुणाः पूर्वगुणैः सह संतिष्ठन्ते क्रमविवृद्धाः
॥ १३६ ॥ सम्यग्दर्शनशुद्धः संसारशरीरभोगनिर्विण्णः । पञ्चगुरु
चरणशरणो दार्शनिकस्तत्त्वपथगृह्यः ॥ १३७ ॥ निरतिक्रमणमणुव्रत
पञ्चकमपि शीलसप्तकं चापि । धारयते निःशल्यो योऽसौ व्रतिनां मतो
व्रतिकः ॥ १३८ ॥ चतुरावर्तत्रितयश्चतुःप्रणामः स्थितो यथाजातः
सामयिको द्विनिषद्यस्त्रियोगशुद्धस्त्रिसन्ध्यमभिवन्दी ॥ १३९ ॥ पर्व
दिनेषु चतुर्ष्वपि मासे मासे स्वशक्तिमनिगुह्य । प्रोषधनियमविधायी
प्रणिधिपरः प्रोषधानशनः ॥ १४० ॥ मूलफलशाकशाखाकरीरकन्दप्र
सूनबीजानि । नामानि योऽत्ति सोऽयं सचित्तविरतो दयामूर्तिः
॥ १४१ ॥ अन्नं पानं खाद्यं लेह्यं नाश्नाति यो विभावर्याम् । स च
रात्रिभुक्तिविरतः सत्त्वेष्वनुकम्पमानमनाः ॥ १४२ ॥ मलबीजं मल
योनिं गलन्मलं पूतिगन्धिबीभत्सम् । पश्यन्नङ्गमनङ्गाद्विरमति यो ब्रह्म
चारी सः ॥ १४३ ॥ सेवाकृषिवाणिज्यप्रमुखादारम्भतो व्युपार
मति । प्राणातिपातहेतोर्योऽसावारम्भविनिवृत्तः ॥ १४४ ॥ बाह्ये
षु दशसु वस्तुषु ममत्वमुत्सृज्य निर्ममत्वरतः । स्वस्थः सन्तोषपरः

'परिचितपरिग्रहाद्विरत' ॥ १४५ ॥ अनुमतिरारम्भे वा परिग्रहे वैहि-
केषु कर्मसु वा । नास्ति खलुयस्य समधीरनुमतिविरत. स मन्तव्य.
॥ १४६॥ गृहतो मुनिवनमित्वा गुरूपकन्ठे व्रतानि परिगृह्य । भैक्ष्या
शनस्तपस्यन्नुत्कृष्टश्चेलखण्डधरः ॥ १४७ ॥ पापमरातिर्धर्मो बन्धु-
र्जीवस्य चेति निश्चिन्वन् । समय यदि जानीते श्रेयो ज्ञाता ध्रुवं
भवति ॥ १४८ ॥ येन स्वयं वीतकलंकविद्या दृष्टिक्रियारत्नकरण्ड
भावम् । नीतस्तमायाति पतीच्छयेव सर्वार्थसिद्धिस्त्रिपुविष्टपेषु
॥ १४६ ॥ सुखयतु सुखभूमि कामिनं कामिनीव सुतमिव जननी
मा शुद्धशीलाभुनक्तु । कुलमिव गुणभूषा कन्यका सापुनीताज्जिन-
पतिपदपद्मप्रेक्षिणी दृष्टिलक्ष्मी. ॥ १५० ॥ इति ॥

१८—द्रव्यसंग्रह ।

जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं देविन्दविन्द
वद वंदेत सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥ जीवो उवओगमओ अमुत्ति
कत्ता सदेह परिमाणो। भोत्तासंसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई
॥ २॥ तिक्काले चदुपाणा इन्दिय बलमाउ आणपाणोय । ववहारा
सो जीवो णिच्चयणयदो दु चेदणा जस्स ॥३॥ उवोओगो दुवियप्पो
दसण णाण च दसणं चदुधा । चक्खु अचक्खु ओही दसणमध
केवल णेया ॥ ४ ॥ णाण अट्ठवियप्पं मदिसुदि ओही अणाणणा
णाणि । मणपज्जय केवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेया च ॥ ५ ॥ अट्ठ-
चदुणाणदसण सामण्ण जीवलक्खण भणिया । ववहारा सुद्धण-
या सुद्धं पुण दसण णाण ॥६॥ वण्ण रस पञ्च गन्धा दो फासा
अट्ठ णिच्चया जीवे । णो सन्ति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्तिबंधादो

॥ ७ ॥ पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदोदु णिच्छयदो। चेदण कम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥८॥ ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मप्फलं पभुंजेदि। आदा णिच्छयणयदो चेदणभावं खु आदस्स ॥ ९ ॥ अणुगुरुदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा। असमुहदो ववहारा णिच्छयणयदो असंखदेसो वा ॥ १० ॥ पुढविजलतेउवाऊवणप्फदी विविहथावरेइंदी। विगतिग चदुपंचक्खा तसजीवा होंति संखादि ॥ ११॥ समणा अमणा णेया पंचिंदिय णिम्मणा परे सव्वे। बादर सुहमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य ॥१२॥ मग्गणगुणठाणेहि य चउदसहि हवंति तह असुद्धणया। विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥१३॥ णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा। लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवयेहि संजुत्ता ॥१४॥ अज्जीवो पुण णेओ पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं। कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥१५॥ सद्दो बंधो सुहमो थूलो संठाणभेदतमछाया। उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥१६॥ गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी तोयं जह मच्छाणं अच्छंता णेव सो णेई ॥ १७ ॥ ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी। छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई ॥ १८ ॥ अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं। जेण्हं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥ १९ ॥ धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये। आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो ॥२०॥ दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो। परिणामादी लक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो ॥२१॥ लोयायासपदेसे इक्किक्के जे ठिया हु इक्किक्का। रयणाणं रासीमिव

ते कालणू असंखदव्वाणि ॥ २२ ॥ एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्प-
भेद दो दव्वं। उत्ताकालविजुत्तंणायव्वा पञ्च अत्थिकाया दु ॥२३॥
संति जदो तेणेदे अत्थोति भणति जिणवरा जम्हा। काया इव
वहुदेसा तम्हा काया य कत्थिकाया य ॥२४॥ होंनि असखा जावे
धम्माधम्मे अणंत आयासे। मुत्तं तिविह पदेसा कालस्सेगो ण
तेण सो काओ ॥ २५ ॥ एयपदेशो वि अणू णाणाखधप्पदेसदो
होदि। वहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणति सव्वण्हु ॥ २६ ॥
जावदियं आयासे अविभागी पुग्गलाणुवट्टद्धं ॥ तं खुपदेस जाणे
सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥ २७ ॥ आसववंधणसंवरणिज्जर मोक्खा
सुपुण्णपावा जे। जीवाजोवविसेसा ते वि समासेण पभणामो
॥२८॥ आसवदि जेण कम्म परिणामेणप्पणो स विण्णेओ। भावा
सवो जिणुत्तो कम्मासवणं परो होदि ॥ २९ ॥ मिच्छत्ताविरदिप
मादजोगकोहादओऽथ विण्णेया। पण पण पणदह तिय चदु कम-
सो भेदा दु पुव्वस्स ॥ ३० ॥ णाणावरणादीणं जोग्गं जं पुग्गलं
समासवदि। दव्वासवो स णेओ अणेयभेदो जिणक्खादो ॥ ३१ ॥
वज्झदि कम्मं जेण दु चेदणभावेण भाववंधो सो। कम्माद पदे-
साण अण्णोण्णपवेशण इदरो ॥ ३२ ॥पयडिट्ठिदि अणुभागप्पदेस
भेदा दु चेदविधो वंधो। जोगा पयडिपदेशा ठिदिअणुभागा कसा-
यदो होंति ॥३३॥ चेदणपरिणामोजो कम्मस्सासवणिरोहणे हेऊ।
सो भावसवरो खलु दव्वासवरोहणेअण्णो ॥ ३४॥ वदसमिदीगुत्ती
ओ धम्माणुपिहा परीसहजओ य। चारित्ता वहुमेयं णायव्वा भाव
संवरविसेसा ॥३५॥ जहकालेण तवेणय भुत्तरसं कम्मपुग्गल जेण
भावेण सड़दि णेया तस्सडण चेदि णिज्जरा दुविहा ॥ ३६॥ सव्व

सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो। णेओ स भावमोक्खो दव्वविमोक्खो य कम्मपुहभावो ॥३७॥ सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा। सादं सुहाउ णामं गोदं पुण्णं पराणि पावं च ॥ ३८ ॥ सम्मद्दंसण णाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे। ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा ॥३९॥ रयणत्तयं ण वट्टइ अप्पाणं मुयत्तु अण्णदवियम्हि। तम्हा तत्तियमइओ होदि हु मोक्खस्स कारणं आदा ॥४०॥ जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु। दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदि जम्हि ॥ ४१ ॥ संसय विमोहविब्भमविवज्जियं अप्पपरसरूवस्स। गहणं सम्मं णाणं सायारमणेयभेयं च ॥४२॥ जं सामण्णं गहणं भावाणं णेव कट्टु मायारं। अविसेसदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णये समये ॥ ४३ ॥ दंसणपुव्वं णाणं छदुमत्थाणं ण दुण्णि उवओगा। जुगवं जम्हा केवलि णाहे जुगवं तु ते दो वि ॥ ४४ ॥ असुहादो विणिवित्ती सुहेपवित्ती य जाण चारित्तं। वदसमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिण भणियं ॥ ४५ ॥ बहिरब्भंतर किरिया रोहो भवकारणप्पणासट्ठं। णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारित्तं ॥ ४६ ॥ दुविहं पि मोक्खहेउं झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा। तम्हा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समब्भसह ॥ ४७ ॥ मा मुज्झह मा रज्जह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठअत्थेसु। थिरमिच्छह जइ चित्तं विचित्तझाणप्पसिद्धीए ॥ ४८ ॥ पणतीस सोल छप्पण चदु दुगमेगं च जवह झाएह। परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण ॥ ४९ ॥ णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमईओ। सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो ॥ ५० ॥ णट्ठट्ठकम्मदेहो

लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा। पुरिसायारो अप्पा सिद्धोझाएह लोयसिहरत्थो ॥ ५१ ॥ दंसणणाणपहोणे वीरियचारित्तवरतवा-यारे। अप्प परं च जुंजइ सो आयरिओ मुणी झेओ ॥ ५२ ॥ जो रयणत्तयजुत्तो णिच्च धम्मवएसणे णिरदो। सो उवझाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स ॥ ५३ ॥ दंसणणाणसमग्ग मग्ग मोक्ख स्स जो हु चारित्त। साधयदि णिच्चसुद्धं साहूस मुणी णमो तस्स ॥ ५४ ॥ ज किंच विचिंतन्तो निरीहवित्ती हवे जदा साहू। लद्धूणय एयत्तं तदाहु तं तस्स णिच्चय झाण ॥ ५५ ॥ मा चिट्ठ मा जपह किं विजेण होइ थिरो। अप्पा अप्पमि रओ इणमेव परं हवे झाण ॥ ५६ ॥ नवसुदवदव चेदा झाणरहधुरन्धरो हवे जम्हा। तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सदा होह ॥ ५७ ॥ दव्वसंग-हमिण मुणिणाहा दोससंचय चुदा सुदपुण्णा। सोधयंतु तणुसुत्त धरेण णेमिचन्दमुणिणा भणियंजं ॥ ५८ ॥ इति ॥

१६—एकीभावस्तोत्रम्।

(श्रीवादिराजप्रणीतम्)

एकीभावं गत इव मया य स्वयं कर्मबन्धो घोर दुःखं भव-भवगतो दुर्निवार करोति। तस्याप्यस्य त्वयि जिनरवे भक्तिरु-न्मुक्तये चेज्जेतुं शक्यो भवति न तया कोऽपरस्तापहेतुः ॥ १ ॥ ज्योतीरूप दुरितनिवहध्वान्तविध्वसहेतुं त्वामेवाहुर्जिनवर! चिरं तत्वविद्याभियुक्ता। चेतोवासे भवसि च मम स्फारमुद्रासमानस्त-स्मिन्नहः कथमिव नमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥ २ ॥ आनन्दाश्रुस्न-पितवदनं गद्गद चाभिजल्पन्यश्चायेत [illegible]

र्भवन्तम्। तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्यान्निष्का
स्यन्ते विविधविषमव्याधयः काद्रवेयाः ॥ ३ ॥ प्रागेवेह त्रिदिवभव
नादेष्यता भव्यपुण्यात्पृथ्वीचक्रं कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदम्।
ध्यानद्वारं मम रुचिकरं स्वान्तगेहं प्रविष्टस्तत्किं चित्रं जिन! वपुरिदं
यत्सुवर्णीकरोषि ॥ ४ ॥ लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्निर्निमित्तेन
बन्धुस्त्वय्येवासौ सकलविषया शक्तिरप्रत्यनीका। भक्तिस्फीतां
चिरमधिवसन्मामिकां चित्तशय्यां मय्युत्पन्नं कथमिव ततः क्लेश
यूथं सहेथाः ॥ ५ ॥ जन्माटव्यां कथमपि मया देव! दीर्घं भ्रमित्वा
प्राप्तैवेयं तव नयकथा स्फारपीयूषवापी। तस्या मध्ये हिम
करहिमव्यूहशीते नितान्तं निर्मग्नं मां न जहति कथम् दुःखदावो
पतापाः ॥ ६ ॥ पादन्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकीं।
हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनिवासश्च पद्मः। सर्वाङ्गेण स्पृशति
भगवंस्त्वय्यशेषं मनो मे श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्यु-
पैति ॥ ७ ॥ पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं भक्तिपात्र्या पिबन्तं कर्मारण्या
त्पुरुषमसमानन्दधाम प्रविष्टम्। त्वां दुर्वारस्मरमदहरं त्वत्प्रसा
दैकभूमिं क्रूराकाराः कथमिव रुजाकण्टका निर्लुठन्ति ॥ ८ ॥ पाषा
णात्मा तदितरसमः केवलं रत्नमूर्तिर्मानस्तम्भो भवति च परस्ता
दृशो रत्नवर्गः। दृष्टिप्राप्तो हरति स कथं मानरोगं नराणां प्रत्यास-
त्तिर्यदि न भवतस्तस्य तच्छक्तिहेतुः ॥ ९ ॥ हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भव
न्मूर्तिशैलोपवाही सद्यः पुंसां निरवधिरुजाधूलिबन्धं धुनोति।
ध्यानाहूतो हृदयकमलं यस्य तु त्वं प्रविष्टस्तस्याशक्यः क इह
भुवने देवलोकोपकारः ॥ १० ॥ जानासि त्वं मम भवभवे यच्च
यादृक्च दुःखं जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रवन्निष्पिनष्टि। त्वं

सर्वेश' सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या यत् कर्त्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम् ॥ ११ ॥ प्रायद्दैव तदनुतिपदैर्जीवकेनोपदिष्टैः पापाचारी मरणसमये सारमेयोऽपि सौख्यम् । कः सन्देहो यदुपलभते वासवश्रीप्रभुत्वं जल्पञ्जाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कार चक्रम् ॥१२॥ शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा भक्तिर्नो चेदनवधिसुखावञ्चिका कुञ्चिकेयम् । शक्योद्घाटं भवति हि कथं मुक्तिकामस्य पुंसो मुक्तिद्वारं परिदृढ़महामोहमुद्राकवाटम् ॥ १३ ॥ प्रच्छन्न' खल्वयमघमयैरन्धकारैः समन्तात्पन्था मुक्तेः स्थपुटित पदः क्लेशगर्तैरगाधै. । तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव तत्वावभासी यद्यग्रेऽग्रेन भवति भवद्भारतीरत्नदीप. ॥१४॥ आत्मज्योति र्निधिरनवधिर्द्रष्टुरानन्दहेतु कर्मक्षोणीपटलपिहितो योऽनवाप्यः परेषाम् । हस्ते कुर्वंत्यनति चिरतस्त' भवद्भक्तिभाज. स्तोत्रैर्बन्धप्रकृतिपुरुषोद्दामधात्रीखनित्रै ॥ १५ ॥ प्रत्युपन्ना नयहिमगिरेरायता चामृताब्धेर्या देव त्वत्पदकमलयो. सङ्गता भक्तिगङ्गा । चेतस्तस्या मम रुचिवशादाप्लुतं क्षालिताह कल्माष यद्भवति किमियं देव सन्देहभूमि १६ ॥ प्रादुर्भूतस्थिरपदसुख त्वामनुध्यायता मे त्वय्येवाह स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा । मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्तिमभ्रेपरूपा दोषात्मानोऽप्यभिमतफलास्त्वत्प्रसादाद्भवन्ति ॥१७॥ मिथ्यावाद' मलमपनुदन्सप्तभङ्गीतरङ्गैर्वागम्भोधिर्भुवनमखिला देव पर्येति यस्ते । तस्यावृत्ति सपदि विबुधाश्चेतसैवाचलेन व्यातन्वन्त. सुचिरममृतासेवया तृप्नुवन्ति ॥ १८ ॥ आहार्येभ्य. स्पृहयति पर य स्वभावादहृद्यशस्त्रग्राही भवति सतत वैरिणा यश्च शक्य । सर्वाङ्गेषुत्वमसि सुभगस्त्वं न शक्य परेषा तत्किं

भूयावसनकुसुमैः किं च शस्त्रे रवस्त्रे ॥१९॥ स्तुत्यः सेवा तव सुकृतां किं तया श्लाघनं ते तस्यैवेयं भवलयकरी श्लाघ्यतामातनोति। त्वं निस्तारी जननजलधेः सिद्धिकान्तापतिस्त्वं त्वं लोकानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थम् ॥२०॥ वृत्तिर्वाचामपरसदृशी न त्वमन्येन तुल्यस्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्त्वय्यमी नः क्रमन्ते। मैवं भूवं स्तदपि भगवद्भक्तिपीयूषपुष्टास्ते भव्यानामभिमतफलाः पारिजाता भवन्ति ॥ २१ ॥ कोपावेशो न तव न तव क्वापि देव प्रसादो व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम्। आज्ञावश्यं तदपि भुवनं संनिधिर्वैरहारी क्वैवंभूतं भुवनतिलक प्राभवं त्वत्परेषु ॥२२॥ देवस्तोतुं त्रिदिवगणिकामण्डलीगीतकीर्तिं तोतुर्ति त्वां सकलविषयज्ञानमूर्तिं जनो यः। तस्य क्षेमं न पदमटतो जातु जोहूर्ति पन्थास्तत्त्वग्रन्थस्मरणविषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः ॥२३॥ चित्ते कुर्वे निरवधिसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपं देव त्वां यः समयनियमादादरेण स्तवीति श्रेयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा कल्याणानां भवति विषयः पञ्चधा पञ्चितानाम् ॥ २४ ॥ भक्तिप्रह्नमहेन्द्र पूजितपद त्वत्कीर्तने न क्षमाः सूक्ष्मज्ञानदृशोऽपि संयमभृतः के हन्त मन्दा वयम्। अस्माभिः स्तवनच्छलेन तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते स्वात्माधीनसुखैषिणां स खलु नः कल्याणकल्पद्रुमः ॥ २५ ॥ वादिराजमनु शाब्दिकलोको वादिराजमनु तार्किकसिंहः। वादिराजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्य सहायः ॥ २६ ॥

इति श्रीवादिराजकृतमेकीभावस्तोत्रम्।

२०--स्वयंभूस्तोत्र भाषा।

चौपाई।

राजविषैंजुगलनि सुख किया। राज त्याग भवि शिवपद लिया॥ स्वयंबोध स्वभू भगवान। वन्दौ आदिनाथ गुणखान॥१॥ इन्द्रक्षीर सागर जल लाय। मेरु न्हवाये गाय वजाय। मदन विनाशक सुख करतार। वन्दौ अजित अजित पदकार॥ २॥ शुक्लध्यान करि करम विनाशि। घाति अघाति सकल दुखराशि॥ लह्यो मुकतिपद सुख अधिकार। वन्दौ सम्भव भवदुख टार॥ ३॥ माता पच्छिम रयनमझार। सुपने सोलह देखे सार॥ भूप पूछि फल सुनि हरषाय। वन्दौ अभिनन्दन मन लाय लाय॥४॥ सब कुवादवादी सरदार। जीते स्याद्वादधुनिधार॥ जैनधरमहरकाशक स्वामि। सुमतिदेवपद करहु प्रनामि॥ ५॥ गर्भ अगाऊ धनपति आन। करी नगरशोभा अधिकाय॥ वरखे रतन पञ्चदश मास। नमौं पदमप्रभु सुखकी रास॥ ६॥ इन्द्र फनिन्द्र नरिन्द्र त्रिकाल। वानी सुनि सुनि होहि खुस्याल॥ द्वादश सभा ज्ञान दातार। नमौं सुपारस नाथ निहार॥७॥ सुगुन छियालिस है तुममाहि। दोष अठारह कोई नाहि॥ मोहमहातम नाशक दीप। नमों चन्द्रप्रभ राख समीप॥८॥ द्वादशविधि तप करत विनाश तेरह भेद चरित परकाश॥ निज अनिच्छ भविइच्छकरान। वन्दौ पुहपदंत मन आन॥ ९॥ भवि-सुखदाय सुरगतै आय। दशविध धरम कह्यो जिनराय॥ आप-समान सवनि सुखदेह। वन्दौं शीतल धर्म सनेह॥ १०॥ समता

सुधा कोपविनाशा । द्वादशांगपाठी परकाश ॥ वारसह माम त्रयाधार । नमों श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥११॥ रत्नत्रय चिरमुकुट विशाल । शोभेकण्ठ सुगुणमनिमाल ॥ मुक्तिनार भरता भगवान । वासुपूज्य वन्दों धर ध्यान ॥१२॥ परमसमाधिसरूप जिनेश ज्ञानी ध्यानी हितउपदेश ॥ कर्मनाशि शिवसुख विलसन्त । बन्दों विमलनाथ भगवन्त ॥ १३॥ अन्तर बाहिर परिग्रह डारि । परमदिगम्बरव्रतकौंधारि ॥ सर्व जीव हित राह दिखाय । नमों अनन्त वचन मन काय ॥ १४॥ सात तत्त्वपञ्चासतिकाय । अरथ नवों छ दरब बहु भाय ॥ लोक अलोक सकल परकास । वन्दों धर्मनाथ अविनाश ॥१५॥ पञ्चम चक्रवर्ति निधिभोग । कामदेव द्वादशम मनोग ॥ शांतिकरन सोलम जिनराय । शांतिनाथ वन्दों हरखाय ॥१६॥ बहुथुति करे हरप नहि होय । निंदे दोष गहे नहि कोय ॥ शीलवान परब्रह्मस्वरूप । वन्दों कुंथुनाथ शिवभूप ॥१७॥ द्वादशगण पूजें सुखदाय । थुतिवन्दना करे अधिकाय ॥ जाकी निजथुति कबहुं न होय । वन्दों अरजिनवर पद दोय ॥१८॥ परभव रत्नत्रय अनुराग । इस भव ब्याहसमय वैराग । बालब्रह्म पूरनव्रत धार । वन्दों मल्लिनाथ जिनसार ॥१९॥ बिन उपदेश स्वयं वैराग । थुतिलौकांत करें पग लाग ॥ नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहिं । वन्दौं मुनिसुव्रत व्रत देहिं ॥ २ ॥ श्रावक विद्यावंत निहार । भगतिभावसौं दियो आहार ॥ बरसी रत्नराशि तत्काल । वन्दौं नमिप्रभु दीनदयाल ॥ २१ ॥ सब जीवनकी बन्दी छोर । रागद्वेष द्वे बन्धन तोर । रजमति तजि शिवतियसौं मि । निमिनाथ वन्दों सुख मिले ॥२२॥ दैत्य कियो उपसर्ग अपार । ध्यान देखि आयो फनिधार ॥ गयो

सीताकी अग्नि परीक्षा
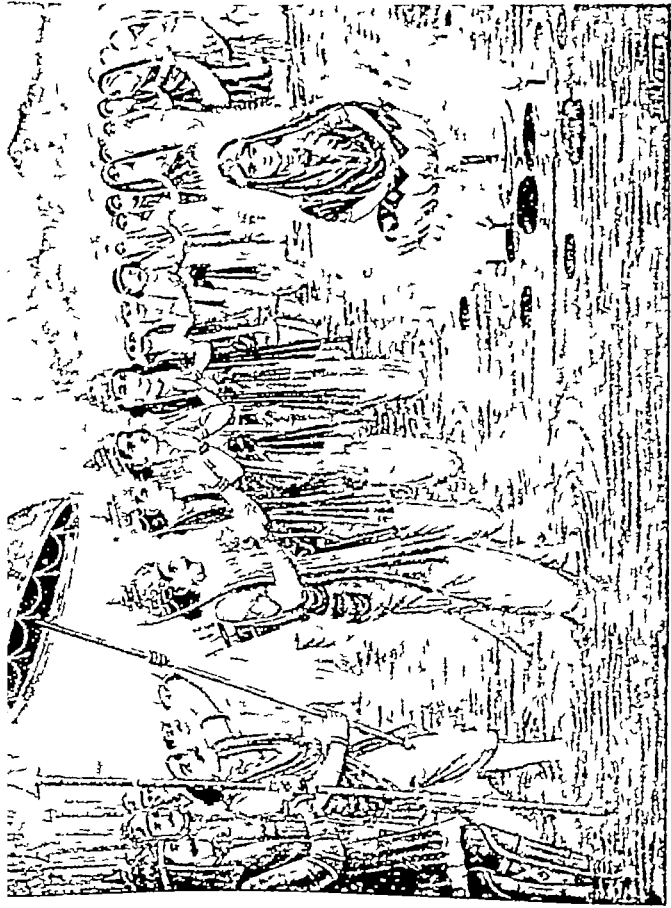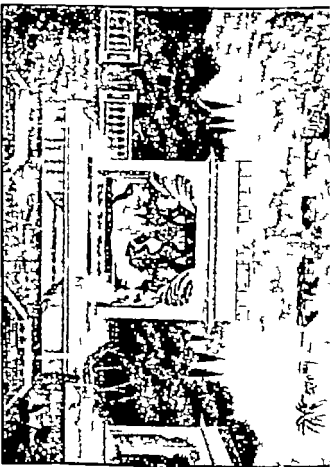
माताके सोलह स्वप्न।

कमठ शठ मुख कर श्याम। नमों मेरु सम पारसस्वामि॥ २३॥ भवसागरतें जीव अपार। धरमपोतमें धरे निहार॥ डूबत काढे दया विचार। वर्द्धमान वन्दौं बहुवार॥ २४॥

दोहा—चौवीसों पद कमलजुग, वन्दों मन वचकाय।
'द्यानत' पढ़े सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय॥ २५॥

२१—निर्वाणकाण्ड (गाथा)

अट्ठावयम्मि उसहो चपाए वासुपुज्जजिणणाहो। उज्जंते णेमि जिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो॥ १॥ वीसं तु जिणवरिन्दा अमरा सुरवन्दिदा धुदकिलेसा। सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं॥ २॥ वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे। आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाण गयाणमो तेसिं॥ ३॥ णेमिसामि पज्जण्णो सम्बुकुमारो तहेव अणिरुद्धो। बाहत्तरिकोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा॥ ४॥ रामसुवा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पञ्चकोड़ीओ। पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं॥५॥ पडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिन्दाण अट्ठकोडीओ। सेत्तजय-गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं॥ ६॥ सन्ते जे वलभद्दा जदुवणरिन्दाण अट्ठकोडीओ। गजपथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं॥ ७॥ रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णील-महणीलो। णवणवदी कोडीओ तुङ्गीगिरिणिव्वुदे वन्दे॥ ८॥ णगाणगकुमारा कोडी पञ्चद्धमुणिवरा सहिया। सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमों तेसिं॥ ९॥ दहमुहरायस सुवा कोड़ीपञ्चद्ध मुणिवरा सहिया। रेवा उहयतडग्गे णिव्वाणगया णमोतेसिं॥१०॥

रेवायाए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवर कूडे। दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥ ११ ॥ वडवाणीवरणयरे दक्खिणभा यम्मि चूलगिरिसिहरे। इन्दजीदकुं भयण्णो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१२॥ पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो। चलणा णईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१३॥ फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे। गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१४॥ णायकुमारमुणिंदो वाल महावाल चेव अज्झेया। अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१५॥ अच्चलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे। आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१६॥ वंसत्थलवणणियरे पच्छिमभायम्मि कुन्थुगिरिसिहरे। कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१७॥ जसरहरायस्स सुआ पञ्चसयाइं कलिंगदेसम्मि। कोडिसिलाकोडिमुणि णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥१८॥ पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणि वरा पञ्च। रेसन्दीगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१९॥

२२—निर्वाण काण्ड (भाषा)

(कविवर भैया भगवतीदासजी रचित)

दोहा—वीतराग वंदौं सदा भाव सहित सिर नाय।
कहूं कांड निर्वाणकी, भाषा सुगम बनाय ॥ १ ॥

चौपाई—अष्टापद आदीसुरस्वामि। वासुपूज्य चंपापुरि नामि। नेमिनाथस्वामी गिरनार। वंदौं भाव भगति उरधार ॥ १ ॥ चरम तीर्थंकर चरमशरीर। पावापुर स्वामी महावीर ॥ शिखरसमेद जिनेसुर बीस। भावसहित वंदौं जगदीस ॥२॥ वरदत्त रायरु इन्द मुनिंद। सायरदत्त आदि गुणवृंद ॥ नगरतारवर मुनि उठकोड़ि।

वन्दों भाव सहित कर जोडि ॥ ३॥ श्रीगिरिनार शिखर विख्यात। कोडि बहत्तर अरु सौ सात ॥ संबु प्रदुम्न कुमरद्वै भाय। अनिरुध आदिनमूं तसु पाय ॥ ४ ॥ रामचन्द्रके सुत द्वैं वीर। लाडनरिंद आदि गुणधीर ॥ पांच कोड़ि मुनि मुक्तिमझार। पावागिरि वंदौं निरधार ॥५॥ पांडव तीन द्रविड़ राजान। आठकोड़िमुनि मुकति पयान ॥ श्रीशत्रु जयगिरिके शीस। भावसहित वन्दौं निश दीस ॥ ६ ॥ जे वलिभद्र मुकतिमें गये। आठकोडि मुनि औरहि भये ॥ श्रीगजपंथशिखर सुविशाल। तिनके चरण नमू तिहु काल ॥७॥ राम हनू सुग्रीव सुडोल। गवयगवाख्य नील महानील ॥ कोड़ि निन्यानवें मुक्तिपयान। तुङ्गीगिरि वन्दौं धरि ध्यान ॥ ८ ॥ नङ्ग अनङ्ग कुमार सुजान। पञ्चकोड़ि अरु अर्धप्रमान ॥ मुक्ति गये सिद्धुनागिरसीस। ते वन्दौं त्रिभुवन पति ईस ॥९ ॥ रावणके सुत आदि कुमार। मुक्त गये रेवातट सार ॥ कोड़ि पञ्च अरु लाख पचास। ते वन्दौं धरि परम हुलास ॥ १० ॥ रेवानदी सिद्धवर कूट पश्चिमदिशा देह जह छूट ॥ द्वै चक्री दशकामकुमार। ऊठकोड़ि वन्दों भवपार ॥११॥ वडवानी वडनयर सुचङ्ग। दक्षिन दिशिगिरि चूल उतङ्ग ॥ इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण। ते वन्दौं भवसागरतण ॥ १२ ॥ सुवरणभद्रआदि मुनि चार। पावागिरिवर शिखरमझार। चेलना नदी तीरके पास। मुक्ति गये वन्दों नित तास ॥१३॥ फलहोडी वडगाम अनूप। पश्चिमदिशा द्रोणगिरिभूप ॥ गुरुदत्तादि मुनीसुर जहां। मुक्ति गये वन्दो नित तहाँ ॥ १४ ॥ वाल महावाल मुनि दोय नागकुमार मिले त्रय होय ॥ श्रीअष्टापद मुक्तिमझार। ते वन्दों नित सुरतसंभार ॥ १५ ॥ अचलापुरकी दिश ईशान। तहां

क्ता· शिवसुखसमाजं किमु तदा । महावीर० ॥ ४ ॥ कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो । विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः ॥ अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिः । महावीर० ॥ ५ ॥ यदीया वाग्गङ्गा विविधनयकल्लोलविमला ॥ वृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनता या स्नपयति ॥ इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता । महावीर० ॥ ६ ॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी कामसुभटः । कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजित ॥ स्फुरन्नित्यानन्दप्रशमपदराज्याय स जिन. । महावीर० ॥ ७ ॥ महामोहातङ्कप्रशमनपराकस्मिकभिषग् । निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा मङ्गलकर. ॥ शरण्य साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो । महावीर० ॥ ८ ॥ महावीराष्टकं स्तोत्र भक्त्या भागेन्दुना कृतम् । य· पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥ ९ ॥

२४—महावीराष्टक (भाषा)

प० गजाधरलालजी, न्यायतीर्थ कृत

जिन्होंकी प्रज्ञामें मुकुरसम चैतन्य जड भी, स्थिती नाशोत्पत्ती युत झलकते साथ सब ही । जगद्ज्ञाता मार्ग प्रकट करते सूर्यसम जो, महावीरस्वामी दरश हमको दे प्रकट वे ॥ १ ॥ जिन्होंके दो चक्षु, पलक अरु लाली रहित हों, जनोंको दर्शाते हृदयगत क्रोधानिलयको । जिन्होंकी शात्यात्मा, अतिविमलमूर्ती स्फुटमहा, महावीरस्वामी, दरश हमको दे प्रकट वे ॥ २ ॥ नमते इन्द्रोंके, मुकुटमणिकी काति धरता, जिन्होंके पादोंका युग, ललित संतप्त जनको । भवाग्नीका हर्ता, स्मरण करते ही सुजल है, महावीरस्वामी, दरश हमको दे

हो

जावे हूआ स्वर्गी ताही, समय गुणधारे अति सुखी। सबै जो सुखीके, सुख भगत तो विस्मय कहा महावीरस्वामी, दया हमको दें प्रकट वे ॥ ४ ॥ तपे सोने ज्यों भी रहित वपुसे, ज्ञानघन हैं, सकेसे नाना जो नृपतिवर सिद्धार्थसुत हैं। न जन्मे जो श्रीमान्, भवरत नहीं अद्भुत गती महावीरस्वामी दया हमको दें प्रकट वे ॥ ५ ॥ जिन्होंकी वाणीया समल मयकल्लोल परली महावाली छीलोंको सुविमल महा ज्ञान जलसे। अभी भी सेते हैं, बुधजन महाहंस जिसको महावीरस्वामी, दया हमको दें प्रकट वे ॥ ६ ॥ त्रिलोकोंका जेता, मदनभट जो दुर्जय महा, युवावस्थामें भी, वह दलित कीना स्वबलसे। प्रकाशी मुक्तीके, अतिसुखदाता जिनविभू, महावीरस्वामी दया हमको दें प्रकट वे ॥ ७ ॥ महा मोहव्याधी हरणकरता वैद्य सहज बिना इच्छा बंधू प्रथितजग कल्याण करता। सहारा भव्योंके सकल जगमें उत्तम गुणी, महावीरस्वामी, दया हमको दें प्रकट वे ॥ ८ ॥

संस्कृत वीराष्टक रच्यो भागचन्द्र रुचिधाम।
तस भाषा अनुवाद यह पढ़ि पावे निर्वाण ॥ १ ॥

२५—अकलंक स्तोत्र।

शार्दूलविक्रीडित छन्द।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालोकितम्। साक्षाद्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि ॥ रागद्वेषभयामयान्तकजरालोलत्वलोभादयो नालं यत्पदलंघनाय स महादेवो मया वंद्यते ॥ १ ॥ दग्धं येन पुरत्रयं शरभुवा तीव्रार्चिषा वह्निना। यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने यस्यात्मजो वा गुहः ॥ सोऽयं किं मम

शङ्करो भयतृपारोपार्तिमोहक्षयं । कृत्वा यः स तु सर्ववित्तनुभृतां क्षेमकरः शङ्करः ॥२॥ यत्नाद्येन विदारिता कररुहैर्दैत्येन्द्रवक्षःस्थलम् सारथ्येन धनञ्जयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान् ॥ नासौ विष्णुरनेककालविषया यज्ज्ञानमव्याहतम् । विश्वं व्याप्य विजृम्भते स तु महाविष्णु सदेष्टो मम ॥ ३ ॥ उर्वश्यामुदपादि रागबहुल चेतो यदीया पुनः । पात्रीदण्डकमण्डलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थितिम् ॥ आविर्भावयितु भवन्ति स कथं ब्रह्माभवेन्मादृशाम् । क्षुत्तृष्णाश्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु न ॥४॥ यो जग्ध्वा पिशितासमत्स्यकवला जीव च शून्या वदन् । कर्त्ताकर्मफल न भुंक इति यो वक्ता स बुद्धःकथम् ॥ यज्ज्ञान क्षणवर्त्ति वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा यो जातन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्स बुद्धो मम ॥ ५ ॥ स्रग्धरा छन्द—ईश. किं छिन्नलिंगो यदि विगतभय. शूलपाणिः कथं स्यात् नाथ· किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगन सात्मजश्च ॥ आर्द्राजः किन्त्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तराय । साक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशु कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥ ६ ॥ ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेशविभ्रांतचेता । शम्भु खट्वाङ्गधारीगिरिपतितनयापांगलीलानुविद्ध विष्णुश्चक्राधिप. सन्दुहितरमगमद्गोपनाथस्य मोहादर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभय· कोयमेष्वासनाथ· ॥ ७ ॥

शार्दूल विक्रीडित छन्द—एको नृत्यति विप्रसार्य ककुभा चक्रे सहस्र भुजानेक शेषभुजङ्गभोगशयने व्यादाय निद्रायते । दृष्टुं चारुतिलोत्तमामुखमगादेकश्चतुर्वक्त्रता मेते मुक्तिपथा वदन्तिविदुषामित्येतदत्यद्भुतम् ॥ ८ ॥

स्रग्धरा छन्द—यो विश्वं वेद वेद्यं जननजलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम्। तं वन्दे साधुवन्द्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तं बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥ ९ ॥

शार्दूलविक्रीडित छन्द—माया नास्ति जटा कपालमुकुटं चन्द्रो न मूर्द्धावली खट्वाङ्गं न च वासुकिर्न च धनुः शूलं न चोग्रं मुखं। कामो यस्य न कामिनी न च वृषो गीतं न नृत्यं पुनः सोऽस्मान् पातु निरञ्जनो जिनपतिः सर्वत्र सूक्ष्मः शिवः ॥ १० ॥ नो ब्रह्माङ्कित भूतलं न च हरेः शम्भोर्न मुद्राङ्कितं नो चन्द्रार्ककराङ्कितं सुरपतेर्वज्राङ्कितं नैव च। षड् वक्त्राङ्कितबौद्धदेवहुतभुग्यक्षोरगैर्नाङ्कितं नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्रमुद्राङ्कितं ॥ ११ ॥ मौञ्जीदण्डकमण्डलुप्रभृतयो नो लाञ्छनं ब्रह्मणो। रुद्रस्यापि जटाकपालमुकुटं कौपीनखट्वाङ्गना। विष्णोश्चक्रगदादिशङ्खमतुलं बुद्धस्य रक्ताम्बरं। नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्रमुद्राङ्कितम् ॥ १२ ॥ नाहङ्कारवशीकृतेन मनसा न द्वेषिणा केवलं। नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या मया। राज्ञः श्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायः विदग्धात्मनो बौद्धोघान्सकलान् विजित्य स घटः पादेन विस्फालितः

स्रग्धराछन्दः—यद् वाङ्गं नैव हस्ते नच हृदि रचिता लम्बते मुण्डमाला। भस्माङ्गं नैव शूलं नच गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं चन्द्रार्द्धं नैव मूर्द्ध न्यपि भुजगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्रः। तं वन्दे त्यक्तदोषं भवभय मथनं ईश्वरं देवदेवं ॥ १४ ॥

किंवाद्यो भगवानमेयमहिमा देवोऽकलङ्कः कलौ काले यो जनतासुधर्मनिहितो देवोऽकलङ्को जिनः। यस्य स्फारविवेकमुद्रलहरी

जालेऽप्रमेयाकुला, निर्मग्ना ननुतेतरा भगवती ताराशिरः कम्पनम्
॥१५॥ सा तारा खलु देवता भगवतीमन्यापि मन्यामहे, षण्मासा-
वधिजाड्यसाख्यभगवद्भट्टाकलंकप्रभो । वाक्कल्लौलपरम्पराभिर-
मतेनूनं मनोमज्जनव्यापारं सहतेस्म विस्मितमति. सन्ताड़ितेतस्ततः
॥१६॥ इति श्री अकलकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

२६—कल्याणमन्दिरस्तोत्रं ।

कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि भीताभयप्रदमनिन्दितमङ्घ्रि, प-
झम् । संसारसागरनिमज्जदशेषजंतुपोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य
॥ १ ॥ यस्य स्वयं सुरगुर्गरिमाम्बुराशे स्तोत्रं सुविस्तृनमतिर्न
विभुर्विधातुम् । तीर्थेश्वरस्य कमठष्मयधूमकेतोस्तस्याहमेप किल
सस्तवनं करिष्ये ॥ २ ॥ युग्मम् ॥ सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं
स्वरूपमस्मादृशा कथमधीश भवन्त्यधीशा । धृष्टोऽपि कौशिकशि
शुर्यदि वा दिवान्धो रूप प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मे ॥ ३ ॥ मोह
क्षयादनुभवन्नपि नाथ मर्त्यो नूनं गुणान्गणयितुं न नव क्षमेत ।
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मान्मीयेत केनजल धेर्ननु रत्नराशि
॥ ४ ॥ अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ जडाशयोऽपि कर्तुं स्तवं
लसदसख्यगुणाकरस्य । बालोऽपि किं न निजबाहुयुग वितत्य
विस्तीर्णता कथयति स्वधियाम्बुराशे ॥ ५ ॥ ये योगिनामपि
न यान्ति गुणास्तवेश वक्तुं कथ भवति तेषु ममावकाश ।
जाता तदेवमसमीक्षितकारितेय जल्पन्ति वा निजगिरा ननु
पक्षिणोऽपि ॥ ६ ॥ आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन संस्तवस्ते नामापि
पाति भवतो भवतो जगन्ति । तीव्रातपोपहतपान्थजनान्निदाघे
प्रीणाति पद्मसरस. सरसोऽनिलोऽपि ॥ ७ ॥ हृद्वर्तिनि त्वयि विभो

शिथिली भवन्तिजन्तो क्षणेन निविडा मपि कर्मबन्धा। सद्यो
भुजङ्गममया इव मध्यभागमभ्यागते वनशिखण्डिनि चन्दनस्य
॥ ८ ॥ मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्व
यि वीक्षितेऽपि। गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रे चौरैरिवाशु
पशवः प्रपलायमानैः ॥ ९ ॥ त्वं तारको जिन कथं भविनां त एव
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः। यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष
नूनमन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ॥ १० ॥ यस्मिन् हरप्रभृत
योऽपि हतप्रभावा सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन। विध्या
पिता हुतभुजः पयसाथ येन पीतं न किं तदपि दुर्धरवाडवेन
॥ ११ ॥ स्वामिन्ननल्पगरिमाणमपि प्रपन्नास्त्वां जन्तवः कथमहो
हृदये दधानाः। जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन चिन्त्यो न
हन्त महतां यदि वा प्रभावः ॥ १२ ॥ क्रोधस्त्वया यदि विभो
प्रथमं निरस्तो ध्वस्तास्तदा वत कथं किल कर्मचौराः। प्लोषत्यमुत्र
यदि वा शिशिरापि लोके नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी
॥ १३ ॥ त्वां योगिनो जिन सदा परमात्मरूपमन्वेषयन्ति हृदया
म्बुजकोषदेशे। पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य दक्षस्य सम्भव
पदं ननु कर्णिकायाः ॥ १४ ॥ ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनः क्षणेन
देहं विहाय परमात्मदशां व्रजन्ति। तीव्रानलादुपलभावमपास्य
लोके चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः ॥ १५ ॥ अन्तः सदैव जिन
यस्य विभाव्यसे त्वं भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्। एत
त्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः
॥ १६ ॥ आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्ध्या। ध्यातो जिनेन्द्र भव
तीह भवत्प्रभावः। पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं किं नाम नो

विषविकारमपाकरोति ॥ १७ ॥ त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि नून विभो हरिहरादिधिया प्रपन्नाः। किं काचकामलिभिरीश सितोऽपि शङ्खो नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण ॥ १८ ॥ धर्मोपदेश समये सविधानुभावादास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः। अभ्युद्गते दिनपतौ स महीरुहोऽपि कि वा विवोधमुपयाति न जीव लोक. ॥ १९ ॥ चित्रं विभो कथमवाङ्मुखवृन्तमेव विष्वक्पतत्य विरला सुरपुष्पवृष्टि॰। त्वद्गोचरे सुमनसा यदि वा मुनीश! गच्छन्ति नूनमध एव हि वन्धनानि ॥ २० ॥ स्थानेगभीरहृदयोदधिसम्भवाया. पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति। पीत्वा यत॰ परमसंमदसङ्गभाजो भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् ॥२१॥ स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो मन्ये वदन्ति शुचय. सुरचामरौघा॰। येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुङ्गवाय ते नूनमूर्ध्वगतय खलु शुद्धभावा ॥२२॥ श्यामं गभीरगिरमुज्ज्वलहेमरत्नसिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिनस्त्वाम्। आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैश्चामीकराद्रिशिरसीव नवाम्बुवाहम् ॥२३॥ उद्गच्छता तव शितिद्युतिमण्डलेनलुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव। सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीत राग? नीरागता व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥ २४ ॥ भो भो प्रमादमवधूय भजध्वमेनमागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति सार्थवाहम्। एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ॥ २५ ॥ उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ तारान्वितो विधुरय विहताधिकार.। मुक्ताकलापकलितोरुसितातपत्रव्याजात्त्रिधा धृतधनुर्ध्रुवमभ्युपेत ॥ २६ ॥ स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन कांतिप्रतापयशसामिव सञ्चयेन ॥ माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन

सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥२७॥ दिव्यस्रजो जिन नमत्त्रि-
दशाधिपानामुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान्। पादौ श्रयन्ति
भवतो यदि वा परत्र त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ॥ २८ ॥
त्वं नाथ जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽपि यत्तारयस्यसुमतो निज-
पृष्ठलग्नान्। युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तवैव चित्रं विभो
यदसि कर्मविपाकशून्यः ॥ २९ ॥ विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुर्ग-
तस्त्वं किं वाक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश। अज्ञानवत्यपि सदैव
कथंचिदेव ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकासहेतु ॥ ३० ॥
प्राग्भारसम्भृतनभांसि रजांसि रोषादुत्थापितानि कमठेन शठेन
यानि। छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो ग्रस्तस्त्वमीभिर-
यमेव परं दुरात्मा ॥ ३१ ॥ यद्गर्जदूर्जितघनौघमदभ्रभीम-
भ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरधारम्। दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि
दध्रे तेनैव तस्य जिन दुस्तरवारिकृत्यम् ॥ ३२ ॥ ध्वस्तोर्ध्व-
केशविकृताकृतिमर्त्यमुण्डप्रालम्बभृद्भयदवक्त्रविनिर्यदग्निः। प्रेत-
व्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भवदुःख-
हेतु ॥ ३३ ॥ धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसन्ध्यमाराधयन्ति
विधिवद्विधुतान्यकृत्याः। भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशा पाद-
द्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ॥ ३४ ॥ अस्मिन्नपारभववारि-
निधौ मुनीश ! मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि। आकर्णिते
तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति ॥३५॥
जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं न देव। मन्ये मया महितमीहितदान-
दक्षम्। तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानां जातो निकेतनमहं म-
थिताशयानाम् ॥ ३६ ॥ नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन पूर्वं विभो

सकृदपि प्रविलोकितोऽसि । मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते॥ ॥३७ ॥ आकर्णितोपि महितोऽपि निरीक्षितोपि नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या। जातोऽस्मि तेन जन बान्धव दु:खपात्रं यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः ॥ ३८ ॥ त्वं नाथ दुःखिजनवत्सल हे शरण्य ! कारुण्यपुण्यवसते वशिनां वरेण्य। भक्त्या नते मयि महेश दया विधाय दुःखाकुरोद्दलनतत्परता विधेहि ॥ ३९ ॥ निःसंख्यसारशरण शरणं शरण्यमासाद्य सादितरिपुप्रथितावदानम्। त्वत्पादपङ्कजमपि प्रणिधानवन्ध्यो वन्ध्योऽस्मि तद्भुवनपावन हा हतोऽस्मि ॥ ४० ॥ देवेन्द्रवन्द्य विदिताखिलवस्तुसार संसारतारक विभो भुवनाधिनाथ। त्रायस्व देव करुणाह्रद मां पुनीहि सीदन्तमद्य भयदव्यसनाम्बुराशेः ॥४१॥ यद्यस्ति नाथ भवदङ्घ्रिसरोरुहाणां भक्तेः फलं किमपि सन्ततसञ्चितायाः। तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्यभूयाः स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ॥ ४२ ॥ इत्थं समाहितधियो विधिवज्जिनेंद्र सान्द्रोल्लसत्पुलककञ्चुकिताङ्गभागाः। त्वद्बिम्बनिर्मल मुखाम्बुजबद्धलक्ष्या ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः ॥ ४३ ॥ जननयनकुमुदचन्द्र—प्रभास्वराः स्वर्गसम्पदो भुक्त्वा। ते विगलितमलनिचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ॥ ४४ ॥

२७—कल्याणमन्दिर (भाषा)

दोहा—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन।
वंदू परमानन्दमय, घट घट अन्तर लीन ॥

निर्भय करण परम परधान। भव समुद्र जल तारण यान ॥
शिव मन्दिर अघहरण अनिंद। वंदू पार्श्व चरण अरविन्द ॥ १ ॥

कमठ मान भंजन वरवीर । गरिमा सागर गुण गम्भीर ॥
सुर गुरु पार लहैं नहिं जासु । मैं अजान गुण बरणूं तासु ॥ २ ॥
प्रभु स्वरूप अति अगम अथाह । क्यों हमसे यह होय निवाह ॥
ज्यों दिन अन्ध उलूको पोत । कहि न सकै रविकिरण उद्योत ॥३॥
मोह हीन जाने मनमांहि । तोहि न तुम गुण बरणे जाहिं ॥
प्रलय पयोधि करे जल गौन । प्रगटहिं रतन गिने तिहि कौन ॥४॥
तुम असंख्य निर्मल गुण खान । मैं मतिहीन कहौं निज बान ॥
ज्यों बालक निज बांहि पसार । सागर परिमित कहै विचार ॥५॥
जो योगीन्द्र करहिं तप खेद । तेऊ न जानहिं तुम गुण भेद ॥
भक्ति भाव मुझ मन अभिलाष । ज्यों पक्षी बोलै निज भाष ॥६॥
तुम यश महिमा अगम अपार । नाम एक त्रिभुवन आधार ॥
आवै पवन पद्म सर होय । ग्रीष्म तपन निवारै सोय ॥ ७ ॥
तुम आवत भविजन मनमांहि । कर्म निबन्ध शिथिल ह्वै जाहिं ॥
ज्यों चन्दन तरु बोलै मोर । डरहिं भुजंग भगैं चहुं ओर ॥ ८ ॥
तुम निरखत जन दीनदयाल । संकट तैं छूटैं तत्काल ॥
ज्यों पशु घेरि लेहिं निशि चोर । ते तज भागहिं देखत भोर ॥ ९ ॥
तुम भविजन तारक किम होहि । ते चित धार तिरहिं लै तोहि ॥
यह ऐसे कर जान स्वभाव । तिरहिं मसक ज्यों गर्भित बाव ॥१०॥
जिन सब देव किये वश वाम । तैं छिनमें जीत्यो सो काम ॥
ज्यों जल करै अग्नि कुल हान । बडवानल पीवै सो पान ॥११॥
तुम अनन्त गुरुवा गुण लिये । क्योंकर भक्ति धरूं निज हिये ॥
ह्वै लघुरूप तरहिं संसार । यह प्रभु महिमा अगम अपार ॥ १२ ॥
क्रोध निवार कियो मन शान्ति । कर्म सुभट जीते किहि भांति ॥

यह पट्टुनर देखहु संसार। नील वृक्ष ज्यों दहै तुपार ॥ १३ ॥
मुनि जन हिये कमल निज टोहि। सिद्ध स्वरूप सम ध्यावैं तोहि ॥
कमल कर्णिका विन नहि और। कमलवीज उपजन्नकी ठौर ॥१४॥
जव तुम ध्यान धरे मुनि कोय। तव विदेह परमातम होय ॥
जैसे धातु शिला तनु त्याग। कनक स्वरूप धरै जव आग ॥१५॥
जाके मन तुम करहु निवास। विनश जाय क्यों विग्रह नास ॥
ज्यों महन्त विच आवे कोय। विग्रह मूल निवारै सोय ॥१६॥

करहिं विविध जो आतम ध्यान। तुम प्रभावतैं होय निदान ॥
जैसे नीर सुधा अनुमान। पीवत विष विकारकी हान ॥ १७ ॥
तुम भगवन्त विमल गुण लीन। समल रूप मानहि मतिहीन ॥
ज्यों नीलिया रोग दृग गहै। वर्ण विवर्ण शंख सो कहै ॥ १८ ॥

दोहा—निकट रत उपदेश सुन, तरुवर भया अशोक। ज्यों रवि ऊगत जीव सव, प्रकट होत भुवि लोक ॥ १९ ॥ सुमन वृष्टि ज्यों सुर करहि हेठ वीठ मुख सोय। ज्यों तुम सेवत समन जन वन्ध अधोमुख होय ॥२०॥ उपजी तुम हिय उदधितैं, वाणी सुधा समान। जिहिं पीवत भविजन लहै, अजर अमर पदथान ॥ २१ ॥ कहहिं सार तिहुं लोकको, यह सुर चामर दोय। भाव सहित जो जिन नमैं, तिस गति ऊरध होय ॥ २२ ॥ सिंहासन गिरि मेरु सम प्रभु धुनि गरजत घोर। श्याम सुतन तनरूप लखि, नाचत भवि-जन मोर ॥ २३ ॥ छविहित होय अशोक दल, तुम भामण्डल देख। वीतरागके निकट रह, रहै न राग विशेष ॥ २४ ॥ सीख कहै तिहुलोकको, यह सुर दुंदुभिनाद। शिवपथ सारथ वाह जिन, भजो तजो परमाद ॥ २५ ॥ तीन छत्र त्रिभुवन उदित,

मुक्ताफल छवि देत। त्रिविध छत्र मनहुँ शशि सेवत नखत समेत ॥ २६ ॥

पद्धड़ी छन्द—प्रभु तुम शरीर दुति रतन जेम, परताप पुञ्जजिमि शुद्ध हेम। अति धवल सुयश रूपासमान, तिनके गुण तीन विरा जमान ॥ २७ ॥ सेवहिं सुरेन्द्रकर नमत भाल, तिन सीस मुकुट तज देय माल। तुम चरण लगत लहलहै प्रीत, नहिं रमहिं और जन सुमन रीति ॥ २८ ॥ प्रभु भोग विमुख तन कर्म दाह जन पार करत भवजल निवाह। ज्यों माटी कलश सुपक्व होय ले भार अधोमुख तिरहिं तोय ॥ २९ ॥ तुम महाराज निर्धन निराश, तज वैभव सब जग प्रकाश। अक्षर स्वभाव सुलिखे न कोय महिमा भगवन्त भगवन्त होय ॥ ३० ॥ कोपियो कमठ निज वैर देख तिन करी धूलि वर्षा विशेष। प्रभु तुम छाया नहिं भई हीन सो भयो पापि लम्पट मलीन ॥ ३१ ॥ गर्जत घोर घन अन्धकार, चमकत विज्जु जल मुसलधार। बरसंत कमठ धर ध्यान रुद्र, दुस्तर करन्त निज भव समुद्र ॥३२॥ वस्तु छन्द—मेघ माली मेघ माली आप बल फोरि भेजे तुरतपिशाच गण नाथ पास उपसर्ग कारण। अग्नि जाल झूलंत मुख धुनि करत जिमि मत्त वारण॥ काल रूप विकराल तन मुण्डमाल हित कण्ठ। ह्वै निशंक वह रंक निज करें कर्म दृढ़ गंठ ॥३३॥

चौपाई—जे तुम चरण कमल तिहुँकाल,सेवहिं तज माया जंजाल। भाव भक्ति मन हर्ष अपार, धन्य धन्य जग तिन अवतार ॥ ३४ ॥ भवसागर महि फिरत अजान मैं तुम सुयश सुन्यौं नहिं कान। जो प्रभु नाम मन्त्र मन धरै तासों विपति भुजङ्गम डरै ॥ ३५ ॥ मन

वाछित फल जिन पद माहि। मैं पूरव भव पूजे नाहिं॥ माया मगन मैं फिरो अज्ञान। करहिं रक जन मुझ अपमान॥ ३६॥ मोह तिमिर छाये द्रग मोहि। जन्मान्तर देखो नहिं तोहि॥ तो दुर्जन सङ्गति मुझ गहै। मरम छेदके कुवचन कहै॥ ३७॥ सुनो कान यश पूजे पांय। नैनन देखो रूप अघाय॥ भक्ति हेतु न भयो चितचाव। दुखदायक किया विन भाव॥ ३८॥ महाराज शरणागतपाल। पतित उधारण दीनदयाल॥ सुमिरण करहु नाय निज शीस। मुझ दुख दूर करो जगदीश॥ ३९॥ कर्मनिकन्दन महिमा सार। अशरणशरण सुयश विस्तार॥ नहिं सेऊं तुमरे प्रभु पांय। तो मुझ जन्म अकारथ जाय॥ ४०॥ सुरपतिवन्दित दयानिधान। जगतारण जगपति जगयान॥ दुख सागर ते मोहि निकास। निर्भय थान देहु सुखरास॥ ४१॥ मैं तुम चरणकमल गुण गाय। वहुविधि भक्ति करी मनलाय। जन्म जन्म प्रभु पाऊं तोहि। यह सेवा फल दीजे मोहि॥ ४२॥

रोडक छन्द—यह विधि श्रीभगवन्त सुयश जे भवि जन भाषहिं। ते निज पुण्य भंडार सञ्च चिर पाप प्रणाशहिं॥ रोम रोम हुलसन्त अन्त प्रभु गुण मन ध्यावें। स्वर्ग सम्पदा भुञ्ज वेग पञ्चम गति पावें॥ ४३॥

दोहा—यह कल्याण मन्दिर कियो, कुमुदचन्द्रकी बुद्ध।
भाषा कहत वनारसी, कारण समकित शुद्ध॥ ४४॥

२८—विषापहार स्तोत्र भाषा।

दोहा—आतम लीन अनन्तगुण स्वामी ऋषभ जिनेन्द्र।
नित प्रति वन्दित चरण युग, सुर नागेन्द्र नरेन्द्र॥ १॥

विश्व सुभाय विमल गुण ईश। विहरमान वन्दों जिन बीस॥ गणधर गौतम शारदमाय। वर दीजे मोहि बुद्धि सहाय॥२॥ सिद्ध साधु सत गुरु आधार। करूं कवित्त आतम उपकार॥ विषापहार स्तवन उद्धार। सुनत औषधी अमृत सार॥ मेरा मंत्र तुम्हारा नाम। तुम ही गारुड़ गरुड़ समान॥ तुम सम वैद्य नहीं संसार। तुम स्वामी तिहुं लोक मझार॥४॥ तुम विषहरण करन जग सन्त। नमो नमों तुम देव अनन्त॥ तुम गुण महिमा अगम अपार। सुरगुरु शेष लहैं नहिं पार॥५॥ तुम परमातम परमा-नन्द। कल्पवृक्ष पद सुखके कन्द॥ सुमिरत मेटत भय भविजन पीर। विद्यासागर गुण गम्भीर॥६॥ तुम छवि मदन महा बलवीर। संकट विकट भयभंजन धीर॥ तुम जगतारण तुम जगदीश। पतित उधारण विश्वा बीस॥७॥ तुम गुणमणि चिन्तामणि राश। चित्रवेलि चितहरण विलास॥ चित्रहरण तुमनाम अनूप। मंत्र यंत्र तुमही मणिरूप॥८॥ जैसे वज्र पर्वत परिहार। त्यों तुम नाम सु विषापहार॥ नागदमन तुम नाम सहाय। विषहर विषनाशक समुदाय॥९॥ तुम सुमरण चिन्ते मनमाहिं। विष पीवे अमृत हो जाहिं॥ नाम सुधारस वर्षे जहां। पाप व कलमष रहै न तहां॥१०॥ ज्यों पारसके परसे लोह। निज गुण तज कंचन सम होइ॥ त्यों तुम सुमरण साधे सूंघ। नीच को पावे पदवी ऊंच॥११॥ तुमहि नाम औषधि अनुकूल। महा मन्त्र सार औषध मूल। मूरख मर्म न जाने भेय। कर्म कलङ्क दहन तुम देव॥१२॥ तुम हो नाम गारुड़ गाढ़ गहै। काल भुजङ्गम कैसे रहै॥ तुमरो धनमन्तर हो जिनराय। मरण न पावेको तुम दाय॥१३॥ तुम सूरज उदयाचल आस।

संशय शीत न व्यापे तास ॥ जीवे दादुर वर्षे तोय। सुन वाणी सर जीवन होय ॥ १४ ॥ तुम विन कौन करै मुझ पार। तुम कर्त्ता हर्त्ता किरपाल ॥ १५ ॥ शरण आयो तुम्हरी जिनराज। अव मो काज सुधारो आज ॥ मेरे यह धन पूंजी पूत। साह कहे घर राखो सून ॥ १६ ॥ करौं वीनती वारम्वार। तुम विन कर्म करैको क्षार ॥ १७ ॥ विग्रह ग्रह दुख विपति वियोग। और जु घोर जलंधर रोग ॥ चरण कमल रज टुक तन लाय। कुष्ट व्याधि दीरघ मिट जाय ॥ १८ ॥ मैं अनाथ तुम त्रिभुवननाथ। मात पिता तुम सज्जन साथ ॥ तुम सा दाता कोई न आन ॥ और कहा जाऊ भगवान ॥ १६ ॥ प्रभुजी पतित उधारन आह। वाह गहेकी लाज निवाह ॥ जहा देखों तहा तुम्हीं आय। घट २ ज्योति रही ठहराय ॥ २० ॥ वाट सुघाट विषय भय जहा। तुम विन कौन सहाई तहां ॥ विकट व्याधि व्यंतर जल दाह। नाम लेत क्षण माहिं विलाह ॥ २१ ॥ आचार्य मानतुङ्ग अवसान। सकट सुमिरो नाम निधान ॥ भक्ता-मरकी भक्ति सहाय। प्रण राखे प्रगटे तिस ठाय ॥२२॥ चुगल एक नृप विग्रह ठहो। वादिराज नृप देखन गयो ॥ एकीभाव कियो निसन्देह। कुष्ट गयो कञ्चनसम देह ॥२३॥ कल्याण मन्दिर कुमुद चन्द्रठयो। राजा विक्रम विस्मय भयो ॥ सेवक जान तुम करी सहाय। पारसनाथ प्रगटे तिस ठाय ॥ २४ ॥ गई व्याधि विमल मति लही। तहा फुनि सुनिधी तुमही कही ॥ भवसुदत्त श्रीपाल नरेश। सागर जल संकट सुविशेष ॥ २५ ॥ तहा पुनि तुमही भये सहाय। आनन्दसे घर पहुंचे जाय ॥ सभा दुश्शासन पकडो चीर द्रुपदी प्रण राखो कर धीर ॥ २६ ॥ सीता लक्ष्मण दीनो साज।

रावण झीत विमीषण राज ॥ सेठ सुदर्शन साहस दियो । शूलीसे सिंहासन कियो ॥ २७ ॥ वारिषेण नृप परियो ध्यान । ततक्षण उपजो केवल ज्ञान ॥ सिंह सर्पादिक जीव अनेक । जिन सुमिरे तिन राखी टेक ॥ २८ ॥ ऐसी कीरति जिनकी कहूं । सात कहै शरणागत रहु ॥ इस अवसर आवे यह काज । मुझ सन्देह मिटे तत्काल ॥ २९ ॥ कभी छोड़ विरद महाराज । अथवा विरद निबाहो आज ॥ और अर्थ पन मेरे नाहिं । मैं निश्चय कीनो मन माहिं ॥ ३० ॥ चरण कमल छोड़ों ना सेव । मेरे तो तुम सतगुरु देव ॥ तुम ही सूरज तुमही चन्द । मिथ्या मोह निकन्दन कन्द ॥३१॥ धर्मचक्र तुम धारण धीर । विघ्नहर चक्रविदारन वीर ॥ घोर अग्नि जल भूत पिशाच । जल जन्तु मरती उपपास ॥ ३२ ॥ दुर दुष्ट्मन राजा वश होय । तुम प्रसाद गर्व नहिं कोय ॥ हय गज युद्ध सबल सामंत । सिंह शार्दूल महा मयवंत ।।३३।। दुखस्थान विपद विकराल । तुम सुमरत पूरें तत्काल ॥ पांचन पनही ममक न लाज । ताको तुम दाता गजराज ।।३४।। एक उपाय पच्यो धुन साज । तुम प्रभु बड़े गरीबनिवाज । पानीसे पैदा सब करे । भरी झाल तुम रीती करे ॥ ३५ ॥ हरता कर्ता तुम जिनराज । कौड़ी कुञ्जर करत निहाल ॥ तुम समरण अवर नो ध्यान । कहंसग प्रभुजी करों बखान ॥ ३६ ॥ आगम पन्थ न सूझे मोहि । तुमरे चरण बिना किमि होहि । भये प्रसन्न तुम साहस कियो । दयावन्त तर दर्शन दियो ॥ ३७ ॥ साह पुत्र जब चेतन भयो । हंसन हंसन घर तब गयो ॥ धनदर्शन पायो मनभावन । आज भानु मुख मयन ... मेरो

भयो ॥ कर युग जोड नवाउं शीश । मुझ अपराध क्षमो जगदीश ॥३९॥ सत्रह सौ पन्द्रह शुभ थान । नारनौल तिथि चौदश जान । पढे सुने तहां परमानन्द । कल्पवृक्ष महा सुख कन्द ॥४०॥ अष्ट सिद्धि नवनिधिसो लहै । अचलकीर्ति आचार्य कहै ॥ याको पढ़ो सूनो सब कोय । मनवांछित फल निश्चय होय ॥ ४१ ॥

दोहा—भय भञ्जन रञ्जन जुगत, विषापहार अभिराम ।
संशय तज सुमिरो सदा श्रीजिनवरको नाम ॥ ४२ ॥

॥ इति ॥

२६—एकीभाव स्तोत्र भाषा

दोहा—वादराजशमुनिराजके, चरण कमल चित लाय ।
भाषा एकीभावकी करूं स्वपर सुखदाय ॥

चौवीस मात्रा काव्य छन्द ।

जो अति एकीभाव भयो मानो अनिवारी । सो मुझ कर्म प्रबन्ध करत भव भव दुख भारी ॥ ताहि तिहारी भक्ति जनत रवि जो निरवारै । तो अब और कलेश कौन सो नाहि विदारै ॥ १ ॥ तुम जिन ज्योति स्वरूप दुरित अन्धियारी निवारी । सो गणेश गुरू कहै तत्व विद्या धनधारी ॥ मेरे चित घर माहि वसो तेजो मय यावत । पाप तिमरि अवकाश तहां सो क्योंकर पावत ॥२॥ आनन्द आंसू बदन धोय तुम सों चित सानै । गद्गद् सुरसों सुयश मन्त्र पढ पूजा ठानै ॥ ताके बहु विधि व्याध व्याल चिर काल निवासी भाजैं थानक छोड देह वम्वईके वासी ॥ ३ ॥ दिवतै आवनहार भये अवि भाग उदय वल । पहले ही सुर आय कनक मय कीय महीतल ॥ मनगृह ध्यान दुवार आय निवसे जग

नामी । जो तुममें रम करो कौन यह भवदल स्वामी ॥४॥ प्रभु सब जगके बिना हेतु बान्धव उपकारी । निरावर्ण सर्वज्ञ शक्ति जिनराज तिहारी ॥ भक्ति रचित मम चित्त सेज नित वास करोगे । मेरे दुख सन्ताप देख किम धीर धरोगे ॥ ५ ॥ भव वनमें चिरकाल भ्रमों कछु कहिय न जाई । तुम थुति कथा पियूष वापिका भाग न पाई ॥ शशि तुषार घनसार हार शीतल नहिं जा सम । करत न्हौन ता माहिं क्यों न भवताप बुझै मम ॥ ६ ॥ श्री विहार परिवाह होत शुचिरूप सकल जग । कमल कनक आभाव सुरभि श्रीवास धरत पग ॥ मेरो मन सर्वंग परस प्रभुको सुख पावै । अब सो कौन कल्याण जो न दिन २ ढिग आवै ॥ ७ ॥ भव तज सुख पद बसे काम मद सुभट संहारे । जो तुमको निरखन्त सदा प्रिय दास तिहारे । तुम वचनामृत पान भक्ति अञ्जलि सो पीवे । तिन्हे भयानक क्रूररोग रिपु कैसे छीवे ॥ ८ ॥ मानथम्भ पाषाण मान पाषाण पटन्तर । ऐसे और अनेक रत्न दीखें जग अन्तर ॥ देखत दृष्टि प्रमाण मानमद तुरत मिटावे । जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्योंकर पावे ॥ ९ ॥ प्रभु तन पर्वत परस पवन उरमें निबहै है । तासों ततछिन सकल रोग रज बाहर ह्वै है । जाके ध्यानाहूत बसो उर अम्बुज माहीं । कौन जगत उपकार करण समरथ सो नाहीं ॥ १० ॥ जन्म जन्मके दुःख सहे सबते तुम जानो । याद किये मुझ हिये लगे आयुधसे मानो ॥ तुम दयालु जगपाल स्वामि मैं शरण गही है । जो कछु करना होय करो परमाण वही है ॥ ११ ॥ मरण समय तुम नाम मन्त्र जीवक तें पायो । पापाचारी श्वान प्राण तज अमर कहायो ॥ जो मणिमाला लेय जपै

तुम नाम निरन्तर। इन्द्र संपदा लहै कौन संशय इस अन्तर ॥१२॥ जे नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित्र साधै। अनवध सुखकी सार भक्ति कूंची नहीं हाथै॥ सो शिव वाछिक पुरुष मोक्षपट केम उघारे। मोह मुहर दृढ़ करी मोक्ष मन्दिरके द्वारे ॥ १३ ॥ शिवपुर केरो पंथ पाप तम सो अति छायो। दुख स्वरूप बहु कूप खाड़ सो विकट बताओ॥ स्वामी सुखसों तहा कौन जग मारग लागे। प्रभु प्रवचन मणि दीप जौनके आगे आगे ॥ १४ ॥ कर्म पटल भू माहि दबी आतम निधि भारी। देखत अति सुख होय विमुखजन नाहिं उधारी॥ तुम सेवक तत्काल ताहि निश्चय कर धारैं थुति कुदाल सों खोदि वन्द भू कठिन विदारैं॥ १५ ॥ स्यादवाद गिर उपज मोक्ष सागर लों धाई। तुम चरणाम्बुज परस भक्ति गंगा सुखदाई॥ मोचित निर्मल थयो न्हौन रवि पूरव तामैं। अव वह होय मलीन कौन जिन संशय यामैं ॥१६॥ तुम शिव सुखमय प्रगट करत प्रभु चिन्तन तेरे। मैं भगवान समान भाव यों वरते मेरे॥ यदपि झूठ है तदपि तृप्त निश्चल उपजावै। तुम प्रसाद सकलङ्क जीव वाछित फल पावे ॥१७॥ वचन जलधि तुम देव सकल त्रिभुवनमें व्यापै। भङ्ग तरङ्गिन विकथ वाद मलमलिन उथापै। मन सुमेर सो मथै ताहि जे सम्यक ज्ञानी। परमामृत सों तृप्त होहिं ते चिर लों प्राणो ॥ १८ ॥ जो देव छविहीन वसन भूषण अभिलाषैं। वैरि सों भयभीत होय सो आयुध राखै॥ तुम सुन्दर सर्वाङ्ग शत्रु समरथ नहि कोई। भूषण वसन गदादि ग्रहण काहेको होई॥ १६ ॥ सुरपति सेवा करे कहा प्रभु प्रभुता मेरी। सोशलाघ ना लहै मिटै जगसों जग फेरि॥ तुम भवजल

थि जिहाजि तोहि शिव पन्थ बतरिये। तुही जगत् जनपालक नाथ थुतिकी थुति करिये ॥ २० ॥ वचन जाल जड़ रूप आप चिन्मूरत झांई। तातें थुति आलाप नहिं पहुँचे तुम तांई ॥ तो भी निष्फल नाहिं भक्ति रस भीने वायक ॥ सन्तनको सुरतरु समान वांछित वरदायक ॥ २१ ॥ कोप कभी नहिं करो प्रीत कबहूं नहिं धारो। अति उदास बेचाह चित्त जिनराज तिहारो ॥ तदपि आनि जग बहै बैर तुम निकट न लहिये। यह प्रभुता जग तिलक कहां तुम बिन सरधारिये ॥ २२ ॥ सुर तिय गावें सुयश सर्वगति ज्ञान स्वरूपी। जो तुमको थिर होय नमैं भवि आनन्द रूपी ॥ ताहि छेमपुर चलन वाट बाकी नहिं हो है। श्रुतिके सुमिरण माहिं सो न कब ही नर मोहै ॥ २३ ॥ अतुल चतुष्टय रूप तुमैं जो चितमें धारै। आदर सों तिहुँकाल माहिं जग थुति विस्तारै ॥ सो सुकृत शिव पन्थ भक्ति रचना कर पूरै। पञ्च कल्याणक ऋद्धि पाय निश्चय दुख चूरै ॥ २४ ॥ अहो जगत्पति पूज्य अवधि ज्ञानी मुनि हारे। तुम गुण कीर्तन माहिं कौन हम मंद विचारे ॥ थुति छल सों तुम विषें देव आदर विस्तारे। शिव सुख पूरण हार कल्पतरु-यही हमारे ॥ २५ ॥ वादिराज मुनिराज शब्द विद्याके स्वामी। वादिराज मुनिराज तर्क विद्यापति नामी ॥ वादिराज मुनिराज काव्य करता अधिकारी। वादिराज मुनिराज बड़े भवजन उपकारी ॥ २६ ॥

मूल अर्थ बहु विधि कुसुम, भाषा सूत मझार।
भक्तिमाल भूधर करी, करो कण्ठ सुखकार ॥

३०—इष्ट छत्तीसी।

सोरठा—प्रणमूं श्री अरहंत। दयाकथित जिन धर्मको। गुरु निरग्रन्थ महन्त, अवर न मानूं सर्वथा ॥१॥ विन गुणकी पहिचान जानै वस्तु समानता। तातैं परम वखान, परमेष्ठी गुणको कहूं ॥२॥ रागद्वेपयुत देव, माने हिंसाधर्म पुनि। सग्रन्थगुरुकी सेव, सो मिथ्याती जग भ्रमै ॥ ३ ॥

अरहन्तके २४ गुण।

दोहा—चौंतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ।
अनत चतुष्टय गुणसहित, छीयालीसों पाठ ॥४॥

अर्थ—३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य,४ अनंतचतुष्टय—ये अरहंतके ४६ मूल गुण होते हैं। अब इनका भिन्न भिन्न वर्णन करते हैं

जन्मके १० अतिशय।

अतिशय रूप सुगन्ध तन, नाहि पसेव निहार। प्रियहितवचन अतोल बल, रुधिर श्वेत आकार। लच्छन सहसरु आठ तन, समचतुष्कसंठान। वज्रवृपभनाराय युत, ये जनमत दश जान ॥५॥

अर्थ—१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर, पसेवरहित शरीर, ४ मलमूत्ररहित शरीर, ५ हितमित प्रिय वचन बोलना, ६ अतुल बल, ७ दुग्धवत् श्वेत रुधिर, ८ शरीरमें एक हजार आठ लक्षण, ९ समचतुरस्रस्थान १० वज्रवृपभनाराच संहुनन ये दश अतिशय अरहंत भगवानके जन्मसे ही उत्पन्न होते हैं।

केवलज्ञानके १० अतिशय।

योजन शत इकमें सुभिख, गगनगमन मुख चार। नहिं अदया, उपसर्ग नहिं नाहीं कवलाहार ॥ सब विद्या ईश्वरपनों नाहिं बढ़ें नख केश। अनिमिष दृग छायारहित, दश केवलके वेश ॥ ८ ॥

अर्थ—१ सौ योजनमें सुभिक्षता अर्थात् जिस स्थानमें केवली हों उनसे चारों तरफ सौ सौ योजनमें सुकाल होता है २ आकाशमें गमन, ३ चार मुखोंका दीखना ४ अदयाका अभाव, ५ उपसर्गरहित, ६ कवल (ग्रास) वर्जित आहार, ७ समस्त विद्याओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका नहीं बढ़ना ९ नेत्रोंकी पलकें नहीं झपकना १० छायारहित शरीर—ये १० अतिशय केवलज्ञान उत्पन्न होनेसे प्रकट होते हैं ॥ ८ ॥

देवकृत १४ अतिशय।

देवरचित हैं चार दश अर्द्ध मागधी भाष। आपस मांही मित्रता निर्मल दिश आकाश ॥ ९ ॥ होत फूल फल ऋतु सबै, पृथवी कांच समान। चरण कमलतल कमल हैं, नभ तें जयजय बान ॥१०॥ मन्द सुगन्ध बयारि पुनि गंधोदककी वृष्टि। भूमिविषैं कंटक नहीं, हर्षमयी सब सृष्टि ॥ ११ ॥ धर्मचक्र आगे रहै, पुनि वसु मङ्गल सार। अतिशय श्रीअरहंतके, ये चौतीस प्रकार ॥

अर्थ—१ भगवानकी अर्द्ध मागधी भाषाका होना, २ समस्त जीवोंमें परस्पर मित्रताका होना दिशाओंका निर्मल होना, ४ आकाशका निर्मल होना ५ सब ऋतुके फल पुष्प धान्यादिकका एकही समय फलना ६ एक योजन तककी पृथिवीका दर्पणवत् निर्मल होना, ७ चलते समय भगवानके चरण कमलके तले सुवर्ण

कमलका होना ८ आकाशमे जयजय ध्वनिका होना, ९ मंदसुगन्धित पवनका चलना, १० सुगन्धमय जलकी वृष्टिहोना ११पवनकुमार देवोंकेद्वारा भूमिका कण्टक रहित होना १२ समस्तजीवोंका आनन्दमय होना, १३ भगवानके आगे धर्मचक्रका चलना १४ छत्र चमर ध्वजा घन्टादि अष्ट मङ्गल द्रव्योंका साथ रहना इस प्रकार सब मिल कर ३४ अतिशय अरहंत भगवान्के होते हैं ॥ १२ ॥

अष्ट प्रतिहार्य।

तरु अशोकके निकटमें, सिंहासन छविदार। तीन छत्र सिरपर लसै भामण्डल पिछवार ॥ १३ ॥ दिव्यध्वनि मुखतें खिरै पुष्पवृष्टि सुर होय। ढ़ारैं चौसठि चमर लख। बाजें दुंदुभि जोय ॥ १४ ॥

अर्थ—१ अशोक वृक्षका होना २ रत्नमय सिंहासन ३ भगवान्के सिरपर तीन छत्रका फिरना ४ भगवान्के पीछे भामण्डल का होना, ५ भगवान्के मुखसे दिव्यध्वनिका होना, ६ देवताओंके द्वारा पुष्पवृष्टिका होना ७ यक्षदेवोंद्वारा चौसठ चवरोंका ढुरना, दुदुभी बाजोंका बजना ये आठ प्रातिहार्य्य हैं।

अनन्तचतुष्टय।

ज्ञान अनन्त अनन्त सुख दरस अनन्त प्रमान।
बल अनन्त अरहत सो, इष्टदेव पहिचान ॥ १५ ॥

अर्थ—१ अनन्तदर्शन, २ अनन्तज्ञान, ३ अनन्तसुख, ४अनन्त वीर्य—जिसमें इतने गुण हों वह अरहन्त परमेष्टी है।

अष्टादशदोषवर्जन।

जनम जरा तिरषा क्षुधा विस्मय आरत खेद। रोग शोक मद मोह भय निद्रा चिन्ता स्वेद ॥ १६ ॥ रागद्वेष अरु मरण जुत यह

मयास्त्र दोष। नाहिं होत अरहन्तके सो छवि लायक मोष।

अर्थ—१ जन्म, २ जरा, ३ तृषा ४ क्षुधा, ५ आश्चर्य, ६ अरति (पीड़ा) ७ खेद (दुख) ८ रोग ९ शोक, १० मद, ११ मोह १२ भय, १३ निद्रा १४ चिन्ता १५ पसीना, १६ राग १७ द्वेष १८ मरण—ये १८ दोष अरहन्त भगवानमें नहीं होते हैं ॥ १७ ॥

सिद्धोंके आठ गुण।

समकित दरसन ज्ञान अगुरुलघू अवगाहना।
सूक्ष्म वीरजवान निराबाध गुण सिद्धके ॥ १८ ॥

अर्थ—१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान ४ अगुरुलघुत्व ५ अव गाहनत्व ६ सूक्ष्मत्व ७ अनन्तवीर्य्य ८ अव्याबाधत्व—ये सिद्धों के ८ मूलगुण होते हैं ॥

आचार्यके ३६ गुण—द्वादश तप दश धर्मयुत पालें पंचाचार।
षट् आवश्यक गुप्तित्रय आचारज पदसार ॥

अर्थ—तप १२ धर्म १० आचार ५, आवश्यक ६, गुप्ति ३ ये आचार्य महाराजके ३६ मूलगुण होते हैं। अब इनको भिन्न भिन्न कहते हैं ॥ १९ ॥

द्वादश तप

अनसन ऊनोदर करें, व्रतसंख्या रस छोर। विविक्तशयन आसन धरें काय कलेश सुठोर। प्रायश्चित धर विनययुत वैयाव्रत स्वाध्याय। पुनि उत्सर्ग विचारके धरें ध्यान मन लाय ॥ २१ ॥

अर्थ—१ अनसन, २ ऊनोदर, ३ व्रतपरिसंख्यान ४ रसपरि त्याग ५ विविक्तशय्यासन ६ कायक्लेश, ७ प्रायश्चित्त धैमा८पोश

प्रकारका विनय करना, ६ वैयाव्रतकरना, १० स्वाध्याय करना११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोडना) और १२ ध्यान करना—ये बारह प्रकारके तप हैं ॥ २१ ॥

दश धर्म—छिमा मार्दव आरजव, सत्यवचन चित पाग ।
संजम तप त्यागी सरव आकिञ्चन तियत्याग ॥

अर्थ—१ उत्तमक्षमा २ मार्दव ३ आर्जव ४ सत्य ५ सौच ६ संयम, ७ तप, ८ त्याग, ९ आकिंचन १० ब्रह्मचर्य ये दश प्रकारके धर्म हैं ॥ २२ ॥

षट् आवश्यक—समता धर वंदन करैं, नाना थुती बनाय ।
प्रतिक्रमण स्वाध्याय जुत, कायोत्सर्ग लगाय ॥

अर्थ—१ समता (समस्त जीवोंसे समता भाव रखना) २ वदना, स्तुति (पञ्च परमेष्ठीकी स्तुति) करना ४प्रतिक्रमण (लगे हुये दोषोंपर पश्चात्ताप] करना ५ स्वाध्याय और ६ कायोत्सर्ग [ध्यान] करना—ये छह आवश्यक हैं ॥ २३ ॥

पंचाचार और तीन गुप्ति

दर्शन ज्ञान चारित्र तप, वीरज पंचाचार ।
गोपे मनवच कायको, गिन छत्तीस गुन सार ॥

अर्थ—१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार ३ चारित्राचार, ४तपाचार ५ वीर्याचार मनोगुप्ति [मनको वशमें करना] २ वचनगुप्ति [वचनको वशमें करना] कायगुप्ति [शरीरको वशमें करना] इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं ॥ २४ ॥

उपाध्यायके २५ गुण ।

चौदह पूरवको धरैं, ग्यारह अङ्ग सुजान ।
उपाध्याय पच्चीस गुण, पढ़ै पढावे ज्ञान ॥

अर्थ—११ अङ्ग १४ पूर्वको आप पढ़ें और अन्यको पढ़ावें—ऐसी उपाध्यायके २५ गुण हैं ॥ २५ ॥

ग्यारह अंग।

प्रथमहि आचारांग गुनि दूजो सूत्रकृतांग। ठाण अङ्ग तीजो सुभग, चौथो समवायांग ॥ २७ ॥ व्याख्या प्रज्ञप्ति पांचमो, ज्ञातृ कथा षट् आन। पुनि उपासकाध्ययन है, अन्तःकृत दशठान। अनुत्तरणउत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान। बहुरि प्रश्न व्याकरण जुत ग्यारह अङ्ग प्रमान ॥ २७ ॥

अर्थ—१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग ३ स्थानांग ४ समवायांग ५ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग ८ अन्तःकृतदशांग ९ अनुत्तरोत्पादकदशांग १० प्रश्नव्याकरणांग ११ विपाकसूत्रांग—ये ग्यारह अङ्ग हैं ॥ २८ ॥

चौदह पूर्व।

उत्पादपूर्व अग्रायणी, तीजो वीरजवाद। अस्ति नास्ति परवाद पुनि पञ्चम ज्ञानप्रवाद ॥ छट्ठो कर्म प्रवाद है सत्प्रवाद पहिचान। अष्टम आत्मप्रवाद पुनि नवमो प्रत्याख्यान ॥ ३० ॥ विद्यानुवाद पूरव दशम पूर्व कल्याण महन्त। प्राणवाद किरिया बहुल लोकबिन्दु है अन्त ॥ ३१ ॥

अर्थ—१ उत्पादपूर्व २ अग्रायणी पूर्व ३ वीर्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व ५ ज्ञानप्रवादपूर्व ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्यप्रवाद पूर्व ८ आत्मप्रवादपूर्व ९ प्रत्याख्यानपूर्व १० विद्यानुवादपूर्व ११ कल्याणवाद पूर्व १२ प्राणानुवादपूर्व १३ क्रियाविशालपूर्व १४ लोकबिन्दुपूर्व—ये १४ पूर्व हैं ॥ ३१ ॥

सर्वसाधुके २८ मूल गुण।

पञ्चमहाव्रत—हिंसा अनृत तस्करी अब्रह्म परिग्रह पाय।
मनवचनतैं त्यागवो, पञ्च महाव्रत थाय ॥३२॥

अर्थ—१ अहिंसा महाव्रत, २ सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य महाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रह त्याग—ये पांच महाव्रत हैं।

पाच समिति—ईर्य्या, भाषा, एषणा, पुनि क्षेपन, आदान।
प्रतिष्टापनायुत क्रिया, पाचों समिति विधान ॥३३॥

अर्थ—१ ईर्य्या, २ भाषा, ३ एषणा, ४ आदाननिक्षेपण ५, प्रतिष्ठापना—ये पांच समिति हैं॥

पाच इन्द्रियोंका दमन।

सपरस रसना नासिका, नयन श्रोत्रका रोध।
षट आवशि मजन तजन, शयन भूमिको शोध ॥ ३४ ॥

अर्थ—१ स्पर्शण (त्वक्), २ रसना, ३ घ्रान, ४ चक्षु और ५ श्रोत्र—इन पांच इन्द्रियोंका वश करना सो इन्द्रियदमन है।

शेष सात गुण।

वस्त्रत्याग कचलोंच अरु, लघु भोजन इक बार।
दांतन मुखमें ना करैं, ठाढे लेहिं अहार ॥ ३५ ॥

अर्थ—१ यावज्जीव स्नानका त्याग, २ शोधकर (देखभालकर) भूमिपर सोना, ३ वस्त्रत्याग (दिगम्बर होना), ४ केशोंका लौंच करना ५ एकबार लघु भोजन करना, ६ दन्तधावन नहीं करना ७ खडे खडे आहार लेना—इन सात गुणों सहित २८ मूल गुण सर्व मुनियोंके होते हैं॥ ३५ ॥

साधर्मी भवि पाठनको, इष्टछत्तीसो ग्रन्थ।

भवदधि बुधजन ध्यावो, हितमित शिवपुरपन्थ ॥१६॥

इति पञ्चपरमेष्ठी १४३ मूल गुणोंका वर्णन समाप्त ।

३१—पंचपरमेष्ठीकी आरती ।

मनवचतनकर शुद्ध पंचपद, पूजो भविजन सुखदाई । सकल मिलकर दीप धूप ले करहु आरती गुणगाई ।।टेक।। प्रथमहि श्री अरहन्त परमगुरु चौंतिस अतिशय सहित बसे, प्रातिहार्य वसु अनन्त चतुष्टय सहित समवसृत मांहि लसै । क्षुधा तृषा भय जन्म जरा मृत रोग शोक रति आरति अहा ॥ विस्मय खेद स्वेद मद निद्रा राग द्वेष चिन्ता मोह यहा । इन अष्टादश दोष रहित जिन इन्द्रादिक पूजत आई ।। सब० ॥ दूजे सिद्ध सदा सुखदाता सिद्धशिलापर राजत हैं । सम्यग्दर्शन ज्ञान वीर्य अरु, सूक्ष्मपना को साजत हैं । अगुरु लघु अवगाहन शक्तिधर बाधारहित अनन्त-वीरा हैं । जिनका सुमरण नित्य किये तैं शीघ्र नशत भव पीरा हैं या कारण नित चित्सुख कर, भजहु सिद्ध शिवके दाई ॥ सब० ॥ तीजे श्रीआचार्य परमगुरु छत्तिस गुणके धारी हैं । दर्शन ज्ञान चरण तप वीरज पञ्चाचार प्रचारी हैं ॥ द्वादशतप दशधर्म गुप्ति-त्रय षट आवश्यक नित पालें । सब मुनिगणको प्रायश्चित दे मुनिव्रतके दूषण टालें ॥ ऐसे श्रीआचार्य गुरुनकी पूजा करिये चितलाई ॥ सब० ॥ चौथे श्रीउवझाय चरण पंकजरज सुखदा भविजनको । ग्यारह अङ्ग सुपूर्व चतुर्दश, पढ़ें पढ़ावें मुनिगणको ॥ मुनिके सब आचरण आचर, द्वादश तपके धारी हैं । स्याद्वाद सुखकारी विद्या सब जगमें विस्तारी हैं ॥ ऐसे श्रीउवझायगुरुनके चरणकमल पूजहु भाई ॥ सब ॥ पञ्चमि आरति सर्व साधुकी

लोभसे मृत्यु ।
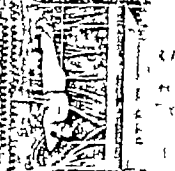
आठवीस गुण मूलधरें। पञ्चमहाव्रत पञ्चसमिति धर, इन्द्रिय पाँचोदमन करें॥ षट् आवश्यक केशलोंच। इकवार खड़े भोजन करते॥ दांतन स्नान त्याग भू सोवत, यथाजात मुद्रा धरते॥ या विधि "पन्नालाल" पञ्चपद पूजन भवदु:ख नस जाई॥ सब०॥

इस प्रकार आरती बोलकर नीचे लिखा श्लोक दोहा और मन्त्र पढ़कर आरतीको मस्तक चढ़ावें।

ध्वस्तोद्यमान्धीकृतविश्वविश्व। मोहान्धकारप्रतिघातदीपान्।
दीपैः कनत्काँचनभाजनस्थै जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन यजेहम्॥

दोहा—स्वपरप्रकाशकजोति अति, दीपक तमकर हीन।
जासूं पूजूं परम पद, देव शास्त्र गुण तीन॥ १॥

३२—आलोचना पाठ।

दोहा—वन्दो पांचों परम गुरु, चौबीसों जिनराज।
कहू शुद्ध आलोचना, शुद्ध करनके काज॥ १॥

सखी छन्द (१४ मात्रा)

सुनिये जिन अरज हमारी। हम दोप किये अति भारी॥
तिनकी अब निर्वृतिकाजा। तुम शरन लही जिनराजा॥ २॥
इक वे ते चऊ इन्द्री वा। मनरहित सहित जे जीवा॥ तिनकी नहि करुना धारी। निरदई ह्वै घात विचारी॥ ३॥ समरम्भ समारम्भ आरम्भ। मनवचतन कीने प्रारम्भ॥ कृत कारित मोदन करिकै। क्रोधादि चतुष्टय धरिकै॥ ४॥ शत आठ जु इम भेदनतै अघ कीने पर छेदन तैं॥ तिनकी कहुंकोलौं कहानी। तुम जानत केवल ज्ञानी॥ ५॥ विपरीत एकान्त विनयके। संशय अज्ञान कुनयके॥ वश होय घोर अघ कीने। वचतें नहिं जात कहीने॥ ६॥

कुगुरुनकी सेवा कीनी। केवल अदयाकरि भीनी ॥ या विधि मिथ्यात भ्रमायो। चहुंगति मधि दोष उपायो ॥ ७ ॥ हिंसा पुनि झूठ जु चोरी। परवनितासों दृगजोरी ॥ आरम्भपरिग्रह भीनो। पुन पाप जु या विधि कीनो ॥ ८ ॥ सपरस रसना घ्राननको। चखु कान विषय सेवनको ॥ बहु करम किये मनमानी ॥ कछु न्याय अन्याय न जानो ॥ ९ ॥ फल पंच उदम्बर खाये। मधु मांस मद्य चित चाहे ॥ नहिं अष्ट मूल गुणधारी। बिसन जु सेये दुखकारी ॥ १० ॥ दुइ बीस अभख जिन गाये। सो भी निशिदिन भु जाये कछु भेदा भेद न पायो। ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥ ११ ॥ अनंतान जु बंधी जानो। प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ॥ संज्वलन चौकरी गुनिये। सब भेद जु षोडश सुनिये ॥ १२ ॥ परिहास अरति रति शोग। भय ग्लानि तिवेद संयोग ॥ पनबीस जु भेद भए इम। इनके बश पाप किये हम ॥ १३ ॥ निद्रावश शयन कराई। सुपने मधि दोष लगाई ॥ फिर जागि विषय वन धायो। नाना विध विषफल खायो ॥ १४ ॥ किए हार निहार विहारा। इनमें नहिं जतन विचारा ॥ बिन देखी धरी उठाई। बिन शोधी भोजन खाई ॥ १५ ॥ तब ही परमाद सतायो। बहु विधि विकलप उपजायो ॥ कछु सुधि बुधि नाहिं रही है। मिथ्या मति छाय गई है ॥ ॥ १६ ॥ मरजादा तुम ढिग लीनी। ताहू में दोष जु कीनी ॥ भिन्न भिन्न अब कैसे कहिये। तुम ज्ञान विषै सब पइये ॥ १७ ॥ हा हा मैं दुठ अपराधी। त्रस जीवन राशि विराधी ॥ थावरकी जतन न कीनी। उरमें करुणा नहिं लीनी ॥ १८ ॥ पृथ्वी बहु खोद कराई। महलादिक जागां चिनाई। पुन बिन गाल्या जल ढोल्यो। पंखातें

पवन विलोल्यो ॥ १६ ॥ हाहा मैं अदयाचारी । वहु हरितकाय जु विदारी ॥ या मधि जीवनके खंदा । हम खाए धरि आनन्दा ॥२०॥ हा मैं परमाद वसाई । विन देखे अगनि जलाई । तामधि जे जीव जु आए । तेहू परलोक सिधाए ॥ २१ ॥ वींधो अन रात्रि पिसायो । ईंधन् बिन सोध्यो जलायो ॥ झाडू ले जाँगा वुहारी । चिण्टो आदिक जीव विदारी ॥ २२ ॥ जल छानि जीवानी कीनी । सोहू पुनि डारि जु दीनी ॥ नहि जलथानक पहुचाई । किरिया विन पाप उपाई ॥ २३ ॥ जल मलमोरिन गिरवायो । कृमि कुल वहु घात करायो ॥ नदियनि विच चीर धुवाए । कोसनके जीव मराए ॥ २४ ॥ अन्नादिक शोध कराई । तामैं जु जीव मिसराई ॥ तिनका नहि जतन कराया । गरियाले धूप डराया ॥ २५ ॥ पुनि द्रव्य कमावन काज । वहु आरम्भ हिसा साज ॥ कीए तिसनावश भारी । करुना नहिं रञ्च विचारी ॥ २६ ॥ इत्यादिक पाप अनंता । हम कीने श्रीभगवन्ता ॥ सन्तति 'चिरकाल उपाई । वानीतैं कहिय न जाई ॥ २७ ॥ ताको जु उदय जब आयो । नानाविध मोहि सतायो ॥ फलभुंजत जिय दुख पावै । वचतैं कैसैं करि गावै ॥ २८ ॥ तुम जानत केवल ज्ञानो । दुख दूर करो शिवथानो ॥ हम तौ तुम शरण लही हैं । जिन तारन विरद सही है ॥ २९ ॥ जो गांवपती इक होवै । सो भी दुखिया दुख खोवे ॥ तुम तीन भुवनके स्वामी । दुख मेटो अंतरजामी ॥ ३० ॥ द्रोपदिको चीर वढ़ायो । सीतापति कमल रचायो ॥ अंजनसे किए अकामी । दुख मेटो अंतरजामी ॥ ३१ ॥ मेरे अवगुन न चितारो । प्रभु अपनो वि

सुख मेरडु म तरजामो ॥ ३२ ॥ इन्द्रादिक पदवी न चाहू । विषयनि में नाहिं लुभाऊं ॥ रागादिक दोष हरीजे । परमातम निज पद दीजे ॥ ३३ ॥

दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोहि ।
सब जीवनके सुख बढ़े आनन्द मङ्गल होय ॥ ३४ ॥
अनुभव माणिक पारखी जौहरी आप जिनन्द ।
येही वर मोहि दीजिए, चरन शरण आनन्द ॥ ३५ ॥

इति आलोचना पाठ।

स्वर्गीय कविवर पं० रूपचन्दजी पाण्डेयकृत—

३३—पचकल्याण पाठ ।

श्रीगर्भकल्याणक ।

पणविवि पंच परम गुरु, गुरु जिनशासनो । सकलसिद्धिदातार सु, विघनविनाशनो ॥ शारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकाशनो मङ्गल कर चउ संघहिं पापपणासनो ॥

पापे पणासन गुणहि गरुवा, दोष अष्टादश रहे । धरि ध्यान कर्म विनाशि केवल-ज्ञान अविचल जिन लहे । प्रभु पंचकल्याणक विराजित सकल सुर नर ध्यावहीं । त्रैलोक्यनाथ सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥ १ ॥

जाके गरभकल्याणक, धनपति आइयो । अवधिज्ञान-परवान सुइन्द्र पठाइयो ॥ रचि नव बारह योजन नयरि सुहावनी । कनकरयणमणि मंडित, मन्दिर अति बनी ॥

अति बनी पौरि पगारि परिखा, सुवन उपवन सोहिए । नर नारि सुन्दर चतुरभेष सु देख जनमन मोहिए ॥ तहाँजनकगृह

छह मास प्रथमहि रतनधारा वरषियो। पुनि रुचिकवासनि जननि सेवा, करहि सब विधि हरषियो ॥ २ ॥

सुरकुञ्जर सम कुञ्जर धवल धुरन्धरो। केहरि केशर शोभित नखशिख सुन्दरो ॥ कमलाकलश न्हवन, दोय दाम सुहावनी। रवि शशि मण्डल मधुर, मीन जुग पावनी ॥

पावनी कनक घट युगम पूरण, कमलकलित सरोवरो। कल्लोलमालाकुलित सागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥ रमणीक अमरविमान फणपति—भुवन भुवि छवि छाजए। रुचि रतनराशि दिपन्त दहन सु, तेजपुञ्ज विराजिए ॥ ३ ॥

ये सखि सोलह सुपने, सूतो सयनहीं। देखे माय मनोहर, पच्छिम रयनहीं ॥ उठि प्रभात प्रिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो। त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहिं भासियो ॥

भासियो फल तिहि चित्त दम्पति, परम आनन्दित भए। छहमास परि नवमास पुनि तह रयन दिन सुखसूं गए ॥ गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं। भणि "रूपचन्द्र" सुदेव जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं ॥

श्रीजन्मकल्याणक।

मतिश्रुत अवधि विराजित, जिन जब जनमियो। तिहुलोक भयो छोभित, सुरगण भरमियो ॥ कलपवासि घर घट, अनाहद वज्जियो। ज्योतिष घर हरिनाद, सहज गल गज्जियो ॥

गज्जियो सहजहि शंख भावन—भुवन शब्द सुहावने। विंतर निलय पटु पटहि बज्जिय, कहत महिमा क्यों बने। कंपत सुरासन अवधि बल जिन,—जनम निहचै जानियो। धनराज तब गजराज माया,—मयी निरमय आनियो ॥ ५ ॥

योजन लाख गयन्द, वदन-सौ निरमए। वदन वदन वसु दन्त दन्त सर संठये॥ सर सर सौ पनबीस कमलिनी छाजहीं। कम-लिनी कमलिनी कमल पचीस विराजहीं॥

राजहीं कमलिनी कमल अठोतर, सो मनोहर दल बने। दल दलहिं अपछरा नटहिं नवरस हावभाव सुहावने॥ मणि कनक किंकण वर विचित्र सुअमरमण्डप सोहिये। घन घण्ट चवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहिये।

तिहि करि हरि चढ़ि आयउ सुरपरिवारियो। पुरहि प्रदच्छना देय सु, जिन जय कारियो॥ गुप्त जाय जिन—जननि सुखनिद्रा रची। मयामई शिशु राखि तौ, जिन आन्यो सची॥

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न हूजिये। तब परम हरषित हृदय हरिने, सहस लोचन पूजिये॥ पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इन्द्र उछंग धरि प्रभु लीनऊ। ईशानइन्द्र सु चन्द्रछवि शिर, छत्रप्रभुके दीनऊ॥ ७॥

सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुई ढारहीं। शेष शक्र जयकार शब्द उचारहीं॥ उच्छव सहित चतुर्विधि सुर हरषित भए। योजन सहस निन्यानवे गगन उलंघि गए॥

लंघि गये सुरगिरि जहां पांडुक-वन विचित्र विराजहीं। पांडुकशिला तहां अर्द्धचन्द्रसमान मणि छवि छाजहीं॥ योजन पचास विशाल दुगुणायाम वसु ऊंची गनी। वर अष्ट मंगल कनक कलशनि सिंहपीठ सुहावनी॥ ८॥

रचि मणि मण्डप शोभित मध्य सिंहासनो। थाप्यो पूरब-मुख

तहां, प्रभु कमलासनौ ॥ वाजहि ताल मृदङ्ग, वेणु वीणा घने। दुन्दुभी प्रमुख मधुर धुनि और जु वाजने ॥

वाजने वाजहिं सची सब मिलि, धवल मङ्गल गावहीं। पुनि करहिं नृत्य सुरागना सब, देव कौतुक धावहीं ॥ भरि छीरसागर जल जु हाथहिं, हाथ सुर गिरि ल्यावहीं। सौधर्म अरु ईशानइन्द्र सु, कलश ले प्रभु न्हावहीं ॥ ६ ॥ वदन उदर अवगाह, कलशगत जानिये। एक चार वसु योजन, मान प्रमानिये ॥ सहस अठोतर कलशा, प्रभुके सिर ढरे। फुनिशृङ्गारप्रमुख आचार सबै करें ॥ करि प्रकट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि फुनि मातहिं दियो। धनपतिहि सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो ॥ जनमाभिषेक महन्त महिमा, सुनत सब सुख पावहीं ! भण रूपचन्द्र' सुदेव जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं ॥ १० ॥

श्रीतप कल्याणक।

श्रमजलरहित शरीर सदा सब मल रहिउ। छीर-वरन वर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ ॥ प्रथम सार संहनन, सरूप विराजहीं। सहज—सुगन्ध सुलच्छन, मण्डित छाजहीं ॥ छाजहीं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने। दश सहज अतिशय सुभग मूरति वाललील कहावने ॥ आवाल काल त्रिलोकपति मन रुचित उचित जु नित नये। अमरोपुनीत पुनोत अनुपम सकल भोग विभोगये ॥ ११ ॥ भवतन—भोग विरक्त, कदाचित चित्तये। धन यौवन प्रिय पुत्त, कलत्त अनित्तए ॥ कोई न शरन मरन दिन, दुख चहु गति भरयो। सुख दुख एकहि भोगत, जिय विधवश परयो ॥ परयो विधि वश आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो। तन अशुचि

परतें होय आस्रव, परिहर सो संवरो ॥ निर्जरा तपबल होय समकित बिन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो। दुर्लभ विवेक बिना न कबहूं, परम धरम थिर रम्यो ॥ १२ ॥ ये प्रभु बारह पावन भावन भाइया। लौकान्तिक वर देव नियोगी आइया ॥ कुसुमाञ्जलि दे चरन कमल शिर नाइया। स्वयंबुद्धि प्रभु थुति करि तिन समुझा इया ॥ समुझाय प्रभु ते गये निजपद पुनि महोच्छव हरि कियो। रुचिरुचि रचित्र विचित्र शिविका कर सुनन्दन वन लियो ॥ तहं पञ्चमुष्टी लोंच कीनों प्रथम सिद्धनि नुति करो। मण्डित महाव्रत पञ्च दुद्धर, सकल परिग्रह परिहरी ॥ १३ ॥ मणिमयभाजन केस परिठिय सुरपती। छीर समुद्र जल खिपिकरि, गये अमरावती ॥ तप संयमबल प्रभुको मनपरजय भयो। मौनसहित तप करत, काल कछु तह गयो ॥ गयो कछु तह काल तपबल रिद्ध वसु विधि सिद्धिया। जसु धर्मध्यानबलेन क्षयगय सप्त प्रकृति प्रसि द्धिया ॥ खिपि सातवें गुण जतन विन तह तीन प्रकृति जु बुधि बढ़े। करि करण तीन प्रथम शुकलबल खिपकश्रेणी प्रभु चढ़े ॥१४॥ प्रकृति छतीस नवे गुण स्थान विनासिया। दशमें सूक्षम लोभ प्रकृति तह नासिया ॥ शुकल ध्यानपद दूजो पुनि प्रभु पूरिय बारहमें गुण सोलह, प्रकृति जु चूरियो ॥ चूरियो त्रेसठि प्रकृति इह विधि घातिया कर्मह तणी। तप कियो ध्यान प्रयन्त बारह विधि त्रिलोक शिरोमणी ॥ निःकर्मकल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पावहीं। भन 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं ॥१५॥

ज्ञानकल्याणक

तेरहमें गुणस्थान संयोग जिनेसुरो। अनन्तचतुष्टयमण्डित

भयो परमेसुरो ॥ समवसरन तव धनपति वहुविधि निरमयो। आगम जुगति प्रमाण, गगनतल परिठयो ॥ परिठयो चित्रविचित्र मणिमय, सभामण्डप सोहिये। तिह मध्य वारह वने कोठे वैठ सुर नर मोहिये ॥ मुनि कलपवासिनी अरजिका पुनि, ज्योति-भौमभुवन तिया। पुनि भवन व्यंतर नभग सुर नर, पशुनि कोठे वैठिया ॥१६॥ मध्य प्रदेश तीन, मणि पीठ तहां वने। गंधकुटी सिंहासन कमल सुहावने ॥ तीन छत्र सिर शोभित, त्रिभुवन मोहिये। अन्तरीक्ष कमलासन, प्रभुतन सोहिये ॥

सोहए चौसठि चमर ढरत अशोकतरु तल छाजिये। फुनि-दिव्यधुनि प्रतिशब्द जुत तहं, देव दुन्दुभि वाजए ॥ सुरपुहुप वृष्टि सुप्रभामण्डल, कोटि रवि छवि छाजए। इमि अष्टअनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजए ॥ ७ ॥ दुइसे योजन मान, सुभिक्ष चहु दिशी। गगन गमन अरु प्राणी, वध नहिं अहनिशी ॥ निरुप-सर्ग निरहार, सदा जगदीसए। आनन चार चहुं दिशि शोभित दीसये ॥ दोसय अशेप विशेप विद्या, विभव वर ईसुरपनो। छाया विवर्जित शुद्धफटिक, समान तन प्रभुको वनो ॥ नहि नयन पलक पतन कदाचित, केश नख सम छाजहीं। ये घातिया छय जानि अ-तिशय, दश विचित्र विराजहीं ॥ १८ ॥ सकल अरथमय मागधि, भाषा जानिए। सकल जीवगत मैत्री—भाव वखानिए। सकल ऋतुज फलफूल, वनस्पति मन हर। दर्पणसम मनि अवनि पवन गति अनुसरै ॥ अनुसरै परमानन्द सबको, नारि नर जे सेवता। योजन प्रमाण धरा सुमार्जहिं जहा मारुत देवता ॥ पुनि करहि मेघकुमार गंधोदक सुवृष्टि सुहावनी। पदकमलतर सुर खिपहिं

कमल सु धरणि शशिशोभा धर्नो ॥ १९ ॥ अमल गगन तल अरु दिशि तह अनुसारहीं। चतुरनिकायी देवगण जयजयकारहीं ॥ धर्मचक्र चले आगे रवि जह लाजहीं। फुनि भृंगार-प्रमुख वसु मङ्गल राजहीं ॥ राजहीं चौदह चारु अतिशय, देवरचित सुहावने जिनराज केवल ज्ञानमहिमा, अवर कहत कहा घने ॥ तब इन्द्र आनि कियो महोत्सव सभा शोभित अति बनी ॥ धर्मोपदेश दियो तहां उच्चरिय वाणी जिनतनी ॥ २० ॥ क्षुधा तृषा अरु राग द्वेष असुहावने। जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने ॥ रोग शोक भय विस्मय, अरु निद्रा घनी। खेद स्वेद मद मोह अरति चिन्ता गणो ॥ गनिये अठारह दोष तिन करि रहित देव निरञ्जनों ॥ नव परमकेवल लब्धिमण्डित शिवरमणि मनरंजनों ॥ श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पावहीं। भणि "रूपचन्द्र" सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥ २१ ॥

श्रीनिर्वाण कल्याणक।

केवलदृष्टिचराचर, देख्यो जारिसों। भविजनप्रति उपदेस्यो जिनवर तारिसो ॥ भवभयभीत भविजन शरणें आइया। रत्नत्रय लक्षण शिवपन्थ लगाइया ॥ लगाइया पंथ सु भव्य पुनि प्रभु तृतिय शुकल सु पूरियो। तजि तेरहैं गुणथान योग अयोग पथ-पग धारियो ॥ पुनि चौदहैं चौथे सुकलबल, बहत्तर तेरह हती। इमि घाति वसुविधि कर्म पहुंच्यो समयमें पञ्चमगती ॥२२॥ लोक शिखर तनुवात वलयमह संठियो। धर्मद्रव्य बिन गमन न जिहि आगे कियो। मयनरहित मूषोदर अंबर जारिसों। किमपि हीन निजतनुतैं भयौ प्रभु तारिसो ॥ तारिसो पर्जय नित्य अविचल,

अर्थपर्जय क्षणक्षयी। निश्चयनयेन अनन्तगुण विवहार, नय वसु गुणमयी॥ वस्तु स्वभाव विभावविरहित शुद्ध परणति परिणयो। चिद्रूप परमानन्द मन्दिर सिद्ध परमातम भयो॥ २३॥ तनुपरमाणू दामिनिपर, सब खिर गये। रहे शेष नखकेशरुप, जे परिणए॥ तब हरि प्रमुख चतुरविधि सुरगण शुभ सच्यो। माया मई नखकेश रहित जिनतनु रच्यो। रचि अगर चन्दन प्रमुख, परिमल द्रव्य जिन जयकारियो। पद पतत अग्निकुमार मुकटानल सुविधि संस्कारियो॥ निर्वाण कल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पाइयो भण रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गाइयो॥ मैं मतिहीन भक्तिवश भावना भाइयो। मङ्गल गीत प्रबन्ध सो निज गुण गाइयो। जे नर सुनहिं बखानहीं स्वर धरि गावहीं। मन वाछित फल ते नर निश्चय पावहीं॥ पावैं तो आठो सिद्धि नवनिधि मन प्रतीत जो आनिए। भ्रम भाव छूटे सकल मनके जिन स्वरूप ए जानिए। पुनि हरैं पातक टरत विघ्न सो होय मङ्गल नित नए। भण रूपचन्द्र त्रिलोकपति जिनदेव चौसगहि गए॥

॥ इति श्रीजिनेन्द्रनिर्वाण कल्याणक मगल समाप्तम्॥

श्रीयुत पण्डित दौलतरामजी कृत

२४—छहढाला

तीन भुवनमें सार, वीतराग विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार नमहु त्रियोग सम्हारिके॥

प्रथमढाल—चौपाई छन्द १५ मात्रा॥

जे त्रिभुवनमें जीव अनन्त। सुख चाहैं दुखतैं भयवन्त॥ तातै दुखहारी सुखकार। कहैं सीख गुरु करुणाधार॥ १॥ ताहि सुनो

मवि मन थिर आन। जो चाहो अपनो कल्यान॥ मोह महामद
पियो अनादि। भूल आपको भरमत वादि॥ २॥ तास भ्रमण-
की है बहु कथा। पै कछु कहूं कही मुनि यथा॥ काल अनन्त
निगोद मझार। बीतो एकेन्द्री तन धार॥ ३॥ एक श्वासमें अठ
दशबार। जन्मो मरो भरो दुख भार। निकस भूमि जल पावक
भयो। पवन प्रत्येक वनस्पति थयो॥४॥ दुर्लभ लहि ज्यों चिन्ता
मणी। त्यों पर्याय लही त्रस तणी॥ लट पिपील अलि आदि
शरीर। धर-धर मरो सही बहुपीर॥५॥ कबहूं पंचेन्द्रिय पशु भयो।
मन बिन निपट अज्ञानी थयो। सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर। निर्बल
पशु हति खाए भूर॥ ६॥ कबहूं आप भयो बलहीन। सबलनकर
खायो अति दीन॥ छेदन भेदन भूख प्यास। भार वहन हिम
आतप त्रास॥७॥ वध बन्धन आदिक दुख घने। कोटि जीभकर जात
न भने॥ अतिसंक्लेश भावसें मरो। घोर श्वभ्र सागरमें परो॥८॥
तहाँ भूमि परसत दुख इसो। बीछू सहस डसैं नहि तिसो॥ तहाँ
राध श्रोणित वाहिनी। कृमि कुल कलित देह दाहिनी॥ ९॥ सेमर
तरु जुत दल असिपत्र। असि ज्यों देह विदारैं तत्र। मेरु समान
लोह गलि जाय। ऐसी शीत उष्णता थाय॥१०॥ तिल तिल करैं
देहके खण्ड। असुर भिड़ावैं दुष्ट प्रचण्ड॥ सिन्धु नीरतैं प्यास
न जाय। तो पण एक न बूंद लहाय॥ ११॥ तीन लोकको नाज
जो खाय। मिटै न भूख कणा न लहाय॥ ये दुख बहु सागरलौं
सहै। करम जोगतैं नरगति लहै॥१२॥ जननी उदर वसो नवमास
अङ्ग सकुचतैं पाई त्रास॥ निकसत जे दुख पाये घोर। तिनको
कहत न आवै ओर॥ १३॥ बालपनेमें ज्ञान न लह्यो। तरुण समय

तरुणी रत रह्यो ॥ अर्द्ध मृतक सम बूढापनो । कैसे रूप लखे आपनो ॥१४॥ कभी अकाम निर्जरा करै। भवनत्रिकमें सुर-तन धरै ॥ विषय चाह दावानल दह्यो। मरत विलाप करत दुख सह्यो ॥१५॥ जो विमानवासी हू थाय। सम्यकदर्शन विन दुख पाय ॥ तहते चय थावर तन धरै। यों परिवर्तन पूरे करै ॥ १६ ॥

द्वितीय ढाल—पद्धरीछन्द १५ मात्रा।

ऐसे मिथ्या दृग ज्ञान चर्ण। वश भ्रमत भरत दुख जन्म मर्ण तातें इनको तजिये सुजान। सुन तिन संक्षेप कहू वखान ॥ १ ॥ जीवादि प्रयोजन भूततत्व। सरधै तिन माहि विपर्ययत्व ॥ चेतनेको है उपयोग रूप। विन मूरति चिन्मूरति अनूप ॥२॥ पुद्गलनभ धर्म अधर्म काल। इनतैं न्यारी हैं जीव चाल ॥ ताकूं न जान विपरीति मान। करि करैं देहमें निज पिछान ॥ ३ ॥ मैं सुखी दुखी मैं रङ्क राव। मेरो धन गृह गोधन प्रभाव ॥ मेरे सुत तिय मैं सवल दीन। वे रूप सुभग मूरख प्रवीन ॥ ४ ॥ तन उपजत अपनी उपज जान। तन नशत आपको नाश मान ॥ रागादि प्रगट ये दुःख दैन। तिनहीको सेवत गिनत चैन ॥ ५ ॥ शुभ अशुभ वन्धके फल मझार रति अरति करै निज पद विसार। आतम हितहेतु विराग ज्ञान। ते लखें आपकू कष्ट दान ॥६॥ रोके न चाह निज शक्ति खोय। शिवि रूप निराकुलता न जोय। याही प्रतीत युत कछुक ज्ञान। सो दुखदायक अज्ञान जान ॥ ७ ॥ इन जुत विषयनिमें जो प्रवृत्त ताकूं जानो मिथ्या चरित्त। यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह। अब जे गृहीत सुनिये सुतेह ॥ ८ ॥ जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव ॥ पोखै चिर दर्शन मोह एव ॥ अन्तर रागादिक धरै जेह। वाहर धन

मंधरतें सनेह ॥९॥ धारैं कुलिंग लहि महत भाव। ते कुगुरु जन्म जल उपलनाव ॥ जे राग द्वेष मलकरि मलीन। वनितागदादि जुत चिन्ह चीन्ह ॥१०॥ ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव। शठ करत न तिन भवभ्रमणछेव ॥ रागादि भाव हिंसा समेत। दर्वित त्रसथावर मरण खेत ॥ ११ ॥ जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म। तिन सरधै जीव लहै अशर्म ॥ याकू गृहीत मिथ्यात जान। अब सुन गृहीत जोहै अजान ॥१२॥ एकान्त वाद दूषित समस्त। विषयादिक पोषक अप्रशस्त ॥ कपिलादि रचित श्रुतका अभ्यास। सोहै कुबोध बहु देन त्रास ॥१३ जो ख्यातिलाभ पूजादि चाह। धर करत विविध विध देहदाह ॥ आतम अनात्मके ज्ञान हीन। जे जे करनी तन करन छीन ॥ १४ ॥ ते सब मिथ्या चारित्र त्याग। अब आतमके हितपन्थ लाग ॥ जग जाल भ्रमणको देय त्याग। अब दौलत निज आतम सु पाग ॥१५॥

तृतीय ढाल। जोगीरासा।

आतमको हित है सुख सो सुख आकुलता बिन कहिये। आकुलता शिवमांहि न तातैं शिव मग लाग्यो चहिये॥ सम्यग्दर्शन ज्ञानचरन शिव मग सो द्विविधि विचारो। जो सत्यारथ रूपसो निश्चय कारण सो व्यवहारो ॥ १ ॥ परद्रव्यनतैं भिन्न आप मैं, रुचि सम्यक्त भला है। आप रूपको जानपनोसो, सम्यग्ज्ञान कला है ॥ आपरूपमें लीन रहे थिर, सम्यक् चारित सोई। अब विवहार मोक्ष मग सुनिये हेतु नियतको होई ॥ २ ॥ जीव अजीव तत्व अरु आस्रव बन्ध रु संवर जानो। निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको ज्योंको त्यों सरधानो ॥ है सोई समकित विवहारी अब इन रूप बखानो। तिनको सुन सामान्य विशेषै दृढ़ प्रतीति उर

आनो ॥३॥ वहिरातम अन्तर आतम परमातम जीव त्रिधा है। देह जीवको एक गिने, वहिरातम तत्त्व मुधा है॥ उत्तम मध्यम जघन त्रिविधिके, अन्तर आतम ज्ञानी। द्विविधि संग विन शुध उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ॥४॥ मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रती आगारी। जघन कहे अविरत समदृष्टी, तीनों शिवमगचारी॥ सकल निकल परमातम द्वैविधि तनमें घाति निवारी। श्रीअरहंत सकल परमातम, लोकालोक निहारी॥ ५॥ ज्ञानशरीरी त्रिविधि कर्ममल वर्जित सिद्ध महंता। ते हैं निकल अमल परमातम, भोगें शर्म अनन्ता॥ वहिरातमता हेय मानि तजि, अन्तर आतम हूजे। परमातमको ध्याय निरन्तर, जो नित आनन्द पूजे ॥६॥ चेतनता विन सो अजीव हैं, पंच भेद ताके हैं। पुद्गल पञ्चवरण रस गंध दो फरसवसू जाके हैं॥ जियपुद्गलको चलन सहाई धर्मद्रव्य अनुरूपी। तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन विन मूर्ति निरूपी॥७॥ सकलद्रव्यको वास जासमें, सो आकाश पिछानो। नियत वर्तना निशिदिन सो व्यवहार काल परिमानो॥ यों अजीव अव आश्रव सुनिये, मन वच काल त्रियोगा। मिथ्या अविरत अरु कषाय परमाद सहित उपयोगा ॥८॥ ये ही आतमको दुखकारण तातैं इनको तजिये। जीव प्रदेश बंधै विधिसों सो, बन्धन कबहु न सजिये॥ शमदमतें जो कर्म न आवै, सो संवर आदरिये। तपबल विधितैं झरत निर्जरा, ताहि सदा आचरिये ॥९॥ सकल कर्मतैं रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी। इहि विधि जो सरधा तत्त्वनकी, सो समकित व्यवहारी॥ देव जिनेन्द्र गुरू परिग्रह विन, धर्मदयाजुन सारो। येहु मान समकितको कारण, अष्ट अंग जुतधारो॥ १०॥

वसुमद टारि निवारि त्रिशठता षट अनायतन त्यागो। शंकादिक वसु दोष बिना संवेगादिक चित पागो॥ अष्ट अङ्ग अरु दोष पचीसों तिन संक्षेपहु कहिये। बिन जाने तें दोष गुननकों कैसे तजिये गहिये॥११॥ जिन वचमें शंका न धार वृष भवसुख वांछा भानै। मुनितन मलिन न देख घिनावे तत्वकुतत्व पिछाने॥ निजगुण अरु पर औगुण ढाँके वा जिनधर्म बढ़ावे। कामादिक कर वृषतें चिगते निज परको सु दृढ़ावे॥१२॥ धर्मी सो गऊ बच्छ प्रीति सम कर जिन धर्म दिपावे। इन गुणतें विपरीत दोष वसु तिनको सतत खिपावे। पिता भूप वा मातुल नृप जो होय न तो मद ठाने। मद न रूपको मद न ज्ञानको धनबलको मद भाने॥१३॥ तपको मद न मद जु प्रभुताको करै न सो निज जाने। मद धारे तो यही दोष वसु समकितको मल ठाने॥ कुगुरु कुदेव कुवृष सेवककी नहि प्रशंस उचरै है। जिन मुनि श्रुति बिन कुगुरादिक, तिन्हैं न नमन करै है। दोष रहित गुण सहित सुधी जे सम्यकदर्श सजे हैं चरित मोहवश लेश न संजम पै सुरनाथ जजे हैं॥ गेही पै गृहमें न रचें ज्यों जलमें भिन्न कमल है। नगरनारिको प्यार यथा कादेमें हेम अमल है॥१५॥ प्रथम नरक बिन षट्भू ज्योतिष वान भवन षंढ नारी। थावर विकलत्रय पशुमें नहि उपजत सम्यक्धारी॥ तीनलोक तिहुंकाल माहि नहि दर्शन सो सुखकारी। सकलधरम को मूल यही इस बिन करनी दुखकारी॥१६॥ मोक्षमहलको परथम सीढ़ी या बिन ज्ञान चरित्रा। सम्यकता न लहै सो दर्शन धारो भव्य पवित्रा॥ दौल समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै यह नरभव फिर मिलन कठिन है। जो सम्यक नहि होवै॥१७॥

चतुर्थ ढाल।

दोहा—सम्यक श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यक ज्ञान।
स्वपर अर्थ बहु धर्मयुत, जो प्रगटावन भान॥

रोलाछन्द २५ मात्रा।

सम्यक साथै ज्ञान होय पै भिन्न अराधो। लक्षण श्रद्धा जान दुहूमें भेद अबाधो॥ सम्यक कारण जान, ज्ञान कारज है सोई। युगपत होतेहू प्रकाश दीपकतें होई॥ १॥ तास भेद दो है, परोक्ष परतक्ष तिन माहीं। मति श्रुत दोय परोक्ष, अक्ष मनतें उपजाहीं अवधि ज्ञान मन पर्य्यय, दो है देश प्रत्यक्षा। द्रव्यक्षेत्र परिमाण लिए जानै जिय स्वच्छा॥ २॥ सकल द्रव्यके गुण अनन्त पर्य्याय अनन्ता। जानें एके काल प्रगट केवलि भगवन्ता॥ ज्ञान समान न आन जगतमें सुखको कारण। इहि परमामृत जन्म जरामृत रोग निवारन॥ ३॥ कोटि जन्म तप तपै, ज्ञान बिन कर्म झरे जे। ज्ञानीके छिनमांहि त्रिगुप्तितैं सहज टरें ते। मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायो। पै निज आतम ज्ञान बिना सुखलेश न पायो॥ तातें जिनवर कथित तत्व अभ्यास करीजै। संशय विभ्रम मोह त्याग आपो लखि लीजै। यह मानुष पर्याय सुकुल सुनवो जिनवानी। इह विधि गये न मिलैं, सुमनि ज्यों उदधि समानी॥ ५॥ धन समाज गज बाज, राज सो काज न आवै। ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै॥ तास ज्ञानको कारण स्वपर विवेक बखानो। कोटि उपाय बनाय भव्य ताको उर आनो॥६॥ जे पूरब शिव गए, जाहिं अब आगे जैहैं। सो सब महिमा ज्ञान तणी मुनिनाथ कहे हैं॥ विषय चाह दवदाह, जगत जन अरनि

बुझावै। तास उपाय न आन ज्ञान घन-घान बुझावै ॥ ७ ॥ पुण्य पाप फल माहिं, हरख बिलखो मत भाई। यह पुद्गल पर्याय उपजि बिनसै फिर थाई ॥ लाख बातकी बात, यही निश्चय उर लावो तोरि सकल जगद्वन्द्व—फन्द निज आतम ध्यावो ॥८॥ सम्यग्ज्ञानी होय बहुरि दृढ़ चारित लीजै। एक देश अरु सकल देश, तसु भेद कहीजै। त्रस हिंसाको त्याग वृथा थावर न संघारै, परवध कार कठोर निन्द्य, नहिं वयन उचारै ॥ ९ ॥ जलमृत्तिका बिन और नहीं कछु गहै अदत्ता। निज वनिता बिन सकल, नारिसौं रहै विरत्ता ॥ अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखै। दश दिश गमन प्रमाण ठान, तसु सीम न नाखै ॥१०॥ ताहूमें फिर ग्राम, गली गृह बाग बजारा। गमनागमन प्रमाण ठान अन सकल निवारा। काहूकी धन हानि किसी जय हार न चिन्ते। देय न सो उपदेश, होय अघ बनज कृषीतैं ॥ ११ ॥ कर प्रमाद जल भूमि वृक्ष पावक ना विराधै। असि धनु हल हिंसोप—करण नहिं दे यश लाधै ॥ राग द्वेष करतार कथा कबहू न सुनीजै। औरहु अनरथ दण्ड, हेतु अघ तिन्हैं न कीजै ॥ १२ ॥ धर उर समता भाव, सदा सामायिक करिये। पर्व चतुष्टय माँहि, पाप तज प्रोषध धरिये ॥ भोग और उपभोग, नियम कर ममत निवारै। मुनिको भोजन देय, फेर निज करहि अहारै ॥ १३ ॥ बारह व्रतके अतीचार, पन पनन लगावै। मरण समय संन्यास, धार तसु दोष नशावै। यों श्रावक व्रत पाल, स्वर्ग सोलम उपजावै। तहांतै चय नर जन्म पाय मुनि ह्वै शिव जावै।

पंचम ढाल।

मनोहर छन्द १४ मात्रा।

मुनि सकल व्रती वड़ भागी। भव भोगनतैं वैरागी॥ वैराग्य अपावन माई। चिन्तै अनुपेक्षा भाई॥१॥ इन चिन्तत समरस जागै जिम ज्वलन पवनके लागे॥ जवही जिय आतम जानै। तवही जिय शिवसुख ठानै॥२॥ जोवन गृह गो धन नारी। हय गयजन आज्ञाकारी॥ इन्द्रिय भोजन छिन थाई। सुरधनु चपला चपलाई॥३॥ सुर असुर खागाधिप जेते॥ मृग ज्यों हरि काल दले ते॥ मणिमन्त्रतन्त्र वहु होई। मरते न वचावे कोई॥४॥ वहुगति दुख जीव भरे हैं। परिवर्तन पञ्च करे हैं॥ सव विधि संसार असारा। तामें सुख नाहिं लगारा॥५॥ शुभ अशुभ करम फल जेते। भोगें जिय एकहिं तेते॥ सुत दारा होय न सीरी। सव स्वारथके हैं भीरी॥६॥ जलपय ज्यों जियतन मेला। पै भिन्न २ नहिं भेला॥ जो प्रगट जुदे धन धामा। क्यों ह्वै इक मिल सुत रामा॥७॥ पल रुधिर राध मल थैली। कीकस वसादितैं मैली॥ नव द्वार वहै घिनकारी। असदेह करै किम यारी॥८॥ जे भोगनकी चपलाई। तातैं ह्वै आश्रव भाई॥ आश्रय दुखकार घनेरे। वुद्धि-वन्त तिन्हें निरवेरे॥९॥ जिन पुण्य पाप नहिं कीना। आतम अनुभव चित दीना॥ तिनहीं विधि आवत रोके। संवर लहि सुख अवलोके॥१०॥ निज काल पाय विधि झरना। तासों निजकाज न सरना॥ तप करि जो कर्म खपावै। सोई शिवसुख दरसावै॥११॥ किनहूं न करो न धरै को। पट् द्रव्य मयी न हरै को॥ सो लोकमांहि विन समता। [illegible]

भ्रमता ॥ १२ ॥ अन्तिम ग्रीवकलौंकी हद। पायो अनन्त विरियां पद। पर सम्यग्ज्ञान न लाधौ। दुर्लभ निजमें मुनि साधौ ॥ १३ ॥ जे भाव मोहतैं न्यारे। दृगज्ञान व्रतादिक सारे ॥ सो धर्म जबै जिय धारै। तबही सुख अचल निहारै ॥ १४ ॥ सो धर्म मुनिनकरि धरिये। तिनकी करतूति उचरिये ॥ ताकू सुनिये भवि प्रानी। अपनी अनुभूति पिछानी ॥ १५ ॥

अथ षष्ठम ढाल।

हरिगीतिका छन्द २८ मात्रा।

षटकाय जीवन हननतैं सब, विध दरब हिंसा टरी। रागादि भाव निवारतैं, हिंसा न भावित अवतरी ॥ जिनके न लेश मृषा न जल तृण, हू बिना दीयौं गहैं। अठदश सहस विधि शीलधर, चिद्ब्रह्ममें नित रमि रहैं ॥१॥ अन्तर चतुर्दश भेद बाहर, संग दशधा तैं टलैं। परमाद तजि चउकर मही लखि, समिति ईर्यातैं चलैं ॥ जग सुहितकर सब अहित हर श्रुति सुखद सब संशय हरैं। भ्रम रोग हर जिनके वचन मुखचन्द्रतैं अमृत झरैं ॥२॥ छ्यालीस दोष बिना सुकुल, श्रावक तनै घर असनको। लैं तप बढ़ावन हेत नहिं तन, पोषते तजि रसनको ॥ शुचि ज्ञान संयम उपकरण लखिकै गहैं लखिकै धरैं। निर्जन्तु थान विलोक तन मल मूत्र श्लेषम परिहरैं ॥३॥ सम्यक्प्रकार निरोध मन वच काय आतम ध्यावते। तिन सुथिर मुद्रा देखि मृगगण उपल खाज खुजावते ॥ रस रूप गंध तथा फरस अरु शब्द शुभ असुहावने। तिनमें न राग विरोध पंचेंद्रिय जयन पद पावने ॥ ४ ॥ समता सम्हारैं थुति उचारैं वन्दना जिनदेवको। नित करैं श्रुति रति करैं प्रतिक्रम

तजे तन अहमेवको। जिनके न न्हौन न दन्तधोवन, लेश अम्बर आवरण। भूमाहिं पिछली रयनमें कछु शयन एकासन करण ॥५॥ इक बार लेत अहार दिनमें खडे अलप निज पानमें। कचलोंच करत न डरत परिषह सों लगे निज ध्यानमें॥ अरि मित्र महल मसान कंचन, काच निन्दन थुतकरण। अर्घावतारण असि प्रहारण में सदा समता धरण ॥ ६ ॥ तप तपैं द्वादश धरैं वृष दश, रत्नत्रय सेवैं सदा मुनि साथमें वा एक विचरैं चहैं नहिं भवसुख कदा॥ यों है सकल सयम चरित सुनिये स्वरूपाचरण अब। जिस होत प्रगटै आपनी निधि, मिटै परकी प्रवृति सब ॥ ७ ॥ जिन परम पैनी सुबुद्धि छैनी डार अन्तर भेदिया। वरणादि अरु रागादितैं, जिन भावको न्यारा किया॥ निजमाहिं निजके हेत निजकर आपको आपै गह्यो। गुणगुणी ज्ञाता ज्ञानज्ञेय, मंझार कछु भेद न रह्यो॥ तहं ध्यान ध्याता ध्येयको न विकल्प वच भेद-न जहां। चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहां॥ तीनों अभिन्न अखिन्न शुद्ध, उपयोगकी निश्चय दशा। प्रगटी जहाँ दृगज्ञानव्रत ये, तीनधा एकै लशा ॥ ८ ॥ परमाण नय निक्षेपको न उद्योत, अनुभवमें दिखै। दृगज्ञान-सुख-बल मय सदा नहिं, आन भाव जो मो विखै। मैं साध्य साधक मैं अवाधक, कर्म अरु तसु फलनितैं॥ चितपिंड चंड, अखंड सुगुन करंड च्युत पुनि कल नितैं ॥ १० ॥ यों चिन्त्य निजमें थिर भए तिन अकथ जो आनन्द लहो। सो इन्द्र; नाग नरेन्द्र वा अहमिन्द्र के नाहीं कह्यो ॥ तबही शुकल ध्यानाग्नि करि चऊ, घात विधि कानन दहों। सब लख्यो केवलज्ञान करि भवि लोकको शिवमग कह्यो ॥११॥ पनि घाति शेष

अघाति विधि, छिनमांहि अष्टम भू बसे। वसु कर्म विनसे सुगुण वसु, सम्यक आदिक सब लसैं॥ संसार खार अपार पारावार, तरि तीरहि गये। अविकार अकल अरूप शुच, चिद्रूप अविनाशी भये ॥ १२ ॥ निजमांहि लोक अलोक गुण पर्याय प्रतिबिम्बित थये। रहि हैं अनन्तानन्त काल यथा तथा शिव परनये॥ धनि धन्य हैं जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया। तिनही अनादी भ्रमण पञ्च प्रकार तजि वर सुख लिया॥ १३॥ मुख्योपचार दुभेद यों बड़ भागि रत्नत्रय ध रैं। अरु धरैंगे ते शिव लहैं तिन सुयशजल-जगमल हरैं॥ इम जानि आलस हानि साहस ठानि यह सिख आदरौं। जबलौं न रोग जरा गहै, तब लौं झटित निजहित करौं ॥ १४ ॥ यह राग आग दहै सदा तातैं समामृत पीजिये॥ चिर भजे विषय कषाय अब तो त्याग निजपद लीजिये॥ कहा रच्यो पर पदमें न तेरो पद यहै, क्यों दुख सहै। अब दौल होव सुखी स्वपद रचि दाव मत चूको यहै॥ ५॥

दोहा—इक नव वसु इक वर्षकी तीज शुकुल वैशाख।
कर्यो तत्त्व उपदेश यह, लखि बुधजनकी भाख॥ १॥
लघु धी तथा प्रमादतैं, शब्द अर्थकी भूल।
सुधी सुधार पढ़ो सदा जो पावो भव कूल॥ २॥

३६—सामायिक पाठ भाषा

प्रथम प्रतिक्रमण कर्म।

काल अनन्त भ्रम्यो जगमें सहियो दुख भारी। जन्ममरण नित किये पापको है अधिकारी॥ कोटि भवांतरमांहि मिलन दुर्लभ सामायिक धन्य आज मैं भयो जोग मिलियो सुखदायक॥ १॥ हे

सर्वज्ञ जिनेश किये जु पाप जु मैं अब। ते सव मनवचकाय योग-की गुप्ति विना लभ ॥ आप समीप हजूर माहिं मैं खड़ो खड़ो अव। दोष कहूं सो सुनो करो नठ दुख देहिं जब ॥२॥ क्रोध मान मद लोभ मोह मायावश प्रानी। दुःखसतित जे किये दया तिनकी नहिं आनी ॥ विना प्रयोजन एकेन्द्रिय वितिं चउ पंचेन्द्रिय। आप प्रसादहि मिटै दोष जो लाग्यो मो जिय ॥ ३ ॥ आपसमें इकठोर थापि करि जे दुख दीने। पेलि दिये पगतलें दावकरि प्राण हरीने आप जगतके जीव जिते तिन सवके नायक। अरज करौं मैं सुनो दोष मेटो सुख दायक ॥४॥ अंजन आदिक चोर महा घनघोर पाप-मय। तिनके जे अपराध भये ते क्षिमाक्षिम किय ॥ मेरे जे अब दोष भये ते क्षमो दयानिधि। यह पड़िकोणो कियो आदि षट कर्ममाहि विधि ॥ ५ ॥

अथ द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म।

जो प्रमादवश होय विराधे जीव घनेरे। तिनको जो अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ॥ सो सब झूठो होउ जगपततिके परसादै। जा प्रसादतैं मिले सर्व सुख दुःख न लाधे ॥ ६ ॥ मैं पापी निर्लज्ज दया करि हीन महाशठ। किये पाप अति घोर पापमति होइ चित्त दुठ ॥ निंदूं हूं मैं बारबार निज जियको गरहूं। सबविधि धर्म उपाय पाय फिर पापहिं करहूं ॥ ७ ॥ दुर्लभ है नर जन्म तथा श्रावककुल भारी। सतसगति संयोग धर्म निजश्रद्धाधारी ॥ जिनवचनामृत धार समावर्ते जिनवानी। तौहू जीव संहारे धिक धिक धिक हम जानी ॥८॥ इन्द्रियलपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब। अज्ञानी जिमि करै तिसी विधि हिंसक ह्वै अब ॥ गमनागमन करन्तो जीव विराधे

मोहि। ते सब दोष किये निन्दूं अब आलोचन सोधे ॥ ९ ॥ आलोचन विधि थकी दोष लागे जु घनेरे। ते सब दोष विनाश होउ तुमतैं जिन मेरे ॥ बार बार इस भाँति मोहमद दोष कुटिलता। ईर्षादिकतैं भये निन्दिये जे भयभीता ॥ १० ॥

अथ तृतीय सामायिक कर्म।

सब जीवनमें मेरे समताभाव जग्यो है। सब जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है ॥ आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छांडि करिहूं सामायक ॥ संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक ॥ ११ ॥ पृथ्वी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति। पांचहि थावर माहिं तथा त्रस जीव बसैं जित ॥ बे इन्द्रिय तिय चउ पंचेन्द्रिय माहिं जीव सब। तिनसैं क्षमा कराऊं मुझपर क्षमा करो अब ॥ १२ ॥ इस अवसरमैं मेरे सब सम कञ्चन अरु तृण। महल मसान समान शत्रु अरु मित्रहि सम गण ॥ जामन मरणसमान जानि हम समता कीनी। सामायिकका काल जितै यह भाव नवीनी ॥ १३ ॥ मेरो है इक आतम तामें ममत जु कीनो ॥ और सबै मम भिन्न जानि समता रस भीनो ॥ मात पिता सुत बन्धु मित्र तिय आदि सबै यह। मोतैं न्यारे जानि जथारथ रूप कर्यो गह ॥ १४ ॥ मैं अनादि जगजालमाहिं फंस रूप न जाण्यो। एकेन्द्रिय दे आदि जन्तुको प्राण हराण्यो ॥ ते अब जीव समूह सुनो मेरी यह अरजी। भवभवको अपराध छमा कीज्यो करि मरजी ॥ १५ ॥

अथ चतुर्थ स्तवन कर्म।

नमूं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीत कर्मको। संभव भव दुखहरण करण अभिनन्द शर्मको ॥ सुमति सुमति दातार

भवसिन्धु पारकर। पद्म पद्मपद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥१६॥ श्रीसुपार्श्व कृत पास नाश भव जास शुद्धकर। श्रीचन्द्रप्रभचन्द्र कान्तिसम देहकान्ति धर। पुष्पदन्त नमि दोषकोप भवि पोष रोषहर। शीतल शीतल करन हरन भवताप दोषहर ॥ १७ ॥ श्रेय रूप जिन श्रेय धेय नित सेय भव्यजन। वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिक भवभय हन ॥ विमल विमल मतिदेन अन्तगन है अनन्त जिन। धर्म शर्म शिवकरण शाति जिन शांतिविधायिन ॥ १८ ॥ कुन्थ कुन्थ मुख जीवपाल अरनाथ जाल हर। मल्लि २ सममोह मल्ल मारण प्रचार धर ॥ मुनिसुव्रत व्रत करण नमत सुरसंघहि नमि जिन। नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ माँहि ज्ञान धन ॥ १९ ॥ पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपलसम मोक्षरमापति। वर्द्धमान जिन नमूं नमूं भवदुःख कर्मकृत ॥ याविधि मैं जिनसंघरूप चउबीस संख्यधर। स्तऊं नमूं हू वार वार वन्दौं शिव सुखकर ॥ २० ॥

पञ्चम वन्दनाकर्म।

वन्दूं मैं जिनवीर धीर महावीर सुसन्मति। वर्द्धमान अतिवीर वन्दहों मनवचतनकृत ॥ त्रिशलानन्दन महेश धीश विद्यापति वन्दूं। वन्दूं नितप्रति कनकरूप तनु पाप निकन्दूं ॥२१॥ सिद्धारथ नृपनंद द्वंद दुखदोष मिटावन। दुरित दवानल ज्वलितज्वाल जगजीव उधारन ॥ कुण्डलपुर करि जन्म जगतजिय आनन्दकारन। वर्ष बहत्तरि आयु पाय सब ही दुख टारन ॥२२॥ सप्त हस्त तनु तुंग भंग कृत जन्ममरण भय। बालब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय ॥ दे उपदेश उधारि तारि भवसिन्धु जीवधन आप बसे शिवमाहिं ताहि वन्दौ मन वच तन ॥ २३॥ जाके वन्दन थकी दोष दुख दूरहिं

आवे। जाके पम्दतयको मुक्ति तिम सम्मुख आवे ॥ जाके अन्वेषण की वंद होये सुरगनके। ऐसे वीर जिनेश वन्दिहूं क्रमयुग तिनके ॥ २४ ॥ सामायिक षटकर्ममाहि वन्दन यह पञ्चम। वन्दे वीरजिनेन्द्र इन्द्रशतवन्द्य वन्द्य मम ॥ जन्म मरण भय हरो करो अघ शांति शांति मम ॥ मैं अघ कोष सुपोष दोषको दोष विनाशन ॥ २५ ॥

छठा कायोत्सर्ग कर्म

कायोत्सर्गविधान करूं अन्तिम सुखदाई। कायत्यजन मय होय काय सबको दुखदाई ॥ पूरब दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मैं। जिनगृह वन्दन करूं हरूं भवपाप तिमिर मैं ॥ २६ ॥ शिरोनती मैं करूं नमूं मस्तक कर धरिकै। आवर्तादिक क्रिया करूं मनवच मद हरिकै। तीन लोक जिन भवनमाहि जिन हैं जु अकृत्रिम। कृत्रिम हैं द्वयअर्द्ध द्वीपमाहीं वन्दौं जिम ॥ २७ ॥ आठ कोड़िपरि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं। चारि शतकपरि असी एक जिनमन्दिर जाणूं ॥ व्यन्तर ज्योतिषमाहिं संख्यरहिते जिनमन्दिर। जिनगृह वन्दन करूं हरहु मम पाप संघकर ॥ २८ ॥ सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक ॥ सामायिक सम नाहिं और कोउ मैत्रीदायक ॥ श्रावक अणुव्रत आदि अन्त सप्तम गुणथानक। यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥ २९ ॥ जे भवि आतम काज करण उद्यमके धारी। ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी ॥ राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब। बुध महाचन्द्र विलाय जाय तातैं कीज्यो अब ॥ ३० ॥

३६—सामायिक पाठ (संस्कृत)

सत्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् । माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा विदधातु देव ॥ १ ॥ शरीरतः कर्त्तुमनन्तशक्तिं, विभिन्नमात्मानमपास्त दोषम् । जिनेन्द्र कोषादिव खड्गयष्टिं, तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ॥ २ ॥ दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे, योगे वियोगे भवने वने वा । निराकृताशेष ममत्वबुद्धे समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ! ॥३॥ मुनीश ! लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निपाताविव बिम्बिताविव । पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ॥ ४ ॥ एकेन्द्रियाद्या यदि देव ! देहिनः । प्रमादतः संचरता इतस्ततः । क्षता विभिन्ना मिलिता निपीड़िितास्तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ॥५॥ विमुक्तिमार्ग प्रतिकूलवर्त्तिना मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया । चारित्र शुद्धेर्यदकारि लोपनं तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥ ६ ॥ विनिन्दनालोचनगर्हणैरहं मनोवच. काय कषायनिर्मितम् । निहन्मिपापं भवदु खकारणं भिषग्विषं मन्त्रगुणैरिवाखिलम् ॥ ७ ॥ अतिक्रमं यं विमतेर्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं सुचरित्रकर्म्मण. । व्यधामनाचारमपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥ ८ ॥ क्षतिं मनः शुद्धि विधेरतिक्रमं व्यतिक्रमं शीलव्रतेर्विलंघनम् । प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं, वदन्त्यनाचारमिहातिशक्तताम् ॥ ९ ॥ यदर्थमात्रापदवाक्य हीनं मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् । तन्मे क्षमत्वा विदधातु देवी सरस्वती केवलबोधलब्धि ॥१०॥ बोधिः समाधिः परिणाम शुद्धिः स्वात्मोपलब्धि. शिवसौख्यसिद्धि । चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने, त्वां वंद्यमानय ममास्तु देवि ॥ ११ ॥ य· स्मर्य्यते सर्व्वमुनीन्द्र

वृन्दैः, यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः।' यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥११॥ यो दर्शनज्ञानसुखस्वभावः समस्तसंसारविकार बाह्यः। समाधिगम्यः परमात्मसंज्ञः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १२ ॥ निषूदते यो भवदुःखजालम्, निरीक्षते यो जगदन्तरालम्। योऽन्तर्गतो योगिनिरीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥१४॥ विमुक्तिमार्गप्रतिपादको यो यो जन्ममृत्युव्यसनाद्व्यतीतः। त्रिलोकलोकी विकलोऽकलङ्कः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १५ ॥ क्रोडीकृताशेषशरीरिवर्गाः रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः। निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपाय स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १६ ॥ यो व्यापको विश्वजनीनवृत्तेः, सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबन्धः। ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १७ ॥ न स्पृश्यते कर्मकलङ्कदोषैः यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः। निरञ्जनं नित्यमनेकमेकं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १८ ॥ विभासते यत्र मरीचिमाली न विद्यमाने भुवनावभासी। स्वात्मस्थितं बोध मय प्रकाशं तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १९ ॥ विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम्। शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ २० ॥ येन क्षता मन्मथमानमूर्च्छा विषादनिद्राभयशोकचिन्ता। क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपञ्चः तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ २१ ॥ न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी, विधानतो नो फलको विनिर्मितः। यतो निरस्ताक्षकषायविद्विषः। सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥२२॥ न संस्तरो भद्रसमाधिसाधनं न लोकपूजा न च संघ मेलनम्। यत स्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम्

॥२३॥ न सन्ति बाह्या मम केचनार्था, भवामि तेषां न कदाचनाहम्। इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्त्यै ॥ २४ ॥ आत्मानमात्मन्यवलोक्यमानस्त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः। एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र, स्थितोपि साधुर्लभते समाधिम् ॥२५॥ एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा विनिर्मलः साधिगमस्वभावः। बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ता, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः ॥२६॥ यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः। पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः। कुतो हि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये ॥२७॥ संयोगतो दुःखमनेकभेदं, यतो ऽश्नुते जन्म वने शरीरी। ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो। यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् ॥२८॥ सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं संसारकान्तारनिपातहेतुम्। विविक्तमात्मानमवेक्ष्यमाणो निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे ॥२९॥ स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्। परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा ॥३०॥ निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन। विचारयन्नेवमनन्यमानसः, परो ददातीति विमुच्य शेमुषीम् ॥ ३१ ॥ यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः सर्वविविक्तो भृशमनवद्यः। शश्वदधीते मनसि लभन्ते, मुक्तिनिकेतं विभव वरं ते ॥३२॥

इति द्वात्रिंशता वृत्तैः परमात्मानमीक्षते।
योऽनन्य गत चेतस्को, यात्यसौ पदमव्ययम् ॥ ३३ ॥

३७—आरती संग्रह।

प्रथम आरती।

यह विधि मङ्गल आरती कीजै। पञ्च परम पद भजि सुख

कीजे ॥ टेक ॥ प्रथम आरती श्रीजिनराजा । भवदधि पार उतार जिहाजा ॥१॥ दूजी आरती सिद्धन केरी । सुमरण करत मिटै भव फेरी ॥ २ ॥ तीजी आरती सूर मुनिन्दा । जनम मरण दुख दूर करिन्दा ॥ ३ ॥ चौथी आरती श्री उवज्झाया । दर्शन देखत पाप पलाया ॥ ४ ॥ पांचवीं आरती साधु तुम्हारी । कुमति विनाशन शिव अधिकारी ॥ ५ ॥ छट्ठी ग्यारह प्रतिमा धारी । श्रावक वन्दौं आनन्दकारी ॥ ६ ॥ सातवीं आरती श्रीजिनवाणी । द्यानत स्वर्ग मुक्ति सुखदानी ॥ ७ ॥

द्वितीय आरती ।

आरती श्रीजिनराज तुम्हारी । कर्म दलन संतन हितकारी ॥ टेक ॥ सुर नर असुर करत तब सेवा । तुमही सब देवनके देवा ॥ १ ॥ पञ्च महाव्रत दुद्धर धारे । राग दोष परिणाम विदारे॥२॥ भवभयभीत शरण जे आये । ते परमारथ पन्थ लगाये ॥३॥ जो तुम नाम जपै मन माहीं । जनम मरण भय ताको नाहीं ॥४॥ समोसरण सम्पूरण शोभा । जीते क्रोध मान मद लोभा ॥५॥ तुम गुण हम कैसे कर गावें । गणधर कहत पार नहिं पावें ॥६॥ करुणा सागर करुणा कीजे । द्यानत सेवकको सुख दीजे ॥ ७ ॥

तृतिय आरती ।

आरती कीजे श्रीमुनिराजकी । अधम उधारन आतम काजकी ॥ टेक ॥ जा लछमीके सब अभिलाषी । सो साधन कर्दम वत नाखी ॥१॥ सब जग जीत लियो जिन नारी । सो साधनि नागिनि वत छारी ॥२॥ विषयन सब जगको वश कीने । ते साधन विषवत तज दीने ॥३॥ भुविको राज चहत सब प्राणी । जीर्ण तृणवत त्यागो

ध्यानी ॥४॥ शत्रु मित्र सुख दुख सम माने। लाभ अलाभ बराबर जाने ॥५॥ छहों काय पीडन व्रत धारैं। सबको आप समान निहारैं ॥६॥ यह आरती पढै जो गावैं। द्यानत मन वाछित फल पावैं ॥७॥

चतुर्थ आरती।

किस विधि आरती करौं प्रभु तेरी। अगम अकथ जस बुध नहिं मेरी॥ टेक॥ समुद्र विजय सुन रजमति छारी। यों कहि थुति नहिं होय तुम्हारी॥ १॥ कोटि स्तम्भ वेदि छवि सारी। समोसरण थुति तुमसे न्यारी ॥२॥ चारि ज्ञान युत तिनके स्वामी सेवकके प्रभु अन्तर्यामी॥ ३॥ सुनके वचन भविक शिव जाहीं सो पुद्गलमें तुम गुण नाहीं ॥४॥ आतम ज्योति समान बताऊं। रवि शशि दीपक मूढ़ कहाऊं॥ ५॥ नमत त्रिजग पति शोभा उनकी। तुम शोभा तुममें निज गुणकी॥ ६॥ मानसिंह महाराजा गावे। तुम महिमा तुम ही वन आवे॥ ७॥

पचम आरती।

यह विधि आरती करूं प्रभु तेरी। अगम अवाधित निज गुण केरी॥ टेक॥ अचल अखण्ड अतुल अविनाशी। लोकालोक सकल परकाशी॥ १॥ ज्ञान दरश सुख बल गुणधारी। परमात्मा अविकल अविकारी॥ २॥ क्रोध आदि रागादिक तेरे। जन्म जरा-मृत कर्म न नेरे॥ ३॥ अवपु अवध कारण सुखराशी। अभय अनाकुल शिवपद वासी ॥४॥ रूप न रेख न भेष न कोई। चिन्मूरति प्रभु तुमहीं होई॥ ५॥ अलख अनादि अनन्त अरोगी। सिद्ध विशुद्ध स्वआतम भोगी॥ ६॥ गुण अनन्त किम वचन बनावे। दीपचन्द्र भव भावना भावे॥ ७॥ इति॥

३८—चेतन सुमतिकी होली।

अबकी मैं होरी खेलौं सुमतिसे। यह मन भाय गई मेरे घटके ॥ टेक ॥ अनुभव गाग मम सुख पिचकारी, सखि २ मारे कुमति पर हटके ॥ १ ॥ ज्ञान गुलाल थाल निज परिणति झाकमझाक कुमाल पसरके ॥ २ ॥ प्रमुदित गाय समाधिक सखियां हम तुम साथ मन्दिरमें अटके ॥ ३ ॥ भयो २ फाग भयो २ अवसर बेढ़ि हमारी क्यों भव भटके ॥ ४ ॥

३९—आसाराम कृत होली।

होरी है मन तोहि खिलाऊं चेतन राम रिझाऊं। मन्दर मन्नु करों अति सुन्दर भूषण भाव बनाऊं। धर्म सखी पशु केसर घोरौं गावें गुलाल उड़ाऊं भलीविधि धूम मचाऊं ॥ १ ॥ शोभा चित करों अति सिपरो छिपरो मति अनूप अड़ाऊं। वामके सागरमें धसके तहां ते सगरी मधि ल्याऊं। भली विधि मधुप पाऊं ॥२॥ मन मृदङ्ग बजै मधुरी ध्वनि कर करुनाव पजाऊं। पञ्च सखी अपनी संग लेके सुपून धमार गवाऊं—भली विधि सो निरताऊं ॥३॥ ऐसी होरी जो मुनि खेलें शिवपद शीघ्र लहाऊं। आसाराम करें विनती प्रभु भक्ति अभय पद पाऊं। तब निज धाम बसाऊं।

४०—मानिक कृत होली।

कामें आपापमन बाकी होरी। हमारे को खेले ऐसी होरी हरिण्य हिंसादिक नित पाप पापके पशु लिपि कर पकरोरी। पाप

श्रीकृष्णकी माताके ७ स्वप्न।

मोहनीय कर्म ३
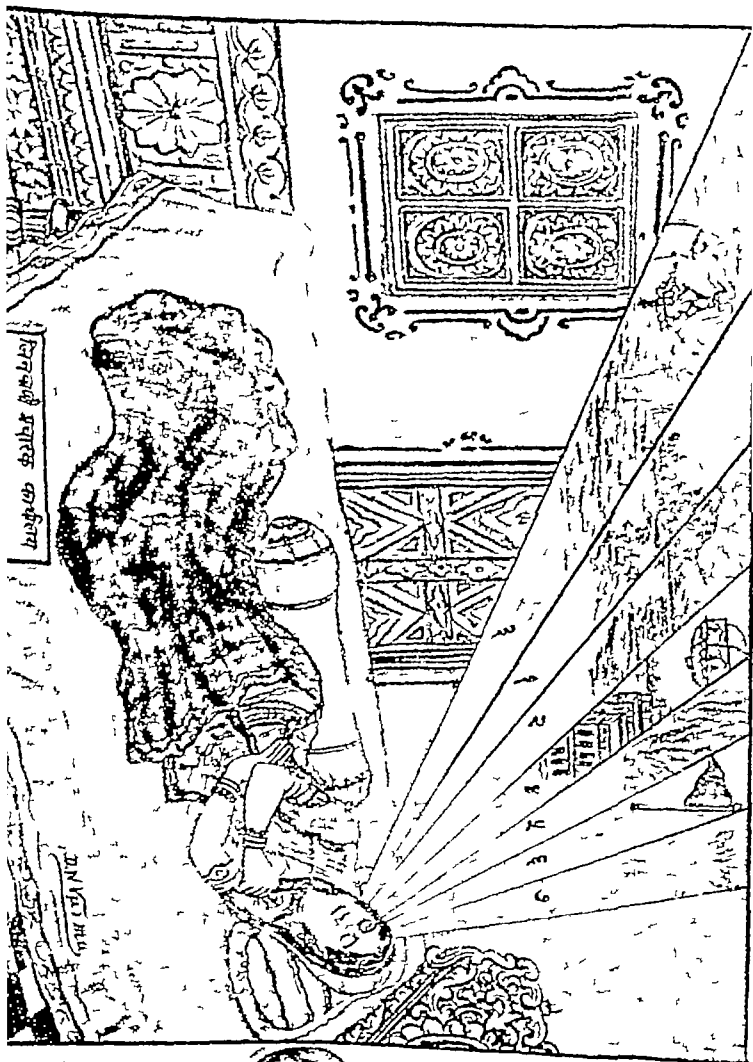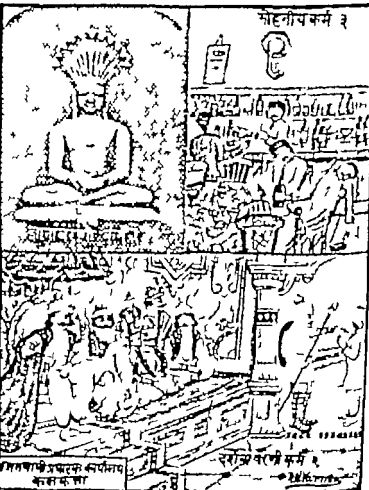
कींच बहु भाति लपेटत विषय कुरङ्ग छिरकोरी ॥ १ ॥ कुमति कुनारि डारि भ्रम फासी वहुत करी वरजोरी। कर्म धूल मङ्ग ल्यावत प्यावत मोह अमल कटोरी ॥ २ ॥ कषाय पचीस नृत्य-कारिन संग गति २ नाचत चोरी। राग द्वेष दोऊ छैल छबीली देत कुमगकी डोरी ॥ ३ ॥ यों चिरकाल खेल जिय 'मानिक' पाये दुःख करोरी। जैनधर्म परसाव भविक अव प्रीति सुपदसों जोरी ॥

४१—गङ्गा कृत होली।

खेलत फाग प्रवीना ॥ टेक ॥ दया वसन्त सखा दश लक्षण समकित रङ्ग जु कीना। ज्ञान गुलाल चरित्र अर्गजा शील अतरमें भीना ॥ १ ॥ ध्यानानल आस्रव होरी दोवन्ध त्रपत कर खीना। निर्जर नेह मुकत धन फगुआ निज परणतिको दीना ॥ २ ॥ 'गंगा' मन आनन्द भयो है सव विकल्प तज दीना। निज सर्वज्ञनाथ प्रभु आगे नाम निरन्तर लीना ॥ ३ ॥

४२—मेवाराम कृत होली।

अरे मत खेल खिलारी फाग रची संसारी ॥ टेक ॥ कामक्रोध दोऊ छैल छबीले कुमति हाथ पिचकारी। पाप कीच बहु भांति भरी है देत वदनपर डारी ॥ १ ॥ मोह मृदंग मजीरा मान मद लोभ तमूरा वारी। आशा तृष्णा नृत्य करत है लेत तान गति न्यारी ॥२॥ पांच पचीसी कामिनी घटमें गावत मनसो गारी। झगड़ २ मिलि फगुआ मांगत भाव वतावत भारी ॥ ३ ॥ खेलत खेलत युग बहु बीते अव जिय भयो दुखारी। मेवाराम जैन हित होरी अवकी वार हमारी ॥ ४ ॥

४३—मानिककृत होली।

कहा बानि परी पिय तोरी-कुमति संग खेलत है नित होरी ॥टेक॥ कुमति कूर कुशिला संग रांचा छाम शरम सब छोरी। राग द्वेष मय धूलि उड़ावे नाचे ज्यों बरजोरी। मस्त विषय मद भरि पिचकारी कुमति कुत्रिय सरजोरी। या प्रसंग थिर दुखी भये थिर प्रीति करत बरजोरी ॥ २ ॥ निज घरकी पिय सुधि बिसारके परत पराई पोरी। तीन लोकके ठाकुर कहियत सो विधि सबरी बोरी ॥३॥ परनि पारी परजों नहिं मानत ठानत हठ बरजोरी। हठ तजि सुमति सीख मति मानिक तो विलसो शिव गोरी ॥ ४ ॥

४४—दौलतकृत होली।

छांड़ि दे तू या बुधि भोरी-वृथा तनसों रति जोरी ॥ टेक ॥ ये पर है न रहै थिर पोषत ये सकल मलकी झोरी। इन सों करि ममता अनादिसे बन्धो कर्मकी डोरी। सहै भव दुःख हिलोरी ॥ १ ॥ ये जड़ है तू चेतन ज्योंही आप बतावत ओरी। सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण तप इन सत्संग त्योरी ॥ सदा विलसो शिव गोरी ॥२॥ सुखिया भये सदाही जे नर यासों ममता छोरी। 'दौल' सिखि यह सीखो पीजो ज्ञान पीयूष कटोरी ॥ मिटै भव व्याधि कठोरी ॥ २ ॥

४५—इन्द्रिय शिक्षापर होली।

छैल मिलि कैसी होरी मचाई ॥ टेक ॥ दियो पीति छिपाय छोड़िके कोट मिले सिखवार। मुठ्ठे भगारी करें पिछारी होपी गोल बनाई। पड़ी मागे चटकाई ॥ छैल मिलि कैसी० ॥१॥ पूर

देवको पहिन पावमें तनिया खूब कसाई। वैठन नहिं पतलून देत है ठाढ़े करत मुनाई। धन्य अगरेजो आई। छैल० ॥२॥ टेढ़ा डंडा हाथ साथमें गडा श्वान छुहाई। गले गुलूबन्द फालर डटके मुखमें चुरट दबाई। धुवाँ फक फक उडाई ॥ छैल० ॥ ३ ॥ घरमें जा अगरेजी वोलैं समझत नाहिं लुगाई। मागे वाटर देती है रोटी बोल उठे झुंझलाई। डेम यू क्या ले आई ॥ छैल० ॥ ४ ॥ कौन बनावे रङ्ग वसन्ती कौन गुलाल उडाई। स्याहीकी डिबिया हाथ वुरुस है करते है वूट सफाई। छोडके सालमसाई ॥ छैल०॥ ४ ॥ सातों जाति मिडिलकर वैठे दूर भई पण्डिताई। गिट पिट मिष्टर होटल जावें मदिरा मटन उडाई। लेडीसे आंख लड़ाई ॥ छैल० ॥

४६—तीर्थंकरोंकी स्तुति प्रभाती।

वन्दौं जिनदेव सदा चरण कमल तेरे। जा प्रसाद सकल कर्म छूटत अघ मेरे ॥ टेक ॥ ऋषभ अजित सभव अभिनन्दन केरे। सुमति पद्म श्री सुपार्श्व चन्दा प्रभु मेरे ॥ १ ॥ पुष्पदन्त शीतल श्रीयास गुण घनेरे। वासपूज्य विमल अनन्त धर्म जग उजेरे ॥२॥ शान्ति कुन्थ अरह मल्ल मुनि सुव्रत केरे। नमि नेमि पार्श्वनाथ महावीर मेरे ॥ लेत नाम अष्ट याम छूटत भव फेरे। जन्म पाय जादोराय चरननके चेरे ॥ ४ ॥

४७—जवाहर कृत प्रभाती।

उठि प्रभात सुमिरन कर श्री जिनेन्द्र देवा ॥ टेक ॥ सिंहासन झिलमिलात तीन छत्र शिर सुहात चमर फहरात सदा भवि जन भजेवा ॥ १ ॥ भेंटे पार्श्व जिनेन्द्र कर्मके कटेंजु फन्द अस्वसेनके जु नन्द वामा सुखदेवा ॥ २ ॥ वानी तिहुकाल खिरे पशुवनपर दृष्टि

परै ममत सुरतरु मुनीन्द्रादिक चरन शीश नैया ॥ ३ ॥ प्रभुके चरणारविन्द जपत हैं 'भवाहरचन्द्र' कर जोरिं ध्यान धरै चाहत नित सेवा ॥ ४ ॥

४८—दौलतकृत प्रभाती ।

पारस जिन चरण निरखि हरख ज्यों लहायो । चितवन चन्दा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुनि घनघोर शोर मोरके मन हरख और रङ्क निधि समाज राज पाय मुदित थायो ॥१॥ ज्यों जन चिर क्षुधित कोय भोजन लहि सुखित होय भेषज मद हरन पाय आतुर हरषायो ॥ २ ॥ वासर धनि भाज दुरित दुरै चिर सुकृत भाज शास्ताकृत देखि महामोह तम विलायो ॥ ३ ॥ जाके गुन जानन योग्य भानन भव कानन इमि जान 'दौल' सरन आय शिव सुख ललचायो ॥ ४ ॥

४९—दौलतकृत प्रभाती ।

निरखत जिन चन्द्र वदन स्वपद सुरुचि आई ॥ टेक ॥ प्रगटी निज मानकी पिछान ज्ञान भानकी कला उद्योत होत काम यामि नी पलाई ॥१॥ शास्वत आनन्द स्वाद पायो विनसो विषाद आनन अनिष्ट इष्ट कल्पना नशाई ॥ २ ॥ साधी निज साधकी समाधि मोह व्याधिकी उपाधि कपिराधिके भराधना सुहाई ॥ ३ ॥ धन दिन छिन आज सुगुन चिन्ते जिनराई । सुधरे सब काज दौल अचल रिद्धि पाई ॥ ४ ॥

५०—णमोकार महिमा प्रभाती ।

प्रातकाल मन्त्र जपो णमोकार भाई । अक्षर पैंतीस शुद्ध हृदय

में धराई ॥टेक॥ नरभव तेरो सुफल होत पातक टर जाई। विघन जासु दूर होत संकटमें सहाई ॥ १ ॥ कल्पवृक्ष कामधेनु चिन्ता-मणि जाई। ऋद्धि सिद्धि पारस तेरे प्रगटाई ॥२॥ मन्त्र जन्त्र तंत्र सब जाही बनाई। सम्पति भण्डार भरे अक्षय निधि आई ॥ ३ ॥ तीन लोक माहि सार वेदनमें गाई। जगमें प्रसिद्ध धन्य मङ्गलीक भाई ॥ ४ ॥

५१—भागचन्दकृत प्रभाती।

परणति सब जीवनकी तीन भांति वरणी एक पुण्य एक पाप एक राग हरणी ॥ टेक ॥ जामें शुभ अशुभ बन्द बीतराग परणित सब भव समुद्र तरणी ॥१॥ छाँडि अशुभ क्रिया कलाप मत करो कदाचि पाप शुभमें न मगन होय अशुद्धता विसरणी ॥ २ ॥ यावत ही शुभोपयोग तावत ही मन उद्योग तावतही करणयोग कही पुण्य करणी ॥३॥ 'भागचन्द' जा प्रकार जीव लहे सुख अपार याको निरधार स्यादवादकी उचरणी ॥ ४ ॥

५१—जैनदासकृत प्रभाती।

उठि प्रभात पूजिये श्री आदिनाथ देवा। आलसका त्याग जागि पूजा विधि मेवा ॥ टेक ॥ जल चन्दन अक्षत प्रीति सम लेवा। पुष्प सुवास होय काम जरि जेवा ॥ १ ॥ नैवेद्य उज्ज्वल करि दीप रतन लेवा। धूपते सुगन्ध होय अष्ट कर्म खेवा ॥ २ ॥ श्रीफल बदाम लौंग डोंड़ा शुभ मेवा। उज्ज्वल करि अर्घ पूजि श्रीजिनेन्द्र देवा ॥ ३ ॥ जिनजी तुम अर्ज सुनो भवदधि उत-रेवा। जैनदास जन्म सुफल भगति प्रभू एवा ॥ ४ ॥

५३—भवानीकृत प्रभाती ।

ताण्डव सुरपतिने जहाँ हर्ष भाव धारो ॥ टेक ॥ रुनु रुनु रुनु नूपुर ध्वनि झुमकि झुमकि पैंजन पग झुन झुन झुन कीन छवि अगनि अति प्यारी ॥ १ ॥ थ न न न न सारङ्गनि स न न न न किन्नर अ घ घ घ गंधर्व सर्व देत जहाँ तारी ॥ २ ॥ धं धं धं पग झपटि फं फं फ फ म न न न न धं प मृदंग बाजे बीना धुन सारे ॥ ३ ॥ अ द द द द द विद्याधर दि दि दि दि दि दि देय सकल दास भवानी ज्यों कहैं जिन चरनन बलिहारी ॥ ४ ॥

५४—मानिककृत भजन ।

नहिं ऐसो और छवि जैनमें तेरी शान्ति छबी मन बस गई है ॥ टेक ॥ निर्विकार निग्रन्थ दिगम्बर देखत कुमति विनसि गई है ॥ १ ॥ चिर मिथ्यातम दूर करनको चन्द्रकला सी दरस रही है ॥२॥ मानिक मन मयूर हरषनको मेघ घटा सी दरस रही है ॥३॥

५५—नवलकविकृत खम्माच ।

आज कोई अद्भुत रचना रची ॥ टेक ॥ समोशरण शोभा देखनको होड़ा होड़ी मची ॥ १ ॥ स्वर्ग विमान लजै छवि जाके देखत मदन लिची ॥ २ ॥ जिन गुण स्वाद रसिया परनकी धीमम जात मची ॥ ३ ॥ नयन कहे ऐसो मन भावे हर्ष धार कर नची ॥ ४ ॥

५६—मोहनलालकृत झंझोटी ।

देखि सखी छवि आज भली यह यदि पशुनन्दन भावत है ॥ टेक ॥ तीन छत्र माथेपर सोहें त्रिभुवननाथ कहावत है ॥१॥

मोर मुकुट केसरिया जामा चौसठ चमर ढुरावत हैं ॥ २ ॥ ताल मृदंग साज सब वाजत आनन्द मङ्गल गावत हैं ॥ ३ ॥ मोहनलाल जास चरननकी झुकि झुकि शीश नवावत हैं ॥ ४ ॥

५७—विहारीकृत राग देश।

आज जिनराज दरशनसे भयो आनन्द भारी है ॥ टेक ॥ लहै ज्यों मोर घन गर्जे सुनिधि पाये भिखारी हैं। तथा मो मोदकी वार्ता नहीं जातो उचारी है ॥ १ ॥ जगतके देव सब देखे क्रोध भय लोभ भारी हैं ॥ तुम्हीं दोषावरण वित हो कहा उपमा तिहारी है ॥२॥ तुम्हारे दर्श विन स्वामी भई चहुगतिमें ख्वारी है। तुम्हीं पद कंज नमते ही मोहनी धूल भारी है ॥३॥ तुम्हारी भक्तिसे भवजन भये सब सिन्धु पारी हैं। भक्ति मोहि दीजिये अविचल सदा याचक विहारी है ॥ ४ ॥

५८—मानिककृत सोरठा।

ज्ञानी पिया क्यों विसरे निज देश। कुमति कुरमिनी सोत संग राचे छाय रहे परदेश ॥ टेक ॥ अनन्तकाल परदेशनि छाये पाये वहुत कलेश। देश तुम्हारो सुपद समारो त्रिभुवन होउ नरेश ॥ ११ ॥ भ्रम मद पाय छकाय रहो घन ज्ञान रहो नहिं लेश। दुखी भये विललात फिरत हो गति गति धरि दुरिभेष ॥ २ ॥ यह संसार जानि लख नीके सुख नहि रंचक लेश। मानिक काल लब्धि पावस लहि सुमति हाथ उपदेश ॥ ३ ॥

५९—पिल्लू।

स्वामी मुजरा हमारा लीजै ॥ टेक ॥ तुम तो वीतराग आनंद

अब हमको भी भव कीजे ॥ १ ॥ जगके देव सब रागी द्वेषी पाये निज गुण दीजे ॥ २ ॥ आदि देव तुम समानको बेग अपना पद दीजे ॥ ३ ॥

६०—हीरालालकृत रेखता।

भगवान आदिनाथ जिनसों मन मेरा लगा। आराम मुझे होत दुःख दर्दसे भगा ॥ टेक ॥ मरुदेवी नन्द धर्म कल्प कुक्षमें पुर लगा। नृप नाभिराजके कुमार जगत गुरु जगा ॥ १ ॥ युगका निवार धर्मको संसारको तगा। वसु कर्मको अराय शिव पन्थमें लगा ॥ २ ॥ अब तो करो निज्ञाव मिहरवान दिल लगा। कहै दास 'हीरालाल' होवे मुक्तिका मगा ॥ ३ ॥

६१—हजारीकृत गजल।

ख्याल कर दिल मझार चेतन अजब जगमें भ्रमाई गतियां ॥ टेक ॥ निगोद बस कर सुबोध खोया तिर्यग व नारक नरस्व तियां। कभी मनुष था कभी सुरग था अनादि से फिर फिराई गतियां ॥ २ ॥ यह दुःख भर भर मलीन हुआ न तोरकी कछु सुमाई गतियां। पड़ा है अब तो उसीके दरपर छुड़ों हजारी न यम की गतियां ॥ ३ ॥

६२—हजारीकृत लावनी।

प्रभू भवसागर पार करो मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥ टेक ॥ तुमही हो नित्य निरञ्जनदेव। करें इन्द्रादिक थारी सेव ॥ सबके पाप हरें स्वयमेव। भजन नित कीजे हमारी टेव ॥ दोहा—तुम सुमरनसे आपदा, छीजे हमरो काज ॥ तुम देवनके देव हो त्रिलोक शिखिर महाराज ॥ जगतमें तारन बिरद धरो। मेरे रागादिक०

॥ १ ॥ जन्म मरणादि अनल भारी। चरण थुति झरत सलिल झारी ॥ तासु मिट जात तापकारी। होत सुख अविचल अविकारी दो०—ऐसे तुम गुण चिन्त वर, ता सम कीजे मोय। मोहादिक अरि अति प्रबल तिनको दीजे खोय ॥ आज तुम देखत काज सरो मेरे० ॥ २ ॥ कर्म वसु अग्नि दुखदाई। तासु वस ह्वै गति गति पाई ॥ नरक औ निगोद भटकाई ॥ गर्भ दुख कह्यो नही जाई ॥ दोहा बीते काल अनन्त चिर, लखो, न तुम दृग सोय। अब मो लब्धि भई करन, तुम दरशन पायो जोय ॥ शरण लखि निर्बल मोह परो। मेरे० ॥ ३ ॥ तुम्हीं अति दीन अधम तारे। किये बहुतनके निस्तारे ॥ आज धन धान्य भाग म्हारे। बेन तुम गुण मुख उच्चारे ॥ दोहा—तुम भ्राता तुम ही हितू, तुम माता तुम तात। दुःख रूप भव कूपते काढ़ि लेहु गहि हाथ ॥ हजारी शरण लयो तुम्हरो। मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

६३—भजन संग्रह।

१ ठुमरी—तारन तरण तरण तारण प्रभु तुम तारणहम जानी। ॥ टेक ॥ तुम समान अब देव न दूजा भूरय माधुरी बानी ॥ २ ॥ लख चौरासी योनिमें भटको तब मैं आनि पिछानी ॥२॥ कामधेनु पारस चिन्तामणि मन वांछित फल दानी ॥ ३ ॥ चन्द्र स्वरूप ध्यान धरि प्रभुको दीजे मुक्ति निशानी ॥ ४ ॥

२ दादरा—निरखत छवि नाथ नैना छकित रस ह्वै गये ॥टे०॥ रवि कौट द्विति लज जात है नख दीप अपार ॥ १ ॥ इक तो परम वैरागी दूजे शान्ति स्वरूप ॥ २ ॥ उपमा हजारीसे न बने अनुपम जग चन्द्र, निरखत छविनाथ नैना छकित रसह्वै गये ॥ ३ ॥

● मदन कल्याणी—कहाँ गये जैन जातिके वीर भैया पार लगानेवाले॥टेक॥ कहाँ गये जम्बूस्वामि महाराज तत्पारथ भय रचा जहाज, क्यों नहीं रखते लज्जा आज, जैनी लज्जा रखनेवाले॥कहाँ०॥१॥ स्वामी रक्षक श्री अकलङ्क नाशा जैन जाति मार्तंड, फारा बौद्ध धर्मका डंक, जैनी ध्वजा उड़ानेवाले॥कहाँ०२॥ दैवत पात्र केसरीसिंह, पाको गज मार्गे कर सिंह। माते अब तुम क्यों न सिंह, भव्योंका भय हरनेवाले॥कहाँ०॥३॥ तब संतति हम विद्याहीन, बाल ब्याह कर धन बल छीन, फूटसे होय गये तेरा तीन सत्यानाश मिटानेवाले॥कहाँ०॥४॥ गट मद जांय विदेशी कांड़ रण्डी और नचावें भांड़ सारी लोक लाजको छांड़ बदरस्मोंके चलानेवाले॥कहाँ०॥५॥ लेमसले अब ना हो स्वच्छन्द, रखो पत्री जो तन कर॥व शुममति हायक मन जिन चन्द्र, जाति उन्नती करानेवाले॥कहाँ गये०॥६॥

६४—परमार्थ जकड़ी।

(दौलतराम कृत)

अब मन मेरा वे, सीख वचन सुन मेरा। भज जिनवर पद वै, जो विनशै दुख तेरा विनशै तेरा भवघन फेरा, मन वच तन जिन चरण भजो। पंच करण वश राख सुज्ञानी, मिथ्या मत मग दौर तजो॥ मिथ्या मतमग पग अनादि तै, तै चहु गति कीना फेरा। अबहूँ चेत अचेत होय मत, सीख वचन सुन मन मेरा॥१॥ इस भव वनमें वे ते साता नहिं पाई। वसु विधि वश हो वे, तैं निज सुधि बिसराई। तैं निज सुधि बिसराई भाई तातें विमल न बोध लहा। पर परणतिमें मग्न भयो तू जनम जरा मृत दाह

दहा ॥ जिनमत सार सरोवर कूं अब, गहो लाज निज चितनमें तो दुख दाह नशैं सब नातर, फेर बसै इस भव वनमें ॥ ॥ इस तनमें तू वे, क्या गुन देख लुभाया। महा अपावन वे सतगुरु याहि बताया ॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मल मूत्रादिकका गेहा ॥ क्रमि कुल कलित लखत घिन आवे, तासों क्या कीजे नेहा ॥ यह तन पाय लगाय आपनो, परिणति शिव मग साधनमें तो दुःख द्वन्द नशैं सब तेरा, यही सार है इस तनमें ॥ ३ ॥ भोग भले न सही, रोग शोकके दानी। शुभगति रोकन वे दुर्गति पथ अगवानी ॥ दुर्गति पथ अगवानो है जे, जिनकी लगन लगी इनसों। तिन नाना विधि विपति सही है, विमुख भया निज सुख तिनसों ॥ कुञ्जर झख अलि शलभ हिरन इन, एक अक्ष वश मृत्यु लही। यातैं देख समझ मन माहीं, भवमें भोग भले न सही ॥ ४ ॥ काज सरे तब वे, जब निज पद आराधै। नशै भवा बलिवे निरावाध पद लाधे ॥ तब निरावाध पद लाधै तब तोहि केवल दर्शन ज्ञान जहां। सुख अनन्त श्रुति इन्द्रिय मण्डित वीरज अचल अनत तहा ॥ ऐसा पद चाहैं तो भवि जिन वार धार अबको उचरै। 'दौल' मुख्य उपचार रत्नत्रय, जो सेवै नो काज सरे ॥ ५ ॥

६५—परमार्थ जकड़ी।

(रामकृष्ण कृत)

अरहन्त चरण चित लाऊं। पुन. सिद्ध शिवंकर ध्याऊं ॥ बन्दों जिन मुद्राधारी। निर्ग्रन्थ यती अविकारी। अविकार करुणावन्त वन्दों सकल लोक शिरोमणी। सर्वज्ञ भाषित धर्म प्रणमू देय सुख सम्पति घनी। ये परम मंगल चार जगमें चार लोकोत्तम

यही। भव भ्रमत इस असहाय जियको और रक्षक कोउ नहीं ॥१॥
मिथ्यात्व महारिपु दंडो। चिरकाल चतुर्गति हंडो ॥ उपयोग नयन
गुण खोयो। भर नींद निगोदे सोयो ॥ सोयो अनादि निगोदमें
जिय निकस फिर स्थावर भयो। भू तेज तोय समीर तरवर थूल
सूक्षम तन लियो। कृमि कुन्थु अलिसैनी असैनी व्योम जल थल
संचरो। पशु योनि बासठ लाख इस विधि भुगति मर मर अवतरो
॥ २ ॥ अति पाप उदय जब आयो। महा निंद नरकपद
पायो। थिति सागरों बन्ध जहां है। नाना विधि कष्ट तहां है ॥
है त्रास अति आताप वेदन शीत बहु युत है मही। जहां मार
मार सदैव सुनिये एक क्षण साता नहीं ॥ नारकि परस्पर युद्ध ठानें
असुरगण क्रीड़ा करें। इस विधि भयानक नरक थानक सहैं जी
परवश परें ॥ ३ ॥ मानुष गतीके दुख भूलो। बस उदर अधोमुख
झूलो, जन्मत जो संकट सेयो। अविवेक उदय नहीं वोयो ॥
वोयो न कछु लघुबाल वयमें वंश तरु कोंपल लगी। दल रूप यौवन
वय सो आयो काम द्यो तब उर जगी ॥ जब तन बुढ़ापो घट्यो
पौरुष पान पकि पीरा भयो। कफ वर्ये काल बयार बज्जत वाहि
नर भव यों गयो ॥४॥ अमरापुरके सुख कीने। मनो वांछित भोग
नवीने। उर माल जबै मुरझानी थितिपो आसन्न मृत्यु जानी ॥
मृत्यु जानि हाहाकार कीना शरण अब काको गहुं। यह स्वर्ग
सम्पति छोड़ अब मैं गर्भ वेदन क्यों सहूं। तब देव मिल सब
समझायो पर कुछ विवेक न उर बसो। सुर लोक गिरिसे गिर
अज्ञानी कुमति कांदो फिर फंसो ॥५॥ इस विधि इस मोदी कीने।
परिवर्तन पूरे कीने ॥ तिनकी बहु कष्ट कहानी। सो जानत केवल

ज्ञानो। ज्ञानी विना दु.ख कौन जाने जगत वनमें जों लहा। जरा जन्म मरण स्वरूप तीक्षण त्रिविध दावानल दहा। जिनमत सरोवर शीतपर अब न बैठ तपन बुझाय हूं। जय मोक्षपुरकी बाठ बूझौ अब न देर लगाय हूं ॥६॥ यह नर भव पाय सुज्ञानी। कर २ निज कारज प्राणी। तिर्यंच योनि जब पावे। तब कौन तुझे समझावे। समझाय गुरु उपदेश दीनो जो न तेरे उर रहै। तो जान जीव अभाग्य अपना दोष काहूको न है। सूरज परकाशे तिमिर नाशै सकल जनका भ्रम हरे। गिरि गुफा गर्भ उद्योत होत न ताहि भानू कहा करे ॥ ७ ॥ जग माहि विषय वन फूलों। मत मधुकर तिस विच भूलो। रस लीन तहां लिपटानो। रस लेत न रंच अघानो ॥ न अघाय क्यों हो रमौ निशि दिन एक क्षण भी ना चुके। नहीं रहे वरजो वरज देखो वार वार तहां झुके॥ जिनमत सरोज सिद्धान्त सुन्दर मध्य याहि लगाय हूं। अब रामकृष्ण इलाज याको किये हो सुख पाय हूं ॥ ८ ॥ इति ॥

६६—परमार्थ जकड़ी

(दौलतराम कृत)

वृषभादि जिनेश्वर ध्याउं। शारद अम्बा चित लाऊ ॥ दो विधि परिग्रह परिहारी। गुरु नमो स्वपर हितकारी ॥ हितकारि तारकदेव श्रु त गुरु परखि निज उर लाइये। दुखदाय कुपथ विहाय शिव सुखदाय जिन वृष ध्याइये। चिरसे कुमग पगि मोह ठगकर ठगो भव कानन परो। चोरासि लख नित योनिमें जरा-मरण जन्मन दो जरो ॥ मोह रिपुने दई है घुमरिया। तिस वश निगोदमें परिया। तहां स्वाँस एकके माहीं। अष्टादश मरण लहाहीं।

छहि मरण एक मुहूरतमें छासठ सहस्र शत तीन हीं। अत तीन काल अनन्त यों दुख सहे उपमा ही नहीं ॥ कबहूं लही नर आयु स्थिति बढ़ पवन पावक तन लगी। मधु मेव किंचित कहूं सो मुनि कहो श्री गौतम गणी ॥ २ ॥ पृथिवी दो भेद बखान। मृदु माटी कठिन पाषाण। मृदु द्वादश सहस्र परसकी। पाहन बाईस सहस की। पुन सहस्र सात कही उदक भय सहस्र तहीं है समीरकी। दिन तीन पावक वृक्ष सहस्र दश प्रमिति ना लघु पीरकी। जिनवात सूक्ष्म देहधारी अनतयुत गुरुतम भणो। जहां जनम तास्रण उपजन विकल छेद भेद न दुख सहो ॥ ३ ॥ लटआदि दो इन्द्रि प्राणी। थिति द्वादश वर्ष बखानी। कृमादि ते इन्द्रिय है ते। बासर उनचास जियते। चौथे वर्ष षट् अलि प्रमुख ब्यालीस सहस उरपतनी। नागकी बहत्तर सहस नव पूर्वा ग सरीसृपकी भनी। नर मत्स्य पूर्व कोड़िकी थिति कर्म भूमि बखानिये। असंख्य मिश्र कि जिन भोग भू नर पशु त्रिपल्य प्रमाणिये ॥४॥ अघवश नर नरक बसेरा भुगता तहां कष्ट घनेरा। छेद तिल पिल तन सारा। भेंटें दृढ पूति मझारा। मध्यार वज्रानल पचावें शूल उपर परें। सींचें देह जल क्षारसों कर करें गलीनके करें। वैतरणी सरिता समल जल अति दुःखद तन सेमर तने। अति भीमवन असि कौश समदल लगत दुख देवें घने ॥५॥ तिस भूमिमें हिम गरमाई। मेरु सम लोह गलाई। तहांकी थिति सिन्धु तनी है। यों दुःख नरक भरनी है। भरनी तहांकीसे निकस कबहूं जन्म पायो नरो। सर्वांगसकुचित अति अपावन जठर जननीके परो। तहां अधोमुख जननी रसांश पकी लियो नव मास लों। तिस पीरमें कोई सीर नाहीं सहे आप

निकास लों ॥६॥ जन्मत जो संकट पायो रसनासे जात न गायो। लहे बालपने दुख भारी। तरुणायो लियो दुखकारी। दुखकार इष्ट वियोग अशुभ संयोग शोक सरोगता। पर सेव ग्रीषम शील पावस सहे दुख अति भोगता। काहूकी त्रिय काहूको बांधव काहू सुता दुराचारिणी। काहू व्यसन रत पुत्र दुष्ट कलत्रके ऊपर ऋणी ॥ ७ ॥ वृद्धापनके दुःख जेते। लखिये सब नैनों तेते। मुख लार बहे तन हाले। बिना शक्ति न वसन सम्हाले। न सम्हाल जाको देहकी तों कहों क्या नृपकी कथा। तब ही अचानक यम ग्रसे यों मनुज जन्म गयो वृथा काहू जन्म शुभ ठान किंचित लियो पद चउ देवको। अभियोग किल्विष नाम पायो सहो अति ही दु खको ॥ ८ ॥ तहां देख महतसुर ऋद्धी। झूरोकर विषयों गृद्धी कबहूं परिवार नशानो। शोकाकुल हो विलखानो। विलखाय अति जब मरण निकटो सहो संकट मानसी। सुर विभव दुःखद लगो तबे जब लखो माल मलीनसी। तब अमर बहु उपदेश दें समुझाइयो समझो न क्यों। मिथ्यात्व युत, डिग कुगति पाई लहैं फिर सो सुपद क्यों ॥ ६ ॥ यों चिरभव अटवी गाही। किंचित् साता न लहाई॥ जिन कथित धर्म नहि जानो। पर मैं आपापन मानो ॥ न सम्यक्रत्नत्रय आत्म अनात्ममें फंसो। मिथ्या चरण दृग ज्ञान रंजो जाय नव ग्रीवक बसो ॥ पर लहो ना जिन कथित शिव मग वृथा भ्रम भूलों जिया। चिद्भावके दर्शाव विन सब गये पहले तप किया ॥ १० ॥ अब अद्भुत पुण्य कमायो। कुल जाति विमल तूं पायो ॥ याते सुन सीख सयाने। विषयोंसे रति मति ठाने। ठाने कहा रति विषयसे ये विषय विषधरसे

सखो। ये देय मरण ममस्त इनको त्याग आतम रस चाखो ॥ या रस रसिक भ्रम पसे शिव मय बसत फिर बसि है सखो। दौलत स्वबसि पर विरचि सतुगुरु सीख नित उर धर पाहो ॥११॥ इति ॥

—:०:—

पाचवा अध्याय ।

६७—फूलमाल पच्चीसी।

दोहा—जैन धरम में पन किया बया धरम संयुक्त।
पावो यंश तिथे कहे तीन ज्ञान करि युक्त ॥

भयो महोत्सव नेमिको जूनागढ़ गिरनार। जाति कुलाधिप जैनमत जुरे सोहनी वार ॥ २ ॥

माल भई जिनराजकी, गू थी कुसुम बनाय ॥
देशदेशके भव्य जन, जुरे जैनकी वाय ॥ ३ ॥

छप्पय—देश गौड़ गुजरात चौड़ सोरठि बीजापुर। करनाटक कशमोर मालवो भव अमरैपुर ॥ पानीपत हीसार और बैराट महा जपु। काशी भव मरहट मगध तिरहुत पहुत सिंधु ॥ तहं अंग बंग बब्बर सहित, तदपि पारसो जुरिय सब । आये सु जैन मह जैन सब माल सई गिरनारि जब ॥ ४ ॥

नाराच छन्द।

सुगन्ध पुष्प वेलि कुंदि केतकी मंगायकें। चमेली चंप सेवती जुही गुही सु लायकें। गुलाब कंज लायची सबै सुगन्ध जातिके। सुमालती महा प्रमोद ले अनेक भांतिके ।५॥ सुवर्णतार पोई बीच

मोती लाल लाइया। सु हीर पन्न नील पीत पद्म जोति छाइया॥ शची रची विचित्र भांति चित्त देवनांइ है। सुइन्द्रने: उछाहसों जिनेन्द्रको चढ़ाई है॥ ६॥ शुमागहीं अमोल माल हाथ जोरि वानियें। ज़ुरी तहां चुरासि जानि रावराज जानिये॥ अनेक और भूपलोग सेठ साहुको गनें। कहालुं नाम वर्णियेः सु देखते सभा वनें॥७॥ खण्डेलवाल, जैसवाल अग्रवाल, आइया वघेरवाल, पोरवाल, देशवाल, छाइया। सहेलवाल, दिल्लिवाल सेतवाल जातिके। वढ़ेलवाल पुष्पमाल श्री श्रीमाल पातिके॥ ८॥ सु ओसवाल पल्लिवाल चूरूवाल चौसखा। पद्मावतीय पोरवाल प्रवार अठेसखा। गंगेरवाल वन्धुराल तोर्णवाल सोहिला। करिन्द्वाल पल्लिवाल मेडवाल खोंहिला॥ ९॥ लमेंचु और माहुरे महिसुरी उदार हैं। सुगोलवार गोलपूर्व गोलहूं सिंघार हैं॥ वंधनौर मागधी विहारवाल गूजरा। सुखण्ड राग होय और जानराज घसरा॥१०॥ भुराल और सोरठा मुराल और चितोरिया। कपोल सोमराठ वर्ग हूंमड़ा नागौरिया॥ सीरागछोड़ भंडिया कनौजिया अजोधिया। मिवाड़ मालवान और जोधड़ा समोधिया॥ ११॥ सुभट्टनेर रायवल्ल नागरा रुधाकरा। सुकन्थ रारु जालुरारु वाल मीक भाकरा॥ परवार लाड़ चोडकोड़ गोड़ मोड़ समारा। सु खण्डिभात श्री खण्ठा चतुर्थ पञ्च मंभरा॥ १२॥ सु रत्नाकार भोजकार नारसिंह हैं पुरी। सु जम्बूवाल और क्षेत्रब्रह्म वैश्य लौ ज़ुरी॥ सु आई हैं चुरासि जाति जैनधर्मकी घनी। सवै विराजि गोठियों ज़ु इन्द्रकी सभा वनी॥ १३॥ सुमाल लेनको अनेक भूप-लोग आवही सु एक एकतैं सुमाग मालको वढ़ावहीं॥ कहैं ज़ु

हाथ जोरि-जोरि नाय माल दीजिये। मनुष्य देउ हिमरत सो मणहार कीजिये ॥ १४ ॥ पचेलपास बोकड़ा हजार बीस देत हैं। हजार दे पचास परवार फेरि लेत हैं। सु गौलपाल लाख देत मास लेत जोंपसों। सु दिढिपाल दोय लाख देत हैं मगोपसों ॥ १५ ॥ सु ममवाल बोलिये सु माल मोल लीजिये। हिमार देहु एक मस सो गिनाय लीजिये। बाण्डेलवाल बोलिया सु दोय लाख देहगो। सुबोलिके समोल मैं जिनेन्द्र माल लेउ गो ॥ १६ ॥ सुसंमरी कहै सुमेरि बानि लेहु बायके। सुवर्ण बानि देन हैं चितौड़िया बुलायके॥ अनेक भूप गोव देउ रायसो पमेरिका। बाजार बोलो कोठरी सु देत हैं ममेरिका ॥१७॥ सुगौड़पाल यों कहै गय न्द पीस लीजिये। मंगाय देश हिमदन्त मा० मोहि दीजिये ॥ पर मारके तुरङ्ग सजि देत हैं पिमा गिने। समाम जीन पाउुदे बड़ाव हिमके बने ॥ १८ ॥ कनौजिया कपूर देत गाड़िया भरायके। सुदीप मोती माल देत ओसवाल मायके ॥ सु दूंमड़ा दंकारहीं हमें न माल देहगे। भराइये जिहाजमें कितेक दाम लेहगे ॥ १९ ॥ कितेक लोग मायके खड़े है हाथ जोरिके। कितेक भूप देखिके खड़े सु पाग मोरिके ॥ कितेक सूम यों कहैं सु देखे लखि देत हो। सुदाय माल आपनो सु कूरमास लेत हो ॥ २० ॥ कहीं भवीन भाविका जिनेन्द्रको वधावहीं। कहीं सुकण्ठ रागसों खड़ी सु माल गावहीं। कहींसु नृत्यको करें करें अनेक भावहीं। कहीं सुराग तालपे सु मङ्गको फिरावहीं ॥ २१ ॥ कहैं गुरु उदार धी सु यों न माल पाइये। कराइये जिनेन्द्र यज्ञ विम्ब सु भराइये। चलाइये सु संघ जात संघवी कहाइये। तबे मनीप पुण्यसों अमोल माल

पाइए ॥ २२ ॥ संबोधि सर्व गोष्ठिसो गुरु उतारके लई । बुलायके जिनेन्द्रमाल संघ रायको दई । अनेक हर्षसों करैं जिनेन्द्र तिलक पाइये । सुमाल श्रीजिनेन्द्रकी विनोदीलाल गाइए ॥ २३ ॥

दोहा—माल भई भगवन्तकी, पाई संग नरिन्द । लालविनोदी उच्चरैं सबको जयति जिनन्द ॥ २४ ॥ माला श्री जिनराजकी, पावै पुण्य संयोग। यश प्रगटे कीरति बढे, धन्य कहैं सब लोग ॥ २५ ॥

६८—पुकार पच्चीसी ।

दोहा—जो यह भव ससारमें, भुगते दुःख अपार ।
सो पुकार पच्चीसिका करैं कविन इक ढार ॥

श्रीजिनराज गरीबनिवाज सुधारन काज सबे सुखदाई । दीन दयाल बडे प्रतिपाल दया गुणमाल सदा शिव नाई ॥ दुर्गति घारन पापनिवारन हो भवतारनको भवताई । बार ही बार पुकारतु हौं जनकी बिनती सुनिए जिनराई ॥ १ ॥ जन्म जरा मरणो त्रय दोष लगे हमको प्रभु काल अनाई । तासु नशावनको तुम नाम सुनो हम वैद्य महा सुखदाई ॥ सो त्रय दोष निवारनको तुम्हरे पद सेवतु हौं चित ल्याई । बार ही० ॥२॥ जो इक द्वै भवको दुःख होय तो राख रहों मनको समझाई । यह चिरकाल कुहाल भयो अब लों कहुं अन्त परो न दिखाई ॥ मो पर या जग मांहि कलेप परे दुख घोर सहे नहिं जाई ॥ बार ही० ॥३॥ देख दुखी पर होत दयाल सुहै इक* ग्रामपती] शिरताई ॥ हो तुम नाथ त्रिलोकपती तुमसे हम अर्ज करों शिर नाई ॥ मो दुख दूर करो भवके बसु कर्मनते प्रभु लेउ छुडाई । बार ही० ॥ ४ ॥ कर्म बड़े रिपु हैं हमरे हमरी बहु हीन दशा कर पाई । दुःख अनन्त दिए

इमको हर भांतिन भांतिन काय लगाई ॥ मैं हम बैरिनके वश है फरिके भटको सु कहो नहिं जाई। धार ही० ॥ ५ ॥ मैं इस ही भव काननमें भटको चिरकाल सुहाल गमाई। किञ्चित् ही तिनसे सुखको बहु भांति उपाय करे छलबाई ॥ बार गर्ने फिर मैं भटको जहां मेरु समान महा दुखदाई। बार ही० ॥ ६ ॥ नित्य निगोद अनादि रह्यो वसके तमको जहां दुर्गमताई। ज्यों क्रम सो निकस्यो वहां ते इतरौं इतर निगोद रह्यो चिरकाई ॥ सूक्षम बादर नाम भयो जब हीं यह भांति धरो पर्यायी ॥ बार ही० ॥ ७ ॥ जबही पृथ्वी जल तेज भयो पुनि मारुत होय वनस्पति काई। देह अभाव धरी जब सूक्षम धावत बादर वीरयताई ॥ एक तवे प्रत्येक भयो सह धारण एक निगोद बसाई। बार ही० ॥ ८ ॥ इन्द्रिय एक रही चिरमें कब लब्धि बई तरर्य क्षपशमताई। ये त्रय बार धरी जब इन्द्रिय देह उदै विकलत्रय भाई ॥ पञ्चम भांति कियौं पर्यन्त धरे इम इन्द्रियके त्रस काई। बार ही० ॥९॥ काय धरी पशुकी बहु बार भई जब असुरनकी पर्याई। जो थल मांहि अकाश रह्यो चिर होय पखेरु पवन लगाई ॥ मैं जितनी पर्याय धरीं तिनके वरणे कछु पार न पाई। बार ही० ॥ १० ॥ नरक मझार लियो अवतार परौ दुख भार न कोई सहाई। जो तिनसे सुख काज किए अपने सब नरकनमें सुधि भाई ॥ ता तियके तनकी पुतली हमरै पियरा करि लाल भिराई। बार हीं० ॥ ११ ॥ लाल प्रभा सु मही जब हैं भव संकर रैन उन्हार धराई। पङ्क प्रभा धू धूमप्रभा हैं तमसी सु प्रभासु महातम ताई ॥ जो नव लाख जो चोड्स पिण्ड तहां हमको छिनमें गल जाई ॥ बार ही० ॥ १२ ॥ जो भव वात महादुखदायक

मैं विषया रसके फल पाई। काटन हैं जयहीं निरदयत वहीं सरिता महिं देत वहाई॥ देव अदेव कुमार जहां विच पूरव वैर वतावत जाई॥ वार ही० ॥ १३॥ ज्यों नर देह मिली क्रम सों करि गर्भ कुवास महा दुखदाई। जे नव मास कलेश सवै मलमूत्र अहार महाजय वाई॥ जो दुख देखि जलै निकसी पुनि रोवत वालपने दुखदाई॥ वार ही० ॥१४॥ योवनमें तन रोग भयो कवहू विरहानल व्याकुलताई। मान विषें रस भोग चहों उन्मत्त भयो सुख मानत ताही। आय गयो क्षणमें विरधापन यह नर भव यह भांति गमाई॥ वार ही० ॥ १५॥ देव भयो सुर लोक विषें तव मोहि रहो तिरिया उर लाई। पाय विभूति वढ़े सुरकी पर सम्पति देखते झूरत जाई॥ माल जवै मुरझाय रही थित पूरण जानि तवै विल- लाई ॥ वार हो० ॥१६॥ जे दुखमैं भुगते भवके तिनके वरणे कहुं पार न पाई। काल अनादिन आदि भयो तहं मैं दुख भाजन हो अव माहीं॥ सो दुख जानत हो तुमहीं जवहीं यह भाँति धरी पर्यायी॥ वार ही० ॥१७॥ कर्म अकाज करे हमरे हमको चिरकाल भये दुखदाई। मैं न विगाड करो इनको विन कारण पाय भये अरि आई॥ मात पिता तुम हो जगके तुम छाडि फिरादि करो कह जाई॥ वार ही० ॥ १८॥ सो तुम सों सव दु.ख कहीं प्रभु जानत हो तुम पीर पराई। मैं इनको सत्सग कियो दिनहूं दिन आवत मोहि वुराई॥ ज्ञान महानिधि लूट लियो इन रङ्क कियो यह भाति हराई॥ वार ही० ॥ १९॥ मैं प्रभु एक सरूप सही सव यह इन दुष्टनको कुटिलाई। पाप सु पुण्य दुहू निज मारगमें हमको यह फांसि लगाई॥ वार ही० ॥ २०॥ यह विनती सुन

सेवककी निज मारगमें प्रभु सेव लगाई ॥ मैं तुम दास रहो तुमरे संग लाज करो शरणागति आई ॥ मैं कर दास उदास भयो तुमरी गुणमाल सदा उर लाई ॥ बार हीं० ॥ २१ ॥ वेर करो मत श्री करुणा निधि जू पति राखनहार निकाई । मोग जुरे क्रमसो प्रभुजी यह न्याय हजूर भयो तुम आई ॥ मात यही शरणागति हों तुम्हरी सुनिके तिहु लोक बड़ाई ॥ बार हीं० ॥ २२ ॥ मैं प्रभुजी तुमरी समको इन अन्तर पाय करो ठुसराई । न्याय न अन्त करो हमरो न मिले हमको तुमसी ठकुराई ॥ सन्तन राख करो अपनी जिम दुष्ट देहु निकास बहाई ॥ बार हीं० ॥ २३ ॥ दुष्टनकी सत्संगतिमें हमको कछु आन परी न निकाई । सेवक साहबकी दुविधा न रहे प्रभुजी करिये सु भलाई ॥ फेर नमों सु करों अरजी अब आकर आन परी शरणाई ॥ बार हीं० ॥ २४ ॥ यह विनती प्रभुके शरणागति जे नर चित्त लगाय करेंगे । ते जगमें अपराधकरे भय ते छणमात्र भरेमें हरेंगे ॥ ते गति नीच निवास सदा अन्तर सुखी सुरलोक धरेंगे । दीपीदास कहें क्रम सों पुनि ते भवसागर पार तरेंगे ॥ २५ ॥ इति ॥

६६—अथ कृपण पच्चीसी

एक समय वैदूर्यमें एक सभ बैठे हुते संघमें पान खाय स्वामीकी बड़ाई है । भलो है जो बाबो गिरनार परसन जाई जन्म सुफल और) कीर्ति बढ़ाई ॥ वहां बैठो हुती एक कृपण पुरुष नारि तिय यह सुनी बात अपनी बड़ाई है । सुनोजी पियारे पीव आवे जो तुम्हारे जीव हम तुम दोनों चलें भली बन आई है ॥ १ ॥

पुरुष वाक्य—वावरी भई है नारि काहूको लगी बयार बुद्धि गई मारी तोहि कहादिक आई है। मोसों तू कहन अविचारी ओंधी सोधी वात मेरे कुल माहीं कौनने चलाई है॥ कहा तोहि भूत लगा ज्ञान सब दूर भगा समझ न परे तुझे कौन वहकाई है। मोसे तू कहन धन खरचन जात जानत है गोरी हम क्योंकर कमाई है॥२॥

स्त्री वाक्य—जानत हों नाथ माया तुम्हींसे ऊपजी है, फेरके कमाय लीजो कहा याकूं गही है। चले हैं भलो जु साथ नेमनाथ पूजवेको फेर ऐसो साथ कहीं पायवेको नहीं हैं॥ ताते पिया कीजे जगमें सुयश लीजै भगवत पूजा कीजे यही सार सही है। लक्ष्मी अनेक वार आयके विलाय गई मुझे तो वताओ वह काके थिर रही है॥ ३॥

पुरुष वाक्य—वावरी न जाने वात कौन काज इतरात जगमें सुयश कहा पोट वाध लीजिये। तोडिये वे हाथ जिन हाथन खर्चा डारी अपनी कमाई धन आये नहिं दीजिये॥ कहातू सयानी भई मोहि समझाइवेको गोदमेंसे पूत डार पेट आश कीजिये। जानत न तिया गौरी, अन्त तोहि मति थोरी कहत चलन जात यातैं धन छीजिये॥ ४॥

स्त्री वाक्य—धन तो वढ़ेगा दिन सुन मेरे पीय धर्मके किये ते धन अति अधिकायगा। धर्मके किएसे यश कीरति प्रकट होन धर्मके किएसे नर भली गति जायगा॥ लक्ष्मी है चञ्चल फिरन चक्रके समान थिरता नहीं है धन क्षणमें पलायगा। तातैं पिया धरम कीजै, जगमें सुयश लीजै, चार विधि दान दीजै महा-सुख पाएगा॥ ५॥

पुत्र वाक्य—कहत कहा है रावू, घरमें भई है खोड़, मुझे किया चाहे भाड़ धन खरचायके। मोहि ना खान देत दिन रात लिय लेत ठाठे हु खोंगो भय और ठौर जायके॥ घर मैं निकसि गयो आप कहीं बैठ गयो तहां एक मित्र मिलो पूछी बनायके। कहा मेरे मित्र मांझ देख्यो दलगीर तोहें कारण सो कौन मुझे कहो समुझायके॥६॥

मित्र वाक्य—क्या तो मेरे मित्र तेरे घर कुछ चोरी हुई क्या हमारे मित्र द्वार मांगत फकीर है। क्या हमारे मित्र कुछ राजदण्ड दीनो काहू किधौं मित्र प्यारे तेरे तन कुछ पीर है॥ क्या हमारे मित्र तेरे कोई मिहमान आयो या हमारे मित्र तेरो मेरा हित वीर है। सांची बात कहो मोंसे ताहीको इलाज करूं मेरे मन सोच भयो भारी दलगीर है॥७॥

कृपण वाक्य—नाहो मेरे मित्र कुछ चोरी भई मेरे घर नहीं मेरे मित्र कुछ राजा दण्ड दिया है। न तो कोई मरा न तो कोई मिहमान आया ना तो भीख नहीं खोटा काम किया है॥ रात दिन मेरे मित्र घरमें सतावे नारि वही बात कहे जासो फना आत किया है। हमने ये रुपयो कमाई बड़े कष्टोंसे उसने उपाय धन खोयवेको किया है॥८॥ कहा कहूं मेरे मित्र कही पड़ती न काहु सोई बात कहे जासों होत उत्पात है। गिरनार चलूं कहे मोसे कहे तू भी चाल पतो सुन मित्र मेरा हियो फाट्यो जात है॥ आपके चढ़ावे एक बार फल फूल पान देवता न खाय सब मालो ले जात है। बड़ो दुःख कहो कैसे सहूं मेरे मित्र गिरनार गये घरबार भी नशात है॥९॥ मेरो कहो मान मित्र मतो दलगीर

भयो पापिनी तियाको वेग पीहर पठाइये। जात्री चले जाय जावें पचास साठ कोस फेर आदमीके हाथ दे संदेश बुलवाइये ॥ और भांति जीवन न पावो सुनो प्यारे मित्र! तुझे मैं सिखाऊं वही घरपर सुनाइये। तेरे बाप भाईके वधाई बटी वेग दे बुलाई तिया देर न लगाइये ॥१०॥ तेरे बिना मित्र! कौन मुझको सिखावे ऐसो मेरे प्राण रखे भाई जीवन दान दियो है। पर उपकारी तैं विचारी भली बात यह गयो हुयो घर मेरो तैंने राख लियो है। ऐसो मंत्र कौनको फुरत ऐसो अवसरमें उत्तम उपाय तै बताया यश लियो है। तेरी मैं बडाई करूं कहां तांई मेरे मित्र! रामकी दुहाई डूबतेकुं थाम लियो हैं ॥ ११ ॥

झूठा एक कागज बनायके सुनाया जाय सुन त्रिया चिट्ठी तेरे पीहरसे आई है। क्षेम हैं कुशल तेरे भाईके पुत्र हुआ लिखी है जरूर तेरे भाईने बुलाई है ॥ वेग चली जायने विलम्ब नहीं ठीक त्रिया दिन चारहीमें वहा बजत बधाई हे ॥ घणें दिन बीते पीछे गई न गई समान औसरके बीते कहा आदर बडाई हे ॥ १२ ॥ आदर बडाई मैंने छोडी सब स्वामी नाथ रहूं घर बैठी कहीं जाऊंगी न आऊगी। मेरी देह नीकी नाहिं ज्वर सो भयो हैं मेरे तातैं कछु औषध महीना एक खाऊ गी ॥ अब तो पड़ी हे जीकीं देखें कब होऊ नीकी हुई तौभी मास दो एक नहीं आऊ गी। सुणत वचन ये कृपण मन राजी भयो सुन्दर सलोनी तैंने बात कही जाऊ गी ॥ १३ ॥

इतनेमें सघ गिरनार कोउ सङ्घ चलो भट्टारक बोले तब दुन्दभी बजाई है। जाति चौरासी सब श्रावकोंमें चिट्ठी गई चतुर्विधि

सङ्ग लिये गोट सब भाइ हैं ॥ बाजत नकारे अति भारी-भारी लोग आये साजत मंगाड़े इन्द्र कैसी छवि छाई है। मानो सेठ सङ्घई करत मनुहार किनो घन घन कहैं सब तेरी ये कमाई है ॥ १४ ॥ नाचत सुपक्ष चले शोभित सुपक्ष सबै भूलत गयन्द मानो घटा सुर आई है। रथनके नाना भांति ध्वजा फहरात जात पालकी अनेक भांति लोगोंमें बनाई है। पदम मद भाले छड़ी आयथ अनूप बने प्यादे सवार से निशान चमकाइ हैं। ऐसी भांति गावत बजावत सकल सब बोलत हैं जो जो शब्द बाजत बधाई है ॥ १५ ॥ जहाँ २ जाय करवत बात भली भांति ठौर ठौर होत जैनकार पदपासकी। पांदत तम्बोल गांव गांव प्रति भली भांति कहां लों बड़ाई कीजे संघईके दानकी ॥ ऐसी राजी खुशी सेती संघ गिरनार गयो देखत समाज सबसे सुधि भानकी। संघ ही साथी मन गमन आनन्दभरे बारबार करत बड़ाई सनमानकी ॥ १६ ॥

गढ़ गिरनारकी तलहटीमें डेरे किये चलते सुपक्ष चक मानो जमाये हैं। बाजत नगारनामा गरजत घन जैसी बिजली चमक से निशान चमकाये हैं। बरषत मेघसे सरस लोक दान देत सुष सुष कीरति अधिक लोक भाये हैं। मिसुक अनेक देश देशनके ऐसे सब सुण्यो गिरनारजीपे जैनो लोग आये हैं ॥ १७ ॥ चढ़े गिरनारजी दे तीन प्रदक्षिणा दे जय जयकार बोल २ मन हरषे हैं। अष्ट द्रव्य हाथ लिये पूजनेका ठाठ किये बाजनके थार बीच मोती भरवाये हैं। रतनोंके दीपक दशांग धूप जासी करी आरती उतारी तन फूले ना समाये हैं ॥१८॥ पूजे नेमिनाथ जिन-नाथ तीन लोकनाथ इन्द्र चन्द्रनाथ पूजा कीनी रागोपतिकी।

पृथिवीके नाथ सुरनाथ मृत्यु लोकनाथ विद्याधरनाथ चक्रवर्ती पतिरनिकी। व्यन्तरके नाथ हरिनाथ प्रति हरिनाथ नारद सहित मुनिगण सब जानिकी। इत्यादिक पूजन हरष युत किये पीछे सब ही ने फेर पूजा कीनो राजमनिकी ॥१६॥ करी है प्रतिष्ठा बिंब हेमके बनाय नये चतुर्विध संघ सम्मान अति कीनो है। यथायोग्य सब पहरायके तम्बोल दीने गुरुने तिलक संघ पद्वीको दीनो है। मास एक पूजन विधान कियो भली-भाँति उलटे पलट फेर निज घर चीन्हों है। सुनके नगर लोग आदरसूं लेने आये कृपण सुणत मन नवीनो है ॥ २० ॥ हाय हाय हम हूं न गये ऐसे संघ बीच देखो माली ल्याओ सब लक्ष्मी बटोरके। जो कि हम जानत खाते तो पराय सिर चढती सो मैं ही लेतो मांगके बटोरके ॥ फूल माल मैं ही देतो नेवज समेट लेतो पैसा टका लेतो सबहीके हाथ जोरके। मैं तो मन्द-भागो मुझे कुमतिने घेर लियो छाती सिर पीट पीट रोवै सिर फोरके ॥ २१ ॥

घर आय खाट परे लक्ष्मीका शोक करे कालज्वर चढो आन अग ताप तपो है। वायु पित्त कफ बढे कठ घरडान लगो हाथ पांव तोरि मोरे बावरो सो भयो है ॥ सन्निपात व्याधि भई सुधि बुद्धि भूल गई हाय हाय करे देखो माली धन लियो है। आरितरु रुद्र परिणामन शरीर तजो मरके कृपण नर्क तीसरेमें गयो है ॥ २२ ॥

कृपणकी नारी भली क्रिया करी बालमकी बारमें दिवस सर्व पञ्चनको जिमायो है। देख सब लक्ष्मी विचार कियो मनबीच यह तो चञ्चल अनित्य भाव भयो है ॥ लगी [illegible]

को मवम कीनो कर। है प्रनिष्ठा घन खूब ही लगायो है। आप आप दई दिक्षा न इच्छा थी भोगनकी मनको वैराग्य भाव प्रगट दिखायो है॥ २३॥ श्रावकनुमें साथ मनमें वैराग्य लाय केशका कराय लोंच मर्जिका सो भई है। तप करे द्वादश पचीपह सहै दोय बीस तीसे चौथे दिन बठ दण्ड ग्रत भई है॥ तिहूं काल सामायक दश विधि धर्म पाले तीनों रतन हिय धार सूधो परनई है। ऐसे काल पूरो कीनो भक्त संन्यास लीनो शुभ ध्यान देह त्याग तीजे स्वर्ग गई है॥ २४॥

छप्पै—द्रुपद गयो भर नरक स्वर्ग सुख वनिता पायो। धिक धिक पापी पुरुष, नार जग जगने पायो॥ द्रव्य यथा नहिं संग पुण्यकर्मको जानीके। पाप भयथा रह ज्ञान बुद्धि नहिं हो सब हीके॥ कहैं लाल विनोदी जन सुनो द्रव्य पाप पद्म कीजियो। कर जाति मतिष्ठा पात्र शुभ दान सघनको दीजियो॥ २५॥ इति॥

७०—उपदेश पच्चीसी प्रारम्भ।

दोहा—वीतरागके चरण युग बन्दों शीश नवाय।
कहुं उपदेश पचीसिका श्रीगुरुदेवके पसाय॥

चौपाई—बसत निगोद काल बहु गयो। चेतन सावधान ना भयो॥ दिन दश निकस बहुर फिर परना। यही पर पता क्या करना॥ २॥ अनन्त जीवकी एकहो काय। जन्म मरण एकहि कराय॥ स्वांसमैंबार अठारह मरना। यही पर पता क्या करना॥ ३॥ अक्षर भाग अनन्तम कह्यो। चैतन ज्ञान यहांतक रह्यो॥ कौन शक्तिसे तहांको करना। यही पर पता क्या करना॥ ४॥ पृथ्वी तेज और अरु वायु। वनस्पतीमें वसे सुभाय॥ यही थविमें

बहु दुख भरना। एतेपर एता क्या करना ॥५॥ केतिक काल यहां ही गयो। तहसे कड विकलत्रय भयो॥ ताको दुख कुछ जाय न वरना। एतेपर एता क्या करना ॥ ६ ॥ पशु पक्षीकी काया पाई। चेतन तहां रहो लपटाई॥ विना विवेक कहो क्यों तरना। एतेपर एता क्या करना ॥ ७ ॥ इम तिर्यंच महा दुख सहे। सो काहूंते जाय न कहे॥ पाप कर्मसे इस गति परना। एते पर एता क्या करना ॥८॥ बहुरो पड़ौ नर्कके माहीं। सो दुख कैसे वरणें जाहीं॥ भू दुर्गन्ध नाक जहा लरना। एतेपर एता क्या करना ॥ ६ ॥ अग्नि समान तप्त भू कहीं। कितहूं शीत महा वन रही॥ शूली सेज क्षणक ना डरना। एतेपर एता क्या करना ॥१०॥ परम अधर्मी असुर कुमार। छेदन भेदन करे अपार॥ तिनके वशसे नाहिं उवरना। एतेपर एता क्या करना ॥११॥ रञ्चक सुख जहं जियको नाहीं। बसते यहां नर्क गति मांहीं॥ देखत दुष्ट महा भय भरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १२ ॥ पुण्य योग भयो सुर अवतार। फिरत फिरत इस जगति मझांर॥ आवत काल देख थर हरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १३ ॥ सुर मन्दिर अरु सुख संयोग। निशिदिन मन वांछित वर भोग॥ क्षण इक माहि तहासे टरना एतेपर एता क्या करना ॥ १४ ॥ बहुत जन्मतक पुण्य कमाय। तब कहु लहो मनुज पर्याय॥ तामें लयो जरादिक मरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १५ ॥ धन यौवन सबही ठकुराई। कर्म योगसे नव निधि पाई॥ सो स्वप्नान्तर कैसा झरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १६ ॥ इन विषयनके तो दुख दीनों। तबहू तु तिनहीं रस भीनो॥ तनक विवेक हृदय ना

नारी मात्र संयोग। यह संसार स्वप्नको भोग ॥ १५ ॥ यह सब थित धर शुद्ध स्वभाव। कीजे श्रीजिन धर्म उपाय। जया भाव तैसो गति गहे। जैसो मति तैसी सुख लहै ॥१६॥ जो मूर्ख ई धर्म कर होन। विषय मग्न इन्द्रियन नहि कीन। श्रीजिन भाषित धर्म न गहै। सो निगोदको मारग लहै ॥१७॥ मायस मन्द बुद्धि ई जास। कपटी विषय मग्न उर तास॥ कायरता मद परगुण ढकै। सो तिर्यञ्च योनि सब लखै॥१८॥मायत रुद्र ध्यान नितकरे। क्रोध मादि मनसरता धरे। हि सक कर भाव मनुसरे। सो पापिष्ठ नरक गति परै ॥ १९ ॥ कपटहीन करुणा चित माहि। ई उपाधि पै मूर्छे नाहि। भक्तिवन्त गुणवन्त जो कोय। सरल स्वभाव जो मानुष होय ॥२०॥ श्रीजिन वचन मग्न तप दान। जिन पूजे दे पात्रहि दान ॥ रहै निरन्तर विषय उदास। सोई लहै स्वर्ग आवास ॥२१॥ मानुष योनि मस्तके पाय। सुन जिन वचन विषय बिसराय। गहे महाव्रत दुद्धर धीर। शुक्लध्यान धर लहै शिव तीर ॥ २२ ॥ धर्म करत सुख होत अपार। पाप करत दुख विविध प्रकार। बाल गुपाल कहै सब नार। इह होय सोई व्यवहार ॥ २३ ॥ श्रीजिनधर्म मुक्ति दातार। हिंसा धर्म परत संसार। यह उपदेश जान मन माय। एक धर्म सो कर अनुराग ॥ २४ ॥ व्रत संयम जिन पद श्रुति सार। निर्मल सम्यक भाव विचार ॥ अन्त कषाय विषय छय करे। तो सुम भक्ति कामिनी वरे ॥ २५ ॥

दोहा—सुध दुखमयि याहि सुख करन सो दुख नाशन जान। कह्यों प्रभ जिन दास यह, मन्य धर्मकी खान ॥२६॥ यामत जे बांचें सुनै,मनमें करै उछाय। ते पावे सुख शान्ति भी, मन वाँछित फलदाय

अष्टकर्म चित्रावली

धरना। घटेपर ऐसा क्या करना ॥ १७ ॥ पर संगति किरिया दुख पावै। तब भी तोकों लाज न आवै ॥ पावन संघ नीर ज्यों भरना। घटेपर ऐसा क्या करना ॥ १८ ॥ देव धर्म गुरु शास्त्र न जाने। स्वपर विवेक न उरमें आने ॥ क्यों होसो भवसागर तरना। घटेपर ऐसा क्या करना ॥ १९ ॥ पांचों इन्द्रिय मति वशमारे। परम धर्म धन मूसन हारे। आय पियावहिं ऐसा दुख भरना। घटेपर ऐसा क्या करना ॥ २० ॥ सिद्ध समान न जाने आप। यासे तोहि लगत है पाप ॥ कोल देव भव पदहि धरना। घटेपर ऐसा क्या करना ॥ २१ ॥ श्रीजिन वचन अमित रसखानी। पीवै नाहिं मूढ़ अज्ञानी ॥ जासे होय जन्म मृत्यु हरना। घटेपर ऐसा क्या करना ॥ २२ ॥ जो चेते तो है यह दाव। नातर बैठा मधुस धाव। फिर यह भव मन वृक्ष न फरना। घटेपर ऐसा क्या करना ॥ २३ ॥ भैया विनवे बारम्बार। चेतन चेत भलो अवतार। हो दुल्लभ जिनवाणी धरना। घटेपर ऐसा क्या करना ॥ २४ ॥

दोहा—ज्ञान मई दर्शन मई चारित्र मई सुभाय। सो परमातम ध्याइये यही मोक्ष सुखदाय ॥ २५ ॥ सप्तदशो इकताळीसके मार्ग शीर्ष निरपक्ष। तिथि शंकर गण लीजिये भीरस्विवार प्रत्यक्ष ॥२६॥

७१—धर्म पच्चीसी।

दोहा—भव्य कमल रवि सिद्ध जिन, धर्मधुरन्धर धीर।
नमत सुरेन्द्र जग तम हरण नमो त्रिविध गुणधीर।

चौपाई—मिथ्या विषयनमें रति जीव। ताते जगमें भ्रमें सदीव ॥ विविध प्रकार गहे परयाय। श्रीजिनधर्म न नेक सुहाय ॥ २६ ॥ धर्म बिना चहुंगतिमें परे। चौरासीलख फिर फिर धरे ॥

दुख दावानल माहिं तपन्त । कर्म करे फल भोग लहन्त ॥ ३ ॥ अति दुर्लभ मानुष पर्य्याय । उत्तम कुल धन रोग न काय ॥ इस अवसरमें धर्म न करे । फिर यह अवसर कवहुं न सरे ॥ ४ ॥ नर की देह पाय रे जीव । धर्म विना पशु जान सदीव ॥ अर्थ काममें धर्म प्रधान । ता विन अर्थ न ,काम न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करै पुनीत । शुभसङ्गत आवे कर प्रीति ॥ विघ्न हरे सब कारज करे । धनसों चारों कोने भरे ॥ ६ ॥ जन्म जरा मृत्यु वश होय । तिहूं काल डोले जग सोय ॥ श्री जिन धर्म रसायन पान । कवहुं न रुचे उपजे अज्ञान ॥ ७ ॥ ज्यों कोई मूरख नर होय । हलाहल गहे अमृत खोय ॥ त्यों शठ धर्म पदारथ त्याग । विष-यन सों ठाने अनुराग ॥ ८ ॥ मिथ्यागृह गहिया जो जीव । छांड धर्म विपयन चितदीव ॥ ज्यों पशु कल्पवृक्षको तोड़ । वृक्ष धतू-रेकी भू जोड़ ॥ ९ ॥ नर देही जानों परधान । विसर विपय कर धर्म सुजान । त्रिभुवन इन्द्र तने सुख भोग । पूजनीक हो इन्द्रन जोग ॥ १० ॥ चन्द्र विना निश गज विन दन्त । जैसे तरुण नारि विन कन्त ॥ धर्म विना त्यों मानुष देह । तातें करिये धर्म सुनेह ॥ ११ ॥ हय गय रथ पावक वहु लोग । सुभट वहुत दल चार मनोग ॥ ध्वजा आदि राजा विन जान । धर्म विना त्यों नरभव मान ॥ १२ ॥ जैसे गन्ध विना हैं फूल । नीर विहीन सरोवर धूल । ज्यों विन धन शोभित नहीं भोन । धर्म विना त्यों नर चिन्तोन ॥१३॥ अरचे सदा देव अरहन्त । चर्चे गुरुपद करुणावन्त । खरचो दाम धरमसों प्रेम । रुचे विषय सुफल नर एम ॥ १४ ॥ कमला चपल रहै थिर नाहिं । योवन रूप जरा लिपटाहिं ॥ सुत मित

धरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १७ ॥ पर सङ्गति किनना दुख पाये। तब सो तोकों लाज न आये॥ बासन संग नीर ज्यों जरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १८ ॥ देव धर्म गुरु शास्त्र न जाने। स्वपर विवेक न उरमें आने ॥ क्यों होसी भवसागर तरना। एतेपर एता क्या करना ॥ १९ ॥ पांचों इन्द्रिय अति बरमारे। परम धर्म धन मूसन हारे। आप विचारि एता दुख भरना। एतेपर एता क्या करना ॥ २० ॥ सिद्ध समान न जाने आप। यासे तोहि लगत है पाप ॥ लोक देख मद परहि धमरना। एतेपर एता क्या करना ॥ २१ ॥ श्रीजिन वचन अमित रसवानी। पीवे नाहिं मूढ़ अज्ञानी ॥ जासे होय जनम मृत्यु हरना। एतेपर एता क्या करना ॥ २२ ॥ जो वेरी तो है यह दाव। नातर बेठा मजूष गाव। फिर यह नर भव मुश्किल न फरना। एतेपर एता क्या करना ॥ २३ ॥ भैया विनवे बारम्बार। चेतन चेत भलो अवतार। ह्वे दुल्लह शिवरानी वरना। एतेपर एता क्या करना ॥ २४ ॥

दोहा—ज्ञान मई दर्शन मई चारित्र मई सुभाय। सो परमातम ध्याइये यही मोक्ष सुखदाय ॥ २५ ॥ सत्रहसौ इकताळीसके मार्ग शीर्ष सितपक्ष। तिथि शंकर गण छोड़िये ग्रीरविवार प्रत्यक्ष ॥२६॥

७१—धर्म पचीसी।

दोहा—भव्य कमल रवि सिद्ध जिन, धर्मधुरन्धर धीर।
नमत सुरेन्द्र जग तम हरण, नमो त्रिविध गुणधीर।

चौपाई—मिथ्या विषयनमें रति जीव। ताते जगमें भ्रमै सदीव ॥ विविध प्रकार गहे परयाय। श्रीजिनधर्म न नेक सुहाय ॥ २६ ॥ धर्म विना बहुंगतिमें परै। चोरासीमध फिर फिर परै ॥

दुख दावानल माहिं तपन्त। कर्म करे फल भोग लहन्त ॥ ३ ॥ अति दुर्लभ मानुष पर्य्याय। उत्तम कुल धन रोग न काय ॥ इस अवसरमें धर्म न करे। फिर यह अवसर कबहु न सरे ॥ ४ ॥ नर की देह पाय रे जीव। धर्म विना पशु जान सदीव ॥ अर्थ काममें धर्म प्रधान। ता विन अर्थ न काम न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करै पुनीत। शुभसङ्गत आवै कर प्रीति ॥ विघ्न हरे सब कारज करे। धनसों चारों कोने भरे ॥ ६ ॥ जन्म जरा मृत्यु वश होय। तिहुं काल डोले जग सोय ॥ श्री जिन धर्म रसायन पान। कबहुं न रुचे उपजे अज्ञान ॥ ७ ॥ ज्यों कोई मूरख नर होय। हलाहल गहे अमृत खोय ॥ त्यों शठ धर्म पदारथ त्याग। विषयन सों ठाने अनुराग ॥ ८ ॥ मिथ्यागृह गहिया जो जीव। छांड धर्म विषयन चितदीव ॥ ज्यों पशु कलपवृक्षको तोड़। वृक्ष धतूरेकी भू जोड़ ॥ ९ ॥ नर देही जानों परधान। विसर विषय कर धर्म सुजान। त्रिभुवन इन्द्र तने सुख भोग। पूजनीक हो इन्द्रन जोग ॥ १० ॥ चन्द्र विना निश गज विन दन्त। जैसे तरुण नारि विन कन्त ॥ धर्म विना त्यों मानुष देह। तातें करिये धर्म सुनेह ॥ ११ ॥ हय गय रथ पावक बहु लोग। सुभट बहुत दल चार मनोग ॥ ध्वजा आदि राजा विन जान। धर्म विना त्यों नरभव मान ॥ १२ ॥ जैसे गन्ध विना हैं फूल। नीर विहीन सरोवर धूल। ज्यों विन धन शोभित नहीं भोन। धर्म विना त्यों नर चिन्तोन ॥१३॥ अरचे सदा देव अरहन्त। चर्चे गुरुपद करुणावन्त। खरचो दाम धरमसों प्रेम। रुचे विषय सुफल नर एम ॥ १४ ॥ कमला चपल रहें थिर नाहिं। योवन रूप जरा [illegible]

गोत्र कर्म ७

वेदनीय
कर्म ८

नारकीय दुःख

DKVarma

७२—अध्यात्म पञ्चासिका।

दोहा—आठ कर्मके वन्धमें, वन्धेजीव भव वास। कर्म हरै सब गुण भरै, नमों सिद्धि सुखरास ॥ १ ॥ जगत माहिं बहु गति विषैं, जन्म मरण वश जीव। मुक्ति माहिं तिहु कालमें, चेतनअमर सदीव ॥ २ ॥ मोक्ष माहि सेती कभी, जगमें आवे नाहिं। जगके जीव सदीव ही कर्म काट शिव जाहि ॥ ३ ॥ पूर्व कर्म उद्योगतें जीव करे परिणाम। जैसे मदिरा पानते, करै गहल नर काम ॥४॥ तातैं बाधैं कर्मको, आठ भेद दुखदाय। जैसे चिकने गातमे, धूलि पुञ्ज जम जाय ॥५॥ फिर तिन कर्मनके उदय, करे जीव बहु भाय। फिरके बाधे कर्मको ये ससार सुभाय ॥६॥ शुभ भावन ते पुण्य है, अशुभ भावतें पाप। दुहूं आच्छादित जीवसो, जान सके नहिं आप ॥ ७ ॥ चेतन कर्म अनादिके, पावक काठ वखान। क्षीर नीर तिल तेल ज्यों खान कनक पाखान ॥ ८ ॥ लाल वन्ध्यों गठडी विषै, भानु छिपो घन माहि। सिंह पिञ्जरे मैं दियो, जोर चले कछु नाहि ॥ ६ ॥ नीर बुझावै आगको, जले टोकनी माहिं। देह माहि चेतन दुखी, निज सुख पावत नाहिं ॥१०॥ तदपि देहसों छुटत हैं, अन्तर तन हैं सङ्ग। सो न ध्यान अग्नी दहै, तब शिव होय अभग ॥ ११ ॥ राग दोष तैं आप ही, पड़े जगतके माहिं। ज्ञान भावते शिव लहैं, दूजा संगी नाहि ॥ १२ ॥ जैसे काहू पुरुषके द्रव्य गड़ो घर माहिं। उदर भरे कर भीखसे, व्योरा जाने नाहिं ॥ १३ ॥ ता नरसे कीन्हीं कहा, तू क्यों मागे भीख। तेरे घरमें निधि गड़ी, दीनी उत्तम सीख ॥ १४ ॥ ताके वचन प्रतीत सो, वह कीयो मन माहि। खोद निकाले धन विना, हाथ परे कुछ नाहिं ॥ १५ ॥ त्यों

अनादिकी भीचके, परके बुधि बखान । मैं सुर नर पशु नारकी, मैं मूरख मतिमान ॥१६॥ तासों सतगुरु कहत हैं तुम चेतन अभिराम । निश्चय मुक्ति स्वरूप हो, ये तेरे नहिं काम ॥ १७ ॥ काच कलश पतीत सों कहत आपमें आप पूरण ज्ञान भये बिना मिटै न पुण्य अरु पाप ॥ १८ ॥ पाप कहत हैं पुण्यको जीव सकल संसार । पाप कहत हैं पुण्यको ते विरले मति धार ॥१९॥ बन्दी खानेमें परे, यातें छूटे नाहिं । बिन उपाय उद्यम किये त्यों ज्ञानी जग माहिं ॥२०॥ साबुन ज्ञान विराग जल, कोरा कपड़ा जीव । रजक दक्ष धोवै नहीं मिलन न जावै सदीव ॥ २१ ॥ ज्ञान पवन तप अगन बिन बहै मूस जिय हेम । कोड़ यत्न सों राखिये शुद्ध होय मन केम ॥२२॥ दरब कर्म नो कर्मते, भाव कर्मतें भिन्न । विकलप नहीं सुबुद्धिके, शुद्ध चेतना चिन्ह ॥ २३ ॥ वाटें माहीं सिवके दुवारेकि माहिं । वार मिलासे मोक्ष है, और वास कछु नाहिं ॥२४॥ ज्ञाता जीवन मुक्ति है एक देश यह बात । ध्यान अग्नि बिन कर्म बन जलै न भिन्न भिन्न जात ॥ २५ ॥ दर्पण काई अथिर जल, मुख दीखै नहिं कोय । मन निर्मल थिर बिन भये आप दरश क्यों होय ॥ २६ ॥ बाहिभाव चिन्तन कहो सहस वर्ष तप ठान । सोई पावो अन्तरसी एक महूरत ज्ञान ॥२७॥ राग दोष संकल्प हैं नयके भेद विकल्प । दोष भाव मिट जाय जब, तब सुख होय अनल्प ॥ २८ ॥ राग विराग दुभेद सो दोय रूप परणाम । रागी भूमि या अघतके वैरागी शिव धाम ॥२९॥ एक भाव है हिरणके, भूख लगै तृण खाय । एक भाव मंजारके, जीव खाय न अघाय ॥ ३० ॥ विविध भावके जीव बहु, दीसत हैं जग माहिं । एक कछू चाहै नहीं एक गजे

कछु नाहिं ॥ ३१ ॥ जगत अनादि अनन्त है, मुक्ति अनादि अनन्त । जीव अनादि अनन्त है कर्म दुविधि सुन सन्त ॥ ३२ ॥ सबके कर्म अनादिके कमे भव्यको अन्त । कर्म अनन्त अभव्यके तीन काल भटकन्त ॥ ३३ ॥ फरस वरन रस गन्ध सुर, पाचों जाने कोय । बोले डोले कौन है, जो पूछे है सोय ॥३४॥ जो जाने सो जीव है, जो माने सो जीव । जो देखे सो जीव है, जीवे जीव सदीव ॥३५॥ जात पना दो विधि लसे, विषै निर विषय भेद । निर विषयी संवर लसे विषयी आश्रव वेद ॥३६॥ प्रथम जीव श्रद्धान सो, कर वैराग्य उपाय । ज्ञान किया सो मोक्ष है, यही बात सुखदाय ॥ पुद्गलसे चेतन वन्ध्यो, यही कथन है वेय । जीव बध्यो निज भाव सों यही कथन आदेय ॥ ३८ ॥ वन्ध लखे निज ओरसे उद्यम करै न कोय । आप वन्ध्यों निज सों समझ, त्याग करै शिव होय ॥ ३९ ॥ यथा भूपको देखके, ठौर रीतिको जान । तन धन अभिलाषी पुरुष, सेवा करे प्रधान ॥ ४० ॥ तथा जीव सरधान कर, जाने गुण परयाय । सेवे शिव धन आश धर, समता सो मिल जाय ॥ ४१ ॥ तीन भेद व्यवहारसों, सर्व जीव सब ठाम । श्रीअरहन्त परमात्मा, निश्चय चेतनराम ॥ ४२ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म रति, अह बुद्धि सब ठोर । हित अनहित सरधे नहीं, मूढ़नमें शिरमौर ॥ ४३ ॥ ताप आप पर पर लखे हेय उपादे ज्ञान । अव्रती देश व्रती महा, व्रती सबे मतिमान ॥ ४४ ॥ जा पदमें सब पद लसे, दर्पन ज्यों अविकार । सकल निकल परमात्मा, नित्य निरंजन सार ॥४५॥ वहिरात्मके भाव तज, अन्तर आतम होय । परमातम ध्यावे सदा, परमातम सो होय ॥४६॥ वून्द उदधि मिल होत दधि, वीती

कमल प्रकाश। त्यों परमातम होत है, अध्यातम अभ्यास ॥ ४७ ॥ सब आगमको सार ज्यों सब साधनको धेय। जाको पूजें इन्द्र सो सब हम पायो देव ॥ ४८ ॥ सोहं सोहं नित जपे, पूजा आगम सार। सत सङ्गतिमें बैठना, यहै करै व्यवहार ॥ ४९ ॥ अध्यातम पञ्चासिका माहि कह्यो जो सार। द्यानत ताहि लगी रहो सब संसार असार ॥ ५० ॥ इति ॥

७३—श्रीजिनगिरा स्तवन।

शरण आया माता जिनेश्वर वाणी सुख करो। विरद अनुपम तेरा प्रगट जगमाता सुख करो। भ्रमो जग चहुंघेरा सहा दुख जन्मन मरणका। टरै नाहीं टारा, पड़ा चहु कोना हरणका ॥ १ ॥ सबे चहुते देवा करी बहु सेवा शरणकी। कैसे भय दुख खोदी न पाई आशा शरणकी। अब विधि बल भारी हमारी कीनी दुर्दशा। इन्होंने घेरा माता भवोदधि दुखमें मैं फंसा ॥ २ ॥ सकल चारों गतिमें भ्रमाय मोको पै पकी। ज्ञान धनको हरिके भुलाई मोको शिवगली। नरक पशु नर देवा चतुर्गतिमें जो दुख सहो। कहा जाता माहीं तुम्हीं सब जानों जो सहो ॥ ३ ॥ निपट मोको पाके, सतावें पै बाल मति घने। शरण राखो माता बचावो इनसे निरा अभी। सुमति अब दे माता। चिनमयों माठो पलकमें। पहुंचौं शिवपुर पंथा बहुरों ना फिर भय जन्मनमें ॥ ४ ॥ अरज मति दें माता सुमति निज दीजे दासकों। यही विनती मेरी, पुरावो मनके आशाको। तुमस पदको सेवा करत नर देवा व्यापके। लहत शिव सुख मेवा शरण मां तेरो पायके ॥ ५ ॥

दोहा—तुम पदाम्बुजमो उर बसो नशो तिमिर अज्ञान।
सेवक आपपनको. दीजे मोक्ष स्थान ॥ ६ ॥ इति ॥

७४—श्रीजिनवर पच्चीसो।

छप्पै छन्द—ऋषभ आदि चौबीस तीर्थपति तिन गुनगाऊं। दिवपुर कुल पितु मातु वर्ण लक्षण वतलाउं। कार्य आयु शिव आसन अरु शिव थान मनोहर। कहू सर्व दरशाय जाय पातक भव भय हर। प्रात काल प्रतिदिन पढे स्वर्ग मुक्ति सुख सों लहै। क्रमश. ऊंचे पाय पद नाथूराम सेवक कहै॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धिसे ऋषभ आयकर वसे अयोध्या। वंशइक्ष्वाकु प्रधान नाभि पितु अनुपम योद्धा। मरुदेवी जिनमात वर्ण कञ्चन तनु सोहैं। वृष लक्षण शत पाच चाप तनु लख जग मोहे। तिथि चौरासी पूर्व लख पद्मासन कैलास गिरि। मुक्ति थान जिनराज नवो जन्म ना होय फिर ॥२॥ तज सर्वार्थसिद्धि अयोध्या वसे अजित जिन। श्रेष्ठ वश इक्ष्वाकु पिता जित शत्रु कहे तिन। विजयासेना मात तनु गज लक्षणवर। ढोंच शतेक धनु तनु तिथि पूर्व लाख वहत्तर कायोत्सर्ग आसन विमल मुक्ति थान सम्मेदचल। नमो त्रियोग सम्हालके त्रिजग नाथ तुमको स्वथल ॥ ३ ॥ सम्भव ग्रीवक त्याग जन्म श्रीवसती लीना। वंश कहो इक्ष्वाकु जितारि पितुहि सुख दीना। मात सुसेना हेमर्ण घोटक शुभ लक्षण। शतक चार धनु देह साथ लख पूर्ण आयु गण। खडगासनसे शिव गये मुक्ति थान सम्मेद गिरि। नमो त्रिलोकीनाथको जन्म मरन ना होय फिर ॥ ४ ॥ अभिनन्दन तज विजय अयोध्या पितु सवर घर। सिद्धार्था जिन मात वश इक्ष्वाकु जन्म वर। कनक वर्ण कपि चिन्ह ढूंठ शत चाँप कायु जिन। पूर्व लाख पच्चास आयु षड्गासन है तिन श्रीसम्मेदाचल विमल मुक्तिनाथ जिनराजका। त्रिकाल वदों

मायसे धन्य जगम हैं मातका ॥ ५ ॥ वजयन्त तज सुमति भयो
ललनगरी आये । पिता मेघ प्रभु मात मङ्गला मति मन भाये ।
विमल वंश इक्ष्वाकु हेम तनु चकवा लक्षण । धनुष तीन सौ
देह तुङ्ग त्रिभुवनके रक्षण । आयु पूर्व चालीस लक्ष षड्गासन
राखे मदम। सम्मेद शिखरसे शिव गये नमों नमों तुमको स्वयम
॥ ६ ॥ पद्म प्रभु ग्रीवक सु त्याग कौशाम्बी आये । धारण नृप
पितुमात सुसीमा आनन्द पाये । वंश कहो इक्ष्वाकु कमल सम
लाल वर्ण तन । कमल चिन्ह तन तुङ्ग चाप दुई सौ भगवन ।
आयु तीस लक्ष पूर्वका षड्गासनसे शिव गये । सम्मेद शिखर
शिव होय जिन नमो भाव आनन्द भये ॥ ७ ॥ नाथ सुपार्श्व ,ग्रीव
कसे काशी उपजाये । सुप्रतिष्ठित पितु माता पृथिवीके मन भाये ।
विमल वंश इक्ष्वाकु हरित तन स्वस्तिक लक्षण । धनुष दोयसौ
काय बीस लक्ष पूर्व आयु मण । षड्गासन सम्मेदगिरि सिद्धि-
क्षेत्रसे शिव गये । त्रिजग ताप हर्तारिको ताप क्षेम हम हर गये
॥ ८ ॥ वेजयंत तज चन्द्रपुरे चन्द्रप्रभु स्वामी । महासेन पितु
मात लक्ष्मणाके भये नामी ॥ श्वेत वंश इक्ष्वाकु शुक्ल तनु शशि
लक्षण वर । धनुष डेढ़ सौ देह लाख दश पूर्व आयु धर । षड्
गासनसे मुक्त हो अजर अमर अव्यय भये । शिव धाम शिखर
सम्मेद तिन तिन पदको हम मिल गये ॥ ९ ॥ पुष्पदन्त आरण्य
दिव तज काकन्दी राजे । पिता नृपति सुग्रीव मात रामा सुख
साजे ॥ वंश कहो इक्ष्वाकु शुक्ल तनु मगर लक्षण । सौधनु शुभ
शरीर आयु दो लाख पूर्व मण ॥ षड्गासनसे शिवगये सम्मेदाचल
मुक्ति थल । नमों त्रिलोकीनाथ मैं तुम पद पंकज युग विमल ॥१॥

शीतल अच्युत त्याग वास मङ्गल पुर लीना। दृढ़ रथ तात सुमात सुनन्दाको सुख दीना॥ निर्मल कुल इक्ष्वाकु हेम तन श्रीतरु लक्षण। नव्वे धनुश शरीर आयु लख पूर्व विचक्षण॥ खड्गासन दृढ धारके सम्मेदाचल ध्यान धर। मुक्ति भये तिनको नवें शीश नाय हम जोड़कर॥ ११॥ श्रेयान्स पुष्पोत्तरसे चय वसे सिंहपुर। विष्णु पिया विष्णू श्रीमाता उभय धर्मधुर॥ वशे-क्ष्वाकु पुनीत हेम तन गेंडा लक्षण। असीचाप तनु लाख असी चउ वर्ष आयु भण। खड्गासन दृढ़ शिव समय मुक्ति थान सम्मेदगिर। नमों त्रियोग लगायके अशुभ कर्म खलु जाय खिर॥ १२॥ वासपूज्य कापिष्ट स्वर्गसे चय चम्पापुर। लिया जन्म वसुपूज्य पिता माता विजया उर॥ ख्यात वश इक्ष्वाकु अरुण तनु महिषा लक्षण॥ सत्तर धनुष शरीर उच्च जग जनके रक्षण॥ लाख वहत्तर वर्षकी आयु पद्म आसन अटल। सिद्ध क्षेत्र चंपापुरी वन्दों सुखदाता अचल॥ १३॥ विमल शुक्र दिव त्याग कम्पिला जन्म लिया वर। कृत वर्म्मा जिन तात सुरम्या मात गुणाकार॥ विमल वश इक्ष्वाकु कनक तन वराह लक्षण। साठ चाप तन तुङ्ग साठ लख वर्ष आयुगण॥ खड्गासन सम्मेदगिर मुक्ति थान वन्दन करों त्रिभुवननाथ प्रमादसे अब न भवोदधिमें परों॥ १४॥ सहस्रार दिवसे अनन्त जिन जन्म अयोध्या। सिंहसेन पितुग्रेह लिया भविजन प्रति बोधा॥ सर्व यशा जित मात वश इक्ष्वाकु बखानो। हेमवर्ण सेई लक्षण जिनवरके जानो॥ काय धनुष पचासका आयु तीसलख पूर्व जिन। खड्गासन सम्मेदशिव नवों चरण कर जोड़ तिन॥ १५॥ पुष्पोत्तरसे धर्मनाथ

चय बसे रत्नपुर। भानु पिता सुव्रता मात इक्ष्वाकु वंश पुर॥ हैमवर्ण लक्षण सुवज्र तनु धनु पैंतालिस। आयु काल दश वर्ष लंग मासन विधि नासिस॥ सम्मेदाचल मुक्ति थल धर्मपोत धर भव्य जन। पार किये भव उदधिसे करुणाकर करुणायतन॥ १६॥ शांतिनाथ पुष्पोत्तरसे चय गजपुर मापे। विश्वसेन पर माता गृह वसि बधाये॥ कुरुवंशी तनु हैमवर्ण लक्षण मृग सोहैं। काय धनुष चालीस आयु लख वर्ष लखो हैं। पद्मासनते शिव गये मुक्तिधाम सम्मेदगिरि। युग चरण कमल मस्तक धरौं वंधे कर्म अलु आंय फिरि॥ १७॥ कुंथुनाथ पुष्पोत्तरसे चय जन्मे गजपुर। सूर्य पिता श्री देवी माता उसय धर्मधुर॥ कुरुवंशी तनु हैमवर्ण लक्षण अज जानो। काय धनुष तैतीस काम सुरकी पहिचानो। आयु सहस पंचानवे वर्ष खंड मासन कहो। सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र शुभ जिन वन्दत हम सुख लहो॥ १८॥ अरहनाथ सर्वार्थसिद्धसे गजपुर भाये॥ पिता सुदर्शन माता मित्रा अरु सुख पाये॥ शुभ कुरुवंश महान हैम तनु मच्छ चिन्हवर। तीस चाप तनु तुङ्ग विशाल मनमोहन सुन्दर॥ सहस चवरासी वर्षका आयु खण्ड मासन मदल। शिवधाम शिखर सम्मेद जिन चरणों निरखे पद कमल॥ १९॥ मल्लिनाथ तज विजय जन्म मिथिलापुर कीना। कुम्भ पिता रक्षिता माताको बहु सुख दीना॥ वंश कहौं इक्ष्वाकु हैम तनु घट लक्षण धर। काय धनुष पच्चीस तुङ्ग महँ लख सुरनर॥ आयु वर्ष पचपन सहस खड़ मासन सोहैं मदल। शिवधाम शिखर सम्मेदवर तीर्थराज निरखै न पद॥ २०॥ मुनि सुव्रत अपराजितसे कुशाग्रपुर राजे। पितु सुमित्र पद्मावत माता

को सुख साजैं ॥ हरिवंशी तनु श्याम कच्छ लक्षण, शुभ सोहै। बीस धनुषका काय तुङ्ग देखत मन मोहै॥ तीस सहस्र सुवर्षका आयु खड्ग आसन सुभग। सम्मेद शिखर शिवथान प्रभु तीर्थराज भवि मुक्ति मग ॥ २१ ॥ प्राणत तज नमिनाथ जन्म मिथलापुर लीना। विजय पिता विप्र माताको अति सुख दीना ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु वर्ण तनु हेम सुहावन। पद्म पाखुरी अङ्क पञ्चदश पांच सुभग तन ॥ आयु वर्ष दश सहस्रका पद्मासनसे शिव गये। सिद्धक्षेत्र सम्मेदगिरि वंदिन हो मङ्गल नये ॥२२॥ वैंजयन्तसे नेम-नाथ सूरीपुर प्रगटे। सिद्ध विजय शिवदेवीके देखत दुख विघटे। लहो श्रेष्ठ हरिवंश श्याम तनु शंख अङ्क वर। काय धनुप दश सहस्र वर्षका आयु पूर्णधर॥ खड्गासन गिरिनारिसे राजमती पति शिव गये। पशुवंदि छुडाई दयाकर तिन पदपंकज हम नये ॥२३॥ पारस प्रभु आनत दिव तज काशीमें राजे। अश्वसेन वामा माता गृह दुन्दुभि वाजे॥ उग्र वश तनु नील चिह्न अहिराज विराजे। नव कर काय उतंग आक शत वर्ष, सुछाजे॥ खड्गासन सम्मेदगिरि मुक्ति थान मद कमठ हर। मन वच तन वन्दन करों चो वीसम जिनराजवर ॥ २४ ॥ वर्धमान पुष्पोत्तरसे कुण्डलपुर आये। सिद्धार्थ पितु त्रिशला माता लख सुख पाये॥ नाथ वंश तनु हेमवर्ण हरि चिन्ह मनोहर। सात हाथ तनु आयु वहत्तर अब्द लयोवर॥ खड्गासन पावापुरकी मुक्ति थान जगताप हर। नवे सु नाथूराम नित हाथ जोड युग शीश धर ॥२५॥ इति॥

७५—सूतकनिर्णय

सूतकमें देवशास्त्र गुरुका पूजन प्रक्षालादि तथा मन्दिरजीका

पञ्चामृताभिषेक स्पर्शनको मनाई है तथा पात्रदान भी वर्जित है सूतक पूर्ण होनेके बाद प्रथम दिन पूजन प्रक्षाल तथा पात्रदान करके पवित्र होवे। सूतक विवरण इस प्रकार है। १ जन्मका दस दिन माना जाता है। २, स्त्रीका गर्भ जितने मासका पतन हुआ हो उतने दिनका सूतक मानना चाहिये, विशेषता यह है कि यदि तीन माससे कमका हो तो तीन दिनका सूतक मानना चाहिये। ३, प्रसूती स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है। इसके पश्चात् वह स्नान दर्शन करके पवित्र होवे। कहीं कहीं चालीस, दिनका भी माना जाता है। ४ प्रसूत स्थान एक मास तक अशुद्ध है। ५, रजस्वला स्त्री पांचवें दिन शुद्ध होती है। ६, व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक रहता है, कभी भी शुद्ध नहीं होती। ७ मृत्युका सूतक १२ दिनका माना जाता है। तीन पीढ़ी-तक १२ दिन चौथी पीढ़ीमें ६ दिनका, छठी पीढ़ीमें ४ दिन, सातवीं पीढ़ीमें ३ दिन आठवीं पीढ़ीमें एक दिन रात नवमी पीढ़ीमें स्नानमात्रसे शुद्धता कही है। ८ जन्म तथा मृत्युका सूतक गोत्रके मनुष्योंको ५ दिनका होता है। ९ आठ वर्षतक-के बालक की मृत्युका ३ दिनका और तीन दिनके बालकका सूतक १ दिनका जानो। १० अपने कुलका कोई गृहत्यागी उसका सन्यासमरण अथवा किसी कुटुम्बीका संग्राममें मरण हो जाय तो १ दिनका सूतक होता है। यदि अपने कुलका देशान्तरमें मरण करे और १२ दिन पूरे होनेके पहले मालूम हो तो शेष दिनोंका सूतक मानना चाहिये। यदि दिन पूरे हो गये होवे तो स्नानमात्र सूतक जानो। ११ घोड़ी, भैंस गौ आदि पशु तथा

दासी अपने गृहमें जने तो १ दिनका सूतक होता है। गृह वाहर जने सूतक नहीं होता। १२ दासी, दास तथा पुत्रीके प्रसूत होय या मरे, तो ३ दिनका सूतक होता है। यदि गृह वाहर होतो सूतक नहीं। यहापर मृत्युकी मुख्यतासे ३ दिनका कहा हैं। प्रसूनका १ ही दिन जानो। १३, अपनेको अग्नि जलाकर सती होकर मरे तिसका छह मासका तथा और और हत्याओंका यथायोग्य पाप जानना। १४, जनें पीछे भैंसका दूध १५ दिनतक गायका दूध १० दिनतक और वकरीका दूध ८ दिनतक अशुद्ध है, पश्चात् खाने योग्य है। प्रकट रहे कि कही देश-भेदसे सूनक विधान में भी भेद होता है, इसलिये देशपद्धति तथा शास्त्रपद्धतिका मिलानकर पालन करना चाहिये॥ (श्रावकधर्मसग्रहसे उद्धृत)

७६—जिनगुण मुक्तावली।

दोहा—श्रीजिनेश यतीशको, सुमिर हिये उपकार।
जिनवर गुण मुक्तावली, लिखूँ स्वपर सुखकार ॥१॥

तीर्थंकर पदके गुण वर्णे। धन धरावत जाहि न गिणे॥ यथाशक्ति करिये चिन्तोन। जाते होय पाप विप वौन ॥२॥ सतयुगमें प्रगटे परवीन। मानुप देह दोपकर हीन॥ आर्य्य खण्ड आय अवतरे। युगल सृष्टिमें जन्म न धरे॥ ३॥ क्षत्री वंश विना नहिं और। जाके गर्भ जन्मको ठौर॥ माताके रज दोप न होय। एक पूत जन्में शुभ सोय ॥४॥ मातपिताके देह मझार। मल अरु मूत्र नहीं निर्धार॥ गर्भ शोध देवी आदरे। स्वर्ग सुगन्धि लाय शुचि करें ॥५॥ जाके औदारिक तन माहिं। सात कुधातु मूल ते नाहिं॥ यातैं परमौदारिक कहो। आदि पुराण देख सर दहो॥ ६॥ केवल

प्राम समय तन सोय । सहज निगोद बिना तव होय ॥ नारि नपु सकके सम्पराय । तीर्थंकर पद उदय न थाय ॥८॥ जाके संयम समय सही । आलोचन विधि धरणो नहीं ॥ मस्तक माग विराजे केश । श्याम सचिक्कन सुभग सुवेश ॥८॥ अधिक हीन जिस अङ्ग न होय आधि व्याधि व्यापे नहि कोय ॥ विष शस्त्रादिक कारण पाय । आयु कर्मस्थिति छेदन ताय ॥ ९ ॥

दोहा—इत्यादिक महिमा घणी, तीर्थ कर परमेश ।

दश विधि जाके जन्मतैं अतिशय और विशेष ॥ १० ॥

प्रभुके अङ्ग न होय पसेव । नहीं निहार क्रिया स्वयमेव ॥ नाशा नेत्र कर्ण मल नहीं । ओस अन्त मल मूच न कहीं ॥ ११ ॥ क्षीर बराबर रुधिर अनूप । शंका वर्ण शुचि मान सरूप ॥ समच-तुरस्र शुभ संठाण । तुङ्ग देह दश ताल प्रमाण ॥ १२ ॥

दोह—अपने कर अङ्गुष्ठको मध्यमिका परयंत ।

बारह अंगुल ताल यह अब भारो मतिवन्त ॥१३॥

याही अपने तालसों दशगुण ऊंचा शरीर ।

सम चतुरस्र संठानको यह प्रमाण है धीर ॥ १४ ॥

चौपाई—प्रथम सार संहनन अभिद्य । वज्रवृषभ नाराच प्रसिद्ध रूप सम्पदा अपरम्पकार । सुर नर नाग नयन मनहार ॥ १५ ॥ सहस अठोत्तर लक्षण लसें । सबहीके तन चोसठ बसें ॥ लक्षण नाम सुलक्षण मिन्न । सो प्रतिमाके आसन चिन्ह ॥ १६ ॥ सहज सुगन्धि बसे वपुमाहिं । सब सुगन्धि जासो सम नाहिं ॥ कोन उठावन शक्ति निवास । अतुल अनन्त देह बल जास ॥ १७ ॥ प्रिय हित वचन अमृत उनहार । सब जगजन्तु श्रवण सुखकार ॥ जन्म

जात अतिशय दश येह । अब दश केवलके सुन लेह ॥१८॥ दो सौ योजन परिमिति लोय । चहु दिशमें दुर्भिक्ष न होय ॥ व्योम विहार भूमिवत जास । वपुसों होय न प्राण निवास ॥ १९ ॥ सब उपसर्ग रहित जग सूर । निराहार अति तृप्त स्वरूप ॥ एक दिशा सम्मुख मुख जोय । चतुरानन देखे सम कोय ॥ २० ॥ सब विद्या है अति गंभीर । छाया वरजित विमल शरीर ॥ पलक पात लोचन नहिं गहे । नख अरु केश एकसे रहे ॥ २१ ॥

सोरठा—नई रसादिक धात, होय न अशन अभावतैं ।
तिस कारणतें भ्रात, नख अरु केश बढ़े नहीं ॥ २२ ॥

दोहा—ये दश अतिशय ज्ञानके, लिये ग्रन्थ परमान ।
चौदह सुरकृत होत हैं, ते अब सुनो सुजान ॥२३॥

भाषा अर्धमागधी नाम । सकल जीव समझे तिहि ठाम ॥ मागध नाम देव परिभाव । यह गुण प्रगटे सहज सुभाव । २४ ॥ सबकी होय एकसी टेव । उर मैत्री वरते स्वयमेव ॥ सब ऋतुके फल फूल समेत । वनस्पति अति शोभा देत ॥२५॥ रत्नभूमि दर्पण उनहार । गति अनुकूल पवन संचार ॥ सकल सभा आनन्द रस लेह । मरुत कुमार बुहारी देह ॥ २६ ॥ योजन मिति निर्मल भू ठवे मेघकुमार गन्धि जल चवे । छप्पन छप्पन चहुं दिश माहि । कचन कमल गमन पथ जांहि ॥ २७ ॥ एक सरोज मध्य सुर करै । तातैं अधर पैंड़ प्रभु धरे ॥ निर्मल दिश निर्मल नभ होय । जन आह्वान करैं सुरलोय ॥ २८ ॥ धर्म चक्र आगे तन भिन्न । चलै धर्मचक्री पति चिन्ह ॥ भारी दर्पण प्रमुख मनोज्ञ । मङ्गल द्रव्य आठ विधि योग्य ॥ २९ ॥ दोहा—आठ प्रातिहार्यव विभव. तीरथ प्रभुके जोग ।

नाम ठाम तिनके सगम, सुमिरे सज्जन कोय ॥ ३० ॥ समोसरणमें मणिजड़ित, मध्य त्रिमेखलपीठ । गन्धकुटी तापर बनी चतुरानन मन ईठ ॥ ३१ ॥ बीच सिंहासन जगमगै, मणिमाणिक सम रूप । अन्तरीक्ष राजै तहां पद्मासन जग भूप ॥ ३२ ॥

सोरठा—समोसरणमें मीत प्रभु पद्मासन ही रहैं ।

यह मनादिकी रीति, और भांति मत जानिये ॥३३॥

दोहा—तीन छत्र सिर सोहिये चन्द बिम्ब उनहार । भामण्डल प्रभु दिपत है रवि छवि छिपे निहार ॥ ३४ ॥ पत्र चमर चौसठ-चमर, ढारत भरे सुहाहि । बरषैं सुमन सुहावने, सुर दुन्दुभि गरजाहि ॥ ३५ ॥ आवत गोधे नायको उपजी सेवक ठाम । शोक शोकके हरणतैं, सो अशोक अभिराम ॥३६॥ तीनकाल वाणी खिरे, छह छह घड़ी प्रमाण । भौतासनके श्रवणसों सो निरक्षरी जान ॥३७॥ इह विधि जिनवर गुण कथा कहत कहत को पार । बाहिज गुण निज प्रगट सो लिखे ग्रन्थ अनुसार ॥ ३८ ॥ अन्तरगुण महिमा अतुल कापै बरणी जाय । सुरगुरुसे नहि कह सके, थके स्थविर मुनिराय ॥३९॥ तीर्थंकर गुण चिन्तवन परम पुण्यको हेत । सम्यक् दल अंकुर है उपजै मनि सर खेत ॥ ४० ॥ जिनवर गुण मुक्तावली, जन्द सूतमें पोय । गुणमाला भूधर गुही, करत कंठ सुख होय ॥ ४१ ॥

७७—सुआबत्तीसी ।

दोहा—नमस्कार जिनदेवको करों दुहु करजोड़ । सुआबत्तीसी सरस मैं, कहु मति दल मोर ॥ १ ॥ आतम सुआ सुगुरु वचन पढ़त रहै दिन रैन ॥ करत काज कवरीतिके, यह अचरज अति

नैन ॥ २ ॥ सुगुरु पढावें प्रेमसों यही पढत मन लाय ॥ घटके पट जो ना खुले, सबहिं अकारथ जाय ॥ ३ ॥

सुवा पढ़ायो सुगुरु बनाय । करम वनहिं जिन जइयो भाय । भूले चूके कबहु न जाहु । लोभ नलिनिप दगा न खाहु ॥ ४ ॥ दुर्जन मोह दगाके काज । बाधो नलिनी तर धर नाज ॥ तुम जिन बैठहु सुवा सुजान । नाज विषय सुख लहि तिहि थान ॥ ५ ॥ जो बैठहु तो पकरि न रहियो । जो पकरो तो दृढ निज गहियो ॥ जो द्रढ गहो तो उलटि न जइयो । जो उलटो तो तजि भजि धइयो ॥ ६ ॥ इह विधि सुवा पढायो निच्त । सुवटा पढ़िके भवो विचित्त पढत रहे निशदिन ये वैन । सुनत लहैं भव प्रानी चैन ॥ ७ ॥ इक दिन सुवटे आई मनें । गुरु सङ्गत तज भज गये वनै ॥ वनमें लोभ नलिन अति वनी । दुर्जन मोह दगाको तनी ॥ ८ ॥ ता तरु विषय सुखनके काज । वैठ नलिनपै विलसैं राज ॥ ९ ॥ वैठो लोभ नलि-नपै जवै । विषय स्वाद रस लटके तवै ॥ लटकत तरे उलटि गये भाव । तर मुण्डी ऊपर भये पाव ॥ १० ॥ नलिनी द्रढ़ पकरैं पुनि रहैं मुखतैं वचन दीनता कहैं ॥ कोउ न वनमें छुडावनहार । नलनी पकरहि करहि पुकार ॥ ११ ॥ पढत रहैं गुरुके सव वैन । जे जे हितकर सिखये ऐन । सुवटा वनमें उड निज जाहु । जाहु तो भूल खता निज खाहु ॥ १२ ॥ नलनीके जिन जइयो तीर । जाहु तो तहा न वैठहु वीर । जो वैठो तो द्रढ़ ना गहो । जो द्रढ़ गहो तो पकरि न रहो ॥ १२ ॥ जो पकरो तो चुगा न खइयो जो तुम खायो तो उलट जइयो । जो उलटो तो तज भज धइयो । इतनी सीख हृदयमें लहियो ॥ १३ ॥ ऐसे वचन पढत पन रहै ।

छोभ मछनि भखतो न चहै ॥ पायो दुर्लभ दुर्लभ रूप। पकड़े
सुपटा सुन्दर रूप ॥ १५ ॥ डारि दुखके जाल मझार। सो दुख
कहत न आवे पार ॥ भूख प्यास बहु संकट सहै। परवस परे
महादुख लहै ॥ १६ ॥ सुपटाको सुधि बुधि सब गई। यह तो
बात और कछु भई ॥ आय परे दुख सागर माहि। अब इततैं
कितको भज जाहि ॥ १७ ॥ कैतो काल गयो इह ठौर। सुपटा
जियमें ठानी और ॥ यह दुख जाल कटे किहँ भांति। ऐसी मनमें
उपजी खांति ॥ १८ ॥ रात दिना प्रभु सुमरन करे। पाप जाल
काटन चित धरे ॥ क्रम क्रम कर काट्यो अघ जाल। सुमरन फल
भयो दीन दयाल ॥१९॥ अब इततैं जो भजके जाऊं। तौं वनमें
पर पैठ न पाऊं। पायो दाव भज्यो ततकाल। तज दुर्लभ दुर्गति
जंजाल ॥ २० ॥ आये सघन बहुरि वनमाहि। बैठे तरुवरद्रुमके
छाहि ॥ तित इक साधु महा मुनिराय। धर्म देशना देत सुभाय
॥२१॥ यह संसार कर्म वन रूप। तामहि चेतन सुआ अनूप ॥ पढ़त
रहै गुरु वचन विशाल। तौहू न अपनी करे सम्भाल ॥२२॥ लोभ
नलिनी पै बैठे आय। विषय स्वाद रस लटके आय ॥ पकरहि दुर्जन
दुर्गति परे। तामें दुःख बहुत जिय भरे ॥ २३ ॥ सो दुख कहत न
आवे पार। जानत जिनवर ज्ञान मझार ॥ सुमरौं सुपटा चोरयौं
आप। यह तो मोहि परयो सब पाप ॥ २४ ॥ ये दुख तो सब मैं
ही सहे। जो मुनिवरने मुखसौं कहे। सुपटा सोचै हियो मझार
ये गुरु साँचे तारनहार ॥ २५ ॥ मैं शठ फिरियो करम वन मांहि।
ऐसे गुरु कहुं पाये नाहि ॥ अब मोहि पुण्य उदय कछु भयो।
साँचे गुरुको दर्शन लयो ॥ २६ ॥ गुरुकी गुण स्तुति बारम्बार। सु

मिरे सुवटा हिये मझार ॥ सुमरत आप पाप भज गयो घटके पट खुल सम्यक थयो ॥२७॥ समकित होत लखी सब बात। यह मैं यह परद्रव्य विख्यात। चेतनके गुण निजमहि धरे। पुद्गल रागादिक परिहरे ॥३८॥ आप मगन अपने गुण माहिं। जन्म मरण भय जियकों नाहिं ॥ सिद्ध समान निहारत हिये। कर्म कलंक सबहिं तज दिये ॥२९॥ ध्यावत आप माहिं जगदीश। दुहुंपदक एक विराजत ईश ॥ इह विधि सुवटा ध्यावत ध्यान। दिन दिन प्रति प्रगटत कल्याण ॥ ३० ॥ अनुक्रम शिवपद जियका भया। सुख अनन्त विलसत नित नया ॥ सतसंगति सबको सुख देय। जो कुछ हियमें ज्ञान धरेय ॥ ३१ ॥ केवलिपद आतम अनुभूत। घट घट राजत ज्ञान सजूत ॥ सुख अनन्त विलसै जिय सोय। जाके निजपद परगट होय ॥ ३२ ॥ सुवा बत्तीसी सुनहु सुजान। निजपद प्रगटे परम निधान ॥ सुख अनन्त विलसहु ध्रुव नित्त। 'भैयाकी' विनती धर चित्त ॥३३॥ संवत सत्रह त्रेपन माहिं। आश्विनपहले पक्ष कहाहिं ॥ दशमी दिशों दिशा परकास। गुरु संगतिमें शिव सुखभास ॥ ३४ ॥

७८—नामावली स्तोत्र।

जय जिनंद सुखकंद नमस्ते। जय जिनंद जितफंद नमस्ते ॥ जय जिनंद वरबोध नमस्ते। जय जिनंद जित क्रोध नमस्ते ॥ १ ॥ पापताप हर इन्दु नमस्ते। अर्ह वरन जुत बिन्दु नमस्ते ॥ शिष्टाचार विशिष्ट नमस्ते। इष्ट मित्र उत्कृष्ट नमस्ते ॥२॥ परम धर्म वर शर्म नमस्ते। मर्म भर्म धन धर्म नमस्ते ॥ दृगविशाल वर भाल नमस्ते। हृद दयाल तुनमाल नमस्ते ॥ ३ ॥ शुद्धबुद्ध अविरुद्ध

नमस्ते। रिद्धिसिद्धि वर वृद्ध नमस्ते ॥ वीतराग विज्ञान नमस्ते। चिद्विलास धृत ध्यान नमस्ते ॥४॥ स्वच्छ गुणाम्बुधि रत्न नमस्ते। सत्त्व हितंकर यत्न नमस्ते ॥ कुनयकरी मृगराज नमस्ते। मिथ्या खग वर बाज नमस्ते ॥५॥ भव्य भवोदधि पार नमस्ते। शर्मामृत सित सार नमस्ते ॥ दरश ज्ञान सुखवीर्य नमस्ते। चतुराणन धर धीर्य नमस्ते ॥ ६ ॥ हरिहर ब्रह्मा विष्णु नमस्ते। मोह मर्द मनु जिष्णु नमस्ते ॥ महादान महभोग नमस्ते। महा ज्ञान मह योग नमस्ते ॥७॥ महा उग्र तप सूर नमस्ते। भवसमुद्र शत सेतु नमस्ते ॥८॥ विदानंद गुणगेह नमस्ते। इन्द्रादिक नुत शोभ नमस्ते ॥ जय रत्नत्रय राह नमस्ते। सकल जीव सुखदाय नमस्ते ॥९॥ असरणशरण सहाय नमस्ते। भव्य सुपन्थ लगाय नमस्ते ॥ निराकार साकार नमस्ते एकानेक अधार नमस्ते ॥१०॥ लोकालोक विलोक नमस्ते। त्रिधा सर्व गुण थोक नमस्ते ॥ सल्ल मल्ल दल मल्ल नमस्ते। कल्ल मल्ल जित छल्ल नमस्ते ॥११॥ भुक्ति मुक्ति दातार नमस्ते। उक्ति सुक्ति शृंगार नमस्ते ॥ गुण अनन्त भगवन्त नमस्ते। जै जै जै जयवन्त नमस्ते ॥ १२ ॥

इति पठित्वा जिनचरणाग्रे परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

७६—ढुंढकमतनिषेध पच्चीसी।

दोहा—वंदों वीर जिनेशपद, कहो धर्म जगसार। चरते पंचम कालमें जगत जीव हितकार ॥१॥ ताहि न त्यागे भूल सो जारै उर निज ज्ञान। देखो चतुर विचारके, तिनसम कौन अयान ॥२॥

चौपाई छन्द—है जगमें पुद्गलरूप सार, तिनमें धर्म पदारथ सार। जाके सर्व होय सब सिद्ध, या बिन मनकी एक न रिद्ध ॥३॥

सो पुनि दया रूप जिन कहो, करुणाविन कहुं धर्म न लहो। यामें छहों कायकी घात, लहिये कहा दयाकी वात ॥४॥ सो अव सुनो सवै विरतत, सुनिके त्याग करो मतिवन्त। हरित कायकी उत्पति येह, अग्नि सयोग भूमि गनि लेह ॥५॥ अग्नि नीर हैं याको साज, इन विन सरै नहीं यह काज। काढत धूम वदनतें जान, होय समीर कायको हान ॥६॥ इह विधि थावर दया न होई, त्रसको त्रास होय सुनि सोई। कुथू आदि जीव या माहि, खैंचत स्वास सवै मर जाहि ॥७॥ उपजै जीव गुड़ाखू वीच। हुई है तहा त्रसनकी मीच। हिसा होय महा अघ सच, ऐसी दया पलै नहिं रंच ॥८॥ यही वात जाने सव कोय, जहा हिसा तहाँ धर्म न होय। वहुर धर्म नाश भयो जहा, सकल पदारथ विनसे तहां ॥६॥ तातें निद्य जानि यह कर्म, पापमूल खोवें धन धर्म। यामें कोई न दीसे स्वाद, प्रात होत ही आवे याद ॥१०॥ भव्य जीव सामायक करे, सव जीवनसों समता धरें। यह जोरे सव याको साज, और सकल विसरे घर काज ॥११॥ सेवें याहिं पुरुष उर अन्ध, यातें मुख आवे दुर्गन्ध। उत्तम जीवनको नहिं काम। सिलगे हलक होय उर श्याम ॥१२॥ जाको कोई न आदरे। सो कुवस्तु सव यामें परे। यातें सव पवित्रता जाई। परको जूठ गहै मन लाई ॥१३॥ यासों कछू पेट नहिं भरे, हाथ जरै मुख कड़वो परे। गिने न याकर रैनी सवार, वुरो व्यसन है देख विचार ॥ १४ ॥

दोहा—स्वाद नहीं स्वारथ नहीं, परमारथ नहिं होय।
क्यों झपटै जग जूठको, यही अचम्भो मोय ॥१५॥

साधरमी जन वैठे जहा, सोहे नहीं पुरुष वह तहा। जिमि

हंसनकी गोठ मझार, काग न शोभा लहै अपार ॥१६॥ यामें नफा नहीं तिल मात्र, प्रकट हानि है देख समान । यह विवेक बुध हिरदय धरो ऐसो मानि मूढ मत करो ॥१७॥ इनकी विनतीपै हठ गहै, मोह स्वरूप त्याग नहिं करै । तासों मेरी कछु न बसाय, काली कंप न मारो साय ॥१८॥

दोहा—सरल चित्त सुनि भेद यह, तजै आपसों आप । हठ माहीं हठ गहि रहै जिनके पीछे पाप ॥१९॥ सठी पुरुष प्रति हित वचन सबै अकारथ जाहिं । ज्यों कपूरको मेलिये कूकरके मुख माहिं ॥२०॥ 'भूधरदास' सबसों कही, यही यथारथ बात । सुहित जान हिरदै धरो कोप करो मत भ्रात ॥२१॥ सबहीको हित सोच है, काहे भेद नहिं कोय । अमृत पान कोऊ करै, ताहीको गुण होय ॥२२॥

कवित्त तम्बाकूके विषयमें ।

महरकी सासु सुत सुतकी हलाहलकी बीछीकी पतिनपर पंचरूप साजी है । माली करियारीकी धतूरेकी ममानी पितियानी पन्नगनागकी अटामें विराजी है । कहैं गञ्जनता यह पचावें धन्य प्राणी और अफीमको जिठानी विषखोपरीकी भाभी है । मातुलकी मौसी महतारी सिंधियाकी यह तमाखू सर्वमारीको जिनमें उपराजी है ॥२३॥ चित्तको भ्रमाय देत मनको सुभाय देत सुमनको न देवे कछु आवे क्या भलाई है । प्राण विनाश करै मुखमें दुर्गन्धि लहै उत्पाताकी बापानि रचना सुनाई है । गर्भमके मूत्रपन नामन लगाय कर हमीकार पोष पुनि समुद करि तपाई है । धन्य है दयोधनको चाँप जो तमाखूको समामांझ दूर दोष पसपनो बताई है ॥२४॥

लावनी—धर्म भुल आचरण विगाडा इसका हेतु नहीं रहा इलम ! विवेक जाता रहा हियेसे सबकी जूं ठी पियें चिलम ॥टेक॥ प्रथम तमाखू महा अशुचि है, म्लेच्छ इसको बनाते हैं। छूने योग्य नहीं बिलकुलके अपना तोय लगाते हैं। डंडो चिलममें धूम योगतें जीव असंख्य बताते हैं। पीते ही मर जाय सभी वह यह जिन श्रुतिमें गाते हैं ॥ होती इसमें अपार हिंसा जरा दया नहीं आती गिलम। विवेक जाता० ॥ कौम रिजालोंके साथ पीते गई आबरू ये क्या बनी है। हया दूर कर धर्म जलाते उन्हींमें जा उनकी मत सनी है। वे चर्स गांजा पिवें पिलावें उन्होंने बुद्धि तेरी ये हनी है। स्वास प्रगट कर वदन जलाता प्राण हरणको ये हरफनी है ॥ लगाना दमका बहुत बुरा है पीते तनमें पडे खिलम। विवेक० ॥ थावर त्रसकर सहित भपा जल कुवास है ए निधान हुका। सुतोय परते सुजीव मरते हैं पापका ए निधान हुका ॥ रोग भिन्न हो जाय कहे मर पीते हैं हम यह जान हुका। शुद्ध औषधि करो ग्रहण तुम अशुचि दूर करिये जान हुका। सीख सुगुरुकी यही रूपचन्द त्यागो जल्द मत करो विलम। विवेक० ॥

८०—नेम ब्याह।

मौर धरो शिर दूलहके कर ककण बाध दई कस डोरी। कुण्डल काननमें झलकें अति भालमें लाल विराजत रोरी ॥ मोतिनकी लड शोभित है छवि देखि लजें वनिता सब गोरी। लाल विनोदीके साहिबको मुख देखनको दुनिया उठ दौरी ॥ १ ॥ छत्र फिरे शिर दूलहके तब बारह रत्न शिवादेवी मैया। कृष्ण इते बलभद्र उते कर ढोरत चमर चले दोऊ भैया ॥ भूप समुद्र विजय

सब संघ चले वसुदेव उछाह करैया। लाल विनोदीके साहिबकी वनिता सब हो मिलि खेल खलैया ॥ २ ॥ गौने गये जब नेम प्रभू पशु पक्षिन बैन पुकार करो है। आपसे आप भये प्रतिपाल दयाल सुनो विनती हमारी है। बन्दि पड़े बिललाय सबै बिन कारण विपदा आनि पड़ी है। पूछत लाल विनोदीके साहिब सारथी क्यों न बन्दि भरी है ॥ ३ ॥ सारथीने कर जोड़ कही सुन नाथ इन्हें जु निवारेंगे अब। यादव संग जुरे सबरे तिन कारण ये सब मारेंगे अब ॥ इनकी रक्षा वनमें किसपै इनको ये भक्ष संहारेंगे अब। तातें तुमसे फर्याद करें हमरी गति नाथ सुधारेंगे अब ॥ ॥ ४ ॥ बात सुनी जबतें इनसे पशु पक्षिनकी सब बन्दि छुड़ाई। जाओ सबै अपने थलको हमपे अपराध क्षमा करो भाई ॥ धृग है ऐसो जीवो जगमें तबहीं प्रभु भावन भावना भाई। देव लौकान्तिक आय गये तिन धन्य कहें सब पावन राई ॥ ५ ॥ प्रभु तो बिन ऐसो कौन करे औ को जगमें यह बात विचारे। कौन तजे सुख बन्धु वधू सबको जगमें ममता निरवारे ॥ कोमल कर्मनि जीत सके अरु आप तरे अरु औरन तारे। लाल विनोदीके साहबने यश गीत लियो जग जीतन हारे ॥ ६ ॥ नेम उदास भये जबसे कर जोड़के सिद्धका नाम लियो है। अम्बर भूषण डार दिए शिर मौर उतारके डार दियो है। रूप धरो मुनिका जब ही तब ही चढ़िके गिरनारि गयो है। लाल विनोदीके साहिबने तहां पंच महाव्रत योग लयो है ॥ ७ ॥ नेम कुमारने योग लयो जब होनेको सिद्धवधू मन हरषा। या जगके सुख जान अनित्य लखो भासुर एक तृणवत्की निसा। स्नेह तजो परिवार तजो नहि भोग विला

सनकी मन भिक्षा। लाल विनोदीके साहिबके संग भूप सहस्र लई तब दिक्षा ॥ ८ ॥ काहूने जाय कही सुन। राजुल तेरो पिया गिरनारि चढ़ो है। इतनी सुन भूमि पछार लई मानो तन सेती जीव कढ़ो है॥ सो उग्रसेनसे जाय कही सुन तात विधाता अनर्थो गढ़ो है। लाज सबै सुध भूल गई पिय देखनको जु उछाह चढ़ो है ॥ ६ ॥ लाड़ली क्यों गिरनारि चढ़े उस ही पति तुल्य सुधी वर लाऊं। प्रोहितको पठवाऊं अभी बहु भूपरके सब देश ढुंढाऊं। व्याह रचो फिरके तुम्हरो महि मण्डलके सब भूप बुलाऊं। लाल विनोदीके नाथ विना द्युतिवन्तको कन्त तुझे परणाऊं ॥ १० ॥ काहे न बात सम्हाल कहो तुम जानत हो यह बात भली है। गालियां काढ़त हो हमको सुनो तात भली तुम जीभ चली है। मैं सबको तुम तुल्य गिनों तुम जानत ना यह बात रली है। या भवमें पति नेम प्रभू वह लाल विनोदीको नाथ चली है ॥ ११ ॥ मेरो पिया गिरनारि चढ़ो सुन तात मैं भी गिरनारि चढ़ोंगो। सग रहों पियके वनमें तिन ही पियको मुख नाम पढ़ोगी। और न बात सुहाय कछू पियकी गुणमाल हियेमें पढोंगी। कन्त हमारे रचें शिवसे शिव याको मैं भो सिवान चढ़ोंगी ॥ १२ ॥ इति ॥

८१—लावनी।

धन्य दिवस धन्य घड़ी आजकी जिन छवि नजर पड़ी। स्वपर भेद बुद्धि प्रकट भई उर भर्म बुद्धिविसरी ॥ टेक—नासिकाग्र हैं दृष्टि मनोहर वर विराग सुथरी। आतम शुद्ध सुराजान मानी अनुभव सुरस भरी ॥ १ ॥ शान्त्याकृति निरखत ही परकी आरत

सर्वगरी। सिर मिथ्या तम साग करनको मानों मधुन करो ॥ २ ॥ बोतराग ताका सुदेतु सुनि मोद मुझग विसरी। पद भूषण पिनये सुन्दरता माहीं रहु दरी ॥ ३ ॥ जाकी द्युति शत कोट चन्द्रम मद्गुत जग विस्तरी। तारक रूप निहारि हिय छवि मानिक मगम करी ॥ ४ ॥

८२—वेश्या कुटलाई।

मत कचो मोनि वेश्या विष बुझो कटारी। है यही सकल रोग नको धाम हत्यारी ॥ टेक ॥ औषधि अनेक हैं सर्प डसेकी भाई। पर इसके काटकी नहिं कोई दवाई ॥ नर इसे धाम तो जीवन दृ दहि जाई। पर इसके नैनके बाणसे होय सफाई ॥ है रोम रोम विष भरी फरो न यारी। है यही सकल रोगनको खान हत्यारी ॥ १ ॥ यह तन मन धन हर लिय मधुर बोलीमें। बहुतोंका करे शिकार डमर मोलीमें ॥ कर दिये हजारों छोट पोट झोलीमें। लाखोंका दिल कर लिया कैद चोलीमें ॥ गई इसी कर्ममें लाखों की जमींदारी। है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥ २ ॥ हो गये हजारोंके बल वीर्य छारा। लाखोंका इसमे वंश नाश कर डारा ॥ गठिया प्रमेह मतिशने देह बिगारा। भारत गारत हो गया इसीका मारा। कर दिये हजारों इसमे चोर और जुआरी। है यही सकल दुगु णकी खानि हत्यारी ॥ ३ ॥ इसही छ्यलनीने मद्य मांस सिखलाया। सब धर्म कर्मको इसने धूर मिलाया ॥ और दया क्षमा लज्जाको मार भगाया। ईश्वर भक्तीका मूल नाश करवाया। हों इसमे नयासक रौरवके अधिकारी। है यही० ॥ ४ ॥ यह नवयुव कोंको नैन सैनसे बावे। और धनवालोंको बहु गहु कर खावे ॥

धन हरण करे फिर पीछे राह बतावे। करे तीन पाच तो जूते भी लगवावे॥ पिटवाकर पीछे ल्यावे पुलिस पुकारी। है यही० ॥५॥ फिर किया पुलिसने खूब अतिथि सत्कारा। हो गई सजा मिला मजा इश्कका सारा॥ जो झूठ होय तो सज्जन करो विचारा। दो त्याग झूठ करो सत्य वचन स्वीकारा॥ अब तजो कर्म यह अति निन्दित दुःखकारी। है यही सकल रोगोंकी खानि हत्यारी॥ ६ ॥

८१—प्रतिमा चालीसो।

दोहा—दुःख हरण सब सुख करण श्रीजिन मुद्रासार। नित-प्रति वंदे भव्य जन निन्दा करें गंवार॥ १ ॥ प्रतिमा आगे विघ्नक्षय मङ्गल होय हजूर। जैसे आंधी मेटके घन वर्षे भरपूर॥ २ ॥ दर्शन चिन्ता कोटि फल करते कोटा कोट। कोटा कोट कोटी पथ फल अनन्त प्रभु ओर॥ ३ ॥

अब जो ढूंढिया करत है आन। प्रतिमा निन्दाचार विधान॥
प्रथम उचोतन कृत्रिम होय। एकेंद्री अरु आरम्भ होय॥ ४ ॥
(उत्तर दोहा)—मासों जैनी कहत है उत्तर चार विचार
साच होय तो पूजिये तज झूठा हकार॥ ५ ॥

(अचेतनका उत्तर) चौपाई।

वाणी श्रीजिनवरकी होय। पद्गलमई अचेतन सोय॥ तिनके सुनते प्रगटे ज्ञान॥ यूं प्रतिमा लख उपजे ध्यान॥ ६ ॥ जिनवर अमर भये शिव पाय। रहौं अचेतन जडमय काय॥ सो पूजी वन्दो सुर राय। बहुविध नाचे गाय बजाय॥ ७ ॥

(प्रतिमाका उत्तर) चौपाई ।

उत्तम रतनमय अनेक प्रकार । ढाल चीमनी मानिक सार ॥
पड़ते सुनते पुण्य बढ़ाय । क्यों प्रतिमा तो निर्मल भाय ॥ ८ ॥

(एकेन्द्रीका उत्तर)—दोहा

वनस्पती कागद कलम, स्याही अग्नि सुभाय ।
एकेन्द्री पुस्तक प्रकट, क्यों मानो सिर नाय ॥ ६ ॥

प्रश्नोत्तर दोहा

पोथी पञ्चेन्द्री लिखे, तातैं कहो मनोज्ञ । प्रतिमा पञ्चेन्द्री घड़े सो क्यूं नाहीं योग्य ॥ १० ॥ पोथी वाणी प्रगट है, तातें उपजे बोध । पूजा वरनी करन है आरम्भ दोष विरोध ॥ ११ ॥

(आरम्भका उत्तर) गीता छन्द ।

जिम गर्भ होत नगर बसायो न्हवन जन्म कल्याणमें तपमें करी वर्षा पहुपकी याग सरवर बागमें । निर्वाण होत शरीर दाहा इन्द्र द्रव्य सुरगमें गया । यह पञ्चकल्याण भक्ति कर पक भव तारी भया ॥ १२ ॥

(भक्तीको आरम्भका फल) चौपाई ।

भरत समकिती पुर व्रत धार । सेना सहित नाग असवार ॥
पूज्यो आदीश्वर जिनराय । अवधि ज्ञान पायो सुखदाय ॥ १३ ॥
भरत आय कैलाश पहार । करी बहत्तर जिनमह सार ॥ तामें धरे बहत्तर बिम्ब । मुक्त भये तनके प्रतिबिम्ब ॥ १४ ॥ श्रेणिक हो हाथी असवार । महावीर पूजो जिनसार ॥ बांध्यो शुभ तीर्थंकर गोत । आरम्भको फल प्रगट उद्योत ॥ १५ ॥

दोहा—साधु वन्दने जात हो जूती पहिन हमेश । पल पाप

तुमको लगे, किधों साधुका लेश ॥ १६ ॥ जो पातक तुमको चढ़ै, क्यों जाओ हो वीर। जो मुनिवरको लगत है, मने करे किन धीर ॥१७॥ पूजामें हिंसा सहल, पुण्य अनन्त अपार। विष कनिका नहिं कर सके, सागर दोष लगार ॥ १८ ॥ पैसेका टोटा जहां, बढ़ता लाख किरोर। सो व्यापार करे नहीं, सोच कहो तज थोर ॥ १६ ॥ चित्र लिखी नारी लखे, मन गदला बहु होत। मूर्ति शाति जिनेशकी देखे ज्ञान उद्योत ॥ २० ॥ यह बातें प्रगटे सुनो, जवाब दियो नहिं जाय। हार मानके यूं कह्यो, मन नहिं माने भाय ॥ २१ ॥

चौपाई—नाम थापना द्रव्यरु भाव। निक्षेपे हैं चार स्वभाव तीनों मानत हो महाराज। थापन नहिं मानो किह काज ॥ २२ ॥ पैतालीसों आगम माहिं। प्रतिमा पूजा में सब थाहिं ॥ सो तुम साधु सुनी सब लोय। नरभव सफल करो भ्रम खोय ॥ २३ ॥ जीवा अभिगम ग्रन्थ मझार। सुरविज इन्द्र नामनेसार ॥ अक्रित्रिम प्रतिमाकी बहु करो। पूजा भक्ति विनय बहु धरी ॥२४॥ जब वाईके कथन निहार। अड्डड सन्यासी व्रत धार॥ निज पूजा वन्दना सो करी। है कि नहीं तुम भाषो खरी॥ २५॥ ज्ञातृ कथामें देखो वीर। सती द्रोपदीने धर धीर॥ कृत्रिम प्रतिमा पूजा करी महा सतीमें सो गुण भरी ॥ २६ ॥ नाम उपासक दशा प्रधान। दशश्रावकने किया प्रधान॥ परतीर्थ परदेवक रमे। निज तीरथ निजदेव सो रमें ॥ २७ ॥ सूत्र कृताग माहिं विस्तार। प्रतिमा भेजी अक्षय कुमार। आर्द्र कुमार मीतको जान। तिसतें पायो सम्यक ज्ञान ॥ २८॥ सूत्र भगोती माहिं विचार। जघा चारण विद्या चार ॥ अक्रितम पूजा करी। महामुनोने थुतिरस भरी ॥

दोहा—कहैं आदि बहु ग्रन्थ है, आगममें है धीर।
सांचोंके झूठो कहो, पक्षपात मत वीर ॥ ३० ॥

(प्रतिमा मानी तिसका वचन)

दोहा—प्रतिमा दर्शन योग्य है, दीप चढ़ावन योर।
दीप धूप फल फूल वर चन्दन अक्षत थोर ॥ ३१ ॥

(उत्तर) दोहा—भादों आरम्भके किये गये स्वर्ग के मांहि।
तिनकी कथा प्रसिद्ध है, जिन आगमके मांहि ॥ ३२ ॥

(पूजाफल) कवित्त।

नीरके चढ़ाये भवनीर तीर पावे जीव चन्दन चढ़ाये चन्दसेवे दिन रात है। अक्षत सो पूजते न पूजे अक्षपुञ्ज जाको पुष्पनसों पूजे फूल जातमें न जात है। दीजे नैवेद्य तातें लीजे निर्वेदपद दीपक चढ़ाये ज्ञान दीपक विकसात है। धूपके खेयते भ्रमवीर धूप जाय जैसे फल सेती मोक्ष फल सर्व अघघात है ॥ ३३ ॥

सवैया—साधुन की पूजातें हजार गुणा फल जिन बिनती हजार गुणा फल पूजा सिद्धकी ॥ सिद्धतें हजार गुणा फल पूजा प्रतिमाको तिहूंकाल दाता आठौं नवों निधिसिद्धकी ॥ ग्रन्थ मुद्रा भेष साधु अरहन्त सिद्ध भगे प्रतिमा ही कर्ता है पांचों पद वृद्धिकी। कहै न बखान सिद्ध होनेको है यही ध्यान मोक्षफल देय कौन बात स्वर्ग ऋद्धिकी ॥ ३४ ॥

कुण्डली छन्द—जूठा कहो उनकी नीर बुहारी पक्ष। बड़ा द्रव्य उपावना जहां कार्य असंख्य। हरण हलोंके पाप सर्व फलमें बखानूं। जिन पूजा गुरु सेव बहुत समय तप जानूं। सबसे पहिले प्रात उठन पूजा शुभ सूझा। कर पूजा जिनराज काज तब बाकी जूठा ॥ ३५ ॥

सवैया—धन्य जिन भवन करे है सो भी धन्य बिम्ब धरे दोनों निस्तरे वह सघई कहावई। कोई पूजा करे आय कोऊ न्हौन देखे आय गन्धोदक पाय लाय आनन्द बढ़ावई॥ कोई द्रव्य लावे कोई पढ़े कोई नमे ध्यावे कोई छत्र चमर सिंहासन चढ़ावई। कोई नाचे गावे या बजावे भक्तिको बढावे पुण्य तीन लोकमें न पूजा सम पावई॥ ६॥

दोहा—तीन लोक तिहुकालमें, पूजा सम नहिं पुन्य।
ग्रहवासोको प्राप्त हो बिन पूजा घर शून्य॥ ३७॥

अडिल्ल—ढूंढक मनके शास्त्र उक्त बातें कहीं। निज मत पोषा नाहि न परनिन्दा गही॥ समझे सज्जन सत बताय न मूढसो। ज्ञान हियेमें नाहिं लगे हैं रूढ़ सो॥ ३८॥

दोहा—थोडासा यह कथन है। लेहु बहुन कर मान।
नित प्रति पूजा कीजिये, यह परभव सुखदान॥ ३९॥

चौपाई—दिली तख्त बख्त परकाश। सत्रहसे ईक्यासी मास॥
जेठ शुक्ल कुलचन्द उदोत। द्यानत प्रगट्यो प्रतिमा जोत॥ ४०॥

मूढ दशा सवैया।

ज्ञानके लखन हारे विरले जगत माही ज्ञानके लिखनहारे जगतमें अनेक हैं। भाषे निरपक्ष बैन सज्जन पुरुष कोई दीसत बहुत जिन्हें वचनकी टेक है। चूक परे रिस खात ऐसे जीव बहु-भ्रात और अचूक थोरे धरे जो विवेक हैं। ज्ञाता जन थोरे मूढ मति बहुतेरे नर जाने नहिं ज्ञान सर कूप कैसे भेक हैं॥४१॥

— —

छठवां अध्याय

काशी निवासी कविवर वृन्दावनदासजी कृत।

८४—अरहन्तपासाकेवली ।

दोहा—श्रीमत वीरजिनेशपद वन्दों शीस नवाय। गुरु गौतमके चरन नमि, नमों शारदा माय॥१॥ जे जिन मतके पुण्यतें भाषी गणधर देव। जगतहेत अरहन्त यह नाम 'केवली सेव' ॥२॥ चतुरनके पासाविषै चारों ओर सुजान। एक एक अक्षर लिखो जो 'अरहन' विधान॥३॥ तीन बार डारो तबै करिवर मन्त्र उचार। जो अक्षर पांसा कहै ताको करो विचार॥४॥ तीन मन्त्र हैं तासुके, सात सातहो बार। फिर है पांसा डारियों करिके शुद्ध उचार॥५॥ जानि शुभाशुभ तासुतें फल निज वर धनियोग। मन प्रसन्न ह्वै सुमरियो प्रभुपद सेयहु जोग॥६॥

प्रथम मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं बाहुबलि लंबबाहु ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षौं क्षः अवव मुआ कुरु कुरु शुभमशुभं कथय कथय भूतभविष्यति वर्तमानं दर्शय दर्शय सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि स्वाहा।

(प्रथम मंत्र सात बार जपना)

दूसरा मंत्र ॐ ह्रः ॐ ह्रः ॐ ह्रः सत्यं वद सत्यं वद स्वाहा।

(सात बार जपना)

तीसरा मन्त्र ॐ ह्रीं श्रीं विश्वमालिनी विश्वप्रकाशिनि नमो

---

* मन एकत्र करि जिनेन्द्र सहित अपना अभिप्राय विचारकरि श्री अरहंत भगवानके नामाक्षरका पांसा तीन बेर डालना जो जो अक्षर पड़ें तिन अक्षरका अर्थ बांच उसका निश्चय करना। जिन मार्गमें यह बड़ा निमित्त है इसे हमने लिखा है कि अपना वा पराया उपकार होय। (वृन्दावन)

घ्नादिनि सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि राह्यहि राह्यहि त्रिश्वमालिनि स्वाहा।

(यह मन्त्र भी सात बार जपना)

अथ अकारादि प्रथम प्रकरण।

अअअ। जो परे तीन अकार। तो जानि सुखविस्तार। कल्याणमंगल होय। सम्मान वाढ़ै सोय॥ १॥ लक्ष्मी वसे नित धाम। व्यापारमें वहु दाम। परदेशमें धन लाभ। संग्राममें जय लाभ॥ २॥ नृपद्वारमें सम्मान। सकट कटै प्रमान। सव रोग अरु दुर्भागि। तत्काल जावे भागि॥ ३॥ प्रगटै सकल कल्यान। यामें न संशय जान। यह महा उत्तम अङ्क। फल अटल जासु निशंक॥ ४॥

अअर। दो अकारपर परै रकार। मध्यम फल है सुनो विचार। जो कारज चिन्तो मनमाहिं सो तौ शीघ्र होनको नाहिं॥ ५॥ पूरव पाप उदय है जानि। सोई करत काजकी हानि। तातैं इष्टदेव आराधि। कुल देवीको पूजि सुसाधि॥ ६॥ तासु जजान आराधन किये। किंचित होय काज सुनि हिये। मध्यम प्रश्न परयो है येह। मति मानो यामें सन्देह॥ ७॥

अअह। जह दो अकारके अन्त माहिं। हकार परै सो शुभ कहाहिं। धनधान्य समागम लाभ होय। परदेश गयो जो चहै सोय॥८॥ तो मनवाछितकी सिद्धि जान। अरु मित्र वधुसों प्रीति मान। तत्काल शत्रुको होय नाश। तव विघ्न मिटै अनयास तास॥९॥घरमें प्रगटै मगलविभूति। नव पुण्य प्रभाव प्रवल अकूत। यह उत्तम प्रश्न सुनो पुमान। यों कहत केवली गनिविगाग ॥ १० ॥

अमल । जाइ धुर मकार पर हुवै तकार । तहं शुभ फल जानो है उदार । बहु मित्र मिलें भू धसन ताहि । अरु पुत्र पौत्र है सदन माहिं ॥ ११ ॥ रोगीको रोग विनाश होय । क्रूर ग्रहको निग्रह भी होय ॥ जो मित्र बन्धु परदेश होय । घर आवें अति मन मुदित सोय ॥ १२ ॥ कुलवृद्धि तथा सज्जन महान । तिनसों नित प्रीति बढ़े सयान । दिन दिन अति लाभ मिलै पुनीत । यह प्रश्न केवली कहत मीति ॥ १३ ॥

अरम । धुर मकारके मध्य रकार । पांसा परे तासु सुधि धार ॥ उत्तम फलकारी यह होत । नित नव मंगल होत उद्योत ॥ १४ ॥ पूरव जो धन गयो नसाय । सो सब लोहि मिलैगो आय । राजा करहिं बहुत सनमान । धसन भूमि हय देवहि दान ॥ १५ ॥ स्वजन मित्र समागम होहि । सब विधि सकलमहोच्छव तोहि । सकल पापको होय विनाश । धर्मबुद्धि नित करै प्रकाश ॥ १६ ॥

मरर । जो मरर प्रगटै बरन । तो सकल मंगल करन । धन लाभ सुयश देह । बराकिया विमल जस लेह ॥ १७ ॥ जाइ जाय बहु मतिवंत । तहं लहै पूजा संत ॥ हुवै स्वपरबन्धु मिलाप । उत्तम विपें थी आप ॥ १८ ॥ उम्र बोर पावक मरी । ये सकहिं नहिं किछु करी । सब शत्रु कीजै हान । प्रगटै सकल कल्यान ॥ १९ ॥ श्रीय धरमके परभाय । यह जान हुवै सुभाय । उत्तम कहत फल बहु । उत्तम गहो निःशल्य ॥ २० ॥

मरई । मरई परै जो बरन । सौभाग्यसम्पतिकरन । तो जो मनोरथ होय । मनयास पूरै सोय ॥ २१ ॥ कछु क्लेश हुवै घर माहिं । तसु रंच हो भय नाहिं । निज इष्ट पूजाउं जाय । सब

विघन जाय नसाय ॥२२॥ मन सोच तजि थिर होहि । आनन्द मगल तोहि । सब सिद्ध ह्वै है काज । अरहं कहत महराज ॥२३॥

अरत । जब अरत पाँसा ढरैं । तब सकल सुख विस्तरै । तोहि तिया प्रापति होय । सुत होय पौत्रपि होय ॥ २४ ॥ कुल-गोत सब सोभन्त । तब भाल तिलक लसंत । जह जाहुगे तुम मीति । तह लहहु पूजा नीत ॥ २५ ॥ जनमध्य हो तुम केम । तारा विषै शशि जेम । यह रुचिर प्रश्न सुजान । मनमें धरो प्रभु ध्यान ॥ २६ ॥

अहअ । जो अहंअ छवि देय । तो सुनहु पूछक भेय । पहिले कछुक दुख होय । फिर नाश ह्वैहै सोय ॥ ५७ ॥ धन लाभ दिन दिन वढै । अरु सुजन संगम चढ़ै । जो काल चिन्तहु वद्ध । सो सकल ह्वैहै सिद्ध ॥ २८ ॥

अहंर । जब अहर सु दरसाय । तब अरथलाभ कराय । जसलाभ पृथ्वी लाभ । यह देख पडत सुसाफ (?) ॥ २९ ॥ राजादि वन्धूवर्ग । सब करहि आदर सर्ग । भ्रातादि इष्टमिलाप । धनधान्य आगम व्याप ॥ ३० ॥ व्यवहार अरु परदेश । सब ओर उत्तम तेस । सब सोच संशय हरहु । शुभ तुमहि धीरज धरहु ॥ ३१ ॥

अहह । जो अहंह-है अंक सो कहत हैं फल रंक । दीखे न कारज सिद्ध यह काज तोर सुवृद्ध ॥ ३२ ॥ धन नाश ह्वै है तोहि । तन क्लेश पीडा होहि । व्यापारमें धनहान । परदेश सिद्धि न जान ॥ ३३ ॥ तिहि हेत कर भविजीव । जिन जजन भजन सदीव । जप दान होम समाज । तब होइ कछु इक काज ॥ ३४ ॥

अहत । अक्षर अहत परै । तब सकल शुभ विस्तरै । कल्या-

होय उदार । यामें न संशय करहु । शुभ जानि धीरज धरहु ॥ ४८॥

अथ रकारादि द्वितीय प्रकरण ।

रअअ । आदि रकार अकार दुइ, जब ये प्रगटे वर्न । तब धन सम्पति लाभ बहु सुजनसमागम कर्न ॥ ४६ ॥ सोना रूपा ताम्र बहु, वसनाभरन सुरत्न । प्राप्त होय निश्चय सकल, चिन्तित वित जुतजत्न ॥५०॥ अन्तरैन दीखै सुपन, माला सुमन सुजान । हयगजरथ आरूढ़ अरु, देवागमन विमान ॥५१॥

रअर । आदि रकार अकार पुनि, तापर परै रकार । सुनि पूछक त तासु फल, है अभिमत दातार ॥ ५२ ॥ देश प्रजा को लाभ है, खेती वर व्यापार । धन पावे परदेशमें, घरमें सब सुख-सार ॥५३॥ संसार संकट ।घोरमें, कुलदेवी सुखदाय । करै सहाय प्रसाद तसु, सब विधि सिद्धि लहाय ॥ ५४ ॥

रअह । आदि रकार अकार पर, ह प्रगटे जब आय । भयकारी धनहानि यह, क्लेश अशेष कराय ॥ ५५ ॥ यह कारज कर्तव्य नहिं, लाभ नाहिं या माहि । बाधरमित्र वियोगता अस यह सगुन कहाहि ॥ ५६ ॥ जाह कहुं जाहु विदेश तहं, सिद्ध न होवैं काज । तातैं थिर है कछुक दिन, सुमिरहु श्रीजिनराज ॥५७॥

रअत । रअत परै पासा कहै, मग धन लूटहिं चोर । द्रव्यहानि होवहि बहुत, अशुभ फलहिं चहुं ओर ॥ २८ ॥ नाव बुझै पावक लगै, रोगरु कष्ट कुजोग । कियो काज विनशै सकल अशुभ करमके भोग ॥५६॥ ताते शोक न कीजिये भावीगति बल-वान । थिर न निशदिन सुमिरिये, कृपासिन्धु भगवान ॥६०॥

ररअ । ररअ अङ्क आवे जहा तब ऐसो फल जान । तब

चित चंचल चपल मति, सुनि प्रेच्छक मतिमान ॥६१॥ है कारज अर्थागमन मुखमाग तसु होय। रामदृष्ण चौरासि भय तनदुख तोहि बहोय ॥ ६२ ॥ समय तिया चौपयनिसों है है तोहि वियोग भवरौं तिसरे बरसमह करहिं सकल सुखभोग ॥ ६३ ॥

ररर। तिहुं रकारको फल सुनो मन वांछित फलदाय। धरा धान्य धनलाभ तोहि, मिलहिं वस्तु सब आय ॥ ६४ ॥ तिया समय सुत बन्धु धन, इष्टबन्धु संयोग। इत उत्तम कल्याण तोहि, मिले सकल संयोग ॥ ६५ ॥ महालाभ उधमनिर्षे स्वजन तथा परदेश। सुफल काज तुम होय नित यामें भ्रम नहि लेश ॥६६॥

ररई। दुइ रकारपर ई परै, तब मनवांछित होय। क्षेम भीक सुख संपदा सहज मिलावै सोय ॥६७॥ मंगल दुन्दुभि होंहिं पुनि अरथलाभ बहु तोहि। मिलि है बसुधा देश पुर, यह अति भासत मोहि ॥६८॥ जौन काज तुम चित धरत सुरित होय है तौन। भूपति अति आनन्द करै, तिन प्रति अतुल भौन ॥ ६९ ॥

ररउ। ररउ वरन यह कहत है, सुम पूछक चित लाय। परतियकी अभिलाषपरें, किये अनर्थ उपाय ॥ ७० ॥ अरथनाश ताव भयो भव विभव परमाहिं। रामदृष्ण तेसे कहै, यामें संशय नाहिं ॥७१॥ तातें परतिय परिहरहु सुभमारग पग देहु। प्रभयरजगुन प्रभु भजो, मरमचपो फल लेहु ॥ ७२ ॥

ररम। ररमकार आवे जहां लहै उत्तम फललाभ। वनिता पुत्र धनागमन बन्धुसमागम मान ॥ ७३ ॥ अरथ लाभ जसलाभ पुनि परमलाभ है तोहि। रन विदेश व्यापारमें विजय सुरनति होहि ॥ ७४ ॥

रहंर । रहंर आवे जबहिं, तब विषम काज जिय जान । उद्यम सुफल न होय कछु, घर बाहर हैरान ॥ ७५ ॥ शत्रु बहुत सुख कतहु नहिं, तातैं तजि यह काज । जग सुख निष्फले जानि जिय, भजो सदा जिनराज ॥ ७६ ॥

रहहं । हंजुग आदिरकार कह, सुनिये पूछनहार । अशुभ उदय फल अशुभ है, जानहु निज उर धार ॥ ७७ ॥ मति विश्वास करो हिये, मित्र बन्धु जिय जानि । 'शत्रु होय ये परिनवहिं, करहिं वित्तकी हानि ॥७८॥ धन चिन्ता निंत करत हो, सो सुपनेहू नहिं होई । धरम चिन्ति कुल देव भजि, तातै कछु सुख जोइ ॥ ७९ ॥

रहंत । रहं तासुपर प्रगट त, सुनि फल पूछनहार । याको फल मैं कहा कहों, सब सुखको दातार ॥ ८० ॥ विद्या लाभ कवित्तता, सुफल लाभ व्यवहार । वनिता सुतकौ लाभ है द्रव्यलाभ व्यापार ॥ ८१ ॥ मित्रबन्धु वसनाभरण सहित समागम होइ । बहहु सुखित परिवार सों कुलदेवोकृत जोइ ॥ ८२ ॥

रतअ । रतअ बरन पासा कहत, तुव सम्मुख सौभाग्य । अरथागम कल्याणकर, असन सुखद अनुराग ॥ ८३ ॥ मंत्रजन्त्र औषधिविषैं, सकल सिद्ध ध्रुव होइ । चित चिन्तित पुत्रादि सुख निश्चय पैहैं सोइ ॥ ८४ ॥

रतर । रतर बरन पांसा कहत, सुनि पूछक गहि मौन । उद्यममैं लक्ष्मी बसै, ज्यों पंखेमें पौन ॥ ८५ ॥ तातैं उद्यम करहु तुम, अरथलाभ तह होइ । तनय धरनि धरनी मिलै, नृप सनमाने सोय ॥ ८६ ॥ वसन मिलै, घोडा मिलै, अनायास है काज । शुभ मङ्गल तोहि सर्वदा, सेये श्रीजिनराज ॥ ८७ ॥

रतन। रतन कहत विचारिके, सुनि पूछक है काम। पहिले कए प्रभुत लहै सो सब गये सुधाम ॥ ८८ ॥ धनकी चिन्ता चल- चित, सो सब पूरन होहिं। वनिता सुत वसनाभरन, निश्चय मिलि हैं तोहि ॥ ८९ ॥ भाविपवामि दुख नसहिं सब, चिन्ता करहु न कोय। देवधर्म परसादसौं, काज सफल सब होय ॥ ९० ॥

ततत। ततत धरन सुनिपूछक, सकल सुफल सुख काम। मन वांछित धनसम्पदा पैहो अति अभिराम ॥ ९१ ॥ जो कारज चित धर रह्यो, अनायास सो होय। मनमैं मति संशय करो, धर्मबुद्धि फल होय ॥ ९२ ॥ शिवहित चाहत तप धरन तामैं ह्वैहै सिद्ध। गहो जिनेश्वर कथित तप ज्यों होवै सुखवृद्धि ॥ ९३ ॥

अथह कारादि तृतीय प्रकरण।

हंमम। हंमम वर्न परै जहं भाई। तासु सुनो फल है दुखिताई ॥ सूखक चन्द्रक चित्त विचारो। कोकपियें निरजावधमारो ॥ ९४ ॥ सकुलमैं नहिं जीव दिखावे। उद्यममैं नहिं काम उठावे। जासु जहां कछु कारज हैती। सिद्ध न होय तहां तुम सेती ॥ ९५ ॥ त्याग करो यह कारज यातैं। सेवहु श्रीजिनधर्म सुधा तैं। धर्म बिना सुखको नहिं लेखा। श्रीभगवान कहैं जिन देखा ॥ ९६ ॥ रोग निवार अरोग शरीरं। पुत्र महा बलपौरुष धीरं। चाहत हो पर देश सिधारे। होय मिलाप तहां शुभ सारो ॥ ९७ ॥

हंमर। हंमर भाषत है सुख सारा। होय मनोरथ सिद्ध सुम्दारा। अर्थ तिया सुत मङ्गलताई। आनन्द संयुत बांधव भाई ॥ ९८ ॥ उद्यममैं मन प्रापति जानो देशविदेश जहां मनमानो। रोगीको रुग जाय नसाई। बांधवमित्र मिलै सब भाई ॥ ९९ ॥

देव अराधहु भाव लगाई। सो मनवांछित सिद्ध कराई। ज्यों विन मल पादपै जानो, त्यों विनधर्म न आनन्द पानो ॥ १०० ॥

हंअहं। ह अरुहंमधि जत्र अकारं। तो सुनि पूछनहार विचारं। कोमल चित्त तुमार दिखाई। शत्रु सुमित्र गिनो समातई ॥१०१॥ तासहितैं धन आप गवायो। कालसुभाव नहीं उख पायो है कलिकालकराल पियारे। तैं अति साधु सुभाग सुधारे ॥१०२॥ जो कछु पूर्व भयो धन हान। सो सब तोहि मिले सुखदान। है तुमको नित प्रापनि आगे। निश्चय जान अर्थ अनुरागे ॥१०३॥

हंअत। हअत आय जनावत तातैं। मंगल मंजु समाजसुधातैं। पुत्र सुमित्र समागम होई। देशाराधन लाभ वहोई ॥१०४॥ धनकी चिन्ता करत हौ, शीघ्र ही पैहों सोय द्रव्य पुत्र वनिता वसन, सकल प्रापती होय ॥१०५॥ क्लेशव्याधि अब मिट गई देव धरम परसाद। सुफल काज नित जानि जिय, भजहु जिनेनरपाद ॥ १०६ ॥

हरअ। हरअ आय दिखावत ऐसो। चिन्तित काज सरै तुव तेसो। धान्यधनादिक लाभ दिखाई कीरत देश दिशन्तर जाई ॥ १०७ ॥ भूप करै सन्मान तुम्हारा। देश धरा धन देह उदारा ॥ प्रीति करै तुमसों सब कोई। या महं सशय रच न होई ॥ १०८ ॥

हरर। हंरर अक्षर भापत सांचा। तो मनमें उद्वेग उमाचा। वित्त कछू अब छीजई भाई। पीछे होय सुखी अधिकाई ॥ १०९ ॥ सपत सतत मित्र पियारे। होहि सदा तोहि मंगलकारे ॥ अर्थ वढ़ै घरमें सुखदाई। कीरति देशदिशन्तर जाई ॥ ११० ॥ श्रीजिन धर्मप्रभाव विचारो। है यह कारज सिद्ध तुम्हारो ॥ यामें संशय रञ्च न मानो। सेवहु श्रीजिनराज सयानो ॥ १११ ॥

ह घ । मध्यरकार जहाँ छवि देई । ह मुग भाविव भस्त परेई । बत्तम काम बसे फल ताको । पुत्र विवाह मविष्य ज्ञातिको ॥ ११२ ॥ नारि मिले घर संपत मावे । वैर मिटै हित प्रीति जगावे सज्जन वादविवादन मारी । होय विजय तुम मानस्वकारी ॥ ११३ ॥ दीपत है शुभमाग तिहारो । यामें संशय रञ्च न धारो ॥ श्रीजिन-चमपदपमबुज ध्यायो । ताकरि पूरण पुण्य कमावो ॥ ११४ ॥

ह र त । ह रत वर्न बखानत ऐसे । कारज सिद्ध बसे स/ जैसे । छयमर्मी लछमो विरकार्म । शुकरभृत विधे शुभ सार्म ॥११५॥ काम बसें सब ठौर तुम्हारे । हानि हमें महि दीखत प्यारे । किंचित सोच बसे मनमाहीं । तातु हमें कछु संशय नाहीं ॥ ११६ ॥ शोम मिटै बह शोच तुम्हारा । है घर मङ्गल मंगुल सारा । श्रोजिनधर्म करायहु जाई सजम दान करो सुखदाई ॥ ११७ ॥

ह ह म । ह मुग भस्त भकार बखारौ । कारज सिद्ध समस्त तुम्हारो ॥ धामविषैं धन है अधिकाई । पुत्र सुपौत्र बढ़े सुखदाई ॥ ११८ ॥ बांधवमित्रसमागम सूची । जो परदेश विषैं भविपूची (?) संपत पक्षभंडार पियारे है मविलास तुमें अधिकारे ॥ ११९ ॥ इष पदांबुज सेवहु जाई । सब मनोरथ सिद्ध कराई ॥ मंगल प्रस्न हिये एविसीजे । श्रीजिनवैन सुधारस पीजे ॥ १२० ॥

ह ह र । ह मुग मस्त रकार पुकारै । मंगल मोद समस्त तुम्हारे ॥ पुत्र विवाह आवश्यक होऊ । अब विवाद बने कछु सोऊ ॥१२१॥ तासु प्रसाद सु सम्पति सूरो । दूर्वे धन धान्य परस्पर पूरी मंगलधाम पढ़ें अधिकाई । तासु जहाँ तह धाम सहाई ॥ १२२ ॥ दैय जबौ जपि दान करीजे सजम होम सबै विधि कीजे ॥ पुण्य

किये सुख सम्पति नाना । वालगुपाल सबै यह जाना ॥ १२३ ॥

हंहंहं । हंतिहु याय परे जब पासा । है तहं मङ्गलमन्दिर साखा ॥ सबं मनोरथ सिद्धि प्रकासे । अर्थ सुलाभ प्रजा जुत भासे ॥ १२४ ॥ भूमि मिले रनमें जय पावै । उद्यममें बहुलच्छि कमावैं ॥ बाधव मित्रनसों अति नेहं रोपत है वरधर्म सु गेहं ॥१२५॥ आनन्द सर्व भविष्यति तोही । यों प्रतिभासत है सुनि मोही ॥ कारज सिद्धि समस्त तुम्हारा । सेवहु धर्म लहो भव पारा॥१२६॥

हंहंत । ह जुग अन्त तकार दिखाई । उत्तम लाभ सबै तसु भाई ॥ चाहत हो परदेश पधारे । है तहं सिद्धि मनोरथ प्यारे ॥ १२७ ॥ खेती बानिजमें सब ठांई । सर्व फलै मनवाछित भाई । श्रीधनधान्य सुकचन आदी । जे सुख सम्पति अर्थ अनादी ॥१२८॥ ते सब तोहि मिलै मनमानें । देव गुरूपदभक्ति त्रिधानें ॥ यों सुनि चित्तविषैं थिर होई श्रीजिनराज भजो भ्रम खोई ॥ १२९ ॥

हंतअ । हंतअ वरन परे जब पासा । तो सुनि अर्थ प्रतच्छ प्रकासा ॥ ते चितमें परस्पति चाहै । लोभ बढ्यो तोहि देखनका है ॥१३ ॥ तोष कियें धन प्रापनि होई । वेद पुरान पुकारत योई ॥ लोभ निवारि करों सब चिन्तां । भावि जु होय सो होवहु मित्ता ॥ ॥ १३१ ॥ जाय बितीतें जब कछु लाला । अर्थ सुलाभ तबै तुव भाला ॥ यामैं सशय रञ्च न आनो । भाषत श्रीअरहन्त प्रमानो ।

हंतर । हंतर यों दरशावत भाई । तो मनमें परिचित्त बसाई चिन्तत है सोई प्रापनि होई । ताकरि सम्पति आनि मिलोई ॥१३२ अर्थ समागम कीर्ति अनिद्या । प्रापति ह्वै तोहि सुन्दर विद्या ॥ जो कछु पूरब द्रव्य गंवायौ । सो सब आनि मिलै मन भायो

॥ १३४ ॥ जो शुभ कारज चेतहु प्यारे । सो सब होई सिद्धि तुमारे ॥ यों जिय जानि तजो दुचिताई । सेवहु श्रीपरमातम भाई ॥ १३५ ॥

ह तद । ह सुगके मति होई तका । तासु सुनो फल पूछन हारं ॥ तो मनमें विपरीत बसी है जोगि सूपको ताप बसी है ॥ ॥ १३६ ॥ या करिके दुख पाप सहै हो । लोकविषे अपकीर्ति लहै हो ॥ मास भयो असरास तुम्हारो । यों प्रभु सीख सुनो उर धारो ॥१३७॥ अन्य कछू करतव्य विचारो । तामह वांछित सिद्ध तुमारो ॥ सर्वथकू धन धर्म बढाई । यों बरसापत श्रोगुरुभाई ॥१३८॥

ह तत । ह तत मापत उत्तम सोही । जो मन वांछित होवहि सोही ॥ मंगल धाम मिले धन धान्य । आगु विदेश तहां बहु मान्य ॥१३९॥ मान्य सुआगत मेघ उताई । सेय सुधर्म मोहम भाई और जिती मनमें वर सिया । तोहि मिले भ्रम त्याग जिया ॥१४०॥

अथ तकारादि चतुथ प्रकरण ।

ततम । जह ततम तरत पासा ढरत । तह सुनि पूछक जो फल कहत ॥ जो करहु देव पूजा पुनीत । तो येहो अमित फल विनीत ॥ १४१ ॥ सुत पौत्र सुबन्धु धन धान्य लाहु । पद मिले तोहि वांछित उछाहु ॥ व्यापारमाहि बहु मिले दर्व । अब तूल विजय ले सहै सर्व ॥ १४२ ॥ यामें मति चिन्ता मानु मित्त । निज इष्ट देव पद भजहु मित्त ॥ बिन पुण्य नहीं सुख जगत माहि । जिमि बीज बिना नहि तरु उपाहि ॥ १४३ ॥

तमर । जब तमर प्रगट होवे सुजान । तब मध्यम फल आवो निदान ॥ चित चाहहु वनिता पुत्र आदि । सो मास तजहु सुनि मेदपादि ॥ १४४ ॥ निजभावोपन ये मिलहिं सर्व । परिवार कुनु

म्यादिक सुदव ॥ पहले जो कछु धन भयो हानि। सो न मिलें अब ही सयान ॥ १४५ ॥ कछु काल व्यतीत भये समस्त। ह्वै अर्थ लाभ तुमको प्रशस्त ॥ यह जान हिये निरधारवीर। भजि श्रीपति पद सब टरे पीर ॥ १४६ ॥

तअहं। तत्ता अकार हकार आय। हे पूछक तोसों इमिकहाय। दिनरात तोहि धनहेत चाह। मनमें यह वर्तत है कि नाह ॥ १४७॥ सो पुन्य बिना कहु केम होय। हैं दिन तेरे अति नष्ट होय ॥ कछु दिवस वितीत भये प्रमान। धन लाभ होय तोको निदान ॥ १४८ ॥ तातै जो सुख चाहहु विनीत। तो पुन्यहेत कर जतन मीत ॥ जिनराज पदम्बुजभृङ्ग होय। अनअन्यशरण ह्वै सेव सोय ॥

तअत। यह तअत कहत फल प्रकट आय। सुनि पूछक तैं मन मुदित काय। मन वाछित हो सो होय सिद्ध। परदेशतीर्थ यात्रा प्रसिद्ध ॥ १५० ॥ इक मास व्यतीत भये प्रमान। तोहि अर्थ परापत ह्वै सुजान। अरु तन निरोगजुत पुष्ट होय। आनन्द लहै संशय न कोय ॥ १५१ ॥

तरअ। यह तरअ कहत डङ्का बजाय। धनचिन्ता तेरे मन बसाय तें कीन चहत परदेश गौन। यह जातहि कारज सिद्ध तौन ॥ १५२ ॥ बहु वस्त्र आभरन अर्थ आद। तिय तनय लाभ ह्वै है अबाद ॥ पितु मातु बन्धुसों मिलन होय। यह गुरुसेवा फल जान सोय ॥ १५३ ॥ तातैं नित प्रति चतुर जीव। सुखकारन सेवो प्रभु सदीव। कल्यान खान भगवान एक। तिनको सुमिरो तजि कुमति टेक ॥ १५४ ॥

तरर। यह तरर प्रकाशक प्रगट मित्त। सुनि पूछक तुव चित

सुखित निज। तुम पर दरिद्र अतिहो विकाय। तातें मित चाहत धन उपाय ॥ १५५ ॥ निस वासर चिन्ता यही होहि। किहि भांति होहि धन लाभ मोहि। यह होन वरष अब बीत जाय। तब सब सुन्दरफल तोहि मिलाय ॥ १५६ ॥ जो और काम मत धरहु चीन। हैं लाभ तासुमाई सुखसमौन। तास जो सुखको धरहु चाह। तो करो जिनेसुर सो निवाह ॥ १५७ ॥

तरई। तरई अक्षर मापत मतच्छ। कल्याणसम्पदा स्वच्छ छच्छ। सब सिद्ध सिद्ध पलमाहिं होय। जिन धर्म प्रभाव सुजान सोय ॥ १५८ ॥ मरणागम मरु वर पुत्र होय। पलमाहिं तोहि ओत सके न कोय। बांधवसह प्रीति बढ़ अपार। यामें नहिं कछु विग्रह लगार ॥ १५९ ॥ सब पापताप तेरो विलाय। नित धर्म बढ़ै आनन्ददाय। तातें सुखहित दे चतुरजोग। भगवान चरन सेवो सदाय ॥ १६० ॥

तरल। यह तरल कहत फल सुन विनोद। सुध मन प्रवका रन सुखित मीत। बहु दिवसोंे सोच बहुत शरीर। मन समाधान मन करहु वीर ॥ १६१ ॥ मङ्गलमुहूरत धनलाभ होय। प्रिय बन्धु समागम सहज सोय। परदेश गमन जो करहु तात। धन लाभ होहि सुखदाय गात ॥१६२॥ बाहानुसारमें विजय-लाभ। ह्व सम्पत्तिपै मणि शशि समान। यह मङ्गलोक शुभ सगुनराज। है सांचि नित श्रीजिन महाराज ॥ १६३ ॥

तहम—त वरनपर ईतापर मकार। शव प्रगटै तब सुनिये विचार। सब विघ्नपुञ्ज संकट नशाय। अरु आयु लहावलिन मिलाय ॥ १६४ ॥ धन धान्य वसन गो महिषि घोट। सब मिलहि

तोहि हितहेत जोट। जात्रातीरथ परदेश सार। रनरंग शैल अरु उदधिपार ॥१६५॥ जह जाहु तहा सब सुफल काज। मनमें संदेह न करहु आज। यह पुन्य कलपतरु-फल सुथान। भजि चरणकमल करुनानिधान ॥१६६॥

तहर—त वरनपर है तापर रकार। ताको फलकटुक सुनो विचार। ह्वै दु.ख क्लेश पुनि अर्थहानि। भयरोग व्याधि उपजैं निदान ॥१६७॥ सुत मित्र वियोग अशुभ नियोग। पुनि जैंहौं कहु तहं विपतभोग। तुव सदनमाहि वरतत कलेश। कलिहारी नारी कुटिभेश ॥१६८॥ यह पाप तोहि दुख देत आय। अब तोप गहो मनवचनकाय। अरहन्तदेव सों करहु प्रीति। जिमि मिले सकल सुख सहजरीति ॥१६९॥

तहंह—तत्तापर ह ह ढरै आय। तव सुनि पूछक फल चित्त लाय। रनजूतविवादविपैं कदापि, मतिजाहु केवली कहत आप ॥१७०॥ तहं गये हानि है विजय नाहिं। है क्लेश कठिन निहचैकहाहि। यह दैवीदोष लसै सुजान धर्मार्थवस्तु की कहय हान ॥ १७१ ॥ उद्वेग कलह तुव सदन माहि। सत वध मित्र अरि सम लखाहि। सव पाप उदय यह जानि लेहु। दुख हेत धरमसों करहु नेहु ॥ १७२ ॥

तहंत—तत मध्य परै हकार पास। तव मध्यम प्रश्न करै प्रकाश। जो मनमें वाछा करहु मित्त। नहिं सिद्ध होइ सो कुदिन कित्त ॥ १७३ ॥ मति खेद करो अब उदय जान भावीगत अमिट प्रबल प्रमान। मति मरन चेत जडबुद्धि त्याग। सुख चहसि तु करि प्रभु सों सराग ॥ १७४ ॥

ततअ—जब ततअ वरन प्रगटै अकोप। तव शभफल कहत

निर्वाण होय। तोहि महा सौख्यको ठाम होय। धनधान्य समागम मिले सोय ॥१७५॥ राजा दे वसमासरण घोट। व्यापार महि धन लाभ पोट। दुहिता विवाह पुत्रजनम संग। मंगल सब तो कहु है अभंग ॥ १७६ ॥

ततर—यह ततर वरन पासा भनंत। मानन्द सदा ध्रुव तोहि सन्त। सुत बन्धु धरा धनधान्य लाह। परदेश जाहु तह मति उछाह ॥ १७७ ॥ बहु मित्र बन्धुसों होय प्रीति। मन चाहु अमित सबहुधे विनीत। गो महिष अश्व हाथी धन्याय। धर्में न मोहि संशय दिखाय ॥ १७८ ॥

ततद—ततद मसर तोहि कहत यहु। सो पूरुष तू उत्तम करेहु। तह तोहि लाभ ताको प्रसिद्धि। चितचिन्तत सब विधि होय वृद्धि ॥१७९॥ तीरथ दिग्पाल पूजन विधान। सब हुवे है तेरे मनसमान। रोगीको रोग विनश होय। भोगीको भोग मिले सु जोय ॥ १८० ॥ मनमें मति खेद करो गुमान। तोहि होय सकल कल्याण थान। नित देवधर्म गुरु भव्य सेय। मन वांछित सुख संपदा लेय ॥ १८१ ॥

ततत—तीनों तकार जब उदय होय। तब मफल सकल फल कहत सोय। मन वांछित कारज सिद्धि जानि। कल्याण कारिणी प्रश्न मानि ॥ १८२ ॥ घर पुत्र पौत्र को जनम होय। धन आगम सुजस उपजाइ सोय। पहिले जो भरण भयो निवास। सो नाम मिटे अभयास पास ॥ १८३ ॥ वैरीको वैर मिटे समस्त। तोहि मिलहि मित्र बांधव प्रशस्त। नित धर्मवृद्धि हुवे है सवाय। सर्वथा जान संशय न थान ॥ १८४ ॥

कविनामकुलनामादि ।

दोहा—लाल विनोदीने रची, संस्कृतवानीमाह । वृन्दावनभाषा लिखो, कछु इक ताको छाह ॥ १८५ ॥ भूल चूक उर छिमा करि, लीजो पण्डित शोध बालबुद्धि मोहि जानिके मति कीजो उर क्रोध ॥ १८६ ॥ श्रीमतवीर जिनेशपद, वन्दों वारम्वार । विघ्नहरन मंगल करन, अशरन शरन उदार ॥१८७॥ **धरम चन्द** के नन्दको **वृन्दावन** है नाम । अग्रवाल गोतो जगत, गोईल है सरनाम ॥ ॥ १८८ ॥ काशीवासी तासुने, भाषा भाषी एह । जिनमत के अनुसार करि, श्रीजिनवरपद नेह ॥१८९॥ सम्वतसर विक्रम विगत,चन्द रन्धु दिग चन्द । माघकृष्ण आठ गुरू, पूरन जयति जिनन्द ॥१९०॥

८५—श्री जिनवाणी की स्तुति ।

अकेला ही हू मैं करम सब आये सिमिटके, लिया है मैं तेरा शरण अब माता सटकके । भ्रमावत है मोकूं करम दुखदाता जन्मका, करूं भक्ति तेरी हरो दुखमाता भ्रमणका ॥ १ ॥ दुखी हुआ भारी भ्रमत फिरता हूं जगतमें, सहा जाता नाहीं अकल घबराई भ्रमणमें । करूं क्या मा मोरी चलत वस नाहीं मिटनका करूँ भक्ती तेरी हरो दुख माता भ्रमण का ॥ २ ॥ सुनो माता मोरी अरज करता हूं दरदमें, दुखी जानो मोकूं डरप कर आयो शरणमें । कृपा ऐसी कीजे दरद मिटजावे मरणका,करूं भक्ति तेरी हरो दुख माता भ्रमणका ॥ ३ ॥ पिलावे जो मोकूं सुविधि कर प्याला अमृतका, मिटावे जो मेरा सरव दुख सारा फिरणका । पदूं पावा तेरे, सरव दुख भागा फिकरका, करूं भक्ती तेरी हरो दुख माता भ्रमणका ॥ ४ ॥ दोहा—जिनवाणी यह स्तुती अल्प

बुधि परमान। पन्नालाल विनती करें, देऊ मात मुझ ज्ञान ॥ १ ॥ मा वाणीके भानते सूझे लोकालोक। सो वाणी मस्तक चढ़ो, सदा देतहू धोक ॥ २ ॥

८६—मोहरस स्वरूप।

भयवन भटकत पथिक जन हाथी काल कराल। पीछे लाग्यो सो दुखित पड़ो कूप विकराल ॥ पकड़ शाख वट वृक्षकी, लटके मुह फैलाय ॥ ऊपर मधु छत्ता लगा, पड़ा बूंद मुह माय ॥ सित सित दो मूषे लगे काटन आयू डाल ॥ नीचे अजगार काल मुख है निगोद भयकाल ॥ चार सर्प चारो गती बसतें, मोर निहार ॥ है कुटुम्ब माखी अधिक काटत तन हरबार ॥ मोगुरु विद्याधर मिले देवी भगवति जीव ॥ दो उपाय टेरत कसे भवदुख दुख भतीव ॥ बून्दमधू है विषय सुख ताकि लालच काज। मानत नहि उपदेशको कर पड़ो भारम अकाज ॥ आयु डाल कुछकालमें कट जावेगा हाय। नीचे पा बहुकाल लों भुगते फल दुखदाय ॥

८७—लेश्या स्वरूप।

माया क्रोधरु लोभ मद, है कषाय दुखदाय, तिनसे रंजित भाव जो, लेश्या नाम कहाय ॥ षट् लेश्या जिनवर कही, कृष्णनील कापोत। तेज पद्म अरु शुक्ल परिणामहिते होत। कठिपारे षट् माय भर लेन काष्ट फो भार। पनचाले मूले दुष्ट जामन वृक्षनिहार कृष्ण वृक्ष कारन कहे, नील सुकाटन डाल लघुडाली कापोत कह, पीत सर्व फल डाल। पद्म कहे फल पक्वको तोड़ूँ चाखूं सार। शुक्ल कहे धरती गिरे, लूं फल निरधार ॥ जैसो जिसकी लेश्या, तैसा बांधे कर्म श्री सद्गुरु सगति मिले, भवका आवे मर्म ॥

नर्क दुःख चित्रादर्श नं० १

नर्क दुःख चित्रादर्श नं० २

८८—कुदेवादिकी भक्तिका फल

अन्तर वाहर ग्रन्थ नहिं, ज्ञान ध्यान तप लीन। सुगुरू विना कुगुरूनमें, पड़े नर्क हो दीन ॥ दोष रहित सर्वज्ञ प्रभु, हित उपदेशी नाथ। श्री अरहन्त सुदेव हैं, तिनको नमिये माथ ॥ राग दोष मल-कर दुखी, हैं कुदेव जग रूप। तिनकी वन्दन जो करे पड़े नर्क भव कूप ॥ आत्म ज्ञान वैराग्य सुख, दया क्षमा सत शील। मावें नित्य उज्ज्वल करैं, है सुशास्त्र भव कील ॥ रागद्वेष इन्द्री विषय, प्रेरक सर्व कुशास्त्र, तिनको जो वन्दन करें लहे नर्क विटगात्र ॥

८९—भोजनकी प्रार्थनायें

(प्रातः कालके समय)

परमेष्ठी सुमरण कर हम सब बालकगण नित उठा करें। स्वस्थ होय फिर देव धर्म गुरुकी स्तुति हम सब किया करैं ॥ करना हमें आज क्या क्या है, यह विचार निज काज करें। कायिक शुद्धि क्रिया करके फिर, जिन दर्शन स्वाध्याय करें ॥ मौन धारकर तोषित मनसे, क्षुधा वेदना उपशम हित। विघ्न कर्मके क्षयोपशमसे, भोजन प्राप्त करे परिमित ॥ हे जिन हो हितकर यह भोजन, तन मन हमरे स्वस्थ्य रहें आलस तज कर दीप उमं-गसे, निज पर हितमें मगन रहें ॥

(सन्ध्या समय)

जय श्री महावीर प्रभुकी कह, अरु निज कर्त्तव्य पूरण कर। सन्ध्या प्रथम मौन धारण कर, भोजन करैं शात मनकर। परमित भोजन करें ताकि नहिं आलस अरु दुःस्वप्न दिखें। दीप समय पर प्रभु सुमरण कर सोवें जगें स्वकार्य लखें ॥

नक मु ख चित्रादश नं० २

उठाये हुये हैं ॥ टेर ॥ निरखते जो मूरत परम वीतरागी। वो वेराग्यता दिलमें लाये हुये हैं ॥ १ ॥ समझते हैं संसारको झूंठा सपना। जो जिनदेवसे लौ लगाये हुये हैं ॥ २ ॥ न यां पर खतर है न आगेका डर है। जो निज रूपमें रूप लगाये हुये हैं ॥ ३ ॥ जिनेश्वरकी भक्ती हो जिस दिलमें हरदम। वह मुक्तिकी डिगरी लिखाये हुये हैं ॥ ४ ॥ मनुष्य जन्म "बालक" सफल है उन्होंका। जिनागमकी श्रद्धा जो लाये हुये है ॥ ५ ॥

६२—जीव प्रति उपदेश।

(चाल—लीजो लीजो खबरिया)

जिया भक्ती तु कर ले जिनवरकी तेरी करनी सफल हो भव भवकी ॥ टेर ॥ करनेसे घोर पाप आय नरकमें पडे। शीत उष्ण भूख प्यास रोगसे सड़े। जिया भक्ती० ॥ १ ॥ प्रपञ्चके रचे तिर्यञ्च योनिको धरे। नाक कानको छिदा बन्धनमें पड़ मरे ॥ जिया भक्ती० ॥ २ ॥ शुभ कर्म्मके प्रसाद, स्वर्ग माहि सुर हुवा। परके विभवको देख आप झूरता मुवा ॥ जिया भक्ती० ॥ ३ ॥ अति पुण्यके प्रभावसे, नरभव रतन लहा। विसयोंके माहि मत गवाँ तू मान ले कहा ॥ जिया भक्ती० ॥ ४ ॥ निज रूपको विचारके नरभव-सफल करो। "बालक" प्रभूकी सीख धार मुक्तिको वरो ॥ ५ ॥ जिया भक्ती तु करले जिनवरकी तेरी करनी सफल हो भव भवकी ॥

९०—शिक्षित माताका पुत्रीको उपदेश

आज हुई मेरी बेटी पराई सास ससुर घर जाना होगा देखना सास ससुर परिजनकी सेवा पति पूजा चित लाना होगा। आज हुई ॥ १ ॥ धर्म करमका साधन निश दिन न्यारो धर्म निभाना होगा। आज हुई ॥ २ ॥ पहिले उठना पीछे सोना दिन भर हाथ हिलाना होगा। आज हुई० ॥ ३ ॥ भोजनकी विधि सोच समझ कर, पानी छान बरतना होगा। आज हुई० ॥ ४ ॥ क्रोध मान मद माया ममता, क्रोधकी आग बुझाना होगा। आज हुई० ॥ ५ ॥ कुल मर्यादा नहीं बिसरना लाज शरम, मन लाना होगा। आज हुई ॥६॥ धन दौलतका गर्व गमाकर, मान धन हास विसरना होगा। आज हुई० ॥ ७ ॥ वस्त्राभूषण गहना गांठा रखना हद नहि करना होगा। आज हुई० ॥ ८ ॥ आलससे कम कर्म उठाकर दुःख निवारण करना होगा। आज हुई० ॥ ९ ॥ शील रतनको मनमें धर कर पञ्चाणुव्रत धरना होगा। आज हुई० ॥ १० ॥ क्रोधित होय पती जो कदाचित्, नाथ विनीत बताना होगा। आज हुई० ॥ ११ ॥ विद्या पढ़कर निज हित करना, देव धर्म गुरु लखना होगा। आज हुई० ॥ १२ ॥ धर्म नारिका सम्यग्दर्शन, जो ताही धर शिव पाना होगा। आज हुई० ॥ १३ ॥ बालककी शिक्षा मन धर कर, घर-घर मंगल गाना होगा। आज हुई मेरी बेटी पराई सास ससुर घर जाना होगा ॥ १४ ॥

९१—किसका जन्म सफल है !

(चाल गजल) न छेड़ो हमें हम सताये ।

जो जिनराजसे प्रीति लगाये हुये हैं। यो फल जिन्दगीका

णा सरधान है। जिनको तुम्हरो शरणागत है तिनसे यमराज डराना है। यह सुयश तुम्हारे साचेका यश गावत वेद पुराना है ॥ ५ ॥ जिसने तुमसे दिढ दर्द कहा तिसका दुख तुमने हाना है। अघ छोटा मोटा नाशा तुरत सुख दिया तिन्हें मनमान है ॥ पावक से शीतल नीर किया अरु चीर किया अस्माना है। भोजन था जिसके पास नहीं सो कियाकुवेर समाना है ॥६॥ चिन्तामणि पारस कल्पतरू सुखदायक यह परधाना हैं ॥ तुम दरशनके सब दास यही हमरे मनमें ठहराना है। तुम भक्तनको सुर इन्द्रपती फिर चक्रवर्ति पद पाना है। क्या बात कहों विस्तार बढे वे पावँ मुक्ति ठिकाना है ॥ ७ ॥ गति चार चौरासी लाख विषें चिन्मूरति मेरा भटका है। हो दीनबन्धु करुणानिधान अबलो न मिटा वह खटका है ॥ जब योग मिलो शिव साधनको तब विघन कर्मने हटका है। अब विघ्न हमारा दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है ॥८॥ गज ग्राह ग्रसित उद्धार लिया अरु अजन तस्कर तारा है। ज्यों सागर गोपद रूप किया मैनाका सकट टारा है ॥ ज्यों शूलीसे सिंहासन और बेडींको काटि बिडारा है। त्यों मेरा सकट- दूर करो प्रभु मोकों आश तुम्हारा है ॥ ९ ॥ ज्यों फाटक टेकत पाव खुला अरु सर्प सुमन कर डाला है ज्यों खड्ग कुसुमका माल किया बालकका जहर उतारा है ॥ ज्यों सेठ विपति चक चूर पूर अरु लक्ष्मी सुख विस्तार है। त्यों मेरा सकट दूर करो प्रभु मोको आश तुम्हारा है ॥ १० ॥ यद्यपि तुम्हरे रागादि नहीं और सत्य सर्वथा जाना है। चिन्मूरति आप अनन्त गुणी नित शुद्धि दिशा शिव थाना है ॥ तद्भक्तनको भय भीत हरो सुखदेन

सातवां अध्याय ।

दुःख—हरण विनती ।

श्री पति जिनवर करुणायतनं दुख हरण तुम्हारा बाना है। मत मेरी बार अबार करो मोहि देहु विमल कल्याणा है ॥ टेक ॥ त्रैकालिक वस्तु प्रत्यक्ष लखो तुम सों कछु बात न छाना है। मेरे आरत जो वरतै निश्चय सो तुम सब जाना है ॥ अवलोकि व्यथा मत मौन गहो नहीं मेरा कहीं ठिकाना है। हो राजिवलोचन सोच विमोचन मैं तुमसो हित ठाना है ॥ १ ॥ सब ग्रन्थनमें निर्ग्रन्थनिने निर्धार यही गणधार कही। जिननायकही सब लायक हो सुखदायक छायक ज्ञान मई ॥ यह बात हमारे कान पड़ी अब आन तुम्हारी शरण गही। क्यों मेरी बार अबार करो जिननाथ कहो यह बात सही ॥ २ ॥ काहूको भोगमनोग करो काहूको स्वर्ग विमाना है। काहूको नाग नरेशपती काहूको ऋद्ध निधान है ॥ अब मोपर क्यों न कृपा करते यह क्या अन्धेर जमाना है ॥ इंसाफ करो मत देर करो सुखवृन्द भजो भगवाना है। ३। खल कर्म मुझे हैरान किया तब तुमसों आनि पुकारा है। समरत्थ सभी विधि सों तुम हो तुम ही सब दोर हमारा है ॥ जब पायस पालक बालक क्या नृप नीति यही जग सारा है। तुम नीति निपुण त्रैलोकपती तुम्हरी शरणागत प्यारा है ॥ ४ ॥ जबसे तुमसे पहिचान भई तब से तुमही को जाना है। तुम्हरे ही शासनका स्वामी हमको शरणा है।

णा सरधान है। जिनको तुम्हरो शरणागत है तिनसे यमराज डराना है। यह सुयश तुम्हारे सांचेका यश गावत वेद पुराना है ॥ ५ ॥ जिसने तुमसे दिह दर्द कहा तिसका दुःख तुमने हाना है। अघ छोटा मोटा नाशा तुरन सुख दिया तिन्हें मनमान है ॥ पावक से शीतल नीर किया अरु चीर किया असमाना है। भोजन था जिसके पास नहीं सो कियाकुवेर समाना है ॥६॥ चिन्तामणि पारस कल्पतरू सुखदायक यह परधाना हैं ॥ तुम दरशनके सव दास यही हमरे मनमें ठहराना है। तुम भक्तनको सुर इन्द्रपती फिर चक्रवर्ति पद पाना है। क्या वात कहों विस्तार बढ़े वे पार्व मुक्ति ठिकाना है ॥ ७ ॥ गति चार चौरासी लाख विषैं चिन्मूरति मेरा भटका है। हो दीनवन्धु करुणानिधान अवलो न मिटा वह खटका है ॥ जब योग मिलो शिव साधनको तब विघन कर्मने हटका है। अब विघ्न हमारा दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है ॥८॥ गज ग्राह ग्रसित उद्धार लिया अरु अजन तस्कर तारा है। ज्यों सागर गोपद रूप किया मैनाका संकट टारा है ॥ ज्यों शूलीसे सिंहासन और वेड़ींको काटि विडारा है। त्यों मेरा संकट-दूर करो प्रभु मोकों आश तुम्हारा है ॥ ९ ॥ ज्यों फाटक टेकत पाव खुला अरु सर्प सुमन कर डाला है ज्यों खड्ग कुसुमका माल किया वालकका जहर उतारा है ॥ ज्यों सेठ विपति चक चूर पूर अरु लक्ष्मी सुख विस्तार है। त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोको आश तुम्हारा है ॥ १० ॥ यद्यपि तुम्हरे रागादि नहीं और सत्य सर्वथा जाना है। चिन्मूरति आप अनन्त गुणी नित शुद्धि दिशा शिव थाना है ॥ तद्भक्तनको भय भीत हरो सुखदेत

तिन्हें तू सुखदाना है। वह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारेकी क्या पावै पार सयाना है ॥ ११ ॥ दुख खण्डन श्रीसुख मण्डनको तुम्हारा प्रण परम प्रमाना है। वरदान दिया यश कीरतिको तिहुँलोक ध्वजा फहराना है ॥ कमला धरती कमलापतकी करिये कमला अमलाना है। अब मेरी व्यथा अवलोकि रमापति रंच न बार लगाना है ॥ १२ ॥ हो दीनानाथ अनाथ। हितू जिन दीनानाथ पुकारी है। उदयागत कर्म विपाक हलाहल मोह व्यथा विस्तारी है। ज्यों और आप भव जीवनकी तत्काल व्यथा निरवारी है। वृन्दावन यह अर्ज करै प्रभु आज हमारी बारी है ॥१३॥

दोहा—प्रभु तुम दीनानाथ हो मैं अनादि दुखकंद।
सुनि सेवककी विनती हरो जगत दुख फन्द ॥

६४—जिनेन्द्र स्तुति।

मंगल सरूपी देव उत्तम तुम शरण्य जिनेशजी। तुम अधम तारण अधम मम लखि मेट जन्म कलेश जी। टेक। तुम मोह जीत अजीत इच्छातीत शर्मामृत भरे। रजनाश तुम वरभास दृग मल शेष साथ अकृत करे ॥ दृगरास ज्ञान मति अमित वीर्य सुभाव अटल सरूप हो। सब रहित दूषण त्रिजग भूषण अजब अमल चिद्रूप हो ॥१॥ इच्छा बिना भव भाग्यतें तुम ध्वनि सुहोय निरक्षरी। षट द्रव्य गुण पर्याय अखिल सुयुक्त एक समयमें उचरी ॥ एकान्तवादी कुमति पक्ष विलिप्त हम ध्वनि मद हरी। संशय तिमिर हर रविकला भव शस्यको अमृत झरी ॥ २ ॥ वसनाभरण बिन शांति मुद्रा सकल सुरनर मन हरै। नासाग्र दृष्टि विकार वर्जित निरखि छवि संकट टरै ॥ तुम चरण पंकज नख प्रभा नभ कोटि

सूर्य प्रभा धरे। देवेन्द्र नाग नरेन्द्र नमत सुमुकुठमणि द्युति विस्तरे ॥ ३ ॥ अन्तर वहिर इत्यादि लक्ष्मी तुम असाधारण लिये। तुम जाप पाप कलापनासे ध्यावते शिव थल वसे॥ मैं सेय कुदृग कुबो अनन्त चिरभ्रमो भववन सवे॥ दुख सहे सवे प्रकार गिर सम सुख न सर्षम सम कवे॥ ४ ॥ पर चाह दाह दही सदा कवहूं न साम्य सुधा चखो। अनुभव अपूरव स्वादु विन नित त्रिपय रस चारों भखो। अव वसौ मो उपमें सदा प्रभु तुम चरण सेवक रहों। वर शक्ति अति दृढ़ होहु मेरे अन्य विभव नहीं चहों ॥ ५ ॥ एके-न्द्रियादिक अन्तग्रीवक तक तथा अन्तर घनी। पाये पर्याय अनन्त वार अपूर्व सो नहिं शिव धनी॥ ससृत भ्रमण तें थकित लखि निज दासकी सुन लीजिये। सम्यक दरश वर ज्ञान चारित पथ विहारी कीजिये ॥ ६ ॥

६५—विनती भूधर कृत।

पुलकत नयन चकोर पक्षी हसत उर इन्द्रीवरो। दुर्बुद्ध चकवी विलख विछुडी निवड मिथ्यातम हरो॥ आनन्द अम्बुज उमग उछरो अखिल आतम निर दले। जिमि वदनपूरण चन्द्र निर खत सकल मन वांछित फले॥ १ ॥ मुझ आज आतम भयो पावन आज विघ्न नशाइयो। संसार सागर तीर निवट्टो अखिल तत्व प्रकाशियो॥ अव भई कमला किंकरी मुझ उभय भव निर्मल ठयो। दुख जरी दुर्गति वास निवरो आज नव मंगल भयो ॥२॥ मनहरण मूरति हेर प्रभुकी कौन उपमा ल्याइये। मम सकल तनके रोम हुलसे हर्ष और न पाइये। कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभु-को लखें जो सुर नर घने। तिस समयकी आनन्द महिमा कहत

तिन्हें सु सुहाना है । यह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारेको क्या पावै पार सयाना है ॥ ११ ॥ दुख खण्डन श्रीसुख मण्डनको तुम्हारा पण परम प्रमाना है। वरदान दिया यश कीरतिको तिहुँलोक ध्वजा फहराना है ॥ कमला धरजी कमलापरजी करिये कमला अमलाना है। अब मेरी व्यथा अवलोको रमापति रंच न बार लगाना है ॥ १२ ॥ हो दीनानाथ अनाथ । हितू जिन दीनानाथ पुकारी है। उदयागत कर्म विपाक हलाहल मोह व्यथा विस्तारी है। तो और आप सब जीवनको तत्काल व्यथा निरवारी है। वृन्दावन यह ये अर्ज करै प्रभु आज हमारी बारी है ॥१३॥

दोहा—प्रभु तुम दीनानाथ हो मैं अनादि दुखकंद ।
सुनि सेवककी विनती, हरो जगत दुख फन्द ॥

६४—जिनेन्द्र स्तुति ।

मंगल सरूपी देव उत्तम तुम शरण्य जिनेशजी। तुम अधम तारण अधम मम लखि मेट जन्म कलेश जो । टेक । तुम मोह जीत अजीत इच्छातीत शर्मामृत भरे। रजनाश तुम वरभास हग मग ज्ञेय सब इक उधरे ॥ घटरास हति अति अमित वीर्य सुभाव अटल सरूप हो। सब रहित दूषण त्रिजग भूषण अज अमल चिद्रूप हो ॥१॥ इच्छा बिना भव भाग्यते तुम ध्वनि सुहोय निरक्षरी । षट द्रव्य गुण पर्याय अखिल युत एक क्षणमें उचरी ॥ एकान्तवादी कुमति पक्ष विलिप्त हम ध्वनि मद हरी। संशय ति मिर हर रविकला भव शस्यको अमृत झरी ॥ २ ॥ वस्त्राभरण बिन शांति मुद्रा सकल सुरनर मन हरै । नाशाग्र दृष्टि विकार वर्जित निरखि छवि संकट टरै ॥ तुम चरण पंकज नख प्रभा नभ कोटि

सूर्य प्रभा धरे। देवेन्द्र नाग नरेन्द्र नमत सुमुकुठमणि द्युति विस्तरे ॥ ३ ॥ अन्तर बहिर इत्यादि लक्ष्मी तुम असाधारण लिये। तुम जाप पाप कलापनासे ध्यावते शिव थल वसे ॥ मैं सेय कुदृग कुबो अनन्त चिरभ्रमो भवबन सबे ॥ दुख सहे सबे प्रकार गिर सम सुख न सर्षप सम कबे ॥ ४ ॥ पर चाह दाह दही सदा कबहूं न साम्य सुधा चखो। अनुभव अपूरब स्वादु विन नित विषय रस चारो भखो। अब वसौ मो उपमें सदा प्रभु तुम चरण सेवक रहों। वर शक्ति अति दृढ होहु मेरे अन्य विभव नहीं चहों ॥ ५ ॥ एकेन्द्रियादिक अन्तग्रीवक तक तथा अन्तर घनी। पाये पर्याय अनन्त वार अपूर्व सो नहिं शिव धनी ॥ संसृत भ्रमण तें थकित लखि निज दासकी सुन लीजिये। सम्यक दरश वर ज्ञान चारित पथ विहारी कीजिये ॥ ६ ॥

९५—विनती भूधर कृत।

पुलकत नयन चकोर पक्षी हसत उर इन्द्रीवरो। दुर्बुद्ध चकवी विलख विछुडी निवड मिथ्यातम हरो ॥ आनन्द अम्बुज उमग उछरो अखिल आतम निर दले। जिमि वदनपूरण चन्द्र निरखत सकल मन वाछित फले ॥ १ ॥ मुझ आज आतम भयो पावन आज विघ्न नशाइयो। संसार सागर तीर निवरो अखिल तत्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरी मुझ उभय भव निर्मल ठयो। दुख जरी दुर्गति वास निवरो आज नव मगल भयो ॥२॥ मनहरण मूरति हेर प्रभुकी कौन उपमा ल्याइये। मम सकल तनके रोम हुलसे हर्ष और न पाइये। कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभुको लखें जो सुर नर घने। तिस समयकी आनन्द महिमा कहत

क्यों मुझसे बने ॥ ३ ॥ मर नयन निरखे नाथ तुमको और बांछा ना रही । मम सब मनोरथ भये पूरन रङ्क मानो निधि लही । अब होहु भवभव भक्ति तुम्हरी कृपा ऐसी कीजिये । कर जोड़ भूधर दास विनवै यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥ इति

६६—विनती भूधरदास कृत ।

अहो जगत गुरु देव सुनिये अर्ज हमरी । तुम प्रभु दीनदयालु मैं दुखिया संसारी ॥ १ ॥ इस भव वनके माहिं काल अनादि गमायो । भ्रमत चतुर्गति माहिं सुख नाहिं दुख बहु पायो ॥२॥ कर्म महा रिपु जोर ये कबकाल करें जी । मन माने दुख देय काहुसे नाहिं डरै जी ॥ ३ ॥ कबहूं इतर निगोद कबहू कि नर्क दिखावें । सुरनर पशुगति माहिं बहु विधि नाच नचावें ॥ ४ ॥ प्रभु इनको परसंग भव भव मांहि बुरो जी । जो दुख देखे देव तुमसे नाहि दुरों जी ॥ ५ ॥ एक जन्मकी बात कहि न सकों सब स्वामी । तुम अनन्त पर्याय जानत अन्तरयामी ॥ ६ ॥ मैं तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट घनेरे । कियो बहुत बेहाल सुनिये साहब मेरे ॥७॥ ज्ञान महा निधि लूट रङ्क निबल करडारे । इनहींसे तुम माहिं हे प्रभु अन्तर पारे ॥ ८ ॥ पाप पुण्य मिल दोय पायन बेड़ी डारी । तन कारागृह माहिं मूंद दियो दुख भारी ॥ ६ ॥ इनको नेक बिगार मैं कुछ नाहि करो जो । विन कारण जगवन्धु बहुविधि वैर धरो जी ॥ १० ॥ अब आयो तुम पास सुनकर सुयश तुम्हारो । नीति निपुण महाराज कीजे न्याय हमारो ॥ ११ ॥ दुष्टन देहु निकार साधुनको रख लीजे ॥ विनवै भूधर दास हे प्रभु ढील न कीजे ॥ १२ ॥

६७—विनती नाथूरामजी कृत

दोहा—चौबीसो जिनपद कमल, वन्दन करो त्रिकाल।

करो भवोदधि पार अब, काटो बहु विधि जाल ॥ १ ॥

ऋषभनाथ ऋषि ईश तुम ऋषि धर्म चलायो। अजित अजित अरि जीत वसु विधि शिवपद पायो ॥ सम्भव सम्भ्रमनाशि बहु भवि बोधित कीने। अभिनन्दन भगवान अभिरुचि कर व्रत दीने ॥ ३ ॥ सुमति सुमति वरदान दीजै तुम गुण गाऊं। पद्म-प्रभु पद पद्म उर धर शीश नवाऊं ॥ ४ ॥ नाथ सुपारस पास रहो शरण गहों जी। चन्द्रप्रभू मुखचन्द्र देखत बोध लहो जी ॥ ५ ॥ पुष्पदन्त महाराज विकसत दन्त तुम्हारे ॥ शीतलशीतल बेन जग दु:खहरण उच्चारे ॥ श्रेयान्सनाथ भगवान श्रेय जगतको कर्त्ता। वासपूज्य पद वास दीजै त्रिभुवन भर्त्ता ॥ ७ ॥ विमल विमल पद पाय विमल किये बहु प्राणी। श्रीअनन्त जिनराज गुण अनन्तके दानी ॥ ८ ॥ धर्मनाथ तुम धर्म तारण तरणजिनेश। शान्तिनाथ अब नाथ शान्ति करो परमेश ॥ कुंथुनाथ जिनराज कुन्थु आदि जिय पाले। अरह प्रभु अरि नाश बहु भवके अब टाले ॥१०॥ मल्लि-नाथ क्षण माहि मोह मल्ल क्षय कीना। मुनिसुव्रत वृतसार मुनि-गणको प्रभुदीना ॥ ११ ॥ नमि प्रभुके पद पद्म नवत नशैं अघ भारी नेमि प्रभू तज राज जाय वरी शिव नारी ॥ १२ ॥ पारसवर्ण सरूप बहु भविक्षणमें कीने। वीर वीर विधि नाश ज्ञानादिक गुण लीन ॥ १३ ॥ चार वीस जिनदेव गुण अनन्तके धरी। करों विविध पद सेव मेटो व्यथा हमारी ॥ १४ ॥ तुम सम जगमें कौन ताकी शरण गहीजै। यासे मांगो नाथ निज पद सेवा दीजे ॥ १५ ॥

दोहा—मापूरण जिन भक्तका, दूर करो भव पास।
जबतक शिव अवसर नहीं करो चरणका वास॥

६८—विनती भूधरदास कृत।

ते गुरु मेरे उर बसो तारण तरण जहाज। ते गुरु मेरे उर बसो आप तर पर तार ही ऐसे हैं ऋषिराज। ते गुरु मेरे उर बसो॥टेक॥ मोह महा रिपु जीतके, छोड़ो है घरबार। भये दिगम्बर वन बसे, आतम शुद्ध विचार॥१॥ रोग उरग तन ध्यावही भोग भुजङ्ग समान। कदली तरु संसार है त्यग छोड़े सब जान॥२॥ रत्नत्रय निध उर धरें, अर निर ग्रन्थ त्रिकाल। मारो काम खबीस को स्वामी परम दयाल॥३॥ धर्म धरें दशलक्षणी भावना भावे सार। सहैं परीषह बीस द्वो चारित रत्न भण्डार॥४॥ ग्रीषम-ऋतु रवि तेजसे सूखे सरवर नीर। शैल शिखर मुनि तप तप ठाड़े नगन शरीर॥५॥ पावस रैनि भयावनी बरस जलधर धार। तरु तल निवसैं साहसी बाजै झंझा बयार॥६॥ शीत पड़े कपि मद गले दाहै सब वनराय। ताल तरङ्गणी तट विषे, ठाड़े ध्यान लगाय॥७॥ इस विधि दुर्धर तप तपें तीनों काल मंझार। लागी सहज स्वरूपमें तनसे ममता टार॥८॥ रङ्ग महलमें सोवते कोमल सेज बिछाय। सो अब पश्चिम रैनमें पोढ़े सम्बर काय॥९॥ गज चढ़ चलते गर्वसे सेना सज चतुरङ्ग। निरख निरख भू पग धरें पालें करुणा अङ्ग॥१०॥ पूर्व भोग न चिन्तवें आगे वांछा नाहि। चहुं गतिके दुखसे डरे, सुरति लगी शिव मांहि॥११॥ ते गुरु चरण जहां धरें तह तह तीरथ होय। सो रज मम मस्तक चढ़ो भूधर मांगे सोय॥१२॥

धारें भाषा।

दोहा—श्रीजिनवर चौवीसवर कुनयध्वात हर भान।
अमित वीर्य्य दृग वोध सुख युत तिष्ठो इह थान ॥ १ ॥
(परि पुष्पाञ्जलिंक्षिपेत) इति स्थापना।

गिरिश शीश पाण्डु पे सतीश ईश थापियो। महोत्सवो आनन्द कन्दको सवे तहा कियो ॥ हमें सो शक्ति नाहिं व्यक्त देखि हेतु आपना। यहा कर जिनेन्द्र चन्द्रकी सु विम्ब थापना ॥ २ ॥
कनक मणिमय कुम्भ सुहावने। हरि सुक्षोर भरे अति पावने ॥
हम सुव सिन नीर यहां भरे। जगत् पावन पांव तरें धरे ॥ ३ ॥
॥ इति कलश स्थापना ॥

शुद्धोपयोग समानभ्रम हर परम सौरभ पावनो। आकृष्ट भृङ्ग समूह सङ्ग समुद्भवौ अति पावनो ॥ मणि कनक कुम्भ निशुम्भ किल्विग विमल शीनल भरि धरो। श्रम स्वेद मल निरवार जिन-त्रय धार दे पायन परों ॥ ४ ॥
इति जल धारा

अति मधुर जिन ध्वनि सम सुप्रीणित प्राणि वर्ग स्वभावसों। -बुध चित्त समहर पित्त नित्त सुमिष्ट इष्ट उछावसों। तत्काल इक्षु समुत्थ प्रासुक रत्न कुम्भ विषैं भरों ॥ यम त्रास तात निवार जिन त्रय धार दे पायन परों ॥ ५ ॥
॥ इति इक्षु रस धारा ॥

निष्टप्त क्षिप्त सुवर्ण मद मदनीय ज्यों विधि जैनकी। आयु प्रदा वल वुद्धिदा रक्षा सु यों जिय सैनकी ॥ तत्काल मथित क्षीर उत्थित प्राज्य मणि झारी भरों। दीजे अतुल वल मोहि जिन त्रय धार दे पांयन परों ॥ इति घृत धारा।

गरवाम्र गुम्र सुदायक पु ति सुर्रमि पावन सोहनो छु स्पक्ष दूर बढ़ घरन पूरन पय सकल मन मोहनो ॥ कद करण गोधन ते सम हत मद बदित मनिमैं मये। बुकल बरा मो मेट जिन जय धार दै पायन पर्रों ॥ ७ ॥

इति पुष्प धारा

वर विविद क्षेमाधार्य्य ज्यों मधुरान्त कर्कशिला धरै । शुचि कर रचिक संयम विर्मचित नैह दोनों मनु सरै । गो दधि सुमजि मुकुर दूर न स्याय करि मांगी घरौं । पुष्प दोप कोप निपार जिन जय धार दै पायन परौं ॥ ८ ॥

इति दधि धारा

दोहा—सर्वोपधी मिलायके, भरि कञ्चन भृङ्गार ।
धजो चरण त्रय धार दै, तारि तार भवतार ॥

॥ इति सर्वौषधी धारा ॥

१००—प्रातःकालकी स्तुति ।

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर भविजनको अब पूरो आस ॥
ज्ञानभानुका उदय करो मम मिथ्यातमका होयविनाश ॥ १ ॥
जीवोंको हम करुणा पालें झूठ वचन नहिं कहैं कदा ॥
परधन कबहुं न हरिहैं स्वामी ब्रह्मचर्य व्रत रहैं सदा ॥ २ ॥
तृष्णा लोभ बढ़े न हमारा तोष सुधा निशि दिया करैं ॥
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करैं ॥ ३ ॥
दूर भगावें बुरी रीतियां सुखद रीतिका करें प्रचार ॥
मेल मिलाप बढ़ावें हमसब धर्मोन्नतिका करें प्रचार ॥ ४ ॥

सुखदुखमें हम समता धारें रहें अचल जिमि सदा अटल ॥
न्याय कार्यको लेश न त्यागें वृद्धि करें निज आतमबल ॥ ५ ॥
अष्टकर्म जो दु:ख हेतु हैं तिनके छयका करें उपाय ॥
नाम आपका जपें निरन्तर विघ्नशोक सब ही टल जाय ॥ ६ ॥
आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़ै कदा ॥
विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञानहू बढ़े सदा ॥ ७ ॥
हाथ जोड़ कर शीष नवावें तुमको भविजन खडे खडे ॥
यह सब पूरो आस हमारी चरण शरणमें आन पड़े ॥ ८ ॥

१०१—सायंकालकी स्तुति ।

हे सर्वज्ञ ! ज्योतिमय गुणमणि बालक जनपर करहु दया ॥
कुमति निशा अंधियारीकारी सत्य ज्ञान रवि छिपा दिया ॥१॥
क्रोध मान अरु माया तृष्णा यह बटमार फिरे चहु ओर ॥
लूट रहे जग जींवनको यह देख अविद्या तमका जोर ॥
मारग हमको सूझे नाहि ज्ञान बिना सब अन्ध भये ॥
घटमें आय बिराजो स्वामी बालक जन सब खड़े नये ॥ ३ ॥
शतपथ दर्शक जनमन हर्षक घटघट अन्तरयामी हो ॥
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसके तुम ही स्वामी हो ॥ ४ ॥
घोर विपनमें आन पड़ा हूं मेरा बेरा पार करो ॥
शिक्षाका हो घर घर आदर शिलपकला संचार करो ॥ ५ ॥
मेल मिलाप बढ़ावें हम सब द्वेष भावकी घटाघटो ॥
नहीं सतावें किसी जीवको प्रती क्षीरकी गटगटो ॥ ६ ॥
मात पिता अरु गुरुजनकी हम सेवा निशदिन किया करें ॥
स्वारथ तजकर सुखदें परको आशिष सबकी लिया करें ॥७॥

आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा ॥
विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हू बढ़े सदा ॥ ८ ॥
जोड़कर ओर बालक ठाड़े कर प्रार्थना सुनिये तात ॥
तुमसी बीत रैन हमरी जिनमतका हों शीघ्र प्रभात ॥११॥
मात पिताकी आज्ञा पालें गुरुकी भक्ति धार उरमें ॥
रहें सदा हम करतब तत्पर उन्नति कर निज निजपुरमें ॥१०॥

१०२—संकटहरण विनती।

हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी। अब मेरी व्यथा क्यों ना हरो बार क्या लगी॥ टेक॥ मालिक हो दो जहानके जिन राज आप ही। ऐबो हुनूर हमारा कुछ तुमसे छिपा नहीं॥ बेजानमें गुनाह जो मुझसे बन गया सही। कंकरीके चोरको कटार मारिये नहीं॥ हो दीन॰ १॥ दुख दर्द दिलका आपसे जिसने कहा सही। मुशकिल कहर बहरसे लई है भुजा गही॥ सब वेद और पुराणमें परमाण है यही। आनन्द कन्द श्रीजिनेन्द्र देव है तुही॥ हो दीन॰ ॥ २॥ हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती। गङ्गामें ग्राहने गही गजराजकी गती॥ उस वक्तमें पुकार किया था तुम्हें सती। भय टारके उबार लिया हो कृपा पती॥ हो दीन॰ ॥ ३॥ पावक प्रचण्ड कुण्डमें उमण्ड जब रहा। सीता से सत्य लेनेको तब रामने कहा॥ तुम ध्यान धरके जानकी पग धारती तहां। तत्काल हो सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा॥ हो॰ ॥ ४॥ जब चीर द्रोपदीका दुशासनने था गहा। सबही सभाके लोग कहते थे हा हा हा॥ उस वक्त भीर पीरमें तुमने किया सहा। परदा ढका सतीका सुयश जगतमें रहा॥ हो॰५॥

सम्यक्त शुद्ध शीलवन्ती चंदनसती। जिसके नजीक लगती थी जाह रती रती। वेडीमें पडी थी तुम्हें जव ध्यावती हुती। तव वीरधीरने हरी दुःख द्वन्दकी गती ॥हो०॥६॥ श्रीपालको सागर विपै जव सेठ गिराया उसकी रमासे रमनेको आया था वहयामें उस वक्तके संकट सती तुमको जो ध्याया। दुःखद्वन्दफन्द मेटके आनन्द बढ़ाया ॥ हो० ॥७॥ हरपणकी माताको जव शोक सताया। रथ जैनका तेरा चले पीछेसे वनाया॥ उस वक्तके अनशनमें सती तुमको जो ध्याया। चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया ॥ हो० ॥८॥ जव अञ्जना सतीको हुआ गर्भ उजाला। तव सासुने कलंक लगा घरसे निकाला॥ वन वर्गके उपसर्गमें सती तुमको चितारा-वा प्रभु भक्तियुक्त जानके भय देय निवारा ॥हो० ९॥ सोमासे कहो जो तू सती शील विशाला। तो कुम्भ मेंसे काढ़ भला नाग ही काला॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके सती हाथ जो डाला। तत्काल-ही वो नाग हुआ फूलकी माला॥ हो० ॥ १० ॥ जव राज रोग था हुवा श्रीपाल राजको। मैंना सती तव आपकी पूजा इलाज को तत्कालही सुन्दर किया श्रीपालराजको। वह राज भोग २ गया मुक्तिराजको ॥ हो० ॥ ११ ॥ जव सेठ सुदर्शनको मृपा दोष लगाया। रानीके कहे भूपने शूली पै चढ़ाया॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यानमें ध्याया। शूलीसे उतार उसको सिंहासन पै विठाया॥ हो० १२॥ जव सेठ सुधन्नाजीको वापीमें गिराया। ऊपरसे दुष्ट था उसे वह मारने आया॥ उसवक्त तुम्हें सेठने दिल अपनेमें ध्याया। तत्काल ही जंजालसे तव उसको वचाया ॥ हो० १३ ॥ [illegible]

ठिकाना भी था नहीं सांझ सवेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने जब ध्यानमें प्रेरा । घर उसके तब कर दिया लक्ष्मीका बसेरा ॥ हो० ॥ १४ ॥ बलि वादमें मुनिराज सों जब पार न पाया । तब रातको तलवारले शठ मारने आया । मुनिराजने निज ध्यानमें मन लीन लगाया । उस वक्त हो परतक्ष तहाँ देव बचाया ॥ हो० १५ ॥ जब रामने हनुमन्तको गढ़लङ्क पठाया । सीताकी खबर लेनेको विरकौर सिधायो ॥ मग बीच दो मुनिराजकी लख आगमें काया झटवार मूसलधारसे उपसर्ग बुझाया ॥ हो० १६ ॥ जिननाथही को माथ नवाता था उदारा । घेरेमें पड़ा था वह कुम्भकरण बिचारा ॥ उस वक्त तुम्हें प्रेमसे संकटमें उचारा । रघुवीरने सब पीर तहाँ तुरत निवारा ॥ हो० १७ ॥ रणपाल कुंवरके पड़ी थी पांवमें बेरी । उस वक्त तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सवेरे । तत्काल हो सुकुमारकी सब झड़ पड़ी बेड़ी । तुम राजकुंवरकी सभी दुख द्वन्द निवेरी ॥ हो० ॥ १८ ॥ ज० । सेठके नन्दनको डसा नाग जु कारा । उस वक्त तुम्हें पीरमें धर धीर पुकारा ॥ तत्कालही उस बालका विषभूरि उतारा । वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा ॥ हो० ॥१६॥ मुनि मानतुङ्गको दई जब भूपने पीरा । तालेमें किया बन्द भरी लोहे जंजीरा । मुनीशने आदीशकी थुतकी है गम्भीरा चक्रेश्वरी तब आनके झट दूरकी पीरा ॥ हो० २० ॥ शिव कोटने हटता किया समन्त भद्र सो । शिवपिण्डकी बन्दन करो शंको अभद्र सो ॥ उसवक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सो । जिन चन्द्रकी प्रतिमा तहाँ प्रगटी सुभद्र सो ॥ हो० २१ ॥ सूबेने तुम्हें आनके फल आम चढ़ाया । मेंढक ले चला फूल भरा

भक्तका भाया ॥ तुम दोनोंको अभिराम स्वर्गधाम बसाया ॥ हम आपसे दातारको लख आज हो पाया ॥ २२ ॥ कपि स्वान सिंह नवल अज बैल विचारे। तिर्यंच जिन्हें रञ्च न था बोध चितारे इत्यादिको सुरधाम दे शिवधाममें धारे। हम आपसे दातारको प्रभु आज निहारे ॥ हो० ॥ २३ ॥ तुमहो अनन्त जन्तुका भय भीड़ निवारा। वेदो पुराणमें गुरु गणधरने उचारा। हम आपकी शरणागतीमें आके पुकारा। तुम हो प्रत्यक्ष कल्प वृक्ष इक्ष अहारा हो० २४ ॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भुक्त मुक्तके दानी। आनन्द कन्द वृन्दकों हो मुक्तिके दानी। मोहि दीन जान दीनवन्धु पातक भानी संसार विषय तार तार अन्तरयामी ॥हो० २५॥ करुणा निधान वान को अब क्यों न निहारो। दानी अनन्त दानके दाता हो सभारो ॥ वृष चन्द नन्द वृन्दका उपसर्ग निवारो संसार विषमक्षारसे प्रभु पार उतारो ॥ हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी। अब मेरी व्यथा क्यों न हरो वार क्या लगी ॥ २६ ॥

१०३—स्तोत्र भूदरदास कृत ।

दोहा—कर जिन पूजा अष्ट विधि, भाव भक्ति बहु भाय।
अब सुरेश परमेश थुति, करत शीश निज नाय ॥ १ ॥

प्रभु इस जग समर्थ न कोय। जासे तुम यश वर्णन होय। चार ज्ञान धारी मुनि थके। हमसे मन्द कहाकर सके ॥ २ ॥ यह उर जानत निश्चय कीन। जिन महिमा वर्णन हम कीन ॥ पर तुम भक्ति थके वाचाल। तिस बस होय गहूं गुण माल ॥ ३ ॥ जय तीर्थंकर त्रिभुवन धनी। जय चन्द्रोपम चूड़ामणी ॥ जय जय परम धाम दातार। कर्म कुलाचल चूरण-हार ॥ ४ ॥ जय शिव कामिन

कल्प महान । अतुल अनन्त चतुष्टय वान ॥ जय जय आशा भरण बड़ भाग । तप लक्ष्मीके सुभग सभाग ॥ जय जय धर्मध्वजा धर धीर । स्वर्ग मोक्षदाता वरवीर ॥ जय २ रत्नत्रय रत्नाकरण्ड जय जिन तारण तरण तरण्ड ॥ ६ ॥ जय २ समोशरण शृङ्गार। जय संशय वन दहन तुषार ॥ जय २ निर्विकार निर्दोष । जय अनन्त गुण माणिक कोष ॥ ७ ॥ जय २ ब्रह्मचर्य दल साज । काम सुभट विजयी भटराज ॥ जय २ मोह महा तरु करी । जय २ मद कुञ्जर केहरी ॥ ८ ॥ क्रोध महानल मेघ प्रचण्ड । मान महीधर दामिनि दण्ड ॥ माया बेल धनंजय दाह । लोभ सलिल शोषण दिन नाह ॥ ९ ॥ तुम गुण सागर अगम अपार। ज्ञान जहाज न पहुंचे पार ॥ तट ही तट पर डोलै सोय । कारज सिद्धि तहां ही होय ॥ १० ॥ तुमरी कीर्तिबेल बहु बढ़ी । जतन बिना जग मण्डप चढ़ी । और कुदेव सुयश निज चहैं । प्रभु अपने थल ही यश लहैं ॥ ११ ॥ जगत जीव घूमैं बिन ज्ञान । कीनो मोह महा विष पान ॥ तुम सेवा विष नाशक जड़ी । यह मुनि जन मिल निश्चय करी ॥ १२ ॥ जन्म जरा मिथ्या मत मूल । जन्म मरण लागे तहां फूल ॥ सो कबहूं बिन भक्ति कुठार, कटै नहीं दुख फल दातार ॥ १३ ॥ कल्प तरोवर चित्रा बेलि । काम धेनु नव निधि मेल ॥ चिन्तामणि पारस पाषाण । पुण्य पदारथ और महान ॥ १४ ॥ ये सब एक जन्म संयोग । किंचित सुख दातार वियोग । त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव । जन्म २ सुखदायक देव ॥ १५ ॥ तुम जग बांधव तुम जग तात । अशरण शरण विरद विख्यात ॥ तुम सब जीवन रक्षापाल । तुम दाता तुम परम दयाल ॥ १६ ॥ तुम

पुनीत तुम पुरुष प्रमान। तुम समदर्शी तुम सब ज्ञान। जयमुनि यज्ञ पुरुष परमेश॥ तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश॥ १७॥ तुम जग भर्त्ता तुम जग जान। स्वामी स्वयम्भू तुम अमलान॥ तुम विन तीन काल तिहु लोय। नाहीं शरण जीवको होय॥ १८॥ इससे अव करुणानिधि नाथ। तुम सन्मुख हम जोड़े हाथ॥ जवलों निकट होय निर्वाण। जग निवास छूटे दुख दान॥ १६॥ तवलों तुम चरणाम्बुज वास। हम उर होय यही अरदास॥ और न कछु वाछा भगवान। हो दयालु दीजे वरदान॥ २०॥

दोहा—इस विधि इन्द्रादिक अमर, कर बहु भक्ति विधान।
निज कोठे बैठे सकल, प्रभु सन्मुख सुख मान॥ २१॥
जाति कर्म रिपु ये भये, केवल लब्धि निवास।
सो श्री पार्श्व प्रभू सदा, करो विघ्न घन नास॥

१०४—अरिहन्त परमेष्टी मंगल।

वन्दों श्रीअरिहन्त सिद्धि आचार्यजी। उपाध्याय नमि साधु भवधर आर्यजी। पञ्च परमपद श्रेष्ठ जगतिमें ये कहे। इन हीके सुप्रसाद भव्यजन सुख लहे॥ लहे लेत लेंयगे सुख मुक्ति रमनीके सही॥ अहमिन्द्र इन्द्र नरेन्द्र सुखकी तास उपमा है नहीं॥ यासे तिन्होंके एक सा तिरकाल गुण नित ध्याइये। उर नेम धरके पंच पदके पच मगल गाइये॥ १॥ सम चतुर संस्थान सुगन्धित तन लसे। एक सहस्र गणि आठ सुलक्षण शुभ वसे॥ मल मूत्र नहीं होय पसेव न होइये। क्षीर वर्ण वर रुधिर अतुल वल जोइये॥ जोइये हित मित वचन सुन्दर रूपका ना पार जी। लख वज्र वृपभ नाराच्य संहनन जन्म दश गुण धारजी॥ सुरभिक्ष

रखों ॥ इन्द्रगणधर आदि जिन गुण गणत पार न पाइयो । गणि दोष अष्टादश जिनेश्वर मूलसे जु नसाइयो । क्षुधा तृषा मद मोह जरा चिन्ता टरी । आरति विस्मय रोग शोक निन्द्रा हरी ॥ स्वेद खेद भय रोग हनो पुनि द्वेषजो । जन्म मरणको दुःख नहीं लव-लेशजी ॥ लवलेश इनका नाहिं यासे मोहि तारण तरणजी । भव दुख निवारण सुक्ख कारण मोहि अशरण शरणजी ॥ यासे सदा ही प्राति उठ छालीस गुण नित ध्याइये । उर नेम धर पद पञ्चमें अरिहन्त मङ्गल गाइये ॥ ७ ॥

१०५—श्रीसिद्ध परमेष्टी मंगल ।

तिहुं जग शिरतन वात वलयमें जानियो । प्रारम्भ नभ क्षेत्र तेहो उर आनियो ॥ मनुज क्षेत्र सम क्षेत्र महा अद्भुत सही । हाटक मणिमय मुक्ति शिला तासम कही ॥ कही तिहु जग शीश ऊपर क्षत्रके आकार जी । मध्य भाग योजन आठ मोटो अन्त अनुक्रम ढारजी । तापर विराजत सिद्ध शिव थल काय धिन बिन रूपजी । लख पूर्व तनसे ऊन किंचिन आत्मरूप अनूपजी । १ ॥ एक सिद्धके माँहि अनन्ते सिद्ध हैं । राजत गुण समुदाय लिये निज ऋद्धि है ॥ किंचिन कायोत्सर्ग और पदमासनं । सकल सिद्धि सम शीर्ष विराजत आसनं ॥ आसना आकार काजै लखो इक दृष्टान्तजी । साँची करो इक मोमको फिर गारा लेप धरन्तजी ॥ सुकवाय ताको अग्नि देकर मोम काढ़न ठानिये । पोलार वामें रहे जेसी सिद्ध आकृति जानिये ॥ २ ॥ पौने सोलह सो धनु महा गिनायजो । वात वलय तनकी सुलखो लोटायजी । पन्द्रह सौका भाग देव ताको सही । सवा पाच सो धनुष होय संशय

नहीं ॥ सजघन्य नहीं अवगाहना उत्कृष्ट सिद्धनकी लखो। तन बालकी मोटाई पुन भाग नवलखका रखो ॥ अवगाहनादि जघन्य गिनसे हाथ साढ़े तीन जी। पुन मध्य भेद अनेक हैं अवगाहनाके बीचकी ॥ ३ ॥ मोहनी नामकर्म महा बलवन्त जी। कीन्हीं घातिक बुद्धि सकल जग जन्तु जो ॥ ताहि मूलसे नाश शुध सम्पति लही। प्रगटो गुण सम्यक्त्व प्रथम महागुन सही॥ सिवगुण यह जगतिके तुच्छ नाशनेको सूल है। या बिना सब ही अकारथ वासना बिन फूल है ॥ बिन नीम मन्दिर मूल बिन तरु नीर बिन सागर यथा सम्यक्त्व गुण बिन सकल करणी सफल नाहीं सर्वथा ॥ ४ ॥ ज्ञानावरणी कर्म दयो सब टार जी। हस्त रेख सम लोक अलोक निहार जी ॥ दूजो गुण तब ज्ञान शुद्ध सुप्रगट भयो। या सम और न कोइ जगतमें गुण कहो ॥ कहो तीजो कर्म नामी दर्शना वरणी लखो। सीके नहीं जाके उदय जिमि वस्त्रपर ढाकन रखो ॥ इस कर्मको विध्वंस करके लखो केवल दर्शना। गुण होय मिटे तबहो वस्तु देखन तमना ॥ ५ ॥ अन्तराय बलवान महा दुख देत है। जग जीवोंकी शक्ति सभी हर लेत है ॥ याको हति निज योग अनन्त स्वभावकी। सो चौथा गुण धर्म भयो मन म्यायकी ॥ मन म्याय तिहुं जग माहिं जानी नाम कर्म महान हैं। इस कर्म वश जग जीव चहुं गति भटकते हैरान हैं ॥ याको हनो तबही अमूर्ति भयो आतमराम है। सो मस्त गुण तब होत जगमें चतुर नाहीं काम है ॥ ६ ॥ आयु कर्मसे जीव चहुं गतिमें पसें। बंदीखाने माहि तथा केदा फसें ॥ याहि हरत गुण प्रगट होत अवगाहना। एक सिद्धमें सिद्ध अनन्त समावना ॥ सम्भावना

जग जीव सब ही गोत्र विधिके वश परें। पद ऊंच नीच लहें सुबहु विधि दुःख दावानल जरें ॥ इस गोत्र कर्म विनाशनेसे भाव सम प्रगटे सदा। सो गुण अगुण लघु होय तब ही ऊंच नीच न रहे कदा ॥ ७ ॥ वेदनी कर्म वशाय जगतिके जीव जी। भोगे दुःख अपार अचित सदीव जी ॥ अव्यावाध गुण होइ हरे जब याहजो। सुख दुःख दोनो रहित नहीं कछु चाह जी ॥ चाह तिहु जगकाल तिहुके सुख इकट्ठे कीजिये। तिनसे अनन्ते सुक्ख है इक समय माहि लहीजिये ॥ यासे तिन्होंके आठ गुणको प्रात उठ नित ध्याइये। उर नेम धरके पंचपदमे सिद्ध मंगल गाइये ॥७॥

१०६—श्रीआचार्यपरमेष्टी मंगल।

दर्शन मोह विनाश आप दर्शन लहो। सोही दर्शनाचार भिन्न परसे कहो ॥ स्वपर भेद लख ज्ञान थकी निज लीन जी सो ही ज्ञानाचार लखो सु प्रवीण जी ॥ प्रवीण निज पद माहि थिर हो यही चरित्र गुण सही। इच्छा अभ्यन्तर रोक अनसन वाह्य गुण तप जानहो ॥ जब कष्ट बहु विधि आवता नहि टरे यह गुण वीये जी आचरें। पचाचार यह गुण लहें बहुधर धीये जी ॥ १ ॥ वर्ष अयन ऋतु मास पक्ष आदिक तनी। करें सदा उपवास लहे गण अनसनी ॥ पूर्ण ग्रास बत्तीस अन्न जलके गुणा। लेय तामें ऊन ऊनोदर सो मुनी ॥ मुनिचर्या निमित्त वनमें व्रत अटपटे धर चले। व्रत परि संख्या कहो यह गुण और जनसे ना पले ॥ कोई रसका तजे कबहु सर्भ रस तज देत हैं। गुन जान रस परित्याग सुन्दर महा अद्भुत भजत हैं ॥ २ ॥ गिरि कन्दर एकान्त रहत सु मसानमें। धर ध्यान अनागार लीन नित ज्ञान

ब्रह्मचर्य्य त्रिय त्याग सकल विधिसे भना॥ शत्रु मित्र शम भाव धरे समता गना। देव गुरु श्रुति वन्दे यह गुण बन्दना वन्दन स्तुति देव श्रुति गुरु करें स्तवन गुण धारके। प्रतिक्रमण गुणाकर निवारें लये दोष विचारके॥ पढ़े निज श्रुति पर पढ़ावें गुण स्वाध्याय जो। कायोत्सर्ग धराय निज पद ध्यान शुद्ध लगाय जा॥ ७॥ बन्दरको रोक गुप्ति मनकी लहैं। वचन गुप्ति गुण काज नहीं विकथा कहैं॥ काय गुप्ति तव होय करें तन क्षीणजी। निज आतम लवलीन कर परहीन जी॥ परहीन करके आप अपनी सम्पदा परखों अक्षय। आचार्य सोई श्रेष्ठ जगमें तासु उपमाको रखय॥ यासे तिन्होंके प्रात उठ छत्तीस गुण नित ध्याइये। उर नेमधर पद पञ्चमें आचार्य मङ्गल गाइये॥ ८॥

१०७—श्रीउपाध्याय परमेष्ठो मंगल।

आचारङ्ग पद सहस अठारह जानियो। सूत्र काङ्ग छत्तीस सहस्र पद मानियो॥ स्थानाङ्ग पद जान सहस व्यालीस सदा। समवायाङ्ग इक लाख सहस चौंसठ पदा॥ पद गिन दो लाख ऊपर धर अट्ठाइस सहस जी। व्याख्या प्रज्ञप्ति तामें प्रश्नका है रहस्य जी॥ पद पाच लाख हजार छप्पन जान ज्ञात्र कथागके। पद लाख ग्यारह सहस्र सत्तर उपासका ध्यानाङ्गके॥ १॥ अन्त कृता दशाङ्ग लाख तेवीस जी। सहस्र अट्ठाइस जोड़ सकल पद दीस जी। पद गिन बानवे लाख सहस चवाल जी। अनुत्तर उत्पाद दशांग सम्हाल जी। सम्हाल लाख तिरानवे पद जोड़ सोले हजार जी। लख लेव प्रश्न व्याकरण माहीं धर्म कथन विचार

जी। एक कोड़ि ऊपर घर चौरासी लाख सब पद जो-
जिये। ये ही सूत्र विपाकके पदका कथन सब लीजिये ॥ २ ॥ ऐसो
ग्यारह अङ्ग एकादश गुण कहे। इन सबके पद जोड़ सकल किते
लहे। कोड़ि चारि गनि ठेहु लाख पन्द्रह रखो। सहस्र मिलाय
सकल संख्या लखो ॥ अब उत्पाद पूर्व एक कोड़ जो पद तनो।
पद लाख छानवे गिनो ताके पूर्वको अग्रायणी। पद लाख सत्तर
लखो ताके पूर्व वीर्यानुवादकी ॥ कहि अस्ति नास्ति प्रवादके पद
साठ लाख मर्यादको ॥ ३ ॥ पूर्व ज्ञान प्रवाद पञ्चमा जानजी,
एक कोड़ि पद माहिं एक पद हानि जो ॥ षष्टम सत्य प्रवाद पूर्व
पहिचानियो। एक कोड़ि पद षट् अधिक पद मानियो ॥ मानियो
आत्म प्रवाद पूर्व कोड़ि पद छब्बीस जी। पद पूर्व कर्म प्रवाद
एकसो असी लाख कहे स जो ॥ गिनको चौरासी लाख पदका पूर्व
प्रत्याख्यान जी। विद्यानुवादसु कोड़ि एकपर लाख दश पद ठान
जी ॥ ४ ॥ पूर्व कल्याण वाद कल्याण का। पद गिन कोड़ि
छब्बीस सकल बखान जी ॥ प्राणवाद अब पूर्व कोड़ि तेरह पदा
क्रिया विशाल पद जानि कोड़ि नव सर्वदा ॥ गिन त्रैलोक बिन्दु
सार पूर्व खास जी। पद कोड़ि द्वादश पर पचाधि लाख गिनो
पचास जो ॥ पद पूर्व चौदहके इकट्ठे जोड़ गिन अब ल्यायजो।
साढ़े पचानवे कोड़ि ऊपर पांच पद धरवायजी ॥ ५ ॥ एकादश
अङ्ग अरु पूर्व चौदह गने। पद दोनोंके जोड़ सकल इतने भने ॥
कोड़ि निन्यानवे और लाख पैंसठ धरे। सहस्र दोय पर पांच जोड़
निश्चय करे ॥ कहे गिनती एक पदमें किते अक्षर हैं सही। पर
अब सोलह कोड़ि चौंतिस अरु तिरासी लाख हो ॥ हजार सात

सु आठ शत पै गिन अठासी फिर रखो । एक पदके कहे सो लख सकल पद इस सम खरो ॥६॥ अङ्गपूर्वको सकल भयो है ज्ञानजी । ये ही गुण पच्चीस मुख्य पहिचान जी ॥ सो ली तिहु जग श्रेष्ठ लखो उपाध्यायजी । पर परिणतिसे भिन्न आत्मतत्व ध्यायजी ॥ तत्व ध्याय निज गुण सम्पदामें मग्न निशि दिन ही रहैं । भवसिन्धु तारण तरण नवका और उपमाको कहैं । यासे तिन्होको प्रात उठ पच्चीस गुण नित ध्याइये । उर नेम धर पद पञ्चमें उपाध्याय मंगल गाइये ॥ ७ ॥

१०८—श्रीसाधु परमेष्टी मङ्गल ।

मन वच घट कायतनी करुणा धरें । यही अहिंसा व्रत सु प्रथम गुण आचरें ॥ करे झूठ परित्याग वचन मन काय जी । कृतकारित अनुमोद भग सब गाय जी ॥ सब गाय अनत त्याग गुण यह सर्व साधुनके लखों । इस ही सुविधिसे त्याग चोरी व्रतास्तेय सुनो रखो ॥ चेतन अचेतन नारि नजना भेद सहस्र अठारसे । सो ही है व्रत ब्रह्मचर्य्य साधू धरत हर्ष अपारसे ॥ १ ॥ बाह्याभ्यन्तर त्याग परिग्रहका करें । सो ही परिग्रह त्याग महाव्रत आदरे ॥ चलत पथ लख शुद्ध हाथ गनि चार जीं । ईर्या समिति सु व्रतहि दया मित धार जी ॥ चित धार करुणा वचन बोलत स्वपर हित मर्यादसे । यह व्रत भाषा समिति साधू धरत उर अहलादसे ॥ गिन ले छयालिस दोष वर्जित देत शुद्ध अहार जी ॥ सो जान ईषणा समिति सुन्दर व्रत महा सुखकार जी ॥२ ॥ वस्तु उठावत बार भूमि दृगसे लखे । तैसे भूमि निहार वस्तु विधिसे रखे ॥ आदान निक्षेपना समिति याको कहे । धारे श्री

मुनिराज महा सुखको लहैं ॥ जहँ नाहीं क्रोध माया भूमि ऐसी देखके। प्रति स्थापन समिति यह मल मूत्र खेपे पेखके ॥ तजै स्नान विलेपनादिक नाहि तन संस्कारजी। तन शीत कर स्पर्श मिस्ती चोपना अधिकार जी ॥ ३ ॥ मधुर मिष्ट कटुकादिक स्वादि रसना तनो। तजैं मुनि रसनेन्द्रिय रोधन तप भनो ॥ सुगन्ध अरु दुर्गन्ध विषय नासा तजे। घ्राणेन्द्रीय निरोध नाम तप तब भजै ॥ भजें इन्द्रिय रोध चक्षु दृष्टि नासापर धर। गुन राग मुखसे निर्खवो रुपादि सब ही परिहरैं। नहि सुनैं वचन विकार कर्ता कानसे बहिरे भये। यह कारण इन्द्रिय रोध तप धर सुनैं जिन वच रुचि किये ॥४॥ तृण कञ्चन अरि मित्र हु महल मसान जी। सुख दुख जीवन मरण लखें हु समान जी। समतापरमक नाम यही गुण जान जी॥ धारें सो मुनिराज महा सुख खानि जी ॥ सुख खान छका गुण वन्दना है देव श्रुति गुरुको कहें। इन आदिकजन योग्य पदकी वन्दना कर गुण लहैं ॥ स्तुति देवश्रुति पद आदि दे कर पूजनीक सु पदतनी। मन वचन तनसे करें मुनिवर थुति आवश्यक सोभनी ॥ ५ ॥ मापस्थित जे दोषको दूरी करैं प्रतिक्रमण सुगुण येह सर्व साधु धरैं ॥ पञ्च भेद स्वाध्याय करै नित हो तहाँ सो ही गुण स्वाध्याय लहैं निज सम्पदा ॥ निज सम्पदाके अर्थ सु तिष्ठकरैं कायोत्सर्ग जी। धर दृष्टि नासा भुज सुवाये ममत्व इन तन धर्म जी ॥ तृण कण्टकादिक शुद्ध भूपर अल्प निद्रा लै य जी। सबा र न पिछली याम तप यह भूमि शयन कहेय जी ॥६॥ डर ज रजसे तन मलिन तजें स्नान जी। स्नान त्याग व्रत येह कहो यदि धान ओ ॥ मात गर्भेते जनम समान स्वरूप जी। सो ही गुण तन

वस्त्र त्याग. सो अनूप जी ॥ अनूप पञ्च सेती मुष्टी लुंच कचका करत हैं। और करुणाधार उत्कच लुंच व्रत मुनि धरत हैं ॥ गुण एक वार अहार लघु लें दोष विन विन रागजी। सो एकदा लघु भक्त तप है धरें मुनि वड़ भाग जी ॥ खड़े लेंय अहार पात्र करको करें। चरें गाय सम वृत्य खड़ा गुण सो धरें ॥ आनन मल संयुक्त सूग आने नहीं। करो दन्त त्याग सुव्रत जानो सही ॥ जानो सही गुण गिन अट्ठाइस सर्व ही साधू लहो। यह श्रेष्ठ तीन भुवन माहीं तरण तारणपद कहो ॥ यासे तिन्होंके प्रात उठकर गुण अट्ठाइस ध्याइये। उरनेम धरकें पच पदमें साधु मगल गाइये ॥ ८ ॥

—:०:—

आठवां अध्याय

१०६—बारहमासा सीताजीका।

सती सीता विनवे शिर नाय। नाथ कर कृपा हरो दुःख आय ॥ टेक ॥ महीना आसाढ़का आया ॥ जनक गृह जन्म मैंने पाया। हरा सुर भ्रातनको दाया। मात-पितको दुख उपजाया ॥ दोहा—रथनूपुर विजयार्द्ध पर ता वनमें सुर जाय। रखा लखा सो भूप चन्द्र गति हियसे लिया उठाय। पुत्र कर पाला प्रेम बढ़ाय। नाथ कर कृपाकरो दुख आय ॥ १ ॥ चढ़े श्रावण म्लेच्छ भारी। पिता दुख पायो अधिकारी। वुलाये दशरथ हितकारी। राम तिनकी सेना मारी ॥ दोहा—तव रघुपतिको तातने करी सगाई मोर। विधिवत खगपति झगड़ा ठानो, आने धनुष कठोर। चढ़ा रघुवर

परष्यो गृद्ध स्वाय। नाथ कर कृपा हरो दुख माय ॥ १२ ॥ मये भावोंमें शुभ्र वैराग। राज रघुवरको दैने ठाग ॥ केकई मांगो वर दुर्माग। भरतको राज किया तिन मांग ॥ दोहा—जब पति वनै चिद्रियाको पनुपवाण लै हाथ। संग चले प्रिय लक्ष्मण देवर, मैं भी चाली साथ ॥ चले दक्षिणको चरण उठाय। नाथ कर कृपा हरो दुख माय ॥३॥ कभार दण्डक वन पहुंचे आय। हना शंबुक लक्ष्मण असि पाय ॥ फेरि मरा खरदूषण भाय ॥ तहां मैं हरी लङ्कपति माय ॥ दोहा—मार जटायु मोहिले देशमुख पहुंचो लङ्क। मित्र भये सुग्रीव रामके हनुमतवीर निशंक ॥ लेन सुधिपठये वीरसुराय नाथ कर कृपा हरो दुख माय ॥ ४ ॥ मिलो कार्तिकमें सुधि मेरी। राम लक्ष्मण लङ्का घेरी घोर रण भयो बहुत बेरी। हनी बहु सुतलङ्कको हरी ॥ दोहा—तहां लङ्कपतिको हनो, दियो विभीषण राज। मोहि साथ लै गृहको आये लिया राज रघुराज ॥ भरत तप घरा भये शिव राय। नाथ कर कृपा हरो दुख माय ॥ ५ ॥ कियो मगहनमें गर्माधान। तबै चढवायो कमिच्छा दान ॥ कर्म वश लागो निन्दा ठान। लगाया कृपण मोहि निदान ॥ दोहा—तब पुनि पठयो विपिनमें तीरथका मिसि ठान ॥ वज्रजंघ गृह दोबती देवी लै गयो वहिन बखान ॥ रक्खो पुर पुण्डरीकमें जाय। नाथ कर कृपा हरो दुख माय ॥ ६ ॥ पूस लवणांकुश जन्मे बाल। बढ़े क्रमसे सो भये विशाल ॥ भये धन क्रीड़ा दोनों लाल। मिले नारद बतलायो हाल ॥ दोहा—तब दोनोंकी रिस बढ़ी भये पिताघर काज समझाये सो एक न मानो चढे करनको युद्ध ॥ चतुर्विध सैना संग सजाय। नाथ कर कृपा हरो दुख माय ॥ ७ ॥ माघमें चढ़े

लडनयुग वीर । करे डेरा सरयूके तीर ॥ सुनन आये लड़ने रघुवीर चलाये खेंच विविध शर धीर ॥ दोहा—प्रवल युद्ध पुत्रन किया हरि वल मुहरा फेर । चक्र चलाया तव लक्ष्मणने, विकल भयो सो हेर ॥ विचारा येहो हरि वलराय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ८ ॥ फागमे भामण्डल हनुमान ॥ कही ये सीता सुत वल-वान ॥ मिले तव हरि वल आनन्द ठान । अवधमें बाढो हर्ष महान ॥ दोहा ॥ तव सवने विनती करी, सीता लेहु वुलाय । सो स्वीकार करी रघुवरने, सव नृप लाये धाय ॥ मिलनको चलीं सिया हर्षाय ॥ नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ९ ॥ चेत्रमें वोले, राम रिसाय । धीज विन लिये न आवो धाय ॥ तवै वोलीं सीता विलखाय । कहो सो लेह धीज दुखदाय ॥ दोहा—विप खाऊं पावक जलूं करूं जो आज्ञा होय । कही राम पावकमें पैठो सीता मानी सोय ॥ दयो तव पावक कुण्ड जलाय । नाथकर कृपा हरो दुख आय ॥१०॥ जपति वेसाखमें प्रभुका नाम । अग्निमें पेठी रघुवर भाम ॥ शील महिमासे देव तमाम । अग्निका कीना जल तिस ठाम ॥ दोहा—कमलासन पर जानकी वैठारी सुर आव । वढानीर जल डूवन लागे करते भये विलाप ॥ करो रक्षा हम सीता माय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ११ ॥ जेठमें राम मिलन चाले । लूंचि कच सिय सन्मुख डाले ॥ लयी दीक्षा अणुव्रत पाले । किया तप दुर्द्धर अघ जाले ॥ दोहा—त्रिया लिङ्ग हनि दिव भयो, सोलम स्वर्ग प्रतेन्द्र । अनुक्रमसे अव शिवपुर पैहै । भाषी एम जिनेन्द्र ॥ कहै यो दयाराम गुण गाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ १२ ॥

११०—बाईस परिषह

क्षुधा तृषा हिम उष्ण डंसमशक दुःख भारी। निरावरण तन अरति खेद उपजावत नारी ॥ चर्या आसन शयन दुष्टवायस वध बंधन। याचें नहीं अलाभ रोग तृण स्पर्श निबन्धन। मलजनित मान सम्मान वश प्रज्ञा और अज्ञानकर। दर्शन मलिन बाईस सब साधु परीषह जान नर ॥

दोहा—सूत्रपाठ अनुसार ये, कहे परीषह नाम।
इनके दुःख जे मुनि सहैं तिन प्रति सदा प्रणाम।

१ क्षुधापरीषह—अनशन ऊनोदर तप पोषत हैं पक्ष मास दिन बीत गये हैं। जो नहीं बने योग्य भिक्षा विधि सूक अंग सब शिथिल भये हैं ॥ तब तहां दुस्सह भूखकी बेदन सहित साधु नहीं नेक नये हैं। तिनके चरण कमल प्रति प्रति दिन हाथ जोड़ हम सीस नये हैं ॥

२ तृषा परीषह—पराधीन मुनिवरकी भिक्षा पर घर लेंहें कहैं कछू नाहीं। प्रकृत विरुद्ध पारणा भुंजत बढ़त प्यासकी त्रास तहां ही ॥ ग्रीषमकाल पित्त अति कोपे लोचन दोय फिरे जब जाहीं। नीर न चहैं सीससे मुनिवर जयवन्तो वरतो जग मांही ॥

३ शीत परीषह—शीतकाल सब ही जन कम्पें खड़े जहां वन वृक्ष दहे हैं। झंझा वायु बहें वर्षा ऋतु वर्षत बादल झूम रहे हैं ॥ तहां धीर तटिनी तट चौपट ताल पालपर कर्म दहे हैं। सहैं सम्हाल शीतकी बाधा ते मुनि तारणतरण कहे हैं ॥

४ उष्ण परीषह—भूख प्यास पीड़े उर अन्तर प्रजले आंत देह सब दागे। अग्नि स्वरूप धूप ग्रीषमकी ताती बायु झालसी

नर्क दुःख चित्रादर्श नं० ३

सीताकी अग्नि परीक्षा।

लागे ॥ तपें पहाड़ ताप तन उपजै कोप पित्त दाहज्वर जागे। इत्यादिक गर्मीकी बाधा सहै साधु धैर्य्य नहिं त्यागे ॥

५—दंशमशक परीषह—दंशमशक माखी तनु काटैं पीढ़े वन पक्षी बहुतेरे। डसे ब्याल विषहारे बिच्छू लगें खजूरे आन घनेरे। सिंघ स्याल शुण्डाल सतावें रीछ रोज दुख देंय घनेरे। ऐसे कष्ट सहैं समभावन से मुनिराज हरो अघ मेरे।

६ नग्न परीषह—अन्तर विषय वासना वर्ते बाहिर लोक लाज भय भारी, ताते परम दिगम्बर मुद्रा धर नहिं सकै दीन संसारी। ऐसी दुर्द्धर नग्न परीषह जीतें साधु शीलव्रत धारी। निर्विकार बालकवत् निर्भय तिनके पांयन धोक हमारी ॥

७ अरति परीषह—देश कालको कारण कहिके होत अचैन अनेक प्रकारैं। तब तहां खिन्न होयें जगवासी कलबलाय थिरता-पन छारें। ऐसी अरति परीषह उपजत तहां धैर्य्य उर धारैं। ऐसे साधुनके उर अन्तर बसो निरन्तर नाम हमारे ॥

८ स्त्री परीषह—जे प्रधान केहरको पकड़े पन्नग पकड़ पान से चम्पत। जिनकी तनक देख भौं बांकीं कोटिन सूर दीनता जम्पत ॥ ऐसे पुरुष पहाड़ उठावन प्रलय पवन त्रिय वेज पयम्पत ॥ धन्य धन्य ते साधु साहसी मन सुमेरु नहिं जिनको कम्पत ॥

९ चर्य्या परीषह—चार हाथ परिणाम निरख पथ चलत दृष्टि इत उत नहीं तानें। कोमल पांव कठिन धरतीपर धरत धीर बाधा नहिं मानें। नाग तुरङ्ग पालकी चढ़ते ते स्वाद उर याद न आनें। यों मुनिराज सहैं चर्य्या दुख तब दृढ़ कर्म्म कुचाल भानैं ॥

१० आसन परीषह—गुफा मसान शैल तरु कोटर निवसें

जहां गुरु मू हैरैं। परिमिति काल रहैं निश्चल तन बारबार आसन नहि फेरैं ॥ मानुषदेव अचेतन पशुकृत बैठे विपत आन जब घेरैं। ठौरन तजैं भजै थिरता पद ते गुरु सदा बसो उर मेरे ॥

११ शयन परीषह—जे महान् सोनेके महलों सुन्दर सेज सोय सुख जोवैं। ते अब अचल अङ्ग एकासन कोमल कठिन भूमिपर सोवैं ॥ पाहन खण्ड कठोर कांकरी गड़त कोर कायर नहि होवैं। ऐसी सयन परीषह जीतत ते मुनि कर्म कालिमा धोवैं ॥

१२ आक्रोश परीषह—जगत् जीवयावन्त चराचर सबके हित सबको सुखदानी। तिन्हें देख दुर्वचन कहैं शठ पाखण्डी ठग यह अभिमानी। मारो याहि पकड़ पापीको तपसी भेष चोर है छानी। ऐसे कुवचन वाणकी विरियां क्षमा ढाल ओढ़ मुनि ज्ञानी ॥

१३ वध बन्धन परीषह—निरपराध निर्वैर महामुनि तिनको दुष्ट लोग मिल मारैं। कोई बैंच खम्भसे बांधैं कोई पावकमें पर जारैं ॥ तहां कोप नहि करैं कदाचित पूरब कर्म विपाक विचारैं। समरथ होय सहैं वध बन्धन ते गुरु सदा सहाय हमारे ॥

१४ याचना परीषह—घोर वीर तप करत तपोधन भये क्षीण सूखी गलबाहीं। अस्थिचाम अवशेष रहेतनु नसा जाल झलके जिस माहीं ॥ औषधि असन पान इत्यादिक प्राण जाय परयाचित नाहीं। दुद्धर अयाचिक व्रत धारे करहिं न मलिन धर्म परछाहीं॥

१५ अलाभ परीषह—एकवार भोजनकी विरियां मौन साध बस्तीमें आवैं। जो नहि बने योग भिक्षा विधि तो महन्त मन खेद न लावैं। ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतें तब तप वृद्धि भावना भावैं। यों अलाभकी कठिन परीषह सहैं साधु सोही शिव जावैं ॥

१६ रोग परीषह—वात पित्त कफ शोणित चारों ये जय घटे बद तनु माहीं। रोग संयोग शोक तब उपजत जगत् जीव कायर हो जाहीं॥ ऐसी व्याधि वेदना दारुण सहैं सूर उपचार न चाहीं। आतमलीन विरक्त देहसे जैन यती निज नेम निवाहीं॥

१७ तृण स्पर्श परीषह—सूखे तृण और तीक्ष्ण काटे कठिन काकरी पाय विदारैं। रज उड आन पड़े लोचनमें तीर फास तनु पीर विथारै॥ तापर पर सहाय नहि वाछत अपने करसों काढ़ न डारें। यों तृणस्पर्श परीषह विजयी ते गुरु भव भव शरण हमारे॥

१८ मल परीषह—यावज्जीवजल न्हौन तजो तिन नग्न रूप वन थान खडे हैं। चले पसेव धूपकी विरियां उडत धूल सब अङ्ग भरे हैं॥ मलिन देहको देख महा मुनि मलिन भाव उर नाहीं करे हैं। यों मल जनित परीषह जीतैं तिन्हें पाय हम सीस धरे हैं॥

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह—जो महान विद्यानिधिविजयी चिर तपसी गुण अतुल भरे हैं। तिनकी विनय वचन सों अथवा उठ प्रणाम जन नाहि करे हैं॥ तौ मुनि तहा खेद नहि माने उर मलीनता भाव हरे हैं। ऐसे परम साधुके अहनिशि हाथ जोड़ हम पाय परे हैं॥

२० प्रज्ञा परीषह—तर्क छन्द व्याकरण कलानिधि आगम अलङ्कार पढ़ जानैं। जाको सुमति देख परवादी विलखे होंय लाज उर आनैं॥ जैसे सुनत नाद केहरिको वन गयन्द भाजत भय मानैं। ऐसी महाबुद्धिके भाजन ये मुनीश मद रञ्ज न ठानैं॥

२१ अज्ञान परीषह—सावधान वर्तें निशि वासर संयम शूर परम वैरागी। पालतगुप्ति गये दीरघ दिन सकल सङ्ग ममतापर

त्यागी ॥ मतिविभ्रम अथवा मन पर्यय केवल बुद्धि न भाखई जागी। यों विकल्प नहिं करें तपोधन सो अज्ञान विजयी बड़भागी

२६ अदर्शन परीषह—मैं चिरकाल घोर तप कीनो अजहुं ऋद्धि अतिशय नहिं जागी। तप बल सिद्ध होय सब सुनियत सो कछु बात झूठसी लागी ॥ यों कदापि चितमें नहिं चिन्तत समकित शुद्ध शान्तिरस पागी,सोई साधु अदर्शन विजयी ताकेदर्शनसे अघ भागे।

जिन कर्मके उदयसे कौनसी परीषह होती है।

ज्ञानावरणीते दोय प्रज्ञा अज्ञान होय एक महामोहतें अदर्शन बखानिये। अन्तराय कर्म सेती उपजै अलाभ दुःख सप्त चारित्र मोहनी केवल जानिये। नग्न निषद्यानारी मान सम्मान गारि याचना अरति सब ग्यारह ठीक ठानिये। एकादश बाकी रही वेदनी उदयसे कहीं बाईस परीषह उदय ऐसे उर आनिये।

अडिल छन्द—एक बार इन माहिं एक मुनिके कही। सब उन्नीस उत्कृष्ट उदय आवें सही ॥ आसन शयन विहार दोय इन माहिंकी। शीत उष्णमें एक तीन ये नाहिंकी ॥

१११—बारहमासा मुनिराजजी

राग मरहठी—मैं वन्दू साधु महन्त बड़े गुणवन्त सभी चित लाके। जिन अथिर लखा संसार बसे वन जाके ॥ टेक ॥

चित चैतमें व्याकुल रहे काम तन दहे न कछु बस आवे। फूली वनराई देख मोहमद छावे। जब शीतल चले समीर स्वच्छ हो नीर मगन सुख भावे। किस तरह योग योगीश्वरसे बन आवे।

(झड़)—तिस अवसर श्रीमुनि ज्ञानी, रहें मगन ध्यानमें ध्यानी। जिन काया लखी पयानी। जग ऋद्धि बराबर सम जानी ॥

उस समय धीर धर रहें अमर पद लहे ध्यान शुभ ध्याके। जिन अथिर लखा संसार वसे वनजाके॥ १॥

जब आवत है वैसाख, होय तृण खाक तापसे जलके। सब करें धाम विश्राम पवन झलझलके॥ ऋतु गर्मीमें संसार पहिन नर नार वस्त्र मलमलके। वे जलसे करते नेह जो हैं जी थलके॥

(झड़)—जिस समय मुनी महराजे, तन नग्न शिखर गिरि राजे। प्रभु अचल सिंहासन राजे, कहो क्यों न कर्म दल लाजे। जो घोर महा तप करें मोक्षपद धरे वसें शिव जाके। जिन आथिर लखा संसार वसे वन जाके॥ २॥

जब पडे ज्येष्ठमें ज्वाला होय तन काला धूपके मारे। घर बाहर पग नहिं धरे कोई घरवारे॥ पानीसे छिडके धाम करें विश्राम सकल नर नारी। धर खसकी टटिया छिपें लूहकी मारी॥

(झड)—मुनिराज शिखर गिर ठाढ़े, दिन रैन रिद्धि अति वाढे। अति तृषा रोग भय वाढे, नव रहे ध्यानमें गाढ़े॥ सब सूखे सरवर नीर जलें शरीर रहें समझाके। जिन अथिर लखा ससार वसे वन जाके॥ ३॥

अषाढ़ मेघका जोर वोलते मोर गरजते बादल। चमके बिजली कड कडेपडे धारा जल॥ अति उमडे नदिया नीर गहर गम्भीर भरे जलसे थल। भोगीको ऐसे समय पड़े कैसे कल॥

(झड)—उस समय मुनी गुणवन्ते, तरुवट तट ध्यान धरन्ते॥ लति कार्टें जीव अरु जन्ते, नहीं उनका सोच करन्ते। वे काटें कर्म जंजीर नहीं दिलगीर रहें शिव पाके। जिन अथिर लखा संसार वसे वन जाके॥ ४॥

भावनमें है त्योहार भूलती नार चढ़ी हिंडोले। वे गावें राग मल्हार पहन नये चोले॥ अग मोह तिमिर मन बसे सर्व तन कसे हेत भकझोले। इस अवसर श्रीमुनिराज करत हैं मोले॥

(मद्द) ये शीतें रिपुसे लरके कर ज्ञान खड्गसे करके। शुभ शुक्ल ध्यानको धरके, परफुल्लित केवल वरके॥ नहीं लहीं वो यम का भास खड़े शिव वास अपार लखाके। जिन मंदिर सखा संसार बसे वन जाके॥ ५॥

मादव अंधियारी रात सूझे ना हाथ घुमर रहे बादर। वन मोर पपीहा कोयल बोलें दादुर॥ अति मच्छर भिन भिन करें साँप फुंकारें पुकारें थरथर। बहु सिंह बघेरा गज घूमें वन अन्दर॥

(मद्द)—मुनिराज ध्यान शुभ पूरे, कर कारें कर्म मजूरे। तनु चिपटत काम खजूरे, मधु मक्ष ततये भूरे॥ बिच्छियोंने विष लगाये, आप मुनि खड़े हाथ लटकाके। जिन मंदिर सखा संसार बसे वन जाके॥ ६॥

आश्विनमें वर्षा गई समय नहिं रही दशहरा आया। नहिं रही वृष्टि मत कामदेव लहराया॥ कामी नर करें शिकार बजावें ढोल करें मनभाया। हैं धन्य साधु जिन आतम ध्यान लगाया॥

(मद्द)—बहु चाम योगमें भीने मुनि आप कर्म क्षय कीने। उपदेश सबनको दीने, अमिवनको शिवपद लीने॥ हैं धन्य धन्य मुनिराज हाथके ताज भर्यु गिर जाके। जिन मंदिर सखा संसार बसे वन जाके॥ ७॥

कातिकमें आया शीत भई विपरीत अधिक ठण्डाई। संसारी बोलें शुभा कर्म दुखदाई॥ हाय नर नारीका मेल

मिथुन सुख केल करें मन भाई। शीतल रितु कामी जनको हैं सुखदाई ॥

(झड़)—जब कामी काम कमावें, मुनिराज ध्यान शुभ ध्यावें। सरवर तट ध्यान लगावें सो मोक्ष भवन सुख पावें ॥ मुनि महिमा अपरम्पार न पावें पार कोई नर ताके। जिन० ॥८॥

अगहनमें टपके शीत यही जगरीत सेज, मन भावै। अति शीतल चले समीर देह थरांवे ॥ शृंगार करें कामिनी रूप रस ठनी साम्हने आवे। उस समय कुमति वन सबका मन ललचावे ॥

(झड़)—योगीश्वर ध्यान धरे हैं, सरिताके निकट खड़े हैं। कहिं ओले अधिक परे हैं, मुनि कर्मका नाश करे हैं। जब पडे वर्फ घनघोर करें नहीं शोर जयी दृढ़ताके। जिन० ॥ ६ ॥

यह पौष महीना भला शीतमें घुला कापती काया। वे धन्य गुरू जिन इसरितु ध्यान लगाया ॥ घरवारी घरमें छिपें वस्त्र तन लिपें रहै जैडाया। तज वस्त्र दिगम्बर हो मुनि ध्यान लगाया ॥

(झड़)—जलके तट जग सुखदाई, महिमा सागर मुनिराई। धर घोर खडे है भाई, निज आतमसे लवलाई ॥ है यह संसार असार वे तारणहार सकल वसुधाके ॥ जिन० ॥ १० ॥

है माघ वसन्त वसन्त नार अरु कन्थ युगल सुख पाते। वे पहिने वस्त्र वसन्त फिरें मदमाते ॥ जब चढ़े मदनकी शयन पड़े नहि चैन कुमति उपजाते। हैं वड़े धीर जन बहुधा वे डिग जाते ॥

(झड़)—तिस समय जु हैं मुनि ज्ञानी, जिन काया लखी पयानी। भवि डूवत वोधे प्रानी जिन ये वसन्त जिय जानी ॥ चेतन सो खेलें होरीं ज्ञान पिचकारी योग जल लाके ॥ जिन० ॥

जब सभी महीमा फाग करें अनुराग सभी नरनारी। है सिरे पें डमें गुणास भर पिचकारी ॥ जब श्रीमुनिवर गुणखान अबक भर ध्यान करें तप भारी। कर शील सुधारस कर्मन ऊपर डारी ॥

(भड़)—कोशिं कुकर्म बनावे कर्मोसे फाग रचावें। जो बारहमासा गावे, सो अजर अमर पद पावे ॥ यह मार्ग क्रिया-काम धर्म गुणमाल योग दर्शावे ॥ जिन० ॥

११२—बारहमासा राजुल।

राग मरहटी [खड़ी]

मैं लूंगी श्रीअरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्त चारका सरना। निर्नेम नेमबिन हमें जगत् क्या करना ॥ टेक ॥

आसाढमास [खड़ी]

सखि आया आषाढ़ घनघोर मोर चहुं ओर मचा रहे शोर इन्हें समझावो। मेरे प्रीतमको तुम पवन परीक्षा लावो। है कहां मेरे भरतार कहां गिरनार महाव्रत धार बसे किस वनमें। क्यों बांध मोड़ दिया तोड़ क्या सोची मनमें ॥(झर्वट)—जा जा रे पपैया जारे प्रीतमको दे समझारे। रही नौ भव संग तुम्हारे क्यों छोड़ दई मझधारे ॥ (झर्वट)—क्यों बिना दोष भये रोष नहीं सन्तोष यही अफसोस बात नहीं बूझी। दिये जादों छप्पन कोड़ छोड़ क्या सूझी। मोहि राखो शरण मैंझार मेरे भर्तार करो उद्धार क्यों दे गये झुरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना ॥

श्रावण मास [खड़ी]

सखि श्रावण संवर करे समन्दर भरे दिगम्बर करे क्या करिये। मेरे जीमें ऐसी आवे महाव्रत धरिये। सब त जदू

शृंगार तजूं संसार क्यों भव मंझारमें जी भरमाऊं। क्या परा-धीन तिरियाका जन्म नहिं पाऊं [झर्वटे]—सब सुन लो राज दुलारी। दुख पड़ गया हमपर भारी। तुम तज दो प्रीति हमारी कर दो संयमकी त्यारी [झडी]—अब आ गया पावस काल करो मत टाल भरे सब ताल महा जल बरसै। बिन परसे श्रीभगवन्त मेरा जी तरसै। मैं तज दई तीज सलौन पलट गई पौन मेरा है कौन मुझे जग तरना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना

भादों मास [झडी]

सखि भादों भरे तलाव मेरे चितचाव करूंगी उछावसे सोलहकारण। करूं दसलक्षणके व्रतसे पाप निवारण। करूं रोट तीज उपवास पञ्चमी अकाश अष्टमी खास निशल्य मनाऊं। तपकर सुगन्ध दशमीको कर्म जलाऊं॥ (झवटे)—सखि दुर्द्धर रसकी बारा। तजिहार चार परकारा। करूं उग्र उग्र तपसारा ज्यों होय मेरा निस्तारा (झड़ी)—मैं रत्नत्रय व्रत धरूं चतुर्दशी करूं जगत से तिरूं करूं पखवाड़ा। मैं सबसे क्षिमाऊं दोष तजू सब राडा। मैं सातो तत्व विचार कि गाऊं मल्हार तजा संसारतौ फिर क्या करना। निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना।

आसोज मास [झड़ी]

सखि आ गया मास कुआर लो भूषण तार मुझे गिरनारकी दे दो आज्ञा। मेरे पाणिपात्र आहारकी है परतिज्ञा। लो तार ये चूड़ामणी रतनकी कणी सुनो सब जनी खोल दो वेनी। मुझको अवश्य परभातहि दीक्षा लेनी॥ (झर्वटे) मेरे हेतु कमण्डल लावो। इक पीछी नई मंगावो मेरा मत ना जी भरमावो। मत

पौस मास [झड़ी]

सखी लगा महीना पोह ये माया मोह जगत्से द्रोह रु प्रीत करावे। हरे ज्ञानावरणी ज्ञान अदर्शन छावे। पर द्रव्यसे ममता हरे तो पूरी पर जु सम्वर करैं तो अन्तर टूटै। अस ऊंच नीच कुल नामकी संज्ञा छूटै॥ (झर्वट)—क्यों ओछी उमर धरावै। क्यों सम्पतिको विलगावे। क्यों पराधीन दुख पावे। जो संयममें चित लावें॥(झडी)—सखि क्यों कहलावे दीन क्यों हो छवि छीन क्यों विद्याहीन मलीन कहावे। क्यों नारि नपु सक जन्मे कर्म नचावें। तजे शील शृङ्गार रुले संसार जिने दरकार नरकमें पडना। निर्न०

माघ मास [झड़ी]

सखि आगया माह वसन्त हमारे कन्त भये अरहन्त वो केवल-ज्ञानी उन महिमा शील कुशीलकी ऐसे वखानी। दिये सेठ सुदर्शन सूल भई मखतूल वहा वरसे फूल हुई जयवाणी वे मुक्ति गये अरु भई कलङ्कित राणी॥ (झर्वट)-कीचकने मन ललचाया। द्रौपदीप भाव धराया। उसे भीमने मार गिराया। उन किया जैसा फल पाया॥ (झड़ी)—फिर गह्या दुर्योधन चीर हुई दिलगीर जुड गई भीर लाज अति आवे। गये पाण्डु जुयेमें हार न पार वसावै। भये परगट शासन वीर हरी सब पीर बन्धाई धीर पकड लिये चरना॥ निर्नेम नेम विन०॥

फाल्गुन मास [झड़ी]

सखि आया फाग बड़ भाग नो होरी त्याग अठाही लाग के मैंनासुन्दर। हरा श्रीपालका कुष्ट कठोर उदम्बर। दिया धवल सेठने डार उदधिकी धार तो हो गये पार वे उस ही पलमें। अरु जापरणी गुणमाल न डूवे जलमें॥

(मर्वट)—मिली रैन मैथुया प्यारी। जिन स्वद्वा शीलको धारी। परी सेठ पै मार करारी। गया नर्कमें पापाचारी॥

(मर्द्री)—तुम सम्बो द्रोपदी सती होय नहि परी कहँ दुर्मति पदमके चपाल। हुमा प्रातकी खण्ड उदार शील इस बाइसन। अब फूटे घड़े मफार दिया जल डाल तो वे आधार थमा जल मरता॥ निर्मम नेम०॥

चैत मास [मर्द्री]

सखि चैतमें चिन्ता करै न कारज सरै शीलसे टरै कर्मकी रेखा। मैंने शीलसे शीलको होता जगत गुरु देखा। सखी शीलमें सुकलो तिरी सुतारा सिरी चन्दनासी करी घोरगुनलन। अब मिली शील परताप पलमसे अम्जन॥

(मर्वट)—रावणने कुमति उपाई। फिर गया विभीषण भाई। छिनमें सब लंक गमाई। कुछ भी नहि पार बसाई॥

(मर्द्री)—सीता सती अग्निमें पड़ो तो उसकी पड़ी वह शीलसे पड़ी बड़ी जल धारा। खिल गये कमल भये गगनमें जय जय-कारा। यम पूजे इन्द्र धरिन्द्र भई शीतेन्द्र सौभाग्यने ऐसा करना। निर्मम नेम बिन०॥

बसाख मास [मर्द्री]

सखि भाई वैसाखी मेघ भड़ीमें देख पै उत्तम रैन पड़ी मैं करमें। मैरा हुमा जनम शुं हीं अब सिवके घरमें। नहि किया करम मैं भोग पड़ा है भोग करो मत सोग जाऊं गिरनारी। है मात पिता सब धातसे क्षमा हमारी॥

(झर्वटें)—मैं पुण्य प्रताप तुम्हारे। घर भोगें भोग अपारे। जो विधिके अङ्क हनारे। नहीं टरें किसीके टारे।

(झड़ी)—मेरी सखी सहेली वीर न हो दिलगीर धरो चित धीर मैं क्षमा कराऊं। मैं कुलको तुम्हारे कवहु न दाग लगाऊं। वह ले आज्ञा उठ खड़ी थी मङ्गल घड़ी वनमें जा पड़ी सुगुरुके चरना। निर्नेम नेम विन० ॥

जेठ मास [झडी]

अजी पड़ी जेठकी धूप खड़े सब भूप वह कन्या रूप सती वड़ भागन कर सिद्धनको प्रणाम किया जग त्यागन। अजि त्यागे सव संसार चूड़िया तार कमण्डलु धार के लई पिछौठी। अरु पहर के साड़ी श्वेत उपाटी चोटी ॥

(झर्वटें)—उन महा उग्र तप कीनो। फिर अच्युतेन्द्र पद लीना, है धन्य उन्हींका जीना नहिं विपयमें चित्त दीना ॥

(झड़ी)—अजी त्रिया वेद मिट गया पाप कट गया पुण्य चढ़ गया वढ़ा पुरुपारथ। करे धर्म अरथ फल भोग रुचे परमारथ वो स्वर्ग सम्पदा भुक्ति जायगी मुक्ति जैनकी उक्तिमें निश्चय धरना निर्नेम नेम० ॥

जो पढ़े इसे नर नारि वढ़े परिवार सव संसारमें महिमा पावैं सुन सतियन शील कथान विघ्न मिट जावैं। नहीं रहैं सुहागिन दुखी, होय सव सुखी मिटे वेरूपा करै पति आदर। वे होंय जगत में महा सतियोंकी चादर ॥

(झर्वटें)—मैं मानुप कुल में आया। जाति यती कहलाया। है कर्म उदयकी माया। विन संयम जन्म गंवाया ॥

नये जहां कर्म। पिछले रुक प्रगटे निज धर्म ॥ ९ ॥ थिति पूर्ण ह्वे खिर २ जाय। निर्जर भाव अधिक अधिकाय। निर्मल होय चिदानन्द आप। मिटे सहज परसंग मिलाय ॥१०॥ लोक माहि तेरी कछु नाहिं। लोक अन्य तू अन्य लखाहिं॥ वह सब पट् द्रव्यनका धाम तू चिन्मूरति अन्तर राम ॥११॥ दुर्लभ परको रोकन भाव। सो तो दुर्लभ है सुन राव। जो तेरे है ज्ञान अनन्त। सो नहि दुर्लभ सुनी महन्त ॥ १२ ॥ धर्म स्वभाव आपही जान। आप स्वभाव धर्म सोइ मान॥ जब वह धर्म प्रगट तोहि होइ। तब परमातम पद लाख सोइ ॥१३॥ ये ही वारह भावन सार। तीर्थंकर भावैं निर्धार। होय राग महाव्रत लेय। तब भव भ्रमण जलाजलि देय ॥ १४ ॥ भैया भावो भाव अनूप। भावत होय तुरत शिव भूप। सुख अनन्त विलसो निशि दीश। इस भावो स्वामी जगदीश ॥ १५ ॥

दोहा—प्रथम अथिर अशरण जगत, कहैं अन्य अशुचान।
आश्रव संवर निर्जरा, लोक वोध तुम मान ॥६॥

११४—वारह भावना भूधरदास कृत

दोहा—राजा राणा छत्रपति हथियनके असवार। मरणा सब को एक दिन, अपनी अपनी वार ॥ १ ॥ दल वल देवी देवता, मात पिता परिवार। मरती विरियां जीवको, कोई न राखनहार ॥२॥ दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णा वश धनवान। कहीं न सुख संसारमें सब जग देखो छान ॥ ३ ॥ आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय। यूं कबहू इस जीवका, साथी सगा न कोय ॥४॥ जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय। पर सम्पति पर प्रगटये, पर हैं परिजन लोय ॥५॥ दिये चाप चादर मढ़ी हाड पींजरा देह। भीतर या सम जगतमें, और नहीं घिन गेह ॥ ६ ॥

सोरठा—मोह नींदके जोर, जगवासी घूमैं सदा। कर्म चोर चहुं ओर, सरवस लूटे सुध नहीं ॥७॥ सतगुरु देय जगाय मोह नींद जब उपशमै। तब कुछ बने उपाय कर्म चोर आवत रुकें ॥८॥

दोहा—ज्ञान दीप तप तेल भर घर शोधै भ्रम छोर। या विधि बिन निकसै नहीं, बैठे पूरब चोर ॥९॥ पञ्च महाव्रत संचरण सुमति पञ्च परकार। प्रबल पञ्च इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार ॥१०॥ चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान। तामें जीव अनादितै, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥११॥ जाचे सुरतरु देय सुख चिन्तत चिन्ता रैन। बिन जाचे बिन चिन्तये धर्म सकल सुख देन ॥१५॥ धन कन कंचन राज सुख सबै सुलभ कर जान। दुर्लभ है संसारमें एक यथारथ ज्ञान ॥१२॥ सम्पूर्ण ॥

११५—बारह भावना बुधजनदास कृत

गीता छन्द—जेती जगतमें वस्तु तेती अथिर परिणमती सदा परणमन राखन नाहि समरथ इन्द्रचक्री मुनि कदा ॥ तन धन यौवन सुत नारि परकर जान दामिन दमकसा। ममता न कीजे धारि समता मानि जलमें नमकसा ॥१॥ चेतन अचेतन परिग्रह सब हुआ अपनी थिति लहैं। सो रहैं आप करार माफिक अधिक राखे ना रहैं ॥ अब शरण काकी लेयगा जब इन्द्र नाहीं रहत हैं। शरण तो इक धर्म आतम याहि मुनिजन गहत हैं ॥२॥ सुर नर नरक पशु सकल हेरे कर्म चेरे बन रहे। सुख शास्वता नहीं भासता सब विपतिमें अति सन रहे ॥ दुख मानसी तो देवगतिमें नारकी दुख ही भरे। तिर्यंच मनुज वियोग रोगी शोक संकटमें जरे ॥३॥ क्यों भूलता शठ फूलता है देख पर कर थोकको ॥ लाया कहाँ तै

श्रीमुक्तागिरिजी।

श्रीमांगीतुंगीजी।

श्रीपावापुरी।

श्रीसम्मेदशिखरजी।
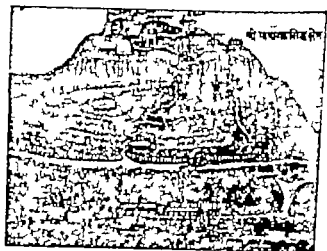
जायगा क्या फौज भूषण रोकको। जन्मन मरण तुझ एकलेको काल केता होयगा। संग अरु नाहीं लगे तेरे सीख मेरी सुन भगा ॥ ४॥ इन्द्रीनसे जाना न जावे तू चिदानन्द अलक्ष है। स्व सम्वेदन करत अनुभव हेत तव प्रत्यक्ष है। तन अन्य जन जानो सरूपी तू अरूपी सत्य है। कर भेद ज्ञान सो ध्यान धर निज और वात असत्य है ॥५॥ क्या देख राचा फिरे नाचा रूप सुन्दर तन लिया। मल मूत्र भाड़ा भरा गाढ़ा तू न जाने भ्रम गया। क्यों सूग नाहीं लेत आतुर क्यों न चातुरता धरे। तोहि काल गटके नाहिं अटके छोड तुमको गिर परे ॥ ६ ॥ कोई खरा अरु कोई बुरा नाहीं वस्तु विविध स्वभाव हैं। तू वृथा विकलप ठान उरमें करत राग उपाव है। यों भाव आश्रम बनत तू ही द्रव्य आश्रव सुन कथा। तुझ हेतुते पुदगल करम वन निमित्त हो देते व्यथा ॥ ७ ॥ तन भोग जगत सरूप लख डर भविक गुरु शरणा लिया। सुम धर्म धारा भर्म गारा हर्ष रुचि सन्मुख भया। इन्द्री अनिन्द्री दान्ति लीनी त्रस स्थावर बस तजा। तब कर्म आश्रव द्वार रोके ध्यान निजमें जा सजा ॥ ८ ॥ तजा शल्य तीनों वरत लीनों वाह्य भ्यंतर तप तपा। उपसर्ग सुर नर जड़ पशु कृत सहे निज आतम जपा ॥ तब कर्म रस बन होन लागे द्रव्य भावन निर्जरा। सब कर्म हरके मोक्ष वरके रहत चेतन ऊजरा ॥ ९ ॥ बिच लोकनन्तालोक माहीं लोकमें द्रव सब भरा। सब भिन्न २ अनादि रचना निमित्त कारणकी करा॥ जिनदेव भाषा तिन प्रकाशा भर्म नाशा सुन गिरा ॥ सुर मनुष तिर्यंच नारकी है उर्ध्व मध्य अघोधरा ॥ १० ॥ अनन्त काल निगोद अटका निकस थावर तन धरा। भूवार तेज वयार

है के ये इन्द्रिय बल भवतरा। फिर हो देहस्यी या श्वोस्यी पंचैन्द्री मन बिन बना। मन युत मनुष गति होना दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ घना ॥ ११ ॥ महामा धोना तीर्थ जाना धर्म नाहीं जप जपा तप तपना धर्म नाहीं धर्म नाहीं तप तरा ॥ वर धर्म निज आत्म स्वभावा ताहि बिन सब निष्फला। बुधजन धर्म निज धार लीना तिन ही कीना सब भला ॥ १२ ॥

दोहा—अथिर शरण संसार है एकत्व अनित्यहि जान।

अशुचि आस्रव संवरा निर्जर लोग बखान ॥ १३ ॥

बोध औ दुर्लभ धर्म ये, बारह भावन जान।

इनको ध्यावे जो सदा क्यों न लहैं निर्वाण ॥ १४ ॥

॥ इति बारह भावना बुधजन कृत सम्पूर्ण ॥

११६—वैराग्य भावना।

दोहा—बीज राग फल भोगवे ज्यों किसान जग माँहि।

त्यों चक्री सुख है मगन धर्म विसारे नाहिं।

इस विधि राज्य करै नरनायक भोगे पुण्य विशाल। सुख सागरमें मग्न निरन्तर जात न जानो काल ॥ एक दिवस शुभकर्म योगसे क्षेमंकर मुनि वन्दे। देखे श्रीगुरुके पद पङ्कज लोचन अलि आनन्दे ॥ १ ॥ तीन प्रदक्षिणा दे शिर नायो कर पूजा स्तुति कीनी साधु समीप विनय कर बैठो चरणोंमें दृष्टि दीनी ॥ गुरु उपदेशो धर्म शिरोमणि सुन राजा वैरागो। राज्यरमा वनितादिक जो रससो सब नीरस लागो ॥२॥ मुनि सूरज कथनी किरणावलि लगत भर्म बुधि भागी। भव तन भोग स्वरूप विचारो परम धर्म अनुरागी ॥ या संसार महावन भीतर भरमत छोर न आवे। जन्मन मरन जरा

यों दाहे जीव महा दुख पावे ॥ ३ ॥ कबहूं कि जाय नर्क पद भुंजे छेदन भेदन भारी। कबहूं कि पशु पर्याय धरे तहां वध बन्धन भयकारी ॥ सुरगतिमें परि सम्पति देखे राग उदय दुख होई। मानुष योनि अनेक विपति मय सर्व सुखी नहिं कोई ॥ ४ ॥ कोई इष्ट वियोगी विलखे कोई अनिष्ट संयोगी। कोई दीन दरिद्री दीखे कोई तनका रोगी ॥ किस ही घर कलिहारी नारी के वैरी सम भाई। किस हीके दुख बाहर दीखे किसही उर दुखदाई ॥ ५ ॥ कोई पुत्र विना नित झूरे होय मरै तब रोवै। खोटो सन्ततिसे दुख उपजे क्यों प्राणी सुख सोवे॥ पुण्य उदय जिनके तिनको भी नाहिं सदा सुख साता। यह जग बास यथारथ दीखे सबही है दुखदाता ॥ ६ ॥ जो ससार विषें सुख होते तीर्थंकर क्यों त्यागे। काहेको शिव साधन करते संयमसे अनुरागे। देह अपावन अथिर घिनावनी इसमें सार न कोई। सागरके जलसे शुचि कीजे तोभी शुद्धि न होई ॥७॥ सप्त कुधातु भरी मलमूत्र चर्म लपेटी सोहै। अन्तर देखन या सम जगमें और अपावन को है ॥ नव मल द्वार श्रवे निशवासर नाम लिये घिन आवे। व्याधि उपाधि अनेक जहां तहां कौन सुधी सुख पावे ॥८॥ पोषत तो दुख दोष करे अति सोषत सुख उपजावे। दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूरख प्रीति बढ़ावे ॥ राचन योग्य स्वरूप न याको विरचन योग्य नहीं हैं। यह तन पाया महातप कीजे इसमें सार यही है ॥ ९ ॥ भोग बुरे भवरोग बढ़ावे वैरी हैं जग जीके। वे रस होय विपाक समय अति सेवत लागे नीके ॥ वज्र अग्नि विषसे विषधरसे हैं अधिक दुखदाई। धर्म रत्नको चोर प्रबल अति दुर्गति पन्थ सहाई ॥१०॥मोह उदय यह जीव अज्ञानी भोग भले कर जाने

ज्यों कोई जन खाय धतूरा सो सब कञ्चन माने ॥ ज्यों ज्यों भोग संयोग मनोहर मन वांछित जन पावै। तृष्णा नागिन त्यों त्यों डंकै लहर ज़ोम विष मावे ॥ ११ ॥ मैं चक्रीपद पाय निरन्तर भोगे भोग घनेरे ॥ तोभी तनक भये ना पूरण भोग मनोरथ मेरे राज समाज महा अघ कारण वैर बढ़ावन हारा। वेश्या सम लक्ष्मी अति चञ्चल इसका कौन पत्यारा ॥ १२ ॥ मोह महा रिपु वैर विचारै जग जीव संकट डारै। घर कारागर वनिता बेड़ी परजन जन रखवारे ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप ये जियको हितकारी। यै ही सार असार और सब यह चक्री चित धारी ॥१३॥ छोड़े चौदह रत्न नवोनिधि और छोड़े सङ्गसाथी। कोडि अठारह घोड़े छोड़े चौरासी लख हाथी ॥ इत्यादिक सम्पति बहु तेरी जीर्ण तृणवत त्यागी। नीति विचार नियोगी सुतको राज्य दियो बड़ भागी ॥१४ होय निशल्य अनेक नृपति संग भूषण वसन उतारे। श्रीगुरुचरण धरी जिन मुद्रा पञ्च महाव्रत धारे ॥ धन्य यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम धन्य यह धैर्यधारी। ऐसी सम्पति छोड़ बसे वन तिन पद धोक हमारी ॥ १५ ॥

दोहा—परीग्रह पोट उतार सब, लीनो चारित्र पन्थ।
निज स्वभावमें स्थिर भये वज्र नाभि निग्रन्थ ॥

११७—समाधिमरण।

गौतम स्वामी वन्दों नामी मरण समाधि भला है। मैं कब पाऊं निशदिन ध्याऊं गाऊं वचन कला है ॥ देव धरम गुरु प्रीति महा दृढ़ सात व्यसन नहि जाने। त्यागि बाइस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठाने ॥ १ ॥ चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी

त्रस न विरोधे। वनिज करे पर द्रव्य हरे नहिं छहो करम इमि साधे॥ पूजा शास्त्र गुरनकी सेवा सयम तप चहु दानी। पर उपकारी अल्प अहारी सामायक विधि ज्ञानी॥२॥ जाय जपे तिहं योग धरे दृग तनकी ममता टारे। अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारे॥ आग लगे अरु नाव डूबे जब धर्म विघन जब आवे। चार प्रकार अहार त्यागिके मन्त्र सुमनमें ध्यावे॥३॥ रोग असाध्य जहा बहु देखे कारण और निहारे। बात बड़ी है जो बनि आवे भार भवनको डारे॥ जो न बने तो घरमें रह करि सबसों होय निराला। मात पिता सुत त्रियको सौंपे निज परिगृह इहि काला॥४॥ कछु चैत्यालय कछु श्रावक जन कछु दुखिया धन देई। क्षमा क्षमा सबही सों कहिके मनकी शल्य हरेई॥ शत्रु न सों मिलि निज कर जोरे मैं बहु करी है बुराई। तुमसे प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो भाई॥५॥ धन धरती जो मुख सो मागे सो सब दे सतोषे। छहो कायके प्राणी ऊपर करुणा भाव विशेषे॥ ऊंच नीच घर बैठ जगह इक कछु भोजन कछु पेले। दूधा धारी क्रम क्रम तजिके छाछ अहार पहेले॥६॥ छाछ त्यागिके पानी राखे पानी तजि संथारा। भूमिमाहि फिर आसन माड़े साधर्मी ढिग प्यारा॥ जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवाणी पढ़िये। यों कहि मौन लियो सन्यासी पंच परम पद गहिये॥७॥ चौ आराधन मनमें ध्यावे बारह भावन भावे। दश लक्षण मन धर्म विचारे रत्नत्रय मन लावे। पैंतिस सोलह षट पन चौ दुइ इक वरन विचारे। काया तेरी दुखकी ढेरी ज्ञान मई तू सारे॥८॥ अजर अमर निज गुण सो पूरे परमानन्द

सुमावे। भामण्डल्द बिरानन्द साहब तीम जगतपति स्वामे।
सुधा तृषादिक होय परीषह सहै भाव सम रसकी। अतीचार
पाँचों सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखे॥ १॥ हाड़ मांस सब सूखि
जाय जब धरम लीन तन त्यागे। अद्भुत पुण्य उपाय सुरगमें
सेज उठे ज्यों जागे। तह तें आवें शिवपद पावें विलसें सुख
अनन्तो। धानत यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥१०॥

११८—मेरी द्रव्य पूजा।

कृमि-कुल-कलित नीर है जिसमें मच्छ—कच्छ मैंडक फिरते,
हैं मरते औ वहीं जनमते प्रभो! मूत्रादिक भी करते।
दूध निकालें लोग छुड़ाकर बच्चेको पीते पीते, है उच्छिष्ट
अनीतिलब्ध यों योग्य तुम्हारे नहिं दीखे॥ १॥ दही घृतादिक
भी ऐसे हैं कारण उनका दूध यथा, फूलोंको भ्रमरादिक सूंघे,
वे भी हैं उच्छिष्ट तथा। दीपक तो पतङ्ग-कालानल जलते
जिसपर कौन सखा, त्रिभुवनसूर्य! आपको अथवा दीप दिखाना
नहीं भला॥ २॥ फल मिष्टान्न अनेक यहां पर उसमें ऐसे एक
नहीं। मल छिंया मक्खीने जिसको भाकर प्रभुवर! छुआ नहीं।
यों अपवित्र पदार्थ, अरुचिकर तु पवित्र सब गुण घेरा किस
विधि पूजूँ क्या हि चढ़ाऊं चित्त डोलता है मेरा॥ ३॥ औ
आता है ध्यान तुम्हारे क्षुधा-तृषाका लेश नहीं, नाना रस-युत
अन्नपानका अतः प्रयोजन रहा नहीं। नहिं वांछा न विनोद भाव
नहिं राग अंशका पता कहीं, इससे व्यर्थ चढ़ाना होगा, औषध
सम जब रोग नहीं॥४॥ यदि तुम कहो रत्न-वस्त्रादिक भूषण क्यों
न चढ़ाते हो अन्य सदृश पावन हैं अर्पण करते क्यों सकुचाते हो।

तो तुमने निःसार समझ जब, खुशी २ उनको त्यागा, हो वैराग्य-लीन मत स्वामिन ! इच्छाका तोडा तागा ॥ ५ ॥ तब क्या तुम्हें चढ़ाऊं वे ही, करूं प्रार्थना ग्रहण करो ! होगी यह तो प्रकट अज्ञता, तव स्वरूपकी, सोच करो । मुझे धृष्टता दीखे अपनी और अश्रद्धा बहुत बडी, हेय तथा सम्यक्त वस्तु यदि तुम्हें चढाऊं घड़ी घड़ी ॥ ६ ॥ इससे 'युगल' हस्त मस्तकपर रखकर नम्रीभूत हुआ, भक्ति सहित मैं प्रणमूं तुमको, बार बार गुण-लीन हुआ । सस्तति शक्ति समान करूं औ, सावधान हो नित तेरी, काय वचनकी यह परिणति ही अहोद्रव्य-पूजा मेरी ॥७॥भाव भरी इस पूजासे ही, होगा आराधन तेरा, होगा तव सामीप्य प्राप्त औ सभी मिटेगा जग फेरा । तुझमें मुझमें भेद रहेगा नहि स्वरूपसे तव कोई, ज्ञानानन्द—कला प्रगटेगी, थी अनादिसे जो खोई ॥ ८ ॥

११६—अठारह नाते ।

कोई किसीका सगा नहीं झूठी सब नातेदारी । अठारह नाते हुए हैं एक जन्महीमें जारी ॥ टेक ॥ मालव देश उज्जैन शहरमें सेठ सुदत्त बसें भारी, बसन्ततिलिका वेश्या जिन्होंने निज घरमें डारी । रोग सहित सब भई बेसवा सेठि अरुचि चितमें धार, गर्भवतीको महलसे छिनमें कर दीनी उनने न्यारी ॥

शेर—निरादर हो गणिका वहांसे घर अपने आई है । खड़ी दिलगीर हो सोचें पड़ी कैसी तबाही है ॥ जने लडका और लडकी जोड़ले ऐसी माई है । जुदे इनको करूं घरसे जभी मेरी रिहाई है ॥ सुत डारा उत्तरदिशि मांहीं तनुजा दक्षिणदिशि डारी अठारह नाते हुए हैं एक जन्महीमें जारी ॥ १ ॥ प्रयागवासी

बनजारेकी लड़की पर आ नजर पड़ी। उठा गोदमें नाम कमला-आ रक्खा किसी घड़ी॥ तूजे बनजारे सुमद्रकी लड़के पर आ द्रुष्टि पड़ी। उठा गोदमें नाम धनदेव रक्खा परवरिस करी॥ वे लड़का अरु लड़की दोनों वे अपनी घर आए हैं। परिवरिस पा बड़े हुये ब्याहने योग्य पाए हैं॥ बनी दुलहिन कमला दुलहा धन देव भाई है। मिला संयोग हुए ऐसा बहिन भाई बिवाहे हैं॥ भोग भोगवें भाई बहिन मिल्ल विधना तेरी बलिहारी॥ अठारह नाते हुए हैं एक जन्महीमें भारी॥२॥ समय पाय व्यापार हेत धनदेव गया उज्जैन नगर। दैवयोगसे मई मिल माताकी वो बार नजर॥ अमरथ ऐसा हुआ किया विभचार जु दोनोंने मिलकर। भेद न जाना भोगने भोग सभी माता सुत हुए॥ कई दिनतक वहां धनदेवको गणिका रमाया है। योग संयोग हुए ऐसा धरण एक बालक आया हैं। कहीं कमलाने यह सब भेद मुनिवर सेती पाया है पालना झूलता बालक तरुण अ हपर बताया है।
पहुंची सो उज्जैन नगर बाई रक्खा देखी संसारी। अठारह नाते हुए हैं एक जन्महीमें भारी॥३॥ हाय हाय सो करें अरे विधना तूने कीनी क्यारी। होते हीसे मुझे क्यों नहि तूने गर्दन मारी॥ क्या कहके अब मुलाऊ इस वीरनको बता विचारी। छै नाते हैं मेरे इस बालकसे सुन महतारी प्रथम तो पुत्र है मेरा तू मुझ भरतारसे उपजा। तनुज धनदेव भाईका लगा जिससे भतीजा है॥ मेरी तेरी एक है माता लगा इस रीतसे भ्राता है। मेरे मालिकका लघु भाई लगा देवर का नाता है॥ माता मेरीका तू देवर चचा इस तरह होता है।

सौतके पुत्रका तू पुत्र इत नातेसे पोता है॥ छहनातेकर त्रिरन भुलाऊं कथा करी जाहर सारी। अठारह नाते हुए हैं एक जन्मही में जारी॥४॥ गणिका पतिसे हुआ पिता जिस लघु भाई मुझ चाचा है। चचा पिता सो सगा धनदेव लगा मो दादा है। मेरा मालिक हुआ धन देव जिसने मुझे व्याहा है। मेरी तेरी है मात एक जिससे लगा तु भाया है॥ वेश्या सौत है मैं हूं धनदेव पुत्र मेरा हैं। मैं गणिका सुत वधू गनिकापति यों लगा ससुरा है॥ कहे धनदेवसे नाते जताया भेद सारा है। सुना अहवाल घबराके शब्द हाहा पुकारा है॥ देखा जगका हाल हुए कैसे कैसे अचरज-कारी। अठारह नाते हुए हैं एक जन्मही में जारी ॥ ५ ॥ प्रथम पैदा किया मुझको इस नाते महतारी है। मेरे भाईकी स्त्री है जिस करके मुझ भाबी है। पिया मुझ धनदेव है जिसकी माता तू दादी है सौत भी है वह जु मेरे मालिककी प्रिय प्यारी है॥ सौत पुत्र वधू गणिका सो मेरी भी वधू जाहिर। मैं उसके पुत्रकी स्त्री लगी मेरी सासू सरासर। कहे नाते अठारह अन्तमें इक सुगुरु सीख है। छुटा जगजालसे यहां कर्म शत्रु का वड़ा डर है। कुन्दन ऐसे अनर्थ माया विधना जगमें विस्तारी। अठारह नाते हुए है एक जन्महीमें जारी ॥ ६ ॥ इति ॥

११०—अठारह नातेकी कथा।

मालवदेश उज्जयनीविषैं राजा विश्वसैन तहां सुनत्त नाम श्रेष्ठी वसै सोलह कोटिको धनी सो वसन्ततिलका नाम वेश्यापर आसक्त होय ताहि अपने घरमें राखी, सो गर्भवती भई, जब रोग सहित देह भई, तब घरमेंसे काढि दई बहुरि वसन्त-

गिलका दुखी होकर अपने घर भाई सो उसके गर्भतें एक पुत्र और एक पुत्री साथही जुगल उत्पन्न होनेके कारण खेद खिन्न हुई तब क्रोधित होकर तिन दोऊ बालकनको जुदे २ कम्मलमें लपेटि पृथ्वीको तो दक्षिण द्वारपर डाली सो प्रयागनिवासी वन जारेने लेकर अपनी स्त्रीको सौंपा कमला नाम धरा, अर पुत्रको उत्तर द्वारपर डाला सो साकेतपुरेके एक सुभद्र बनजारेने अपनी स्त्री सुव्रताको दिया और धनदेव नाम धरा। बहुरि पूर्वोपार्जित कर्मके वशतें धन देव और कमलाके साथ विवाह हुआ, स्त्री-भर तार हुए, पाछे धनदेव व्यापार करनेके वास्ते उज्जयनी नगरी गया तहां वसन्ततिलका वेश्यासों लुब्ध भया तब ताके संयोग तें वस न्ततिलकाके पुत्र भया वरुण नाम धरा, उधर एक दिन कमलाने निमित्तज्ञानी मुनिसे इसकी कुशल वार्ता पूछी सो मुनिने पूर्व भवसों लेकर वर्तमानतक सकल वृत्तान्त कहा।

इनका पूर्व भव वर्णन

इसी उज्जयनी नगरीविषैं सोमशर्मा नाम ब्राह्मण ताकी काश्यपी नाम स्त्री तिनके अग्निभूत सोमभूत नामके दोय पुत्र सो दोनों पढ़ाते पढ़कर आवें थे, मार्गमैं जिनदत्तमुनिको ताकी माता सो जिनमती नाम अर्जिकाकू शरीर समाचार पूछता देखा और जिनभद्रनामा मुनिको सुभद्रानामा अर्जिका पुत्रकी स्त्री थी सो शरीर समाचार पूछती देखी तहां दोनों भाईने हास्य करी की तरुणके वृद्ध स्त्री और वृद्धके तरुणी स्त्री विधाताने अच्छे विपरीत रचना करी सो हास्यके पापतें सोमशर्मा तो वसन्त तिलका वेश्या हुई बहुरि अग्निभूत दोनों भाई मरिकरि वसन्त

तिलाकें पुत्र पुत्री जुगल हुये तिनने कमला अरु धनदेव नाम पाये बहुरि काश्यपी ब्राह्मणीका जीव धन देवके संयोगतें वरुण नाम पुत्र भया इस प्रकार पूर्वभवका उज्जयनी नगरीविषैं सकल वृत्तान्त सुननेसे कमलाको पहिले जन्मकी जानि स्मरण हुई तव वह बसन्त तिलकाके घर गई तहां वरुण पालनेमें भूलै था सो तोको कहती भई कि हे बालक ! तेरे साथ मेरे छै नाते हैं सो सुन-

१ प्रथम तो मेरा भरतार जो धनदेव ताके संयोगतैं तु पैदा भया सो मेरा भी (सौतेला) पुत्र है—२ दूजे धनदेव मेरा भाई है साका तूं पुत्र तातै मेंरा भतीजा भी है । ३—तीजे तेरी माता वसन्तातिलका सो ही मेरी माता है तिस तैं सहोदर है—४ चौथे तू मेरे भरतार धनदेवका छोटा भाई तिसकारण मेरा देवर भी हैं—५ पाचवें धनदेव मेरी माता वसन्त तिलकाका भरतार है तातौं धनदेव मेरापिता भया ताकातूं छोटा भाई तातौं काका हुवा छठें धनदेव मेरा पुत्र ताकातूं पुत्र तातें तूं तेरा पोता भो है

इस प्रकार वरुणके साथ छह नाते कहत हती सो वसन्त— तिलका तहा आई और कमलाको बोली कि तूं कौन है सो मेरे पुत्र सों इस प्रकार छै नाते सुनावै है ? तब कमला बोली तेरे साथ भी मेरे छह नाते हैं सो सुन—

१ प्रथम तो तू मेरी माता है क्योंकि धनदेवके साथ तेरे ही उदरसे युगल उपजी हू—२ दूजे धनदेव मेरा भाई ताकी तू स्त्री तातें मेरा भौजाई भो है—तीजे तू मेरी माता ताका भर्तार धनदेव मेरा पिता भया ताकी तू माना तातें मेरी दादी भी है—४ चौथे मेरा भरतार धनदेव ताकी तु स्त्री तातें मेरी सौतिन भी

है—५ पांचवें धनदेव तेरा पुत्र सो मेरा भी पुत्र ताकी स्त्री तातें मेरी पुत्र वधू भी है—६ छठे मैं धनदेवकी स्त्री तू धनदेवकी माता सो मेरा सासू भी है।—इस प्रकार वेश्या के नाते सुनकर विरामें विचारने लगी त्योंही वहां धनदेव आया ताकों देखि कमला बोली कि तुम्हारे साथ भी मेरे छह नाते हैं सो सुनो—१ प्रथम तो तू और मैं इसी वेश्याके उदर सों जुगल उपजे सो मेरा भाई है—२ दूजे तेरा मेरा विवाह भया सो मेरा पति भी है—३ तीजे वसन्त तिलका मेरी माता ताका तू भरतार तातें मेरा पिता भी है—४ चौथे वरुण तेरा छोटा भाई सो मेरा काका भया ताका तू पिता सो काकाका पिता सो मेरा दादा भी भया—५ पांचवें मैं वसन्त तिलकाकी सौत भइ तू मेरा सौतिनि पुत्र तातें तू मेरा भी पुत्र है—छठे तू मेरा भरतार तातें तेरी माता वसन्ततिलका मेरी सासू भई और सासुके तुम भरतार तातें मेरे ससुर भी भये।

इस प्रकार एक ही जन्ममें इन प्राणियोंके परस्पर अठारह नाते ये ताको उदाहरण [दृष्टान्त] कहा कि इस भांति इस संसार की विचित्र विड़ म्बना है इसमें कुछ सन्देह नहीं।

इस प्रकार अठारह नातेका ब्यौरा समाप्त।

नववा अध्याय

१२१—चौवीस तीर्थकरोंके चिन्ह।

१ ऋषभनाथके बैल २ अजितनाथके हाथी ३ संभवनाथके घोड़ा ४ अभिनन्दन नाथके बन्दर ५ सुमतिनाथके चकवा ६ पद्म

प्रभुके कमल ७ सुपार्श्वनाथके साथिया ८ चन्द्रप्रभुके चन्द्रमा ६ पुष्पदन्के नाकू १० शीतलनाथके कल्पवृक्ष ११ श्रेयांसनाथके गेंडा १२ वासुपूज्यके भैंसा १३ विमलनाथके सुअर १४ अनन्तनाथके सेही १५ धर्मनाथके वज्रदण्ड १६ शान्तिनाथके हिरण १७ कुंथनाथके वकरा १८ अरहनाथके मच्छी १६ मल्लनाथके कलश २० मुनिसुव्रतनाथके कछवा २१ नमिनाथके कमल २२ नेमिनाथके शख २३ पार्श्वनाथके सर्प २४ महावीरके सिंह।

१२२—बारह चक्रवर्ती

भरतचक्री, २ सगरचक्री, ३ मघवाचक्री ३ सनत्कुमारचक्री ५ शान्तिनाथचक्री (तीर्थंकर,) ६ कुन्थनाथचक्री (तीर्थंकर, ७ अरनाथचक्री (तीर्थंकर) ८ सभूमचक्री, ६ पदमचक्री वा महापद्म १० हरिपेणचक्री ११ जयचक्री १२ ब्रह्मदत्तचक्री।

१२३—नव नारायण।

१ त्रिप्रष्ट, २ द्विपृष्ट, ३ स्वयंभू, ४ पुरुपोत्तम, ५ पुरुपसिंह, ६ पुण्डरीक, ७ दत्त, ८ लक्ष्मण ६ कृष्ण।

नव प्रतिनारायण।

१ अश्वग्रीव, २ तारक, ३ मेरक, ४ मधु (मधुकैटभ)' ५ निशुंभ, ६ वली, ७ प्रह्लाद, ८ रावण, ६ जरासंध।

१२५—नव बलभद्र।

१ अचल, २ विजय, ३ भद्र ४ सुप्रभा ५ सुदर्शन, ६ आनन्द, ७ नन्दन (नन्द) ८ पद्म (रामचन्द्र) ६ राम (बलभद्र)।

१२६—नव नारद।

१ भीम, २ महाभीम, ३ रुद्र ४ महारुद्र, ५ काल ६ महाकाल ७ दुर्मुख, ८ नरकमुख ९ अधोमुख।

१२७—ग्यारह रुद्र।

१ भीमबली २ जितशत्रु ३ रुद्र ४ विश्वानल ५ सुप्रतिष्ठ ६ अचल ७ पुण्डरीक ८ अजितधर, ९ जितनाभि, १० पीठ, ११ सात्यकी।

१२८—चौबीस कामदेव।

१ बाहुबली, २ अमिततेज ३ श्रीधर, ४ दशभद्र, ५ प्रसेनजीत ६ चन्द्रवर्ण ७ अग्निमुक्ति, ८ सनत्कुमार (चक्रवर्ती) ९ वत्सराज, १० कनकप्रभु ११ मेघवर्ण, १२ शांतिनाथ (तीर्थंकर) १३ कुंथु नाथ (तीर्थंकर) १५ विजयराज १६ श्रीचन्द्र १७ राजा नल १८ हनुमान, १९ बलराजा २० वसुदेव २१ प्रद्युम्न २२ नागकुमार, २३ श्रीपाल, २४ जंबूस्वामी।

१२९—चौदह कुलकर।

१ प्रतिश्रुति २ सन्मति ३ क्षेमंकर ४ क्षेमंधर ५ सीमंकर, ६ सीमंधर ७ विमलवाहन ८ चक्षुष्मान् ९ यशस्वी १० अभिचन्द्र, ११ चंद्राभ, १२ मरुदेव १३ प्रसेनजित १४ नाभिराजा।

१३०—बारह प्रसिद्ध पुरुष

१ नाभि २ श्रेयांस ३ बाहुबली ४ भरत ५ रामचन्द्र ६ हनुमान ७ सीता ८ रावण ९ कृष्ण १० महादेव ११ भीम १२ पार्श्वनाथ।

१३१—विदेहक्षेत्रके २० विद्यमान तीर्थंकर।

१ सीमन्धर २ युगमन्धर, ३ बाहु ४ सुबाहु, ४ सुजात, ६ स्वयप्रभु ७ वृषभानन, ८ अनन्तवीर्य ६ सूरप्रभ, १० विशाल-कीर्त्ति ११ वज्रधर १२ चन्द्रानन १३ चन्द्रबाहु १४ भुजंगम, १५ ईश्वर १६ नेमप्रभ (नमि) १७ महाभद्र, १६ देवयश २० अजितवीर्य ।

१३२—भूतकालकी चौबीसी।

१ श्रीनिर्वाण २ सागर ३ महासिन्धु ४ विमलप्रभ ५ श्रीधर ६ सुदत्त ७ अमल प्रभ ८ उद्धार ६ अङ्गिर १० सन्मति ११ सिन्धु-नाथ १२ कुसुमाजलि १३ शिवगण १४ उत्साह १५ ज्ञानेश्वर १६ परमेश्वर १७ विमलेश्वर १८ यशोधर १६ कृष्णमति २० ज्ञानमति २१ शुद्धमति २२ श्रीभद्र २३ अतिक्रांत २४ शाति ।

१३३—भविष्यकी चौबीसी।

१ श्रीमहापद्म २ सुरदेव ३ सुपार्श्व ४ स्वयप्रभ ५ सर्वात्मभू ६ श्रीदेव ७ कुलपुत्रदेव ८ उदकदेव ६ प्रोष्ठिलदेव १० जयकीर्ति ११ मुनिसुव्रत १२ अरह (अमम) १३ निष्पाप १४ निष्कषाया १५ विपुल १६ निर्मल १७ चित्रगुप्त १८ समाधिगुप्त १६ स्वयंभू अनिवृत्त २१ जयनाथ २२ श्रीविमल २३ देवपाल २४ अनन्त-वीर्य ।

नोट—तीर्थंकर चक्रवर्ती नारायण प्रतिनारायण बलभद्र यह त्रेषठ शिलाका पुरुष कहाते हैं तथा नारद रुद्र कामदेव कुलकर और तीर्थंकरोंके माता पिता१ ६६ पुन्य पुरुष कहते हैं।

१३४—चौदह गुणस्थान।

१ मिथ्यात्व २ सासादन ३ मिश्र ४ अविरत सम्यक्त्व ५ देशव्रत ६ प्रमत्त ७ अप्रमत्त ८ अपूर्वकरण ९ अनिवृत्तिकरण १० सूक्ष्मसांपराय ११ उपशांतकषाय वा उपशांतमोह १२ क्षीण कषाय वा क्षीणमोह १३ सयोगकेवली १४ अयोगकेवली।

१३५—सोलह कारण भवन।

१ दर्शनविशुद्धि २ विनयसंपन्नता ३ शीलव्रतेष्वनतिचार ४ अभीक्ष्णज्ञानोपयोग ५ संवेग ६ शक्तितस्त्याग ७ तप ८ साधु समाधि ९ वैय्यावृत्य १० अर्हद्भक्ति ११ आचार्यभक्ति १२ बहुश्रुतभक्ति १३ प्रवचनभक्ति १४ आवश्यकापरिहाणी १५ मार्ग प्रभावना १६ प्रवचनवात्सल्य।

१३६—श्रावकोंके उत्तमगुण।

१ लज्जावंत २ दयावंत ३ प्रसन्नता ४ प्रतीतिवंत ५ परदोषाच्छादन ६ परोपकारी ७ सौम्यदृष्टि ८ गुणग्राही ९ मिष्टवादी १० दीर्घविचारी ११ दानवंत १२ शीलवंत १३ कृतज्ञ १४ तत्त्वज्ञ १५ धर्मज्ञ १६ मिथ्यात्व रहित १७ संतोषवंत १८ स्याद्वाद भाषी १९ अभक्ष्य त्यागी २० षट्कर्मप्रवीण

१३७—श्रावककी ५३ क्रिया।

८ मूलगुण १२ व्रत १२ तप १ समताभाव ११ प्रतिमा ४ दान ३ रत्नत्रय १ जलगालनक्रिया १ रात्रिभोजनत्याग और दिनमें अन्नादिक शोधकर खाना अर्थात् छानबीन कर देखभाल कर खाना।

श्रावकके ८ मूलगुण—५ उदंबर। ३ मकार।

१२ व्रत—५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत।

५ अणुव्रत—१ अहिंसाअणुव्रत, २ सत्याणुव्रत ३ पर-स्त्री त्याग अणुव्रत; ४ (अचौर्य) चोरी त्याग अणुव्रत, ५ परि-ग्रह-प्रमाण अणुव्रत।

३ गुणव्रत—१ दिग्व्रत २ देश ३ अनर्थदण्डत्याग।

४ शिक्षाव्रत—१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ अ-तिथि-संविभाग, ४ भोगोपभोगपरिमाण।

१२ तप—आचार्यके ३६ गुणोंमें लिखें हैं इनके भी वही नाम। श्रावकोंके अणुव्रत कम परीषह वाले।

११ प्रतिमा—दर्शनप्रतिमा, व्रत, सामायिक, प्रोषधो-पवास, सचित्तत्याग, रात्रिभुक्ति त्याग, ब्रह्मचर्य, आरम्भ त्याग, परिग्रह त्याग, अनुमतित्याग, उद्दिष्टत्याग।

चारदानआहारदान, औषधदान, शास्त्रदान, अभयदान।

३ रत्नत्रय—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यकचारित्र।

दातारके २१ गुण—९ नवधाभक्ति, ७ गुण, ५ आभू-षण। यह २१ गुण दातारके हैं अर्थात् दान देनेवाले दातारमें यह २१ गुण होने चाहिये।

नवधाभक्ति—पात्रको देख बुलाना, उच्चासन पर बैठाना चरण धोना, चरणोदक मस्तकपर चढ़ाना, पूजा करना, मन शुद्ध रखना, विनयरूप बोलना, शरीर शुद्ध रखना, शुद्ध आहार देना।

दातारके सात गुण—श्रद्धावान शक्तिवान् अलोभी, दयावान् भक्तिवान, क्षमावान, और विवेकवान्।

दातारके पांच भूषण-आनन्दपूर्वक देवे, आदर पूर्वक देवे, प्रियवचन कहकर देवे, निर्मल भाव रखे जन्म सफल माने।

दातारके पांच दूषण-बिलम्बसे देवे, विमुख होकर देवे, दुर्वचन कहकर देवे, निरादर करके देवे, देकर पछतावे।

१३८—ग्यारहप्रतिमाओंका सामान्य स्वरूप।

प्रणमि पंच परमेष्ठि पद, जिन आगम अनुसार, श्रावक प्रतिमा एक दश, कहुं भविजन हितकार ॥१॥ सवैया ॥ अष्टाकर व्रत पाले सामयिक दोष टाले, पोसो मांड सचित कों त्यागी को ध्यायके। रात्रिभुक्ति परिहरै ब्रह्मचर्य नित धरैं, आरम्भको त्याग करै सब वच कायके। परिग्रह काज टारैं अघ अनुमत छारै स्वनिमित त्तज टारैं असन बनायकें। सब एकादश भेद प्रतिमा शु धर्म गेह, धारैं देव व्रती वर हरष बढ़ायके।

दर्शन प्रतिमा।

अष्ट मूलगुण संग्रह करै, विसन सप्त सर्व परिहरै॥
पुन अष्टांग शुद्ध सम्यक्त, धरहिं प्रतिमा दर्शन रक्त ॥ १ ॥

व्रत प्रतिमा स्वरूप।

अणुव्रतपन अतिचार विहीन, धारह जो पुन गुणव्रत तीन शिक्षाव्रत संयुत जो सोय व्रत प्रतिमा धर श्रावक होय ॥२॥

सामायिक प्रतिमा स्वरूप-गीतका छन्दमें—

सब विषयमें समभाव धर शुभ भावना संयममहीं, दुरध्यान आरत रौद्र तजकर त्रिविध काल प्रमाणहीं। परमेष्टि[1] पन जिन वचन जिन वृष बिम्ब जिन जिनगृह तनी वन्दन त्रिकाल करहु सुधामहु मध्य सामायिक धनी ॥ ३ ॥

प्रोषध प्रतिमा स्वरूप (पद्धरी छन्द)

वर मध्यम जघन्य त्रिविध धरेय, प्रोषध विधि युत निजबल प्रमेय, प्रति मास चार पर्वी मंझार, जानहु सो प्रोषध नियम धार ॥

सचित्तत्याग प्रतिमा स्वरूप—(चौपाई)

जो परिहरै हरी सब बीज, पत्र प्रवाल—कन्द फल—बीज,
अरु अप्रासुक जल भी सोय, सचित त्याग प्रतिमा धर होय ।

रात्रि भुक्तत्याग प्रतिमा स्वरूप—(अडिल्ल छन्द)

मन वच तन कृत कारित अनुमोदै सही, नवविध मैथुन दिवस माहिं जो वर्ज ही । अरु चतुविध आहार निशा माही तजै, रात्रिमुक्ति परित्याग प्रतिमा सो सजै ॥ ६ ॥

ब्रह्मचर्यप्रतिमा स्वरूप—(चौपाई)

पूर्व उक्त मैथुन नव भेद, सर्व प्रकार तजै निरखेद ।
नारि कथादिक भी परिहरै ब्रह्मचर्य प्रतिमा सो धरै ॥

आरंभ त्याग प्रतिमा स्वरूप—(चौपाई)

जो कछु अल्प बहुत अघ काज, ग्रह सन्बन्धी सो सब त्याज
निरारम्भ ह्वै वृष रत रहै, सो जिय अष्टम प्रतिमा वहै ॥ ८ ॥

परिग्रहत्याग प्रतिमा स्वरूप—(चौपाई)

वस्त्र मात्र रख परिग्रह अन्य, त्याग करै जो व्रतसंपन्न,
तापै पुनःमूर्छा परहरै, नवमी प्रतिमा सो भवि धरै ॥ ९ ॥

अनुमतत्याग प्रतिमास्वरूप—(चौपाई)

जो प्रमाण अघमय उपदेश देय नहीं परको लवलेस ।
अरु तसुअनुमोदन भी तजै सोही दशमी प्रतिमा सजै ॥१०॥

उद्दिष्टत्याग प्रतिमास्वरूप—(चौपाई)

ग्यारम थान भेद द्वै होय इक क्षुल्लक इक ऐलक सोय
खण्ड वस्त्रधर प्रथम सुजान युत कोपी महि दुतिय प्रमान ॥११॥
ए गृह त्याग मुनिन ढिग रहैं या मठ मन्दिरमें निवसहीं,
उत्तर उद्दण्ड उचित आहार, करहिं शुद्ध अन्तराय नि वार ॥
दोहा—इम सब प्रतिमा एकदश दोअलेशव्रत यान,
गहै अनुक्रम मूल सह पालै भवि सुखदान ॥

१३९—श्रावकों के १७ नियम ।

१ भोजन, २ सचित वस्तु, ३ गृह, ४ संग्राम, ५ दिशागमन, ६ औषधिविलेपन, ७ तांबूल ८ पुष्पसुगन्ध ९ नाच १० गीत श्रवण ११ स्नान १२ ब्रह्मचर्य, १३ आभूषण, १४ वस्त्र,१५ शैय्या, १६ औषध खानी, १७ घोड़ा बैलादिककी सवारी ।*

१४०—सात व्यसनका त्याग ।

जूवा मांस मदिरा गणिका शिकार, चोरी परस्त्री ।

१४१—बाईस अभक्ष्यका त्याग ।

पांच उदम्बर—उदम्बर (गूलर) २ कठूम्बर, ३ पड़फल, ४ पीपलफल, ५ पाकर फल (पिलखन फल)।

तीन मकार १ मांस २ मधु, ३ मदिरा।

शेष १५ अभक्ष्य—ओला विदल, रात्रि भोजन, बहुबीजा बैंगन कन्दमूल, बगेर जाना फल, अचार विष, माटी बरफ, तुच्छ फल चलित रस, माखन ।

---

* नोट—प्रतिदिन जिन चीजोंकी जरूरत हो उसका प्रमाण करे कि आज यह करूं या वैसा प्रतिदिन त्याग करे।

१४२—श्रावकके षट् कर्म।

देवपूजा, गुरु सेवा, स्वाध्याय, संयम, तप, दान-यह छह कर्म प्रत्येक श्रावकको करना चाहिये।

१४३—दशलक्षण धर्म।

उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन ब्रह्मचर्य।

१४४—लघु अभिषेक पाठ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्यजगत्त्रयेशं स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्
श्रीमूलसंघसुदृशा सुकृतैकहेतुर्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाभ्यधायि॥

(इसको पढकर पुष्पांजलि छोडनी चाहिये)

श्रीमन्मन्दर सुन्दरे शुचिजलै धौते सदर्भाक्षतै
पीठे मुक्तिकरं निधाय, रचित त्वपादपद्मस्रज.
इन्द्रोऽहं निजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे।
मुद्राकङ्कणशेखरान्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे॥

(इस श्लोकको पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको यज्ञोपवीत तथा नाना प्रकार सुन्दर आभूषण धारण करना चाहिये।)

सौगन्धसंगतमधु व्रतझङ्कृतेन, संवर्ण्यमानमिव गंधमनिंद्यमादौ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्यपादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानां

(इसे पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको अंगमें चन्दनके नव तिलक करना चाहिये)

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाः प्रभूतबलदर्प युता विबोधा। संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम्॥

उद्दिष्टत्याग प्रतिमास्वरूप—(चौपाई)

ग्यारम थान भेद द्वै होय इक क्षुल्लक इक ऐलक सोय,
खण्ड वस्त्रधर प्रथम सुजान दुत कोपीन मद्धि कुत्सित प्रमाण ॥११॥
घर तज त्याग मुनिन ढिग रहै या मठ मन्दिरमें निवसई,
उत्तर कदरह उचित आहार, करहि गुरु आज्ञाय विचार ॥
दोहा—इम सब प्रतिमा एकदश दौलतेश्यत थान
गहै अनुक्रम मूल सह पाले भवि सुखदान ॥

१३९—श्रावकों के १७ नियम ।

१ भोजन, २ सचित वस्तु, ३ गृह ४ संग्राम ५ दिशागमन, ६ औषधिविलेपन, ७ तांबूल ८ पुष्पसुगन्ध ९ नाच, १० गीत श्रवण, ११ स्नान १२ ब्रह्मचर्य १३ आभूषण, १४ वस्त्र १५ शैय्या, १६ औषध आदि, १७ घोड़ा बैलगाड़ीआदिकी सवारी ।*

१४०—सात व्यसनका त्याग ।

जुआ मांस मदिरा गणिका, शिकार, चोरी परस्त्री ।

१४१—बाईस अभक्ष्यका त्याग ।

पांच उदम्बर—उदम्बर (गूलर), २ कठूमर, ३ बड़फल, ४ पीपलफल ५ पाकर फल (पिलखन फल)।

तीन मकार १ मांस, २ मधु, ३ मदिरा।

शेष १५ अभक्ष्य—ओला, विदल, रात्रि भोजन बहुबीजा बैंगन कन्दमूल, घघेर अजाना फल, अचार विष, माटी, बरफ, तुच्छ फल चलित रस माखन।

---

* नोट—प्रतिदिन जिन चीजोंकी जरूरत हो उसका प्रमाण करे कि आज इस कदर या इतना प्रतिदिन त्याग करे।

१४२—श्रावकके षट् कर्म ।

देवपूजा, गुरु सेवा, स्वाध्याय, संयम, तप, दान-यह छह कर्म प्रत्येक श्रावकको करना चाहिये ।

१४३—दशलक्षण धर्म ।

उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन ब्रह्मचर्य ।

१४४—लघु अभिषेक पाठ ।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्यजगत्त्रयेशं स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष महाभ्यधायि ॥

(इसको पढकर पुष्पाजलि छोडनी चाहिये)

श्रीमन्मन्दर सुन्दरे शुचिजले धौते सदर्भाक्षतै
पीठे मुक्तिकरं निधाय, रचित त्वपादपद्मस्रजः
इन्द्रोऽहं निजभूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे ।
मुद्राकङ्कणशेखरान्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ॥

(इस श्लोकको पढकर अभिषेक करनेवालोंको यज्ञोपवीन तथा नाना प्रकार सुन्दर आभूषण धारण करना चाहिये ।)

सौगन्धसंगतमधु व्रतझङ्कतेन, सौवर्ण्यमानमिव गधमनिंद्यमादौ ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्यपादार विन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानां

(इसे पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको अ गमें चन्दनके नव तिलक करना चाहिये)

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागा पुभूतबलदर्प युता विबोधा । सरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषा प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥

(इसको पढ़कर अभिषेकके लिए भमिका प्रक्षालन करे)

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः, प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्। अत्युद्यमुद्यतमहं जिनपादपीठं प्रक्षालयामि भवसंभवतापहारि ॥ श्रीकारवर्णसुमुखनिर्गतपावपद्मं श्रीमज्जिनेश्वरस्नानजलस्य नित्यं। श्री मस्त्यर्य क्षयतियस्य पिनाशयिन्नं श्रीकारवर्णं लिखितं जिनभद्रपीठे

(इस श्लोकको पढ़कर पीठपर श्रीकार लिखना चाहिये।

इन्द्राग्निदण्डधरनैर्ऋतपाशपाणि वायुत्तरेशशशिमौलिफणीन्द्र चन्द्राः। आगत्य यूयमिह सानुचराः सचिन्हाः स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके ॥

[नीचे लिखे मन्त्रको क्रमसे दश दिक्पालोंके लिये अर्घ चढ़ाए]

१ ॐ आं क्रौं ह्रीं इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा।
२ ॐ आं क्रौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा।
३ ॐ आं क्रौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा।
४ ॐ आं क्रौं ह्रीं नैऋत आगच्छ आगच्छ नैऋतायस्वाहा।
५ ॐ आं क्रौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा।
६ ॐ आं क्रौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा।
७ ॐ आं क्रौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा।
८ ॐ आं क्रौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा।
९ ॐ आं क्रौं ह्रीं धरणेन्द्र आगच्छ आगच्छ धरणेन्द्राय स्वाहा।
१० ॐ आं क्रौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा।

इति दिक्पाल मन्त्र।

दध्युज्ज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः पात्रार्पितं प्रतिदिनं महतादरेण। त्रैलोक्यमंगलसुखानलकामदाह मारार्तिकं तव विभोरवतारयामि ॥

[दधि अक्षत पुष्प और दीप रकाबीमें लेकर मंगलपाठ तथा अनेक वादित्रोंके साथ त्रैलोक्यनाथकी आरती उतारनी चाहिये।]

यः पाण्डुकामलशिलागतमादिदेवमस्नापयन्सुरवरा. सुरशैल मूर्ध्नि। कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैः संभावयामि पुरएव तदीयविम्वम्॥

जल अक्षत पुष्प दीपकर श्रीकार लिखित पीठपर जिनविम्वको स्थापनाकर

सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरूप्यताम्रारकूटघटितान्पयसा सुपूर्णान्। संवाह्यतामिव गतांश्चतुर समुद्रान् संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकान्ते।

जलपूर्ति सुन्दर पत्तोंसे ढके हुए सुवर्णादि धातुके चार कलश वेदीके चारो कोनोंमें स्थापन करना चाहिये।

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलवहुलेनामुना चन्दनेन।
श्रीदृक्पेयरमीभिः शुचिसदलचयैं रुद्गमैरेभिरुद्धैः।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मखभवनमिमैर्दीपयद्भिः प्रदीपैः।
धूपैःप्रायोभिरेभि भिरपि फलैरेभिरीश यजामि॥

इस श्लोकको पढकर जिनप्रतिमापर जलके कलशसे धारा छोडनी चाहिये

दूरावनम्र सुरनाथकिरीटकोटी सलग्नरत्नकिरणच्छविधूसराघ्रिं।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टै र्भक्त्या जलैर्जिनपतिं वहुधा भिषिञ्चे

[इसे पढकर जिनप्रतिमापर जलके कलशसे धारा छोडनी चाहिये]

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिरामदेहप्रभावलयसङ्गमलुप्तदीप्तिम्। धारां घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेया वन्देऽर्हतां सुरभिसंस्नपनोपयुक्ताम्॥

इस श्लोकको पढ़कर घृतके कलशसे स्नपन करना चाहिये॥

सम्पूर्णशारदशशांकमरीचिजालस्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः क्षीरैर्जिनःशुचितरैरभिषिच्यमाणा.सम्पादयन्तुमम चित्तसमीहितानि।

इस श्लोकको पढ़कर दुग्धके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ॥

दुग्धाब्धिवीचिपयसांचितफेनराशिपाण्डुत्वकान्तिमवधारयतामतीव
दुग्धांगता जिनपतेः प्रतिमां सुधारा सम्पद्यतां सपदि वांछितसिद्धये नः ॥

इस श्लोकको पढ़कर दधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ॥

भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः हस्तैश्च्युताः सुरवरासुर मर्त्यनाथैः । तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्य धारा सद्यः पुनातु जिन बिम्ब गतैव युष्मान ॥

इस श्लोकको पढ़कर इक्षुरसके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।

संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः सर्वाभिरौषधिभिरर्हत उज्ज्वलाभि
उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेलाकालेयकुंकुमरसोत्कटवारिपूरैः

इस श्लोकको पढ़कर सर्वौषधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।

द्रव्यैरनल्पघनसारचतुः समाढ्यैरामोदवासितसमस्तदिगन्तरालैः ।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुङ्गवानां त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥

इस श्लोकको पढ़कर केसरसे बनाये हुए सुगन्धित जलसे स्नपन करे।

इष्टैर्मनोरथशतैरिव भव्यपुंसां पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलैर्वसानैः ।
संसारसागरविलंघनहेतु सेतुमाप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेन्द्रम् ॥

इसे पढ़कर बचे हुए सम्पूर्ण कलशोंसे अभिषेक करना चाहिये ।

मुक्ति श्रीवनिताकरोदकमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकम् ।
नागेन्द्रत्रिदशेन्द्र चक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम् ॥
सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलता संवृद्धिसम्पादकम् ।
कीर्तिश्रीजयसाधकं तव जिन ! स्नानस्य गन्धोदकम् ॥

इस श्लोकको पढ़कर आंखों व गले गन्धोदक लगाना चाहिये ॥

१४५—विनय पाठ ।

इहि विधि ठाड़ो होयके प्रथम पढ़ै जो पाठ । धन्य जिनेश्वर

देव तुम नाशे कर्म जु आठ ॥ १ ॥ अनन्त चतुष्टयके धनी तुमही हो शिरताज ॥ मुक्ति वधूके कन्त तुम तीन भुवनके राज ॥ २ ॥ तिहुं जगकी पीड़ा हरण भवदधि शोषनहार ॥ ज्ञायक हो तुम विश्वके सब सुखके करतार ॥ ३ ॥ हरता अघ अन्धियारके करता धर्म प्रकाश ॥ थिरता पद दातार हो । धरता निजगुण रास ॥ ४ ॥ धर्मामृत उर जलधसों ज्ञान भानु तुम रूप । तुमरे चरण सरोजको नावत तिहु जग भूप ॥५॥ मैं वन्दौं जिनदेवकौं कर अति निरमल भाव ॥ कर्म बन्धके छेदने और न कोई उपाय ॥ ६ ॥ भविजनको भवि कूपतैं तुमही काढ़नहार ॥ दीनदयाल अनाथ पति आतम गुण भण्डार ॥७॥ चिदानन्द निर्मल कियो धोय कर्म रज मैल ॥ सरल करीं या जगतमें भविजनको शिव गैल ॥८॥ तुम पद पङ्कज पूजते विघ्न रोग टर जाय ॥ शत्रु मित्रताको धरे विष निरविषता थाय ॥ ६ ॥ चक्री खग धर इन्द्र पद मिले आपतैं आप ॥ अनुक्रम कर शिव पद लहै नेम सकल हन पाप ॥१०॥ तुम विन मैं व्याकुल भयो जैसे जल विन मीन ॥ जन्म जरा मेरी हरो करो मोह स्वाधीन ॥ ११ ॥ पतित बहुत पावन किये गिनती कौन करेव ॥ अञ्जनसे तारे कुधो सु जय जय २ जिनदेव ॥ १२ ॥ थकी नाव भव दधि विषैं तुम प्रभु पार करेव ॥ खेवटिया तुम हो प्रभू सो जय जय २ जिनदेव ॥ १३ ॥ राग सहित जगमें रुले मिरे सरागी देव ॥ वीतराग भेटो अवै मेटो राग कुटेव ॥ १४ ॥ कित निगोद कित नारकी कित तिर्यञ्च अज्ञान ॥ आज धन्य मानुष भयो पायो जिनवर थान ॥ १५ ॥ तुमको पूजें सुरपति अहिपति नरपति देव ॥ धन्य भाग मेरो भयो करन लगे तुम सेव ॥ १६ ॥ अशरणके नाथ

शरण हो निराधार आधार ॥ मैं डूबत भवसिन्धुमें खेमो लगाय्यो पार ॥१७॥इन्द्रादिक गणपति थके कर विनती भगवान ॥ विनती आपनो टारिके कीजे आप समान ॥ १८ ॥ तुमरी नेक सुदृष्टिमें जग उतरत है पार ॥ हाहा डूबो जात हौं नेक निहार निकार ॥ १९ ॥ जो मैं कहहूं औरसों तो न मिटै उर भार ॥ मेरी तो तोसों बनी तातें करत पुकार ॥ २० ॥ वन्दों पांचो परमगुरु सुरगुरु वन्दत जास ॥ विघन हरन मंगल करन पूरन परम प्रकाश ॥ २१ ॥ चौवीसों जिनपद नमों नमों सारदा माय ॥ शिवमग साधक साधु नमि रच्यो पाठ सुखदाय ॥ २२ ॥

१४६—देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा

प्रथमदेव अरहन्त सुश्रुतसिद्धान्तजू। गुरु निरग्रन्थ महन्त मुकतिपुरपन्थजू ॥ तीन रतन जगमांहि सो ये भवि ध्याइये। तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा—पूजों पद अरहन्तके, पूजों गुरु पद सार।
पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर २ संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सुरपति उरग नरनाथ तिनकर वन्दनीक सु पदप्रभा ।
अति शोभनीकसुवरण उज्ज्वल देख छवि मोहित सभा ॥
वर नीर क्षीर समुद्रघटभरि अग्र तसु बहुविधि नचूं ।
अरहन्त श्रुतसिद्धान्तगुरु निरग्रन्थ नितपूजा रचूं ॥ १ ॥

दोहा—मलिन वस्तु हर लेत सब जलस्वभाव मलछीन ।
जासों पूजों परमपद देवशास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशाय ॥ जल० ।

जे त्रिजग उदरमझार प्रानी तपत अति दुद्धर खरे ।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके परम शीतलता भरे ॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन सरस चन्दन घसि सचूं । अ०

दोहा—चन्दन शीतलता करैं तपतवस्तु परवीन ,
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीय ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्य संसारतापविनाशनाय चन्दनं ।

यह भवसमुद्र अपार तारणके निमित्त सुविधि ठई ।
अति दृढ़ परमपावन जथारथ भक्ति वर नौका सही ॥
उज्जल अखण्डित सालि तन्दुल पुञ्जधरि त्रयगुणजजूं । अ०

दोहा—तंदुल सालि सुगन्ध अति परम अखण्डित बीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

जे विनयवत सु भव्य उर अवुज प्रकाशन भानु हो ।
जे एक मुख चारित्र भापा त्रिजग माहि प्रधान हो ।
लहि कुन्द कमलादिक पहुप भव २ कुवेदन सो वचूं ॥ अ० ॥

दोहा—विविधभाति पतिमल सुमन भ्रमर जास आधीन ।
तासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥

अति सवल मद कदर्प जाको क्षुधा उरग अमान है ।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुड़ समान है ।
उत्तम छहो रस युक्त तिन नैवेद्य करि घृतमें पचूं ॥अ०५॥

दोहा—नाना विधि सयुक्तरस, व्यजन सरस नवीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य ॥

जै त्रिजग उदम नाश कीने मोहतिमिर महाबली ।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप प्रकाशजोति प्रभावली ॥
इहि भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं । म० ।

दोहा—स्वपर प्रकाशक जोति अति दीपक तमकरि हीन ।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्र गुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

जो कर्म ईन्धन दहन अग्नि समूह सम उद्धत लसै ।
वर धूप तासु सुगन्धिताकरि सकल परिमलता हंसै ॥
इह भांति धूप चढ़ाय नित भवज्वलनमाहीं नहिं पचूं ॥म०॥

दोहा—अग्निमांहि परिमल दहन चन्दनादि गुणलीन ।
जासों पूजों परम पद देवशास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्म विध्वंसनाय धूपं ॥

लोचन सुरसना घ्राण उर, उत्साहके करतार हैं ।
मोपै न उपमा जाय वरणी सकल फलगुणसार हैं ॥
सो फल चढ़ावत अर्थ पूरन परम अमृतरस सचूं ॥ म० ॥

दोहा—जो प्रधान फल फल विषै पंचकरण रसलीन ।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं ॥

जल परम उज्ज्वल गन्ध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरू ।
वर धूप निरमल फल विविध बहुजनमके पातक हरू ॥
इहभांति अर्घ चढ़ाय नित भवि करत शिवपङ्कति मचू ॥ म० ॥

दोहा—वसुविधि अर्घ सजोयके, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घं ॥

अथ जयमाला।

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥ १ ॥
चऊकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि। जीते अष्टादशदोपराशि ॥
जे परम सगुण हैं अनन्त धीर। कहवतकेछयालिस गुण गम्भीर ॥२॥
शुभ समवशरणशोभा अपार। शत इन्द्र नमत कर शीस धार।
देवाधिदेव अरहन्त देव। वन्दों मनवचतन कर सु सेव ॥ ३ ॥
जिनकी धुनि ह्वै ओंकाररूप। निरक्षरमय महिमा अनूप ॥
दश अष्ट महा भाषा समेत। लघु भाषा सात शतक सुचेत ॥४॥
सो स्याद्वादमय सप्त भङ्ग। गणधर गूंथे बारह सुअङ्ग।
रविशशि न हरैं सो तम हराय। सो शास्त्र नमों बहु प्रीति लाय।
गुरु आचारज उवझाय साधु। तन नगन रत्नत्रय निधि अगाध।
संसारदेह वैराग धार। निरवांछि तपैं शिवपद निहार ॥ ६ ॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस भवतारन तरन जिहाज ईस।
गुरुकी महिमा वरनी न जाय। गुरु नाम जपों मन वचनकाय ॥७॥
सोरठा—कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरैं।
'द्यानत' सरधावान, अजर अमर पद भोगवैं ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१४७—बीसतीर्थंकर पूजा भाषा।

द्वीप अढ़ाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस।
तिन सबकी पूजा करूं मनवच तन धरि शीस ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकराः ! अत्र अवतर अवतर ।

तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

इन्द्रफणीन्द्रनरेन्द्रवंद्य पद निर्मलधारी । शोभनीक संसार सारगुण हैं अविकारी । क्षीरोदधिसम नीरसौं (हो) पूजौं तृषा निवार । सीमन्धर जिन आदि दे बीस विदेह मंझार ॥ श्री जिन राज हो भव तारण तरण जहाज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशति तीर्थंकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं

तीन लोकके जीव, पाप आताप सताये । तिनकों साता दाता शीतल वचन सुहाये ॥ बावन चन्दनसौं जजूं (हो) भ्रमन तपन निवार । सीमं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥

यह संसार अपार महासागर जिनस्वामी ।

तातैं तारे बड़ी भक्ति नौका जग नामी ॥

तंदुल अमल सुगन्धसौं (हो) पूजौं तुम गुणसार । सीमं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥

भविक-सरोज विकाश, निंद्यतमहर रविसे हो ।

जति श्रावकआचार कथनको तुमहीं बड़े हो ॥

फूलसुवास अनेकसौं (हो), पूजौं मदन प्रहार । सीमं० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥

कामनाग विषधाम—नाशको गरुड़ कहे हो ।

क्षुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ॥

नेवज बहुघृत मिष्टसौं (हो), पूजौं भूख विडार । सीमं० ॥५॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।

उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहिं भरयो है ।

मोह महातम घोर, नाश परकाश करयो है ॥

पूजों दीप प्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार। सीमं० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनायदीपं ॥

कर्म आठ सब काठ, भार विस्तार निहारा ।

ध्यान अगनि कर प्रगट, सरब कीनो निरवार ॥

धूप अनूपम खेवते (हो) दुःख जले निरधार। सीमं० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय, धूप नि० ॥

मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे हैं

सबको छिनमें जीत जैनके मेर खरे हैं ॥

फल अति उत्तमसों जजों (हो वांछित फल दातार) ॥सी०॥८॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं ॥

जल फल आठों दर्व अरघ कर प्रीति धरी है ।

गणधर इन्द्रनिहूतें, थुति पूरी न करी है ।

'द्यानत" सेवक जानके (हो) जगतें लेहु निकार। सीमं० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं नि० ।

अथ जयमाला आरती।

सोरठा—ज्ञानसुधाकर चन्द्र, भविकखेतहित मेघ हो ।

भ्रमतमभान अमन्द, तीर्थंकर बीसों नमों ॥१॥

सीमंधर सीमन्धर स्वामी। जुगमन्धर जुगमन्धर नामी।

बाहु बाहु जिन जगजन तारे। करम सुबाहु बाहुबलदारे ॥१॥

जात सुजात केवलज्ञान । स्वयं प्रभू प्रभु स्वयं प्रधान । रिषभानन ऋषि भानन दोषं । अनंत वीरज वीरजकोषं ॥२॥ सौरीप्रभ सौरी

ॐ ह्रीं कृत्रिमकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धीजिनबिम्बेभ्योऽर्घं ।

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नदीश्वरे यानि च मन्दरेषु । यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिन पुङ्गवानाम् ॥ १ ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणा वनभवनगताना दिव्यवैमानिकानाम् । इह मनुजकृताना देवराजार्चिताना जिनवरनिलयाना भावतोऽहं स्मरामि ॥ २ ॥

जम्बूधातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवाश्चन्द्राम्भोजशिखण्डिकण्ठकनकप्रावृड्घनाभाजिन. । सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धना.भूतानागतवर्तमानसमयेतेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥३॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे वृक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुण्डले मानुषाङ्के । इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके, ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवन महितले यानि चैत्यालयानि ॥ ४ ॥ द्वौ कुन्देन्दुतुषारहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियगुप्रभौ । शेषाः षोडशजन्म मृत्युरहिता. सन्तप्तहेमप्रभास्तेसज्ञानदिवाकरा सुरनुता सिद्धि प्रयच्छन्तु नः ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धीअकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपामि ॥

इच्छामिभन्ते चेइयभत्तिकओसग्गोकाओतस्सलोचेओ अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिनचेइयाणि ताणिसर्वाणि । तीसुविलोएसु भवणवासियवाणवितरजोयसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गन्धेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्णणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदन्ति णमस्संति ।

महमवि इस संतो तस्य संताइ णियकाल मघोमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

(इत्याशीर्वादः । परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्निकमाध्याह्निकमापराह्निकदेववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् । (कायोत्सर्ग करना और नीचे लिखे मंत्रका नौ बार जाप करना ।)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आयरीयाणं णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

१४८—सिद्धपूजा ।

ऊर्ध्वाधोरयुतं सबिन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्सन्धितत्वान्वितम् । अन्तःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितं देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः॥ ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर । संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
वन्देऽहं परमात्मानममूर्तं मनुपद्रवम् ॥ १ ॥

(सिद्धयन्त्रकी स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं हीनादिभावरहितं भववीतकायम् । रेवापगावरसरो यमुनोद्भवानां नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्ध

चक्रम् ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं ॥

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतम् । सौरभ्यवासितभुवं हरिचन्दनानां गन्धैर्यजे परिमलैर्वरसिद्ध चक्रम् ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चन्दनं । सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं सिद्धं स्वरूप-निपुणं कमलविशालम् । सौगन्ध्यशालिवनशालिवराक्षतानां पुञ्जै-र्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम् ॥३॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध-परमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् । नित्यंस्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् । मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनां पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥४॥

ॐ ह्रीं सिद्धिचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं । ऊर्द्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् क्षीरान्नसाज्यवटकै रसपूर्णगर्भै-र्नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेक्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्यं आतङ्कशोकभयरोगमदप्रशान्तं निर्द्वन्द्वभावधरणं महिमा निवेशम् । कर्पूरवर्तिबहुभिः कनकावदातै-र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥६॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेमोहान्धकारविनाशायदीपं पश्यन्समस्तभुवनंयुगपन्नितान्तं त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥७॥ ॐ ह्रीं सिद्ध चक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं सिद्धा-सुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै र्ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम् । नारिङ्ग पुङ्गकदलीफलनारिकेलैः सोऽहंःयजे वर फलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥८॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं।
गन्धाढ्यं सुपयो मधुव्रतगणैः सङ्गं वरं चन्दनं पुष्पौघं विमलं
सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकम्। धूपं गन्धयुतं ददामि विविध श्रेष्ठ
फलं लब्धये सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम्॥६॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं। ज्ञानोपयोगविमलं
विशदात्मरूपं सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम्। कर्मौघकक्षदहनं
सुखसस्यबीजं वन्दे सदा निरुपमं वर सिद्धचक्रम्॥१०॥ ॐ ह्रीं सि
द्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं। त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः
प्रापुः श्रियंशाश्वतीं यानाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपितीर्थंकराः
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्य विशदाऽव्याबाधताद्यै र्गुणैर्युक्तांस्तानि
ह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान्॥११॥पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

अथ जयमाला

विराग सनातन शान्त निरंश। निरामय निर्भय निर्मल हंस॥
सुधाम विबोध निधान विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह॥१॥
विदूरितसंसृति भाव निरङ्ग। समामृतपूरित देव विसङ्ग॥
अबन्ध कषायविहीन विमोह। प्रसीद विशुद्ध सु सिद्ध समूह॥२॥
निवारितदुष्कृत कर्मविपाश। सदामलकेवलकेलिनिवास॥
भवोदधिपारग शान्त विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह॥३॥
अनन्तसुखामृतसागर धीर। कलङ्क रजोमलभूरि समीर॥
विखण्डितकाम विराम विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह॥४॥
विकार विवर्जित तर्जितशोक। विबोधसुनेत्रविलोकित लोक॥
विहार विराव विरङ्ग विमोह। प्रसीद विशुद्ध सु सिद्ध समूह॥५॥
रजोमल खेदविमुक्त विगात्र। निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र॥
सुदर्शनराजित नाथ विमोह। प्रसीद विशुद्ध सु सिद्ध समूह॥६॥

नरामरवन्दित निर्मलभाव। अनन्तमुनीश्वरपूज्य विहाव ॥
सदोदह विश्वमहेशविमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥७॥
विदंभ वितृष्ण कृदोष विनिन्द्र। परापर शङ्कर सार वितन्द्र ॥
विकोप विरूप विशङ्क विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥८॥
जरामरणोज्झित वीतविहार। विचिन्तित निर्मल निरहंकार ॥
अचिन्त्यचरित्र विदर्प विमोह। प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥९॥
विवर्ण विगंध विमान विलोभ। विमाय विकाय विशब्द विशोभ
अनाकुल केवल सर्व विमोह। प्रसिद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥१०॥

असमयसमयसार चारु चैतन्यचिन्ह। परपरणतिमुक्तिं पद्मनंदीन्द्रवन्द्यम्। निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं स्मरति नमति यो वा स्तौति सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं सिद्ध परमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अविनाशी अविकार परम रसधाम हो। समाधान सर्वज्ञसहज अभिराम हो ॥ शुद्ध बोध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो। जगतसिरोमणि सिद्ध सदा जयवत हो ॥१॥ ध्यान अगनि कर कर्म कलङ्क सबै दहे। नित्य निरंजनदेव सरूपी ह्वै रहे ॥ ज्ञायकके आकार ममत्व-निवारिकैं। सो परमातम सिद्ध नमूं सिर नायकैं ॥ २ ॥

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशतैं, गुण अनन्तकी खान।
ध्यान धरे सो पाइये, परम सिद्ध भगवान् ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वाद (पुष्पाजलिं क्षिपेत्)

१४६—सिद्धपूजाका भावाष्टक।

निजमनोमणिभाजनभारया, समरसैकसुधार सधारया,
सकलबोधकलारमणीयकं सहजसिद्ध महं परिपूजये ॥१॥ जलम् ॥

१५१—दशलक्षणधर्मका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकै·।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख कमलमुद्भूतोत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्तय-संयम तपत्यागाकिञ्चन्नब्रह्मचर्यदशलाक्षणिकधर्मेभ्यो अर्घं।

१५२—रत्नत्रयका अर्घ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुधूपफलार्घकै.।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहेजिनरत्न महं यजे ॥२॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधाचारसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-प्रकारायसम्यकचारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

दशवां अध्याय

१५३—सोलह कारण पूजा।

अडिल्ल—सोलहकारण भाय तीर्थंकर जे भये। हरषे इन्द्र अपार मेरुपै ले गये ॥ पूजा करि निज धन्य लख्यो बहु चावसौं। हमहू षोड़शकारण भावैं भावसौं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणानि! अत्रावतर अवतर। सवौषट्! अत्र तिष्ठ। ठ ठ अत्रमम सन्निहितो भव भव वषट्

चौपाई—कंचनभारी निरमल नीर पूजौं जिनवर गुणगंभीर।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

दर्शविशुद्ध भावना भाय। सोलह तीर्थंकर पद पाय।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं।
चन्दन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय।
परमगुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ दरश० ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः चन्दन०।
तन्दुल धवल सुगन्ध अनूप, पूजौं जिनवर तिहुं जगभूप।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्।
फूल सुगन्ध मधुपगुंजार। पूजौं जिनवर जगदाधार।
परमगुरु हो जय नाथ परम गुरु हो ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय
सदनेवज बहुविधि पकवान। पूजौं श्रीजिनवर गुणखान।
परमगुरु हो जय जय जय नाथ परमगुरु हो दरश० ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं।
दीपकज्योति तिमर छयकार। पूजू श्रीजिनवर केवलधार।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ६ ॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योमोहान्धकारविनाशनायदीपं
अगर कपूर गन्ध शुभ खेय। श्रीजिनवर आगैं महकेय।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥७॥
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं ॥
श्रीफल आदि बहुत फलसार। पूजौं जिनवांछितदातार।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दरश० ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं।
जल फल आठों दरब चढ़ाय। "द्यानत" वरत करौं मन लाय

परमगुरु हो; जय जय नाथ परमगुरु हो ॥दरश० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥

अथ जयमाला।

दोहा—षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास।
पाप पुण्य सब नाशके, ज्ञान भान परकाश ॥ १ ॥

दरशविशुद्ध धरै जो कोई। ताको अवागमन न होई॥
विनय महा धारै जो प्रानी। शिववनिताकी सखी बखानी ॥ २ ॥
शील सदा दृढ जो नर पालै। सो औरनकी आपद टालै॥
ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं। ताके मोहमहातम नाहीं ॥ ३ ॥
जो संवेगभाव विस्तारे। सुरगमुकतिपद आप निहारे॥
दान देय मन हरष विशेखै। इह भाव जस परभवसुख देखै ॥४॥
जो जप तपै खपै अभिलाषा। चूरै करम शिखर गुरु भाषा॥
साधु समाधिसदा मनलावै। तिहु जगभोगभोगि शिवजावे ॥५॥
निशदिन वैयावृत्य करैया। सो निहचै भवनीर तिरैया॥
जो अरिहन्तभगति मन आनै। सो जन विषय कषाय न जानै॥
जो आचारजभगति करै है। सो निर्मल आचार धरै है॥
बहु श्रुतवन्तभगति जो करई। सो नर सम्पूरण श्रुत धरई ॥७॥
प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता। लहै ज्ञान परमानन्द दाता॥
षट् आवश्यकाल जो साधै। सो ही रतनत्रय आराधै॥ ८ ॥
धरमप्रभाव करै जे ज्ञानी। तिन शिवमारग रीति पिछानी॥
वात्सलअङ्ग सदा जो ध्यावे। सो तीर्थंकर पदवी पावें॥ ९ ॥

दोहा—एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय।
देवइन्द्रनरवन्द्यपद, 'द्यानत' शिवपद होय ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोड्शकारणेभ्य पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ॥

१५४—अथ दशलक्षणधर्म पूजा।

अडिल्ल—उत्तम छिमा मारदव आरजव भाव हैं। सत्य शौच संजम तप त्याग उपाय हैं॥ आकिंचन ब्रह्मचरज धरम दश सार हैं। चहुंगति दुखतैं काढ़ि मुकत करतार हैं॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म! अत्र अवतर अवतर! संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो भव। वषट्।

सोरठा—हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि। भव आताप निवार दश लक्षण पूजौं सदा॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अर्घ निर्वपामि॥१॥

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा॥ भवआ०॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामि॥२॥

अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ॥ भवआ०॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षण धर्माय अक्षतान् निर्वपामि॥३॥

फूल अनेक प्रकार, महकैं ऊरधलोक॥ भव आ०॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामि॥४॥

नेवज विविध प्रकार, उत्तमषट्‌रससंजुगत॥ भवआ०॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामि॥५॥

बाति कपूर सुधार, दीपकज्योति-सुहावनी॥ भवआ०॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामि॥६॥

अगर धूप विस्तार, फैलै सर्व सुगन्धता॥ भवआ०॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामि॥७॥

फलकी जाति अपार, घ्राण नयन मनमोहने॥ भवआ०॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामि॥८॥

आठों दरव संवार, "द्यानत" अधिक उछाहसों ॥ भवआ० ॥

ॐ ह्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायार्घ्यं निर्वपामिति ॥ ६ ॥

सोरठा—पींढे दुष्ट अनेक; बाध मार बहुविधि करी ।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजे प्रीतमा ॥ १ ॥

उत्तम छिमा गहो रे भाई । इहभव जस परभव सुखदाई ॥
गाली सुनि मन खेद न आनो । गुनको औगुन कहै अयानो ॥
कहि है अयानो वस्तु छीने, बाध मार बहुविधि करै । घरते निकारै तन विदारै वैर जो न तहाधरै ॥ जे करम पूरव किये खोटे, सहैं क्यों नहिं जीयरा । अति क्रोधअगनि बुझाय प्रानी,साम्य जलले सीयरा

ॐ ह्री उत्तमक्षमादिधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

मान महाविषरूप करहिं नीचगति जगतमें । कोमल सुधा अणूप सुख पावे प्रानी सदा ॥२॥ उत्तम मार्दवगुन मन माना । मान करनको कौन ठिकाना ॥ वस्यो निगोद माहि ते आया दमरी रूंकन भाग विकाया । रूकन विकाया कर्मवशतें देव इकइन्द्री भया । उत्तम मुआ चाडालहुआ भूपकीड़ोंमें गया । जीतव्यजोवन धनगुमान कहा करै जलबुदबुदा । करि विनय बहुगुन बडेजनकी ज्ञानका पावैउदा

ॐ ह्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

कपट न कीजै कोय चोरनके पुर ना बसै । सरल सुभावी होय ताके घर बहु सम्पदा ॥३॥ उत्तमआर्जव रीति बखानी । रंचकदगा बहुत दुखदानी ॥ मनमें हो सो वचन उचरिये । वचनहोयसो तनसे करिये । करिये सरल तिहुं जोग अपने देख निर्मल आरसी । मुखकरै जैसा लखै तैसा,कपट प्रीतिअंगारसी नहिं लहै लछमीअधिकछलकर करमबंध विशेषता भयत्यागि दूधबिलावपीवै आपदा नहि देखना

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

धरि हिरदै सन्तोष करहु तपस्या देहसों। शौच सदा निरदोष धरम बड़ो संसारमें ॥ उत्तम शौच सर्व जग जाना। लोभ पापको बाप बखाना ॥ आशा फाँस महा दुखदानी। सुख पावै सन्तोषी प्रानी ॥ प्रानी सदा शुचि शील जप तप ज्ञान ध्यान प्रभावसों नित गंग जमुन समुद्र न्हाय अशुचिदोष सुभावतै। ऊपर अमल मल भरयो भीतर कौन विध घट शुचि कहै ॥ बहु देह मैली सुगुन थैली शौच गुन साधू लहै।

ॐ ह्रीं उत्तम शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
कठिन वचन मत बोल परनिन्दा अरु झूठ तज सांच जवाहर खोल सतवादी जगमें सुखी ॥५॥ उत्तम सत्य बरत पालीजे। पर विश्वास घात नहि कीजे। सांचे झूठे मानुष देखे आपनपूत स्वपास न देखो॥ तिहायत पुरुष सांचेको दरबसब दीजिये। ऊँचे सिंहासन-धरमका नृपति भया। वसु भू ठसेतीनरक पहुंचा सुरगमेंनारदगया

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
काय छहों प्रतिपाल पंचेन्द्री मन वश करो। संयम रतन संभाल विषयचोर बहु फिरत हैं ॥६॥ उत्तम संयम गहु मन मेरे। भवभवके भाजै अघ तेरे। सुरग नरक पशुगतिमें नाहीं। आलस हरनकरन सुख ठांहीं ॥ ठांहीं पृथ्वी जल आग मारुत रूख त्रस करुना धरो सपरसन रसना घ्रान नैना कानमन सब वश करो ॥ जिस बिना नहि जिनराज सीझे तू रुल्यो जग कीचमें। इक घरी मत विसरो करो नित आव जममुख बीचमें ॥

ॐ ह्री उत्तम संयमधर्मांगाय अर्घ्यं निपार्णमीति स्वाहा ॥६॥ तप चाहै सुरराय करमशिखरको वज्र हैं। द्वादशविधि सुखदाय क्यों न करै निज सकति सम ॥ ७ ॥ उत्तमतपसवमाहि वखाना। करम शिखरको वज्रसमाना ॥ वस्यो अनादिनिगोदमभारा। भूमिविकलत्रय शशुतन धारा। धारा मनुष तन महा दुर्लभ सुकुलआयु निरोगता। श्रीजैनवानी तत्वज्ञानी भई विषम पयोगता ॥ अति महा दुरलभ त्याग विषय, कषाय, जो तप आदरै नर भव अनूपम कनकघरपर मणिमयी कलसा धरैं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमतप धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

दान चार परकार चार संघको दीजिये। धान विजली उनहार नरभव लाहौ लीजिये ॥८॥ उत्त म त्याग कह्यो जगसारा। औषधि शास्त्र अभय आहारा ॥ निहचै रागद्वेष निरवारै। ज्ञाता नोनो दान संभारै दोनो सभारै कूपजलसम दरवघरमें परिनया। निजहाथ दीजै साथ लीजे, खाय खोया वह गया ॥ धनिसाध शास्त्र अभय दिवय त्याग राग विरोधको। विनदान श्रावक साधदोनों लहै नाहि वोधको

ॐ ह्रीं उत्तमत्याग धर्मांङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

परिग्रह चौबिस भेद त्याग करै मुनिराजजी। तिसनाभाव उछेद घटती जान घटाइये ॥ ६ ॥ उत्तम आकिंचन गुण जानो। परिग्रह-चिन्ता दुख ही मानो ॥ फांस तनकसी तनमें साले। चाह लंगोटीकी दुख भालै ॥ भालै न समता सुख कभी नर विना मुनि मुद्रा धारै। धनि नगनपर तन नगन ठाडे सुर असुर पायन परै ॥ घरमाहिं निसना जो वटावै रुचि नहीं संसारसौं। वहु धन वुराहू भला कहिये लीन पर उपकारसौं ॥" "

ॐ ह्रीं उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

धरि हिरदै सन्तोष करहु तपस्या देहसों। शौच सदा निरदोष धरम बड़ो संसारमें ॥ उत्तम शौच सर्व जग जानो। लोभ पापको बाप बखानो ॥ आशा पाँस महा दुखदानी। सुख पावै सन्तोषी प्रानी ॥ प्रानी सदा शुचि शील जप तप ज्ञान ध्यान प्रभावसों नित गंग जमुन समुद्र न्हाय अशुचिदोष सुभावतै। ऊपर अमल मल भरयो भीतर कौन विध घट शुचि कहै ॥ बहु देह मैली सगुन थैली शौच गुन साधू लहै।

ॐ ह्रीं उत्तम शौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

कठिन वचन मत बोल परनिन्दा अरु झूठ तज सांच जवाहर खोल सतवादी जगमें सुखी ॥५॥ उत्तम सत्य वरत पालीजे। पर विश्वास घात नहि कीजे। सांचे झूठे मानुष देखे आपनपूत स्वपास न पेखे॥तिहायत पुरुष सांचेको दरवसब दीजिये। ऊंचे सिंहासन-धरमका भूपति भया। बच झू ठसेतीनरक पहुंचा सुरगमें नारद गया

ॐ ह्रीं उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

काय छहों प्रतिपाल पंचेन्द्री मन वश करो। संयम रतन संभाल विषयचोर बहु फिरत हैं ॥६॥ उत्तम संयम गहु मन मेरे। भवभवके भाजै अघ तेरे। सुरग नरक पशुगतिमें नाहीं। आलस हरनकरन सुख ठाहीं ॥ ठाहीं पृथ्वी जल आग मारुत रूख त्रस करुणा धरो सपरसन रसना घ्रान नैना कानमन सब वश करो ॥ जिस बिना नहि जिनराज सीझे तू रुल्यो जग कीचमें। इक घरी मत विसरो करो नित आव जममुख बीचमें ॥

ॐ ह्रो उत्तम संयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्पार्णमीति स्वाहा ॥६॥ नप चाहे सुरराय करमशिखरको वज्र है। द्वादशविधि सुखदाय क्यों न करै निज सकति सम ॥ ७ ॥ उत्तमतपसवमाहि वखाना। करम शिखरको वज्रसमाना ॥ वस्यो अनादिनिगोदमझारा। भूमिविकलत्रय शशुतन धारा। धारा मनुप तन महा दुर्लभ सुकुलआयु निरोगता। श्रीजैनवानी तत्वज्ञानी भई विपम पयोगता ॥ अति महा दुरलभ त्याग विपय, कपाय, जो तप आदरै नर भव अनूपम कनकघरपर मणिमयी कलसा धरैं ॥

ॐ ह्रीं उत्तमतप धर्मांगाय अर्घ्यं निर्णपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

दान चार परकार चार सघको दीजिये। धन विजली उनहार नरभव लाहौ लीजिये ॥८॥ उत्त म त्याग कह्यो जगसारा। औपधि शास्त्र अभय आहारा ॥ निहचै रागद्वेप निरवारैं। ज्ञाता दोनो दान संभारै दोनो संभारै कूपजलसम दरवघरमें परिनया। निजहाथ दीजै साथ लीजे, खाय खोया वह गया ॥ धनिसाध शास्त्र अभय दिवय त्याग राग विरोधको। विनदान श्रावक साधदोनों लहै नाहि वोधको

ॐ ह्रीं उत्तमत्याग धर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्णपामीति स्वाहा ॥

परिग्रह चौबिस भेद त्याग करे मुनिराजजी। तिसनाभाव उछेद घटती जान घटाइये ॥ ६ ॥ उत्ताम आकिंचन गुण जानौ। परिग्रह-चिन्ता दुख ही मानौ ॥ फास तनकसो तनमें साले। चाह लंगोटीकी दुख भाले ॥ भालै न समता सुख कभी नर विना मुनि मुद्रा धरे। धनि नगनपर तन नगन ठाडे सुर असुर पायन परै ॥ घरमाहिं तिसना जो घटावै रुचि नहीं संसारसौं। बहु धन बुराहु भला कहिये लीन पर उपकारसौं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥
शीलबाढ़ि नौ राख, ब्रह्मभाव अन्तर लखो करि दोनों अभिलाख करहु सफल नरभव सदा ॥ १० ॥ उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनो ॥ माता बहिनसुता पहचानो ॥ सहैं बान वरषा बहु सूर । टिकै न नैन बान लखि कूरे ॥ कूरैतियाके अशुचितन मैं,कामरोगी रतिकरे । बहु मृतक सड़हि मसान माँही,काक ज्यों चोंच भरे । संसारमें विषबेल नारी, तज गये जोगीस्वरा । 'द्यानत' धरमदशपैड़ि चढ़िके शिव महलमें पग धरा ॥ १० ॥
ॐ ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्य धर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

जयमाला

दोहा—दशलच्छन बन्दों सदा मनवांछित फलदाय ।
कहों आरती भारती, हमपर होहु सहाय ॥ १ ॥

उत्तम छिमा जहाँमन होई । अन्तर बाहर शत्रु न कोई ॥ उत्तममार्दव विनय प्रकासे । नानाभेद ज्ञान सब भासै ॥२॥ उत्तमआर्जव कपट मिटावै । दुरगति त्यागसुगति उपजावै ॥ उत्तमसौच लोभ परिहारी संतोषी गुन रतन भण्डारी ॥ ३ ॥ उत्तमसत्यवचन मुख बोलै । सो प्रानी संसार न डोलै । उत्तमसंयम पाले ज्ञाता । नरभव सफलकरैलै साता ॥४॥ उत्तमतप निरवांछित पालै । सो नर करम शत्रु कोटालै उत्तमत्याग करैजो कोई । भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥५॥ उत्तम आकिंचनव्रत धारैं । परम समाधिदशा विसतारैं ॥ उत्तमब्रह्मचर्य मन लावै । नरसुरसहित मुकतिफल पावै ॥६॥दोहा—करै करमकी निरजरा भवपींजरा विनाशि । अजर अमर पदको लहै 'द्यानत' सुखकी राशि ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशोच सत्यशौचसंयमतपस्त्यागा-किंचनब्रह्मचर्य दशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

१५५—पंच मेरु पूजा ।

गीताछन्द—तीर्थंङ्करोंके न्हवनजलते, भये तीरथ सर्वदा। तातैं प्रदच्छन देत सुरगण, पञ्चमेरनकी सदा॥ दो जलधि ढाईदीपमें सब गनतमूल विराजहीं। पूजों असी जिनधाम प्रतिमा होहि सुख दुख भाजही ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं—पंचमेरुसम्बन्धिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह। अत्रावतरावतर। सवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठः अत्र ममसन्निहितो भव भव वशट्।

सीतलमिष्टसुवासमिलाय। जलसोंपूजौश्रीजिनराज ॥ महासुखहोय देखे नाथ परमसुख होय॥ पाचों मेरु असी जिन धाम। सब प्रतिमाकों करों प्रणाम। महासुखहोय देखे नाथ परमसुखहोय ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धी जिनचैत्यालयस्थजिनविब्येभ्यो ॥ जल

जल केसर करपूर मिलाय। गन्धसों पूजों श्रीजिनराय ॥ महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पाचोमेरु ॥ १ ॥

ॐ ह्री पंचमेरुसम्बन्धीचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो चन्दन।

अमल अखण्ड सुगन्ध सुहाय। अच्छतसों पूजों श्रीजिनराय ॥ महासुख होय देखे नाथ परम सुख होय॥ पांचो० ॥ ३ ॥

ॐ ह्री पंचमेरुसन्चन्धीजिनचैत्यालयस्थबिम्बेभ्यो अक्षतान नि०

वरन अनेक रहे महकाय फूलनसों पूजों जिनराय।
महासुख होय देखे नाथ परम सुखहोय ॥ पांचो० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं पचमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः॥पुष्पं०॥

मनवांछित बहु तुरत बनाय चरुसों पूजौं श्रीजिनराय

महासुख होय देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । नैवेद्यं ।

तमहर उज्ज्वल ज्योति जगाय । दीपसों पूजौं श्रीजिनराय ।

महासुख होय देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । दीपं

खेऊं अगर अमल अधिकाय । धूपसों पूजौं श्रीजिनराय ।

महासुख होय देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । धूपं

सुरस सुवर्ण सुगन्ध सुभाय फलसों पूजौं श्रीजिनराय ।

महासुख होय देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः । फलं

आठ दरबमय अर्घ बनाय । द्यानत पूजौं श्रीजिनराय ।

महासुख होय देखे नाथ परम सुख होय ।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । अर्घ्य

अथ जयमाला

सोरठा—प्रथम सुदर्शन स्वामि विजय अचल मन्दिर कहा ।
विद्युन्माली नाम पंचमेरु जगमें प्रगट ॥ १ ॥

प्रथम सुदर्शन मेरु विराजै । भद्रशाल वन भूपर छाजै ॥
चैत्यालय चारों सुखकारी । मनवचतन वन्दना हमारी ॥२
ऊपर पंच शतकपर सोहै । नन्दनवन देखत मन मोहै ॥चैं०
साढ़े बासठ सहस ऊँचाई । वन सुमनस शोभै अधिकाई ॥
ऊंचा जोजन सहस छतीस । पांडुकवन सोहै गिरिसीस ॥च०५॥

श्रीसोनागिरि जो।

श्रीरामटेक जो।

श्रीविन्ध्यागिरी जी।
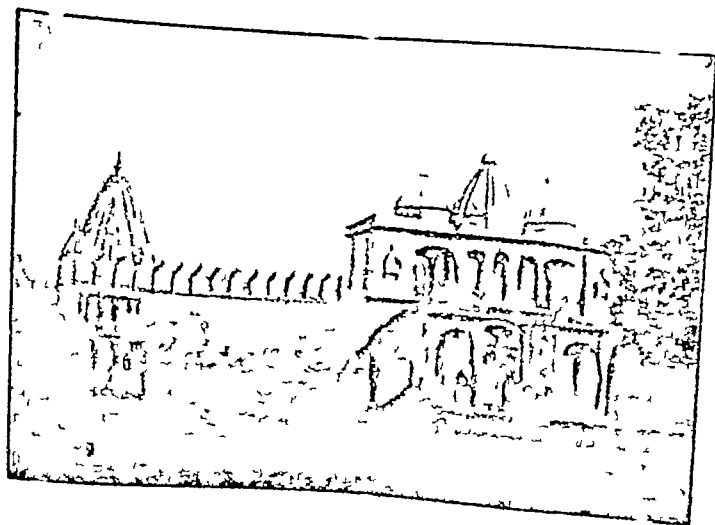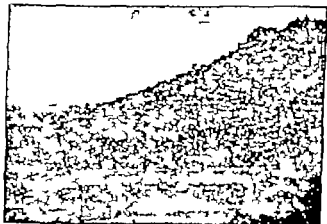
श्री गिरनार जी।

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख करै। सम्यक० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्ग सम्यक्ग्दर्शनाय अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा।

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै। सम्यकद० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

नेवज विविधप्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै। सम्यकद० ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वहा ॥

दीपज्योति तमहार घटपट परकाशै महा। सम्यकद० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्ग सम्यग्दर्शनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा।

धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जडता हरै। सम्यकद० ॥ ७ ॥

ॐ ह्री अष्टाङ्ग सम्यग्दर्शनाय धूप निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीफल आदि विथार निहचौ सुरशिव फल करैं। सम्यकद० ॥८॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु। सम्यकद० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति ॥ ९ ॥

अथ जयमाला।

दोहा—आपआप निहचौ लखो तत्वप्रीति व्योहार।
रहितदोष पचीस है, सहित अष्ट गुनसार ॥ १ ॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द

सम्यकदरशन रतन गहीजे। जिनवचमें सन्देह न कीजै।
इह भव विभवचाह दुखदानी। परभवभोग चहै मत प्राणी ॥
प्राणी गिलान न कर अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये।
परदोष ढकिये धरम डिगतेको सुथिर कर।हरखिये

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥५॥
लाडू बहु विस्तार चीकन मिष्ट सुगन्धयुत । सम्यक०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ॥५॥
दीपरतनमय सार, जोत प्रकाशै जगतमें । सम्यक० ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥६॥
धूप सुवास विथार चन्दन अगर कपूरकी । सम्यक० ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि ॥७॥
फल शोभा अधिकार लोंग छुहारे जायफल । सम्यक० ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ॥८॥
आठदरब निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये । सम्यक० ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं ॥९॥
सम्यकदरशन ज्ञान व्रत शिवमग तीनों मयी ।
पार उतारन यान 'द्यानत' पूजौं व्रत सहित ॥१०॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ।

१५७—दर्शन पूजा

दोहा—सिद्ध अष्टगुणमय प्रगट मुक्तजीवसोपान ।
जिह बिन ज्ञानचरित अफल, सम्यग्दर्श प्रधान ॥१॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन । अत्र अवतर अवतर संवौषट्
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहित भव भव वषट् ।
सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, त्रिषा हरै मल छय करै ।
सम्यग्दर्शन सार, आठ अङ्ग पूजौं सदा ॥१॥
ॐ ह्रीं अष्टाङ्ग सम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥
जल केशर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यक० ॥२॥

ॐ ह्रीं अष्टविधिसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

श्रीफल आदि विथार निहचे सुरशिवफल करै। सम्यकज्ञा० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फल निर्वपामीति स्वाहा० ॥

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु। सम्यकज्ञा ॥ ६ ॥

ॐ ह्री अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अथ जयमाला

दोहा—आपआप जानै नियत, ग्रंन्थपठन व्योहार।

सशय विभ्रम मोह विन, अष्टअङ्ग गुनकार ॥ १ ॥

सम्यकज्ञान रतन मन भाया। आगम तीजा नैन वताया।

अक्षर शुद्ध अरथ पहिचानौ। अक्षर अरथ उभय सग जानौ ॥

जानौ सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाईये ।

तपरीति गहि वहु मान देके, विनयगुन चित लाइये ॥

ये आठ भेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पन देखना।

इस ज्ञानहीसों भरत सीझा, धौर सव पटपेखना ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपमीति स्वाहा ॥

१५६—चारित्रपूजा

विपयरोग औपध महा, दवकषायजलधार।

तीर्थंकर जाकौं धरै, सम्यकचारितसार ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्र ! अत्र अवतर अवतर। सवौषट्।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठ। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, त्रिपा हरै मल छय करै।

सम्यकचारित्र सार, तेरह विधि पूजौं सदा ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविध सम्यकचारित्राय जलं निर्वपामि०।

चतुर्संघको वात्सल्य कीजै परमकी परभावना।
गुन आठसों गुन आठ लहिके, इहां फेर न आवना॥ २॥

ॐ ह्रीं अष्टाङ्गसहितपञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

१५८—ज्ञानपूजा

दोहा—पञ्चभेद जाके प्रगट ज्ञेयप्रकाशन भान।
मोह तपन हर चन्द्रमा सोई सम्यकज्ञान॥ १॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान! अत्र अवतर अवतर। संवौषट् अत्र तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै।
सम्यकज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा॥ १॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

जलकेसर घनसार ताप हरै शीतल करै। सम्यकज्ञा०॥ २॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥

अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै। सम्यकज्ञा०॥ ३॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै। सम्यकज्ञा०॥ ४॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा॥

नेवज विविध प्रकार क्षुधा हरै थिरता करै। सम्यकज्ञा०॥ ५॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

दीपज्योतितमहार, घटपट परकाशै महा। सम्यग्ज्ञा०॥ ६॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥

धूपघ्रान सुखकार रोग विघन जड़ता हरै। सम्यकज्ञा०॥ ७॥

शुभ करमजोग सुघाट आया पार हो दिन जात है ।

"द्यानत" धरमकी नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है ॥२॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधिसम्यक्चारित्राय महार्घ्यं ।

अथ समुच्चय जयमाला ।

दोहा—सम्यकदरशन ज्ञान व्रत, इन विन मुकत न होय ।

अन्ध पङ्गु अरु आलसी, जुदे जले दव लोय ॥ १ ॥

तापै ध्यान सुथिर वन आवे । ताकु करम बन्ध कट जावे ॥
तासों शिव तिय प्रीति बढावे । जो सम्यक रतनत्रय ध्यावै ॥ २॥
ताकों चहुंगतिके दुख नाहीं । सो न परै भव सागर माहीं ॥ जनम जरामृतु दोष मिटावै जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ३ ॥ सोई दश-लच्छनको साधै । सो सोलहकारण आराधै ॥ सो परमातम पद उपजावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥४॥ सोई शक्रचक्र पद लेई ॥ तीनलोकके सुख विलसेई ॥ सो रागादिक भाव बहावै जो सम्यकर-तनत्रय ध्यावे ॥५॥ सोईलोकालोक निहारै। परमानन्द दशाविस्तारै॥ आप तिरै औरन तिरवावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥ ६ ॥

दोहा—एकस्वरूप प्रकाश निज, वचन कह्यो नहि जाय ।

तीन भेद व्यवहार सब, द्यानतको सुखदाय ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

१६०—श्रीनन्दीश्वर पूजा

अडिल्ल—सरब परवमें वडो अठाई परव है । नन्दीश्वर सुर २ जाहि लेय वसु दरब है ॥ हमें सकति सो नाहिं इहा करि थापना । पूजों जिनगृह प्रतिमा है हित आपना ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपेद्विपंचाशज्जिनालनस्थजिनप्रतिमासमूह

जल केसर घनसार ताप हरै शीतल करे । सम्यकचा० ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरे । सम्यकचा० ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक चारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
पुहपसुवास उदार खेद हरै मन शुचि करे । सम्यकचा० ॥४ ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
नेवज विविध प्रकार छुधा हरै थिरता करे । सम्यक ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय नेवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यकचा० ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविध सम्यक् चारित्राय दीपं निर्वपामी ॥
धूप घ्रान सुखकार रोग विघन जड़ता हरै । सम्यकचा० ॥७॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविध सम्यकचारित्राय धूप निर्वपामीति स्वाहा ।
श्रीफलआदि विथार, निहचै सुरशिवफल करे । सम्यकचा० ॥८॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जलगन्धाक्षत चारु दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकचा० ॥ ९ ॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यकचारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

आप आप थिर नियत नय तपसंजम व्योहार ।
स्वपर दया दोनों लिये तेरह विध दुखहार ॥ १ ॥
सम्यकचारित रतन संभालो । पांचो पाप तजिके व्रत पालो
पंचसमितित्रय गुपतिगहीजे । नरभव सफल करहु तन छीजै ।
छीजै सदा तनको जतन यह एक संजम पालिये ।
बहु रुल्यो नरकनिगोदमांहो, कषायविषयनि टालिये ॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे मोहान्धकार विनाश नाय दीप ॥ ६ ॥

कृष्णागरु धूपसुवास दशदिशनारिवरे।

अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करै ॥ नन्दी० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

बहुविधफल ले तिहु काल, अनन्द राचत हैं।

तुम शिवफल देहु दयाल, तुहि हम जाचत हैं ॥ नन्दी० ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥

यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपत हों।

"द्यानत" कीनो, शिवखेत, भूमि समरपत हों ॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥९॥

अथ जयमाला।

दोहा—कातिक फागुन साढके, अन्त आठ दिनमाहिं।

नन्दीसुर सुर जात हैं, हम पूजे इह ठाहिं ॥ १ ॥

एकसौ त्रेसठ कोडि जोजनमहा। लाख चौरासिया एक दिशमें लहा आठमों द्वीप नन्दीश्वरं भास्वरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमों सुखकरं ।२॥ चारदिशि चारअंजनगिरी राजहीं। सहस चौरासिया एक दिश छाजहीं। ढोलसम गोल ऊपर तले सुन्दरं। भौन०॥३॥ एक इकचार दिशिचार शुभ बावरी। एक इक लाख जोजन अमल जल भरी॥ चहु दिशाचार वन लाख जोजनवरं॥ भौन० ॥ ४ ॥ सोलवापीनमधि सोलगिरिदधिमुखं। सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं॥ बावरीकोंन दो माहिं दो रतिकरं। भौन० ॥ ५ ॥ शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे। चार सोलै मिले सर्व बावन लहे॥ एक इक सीसपर एक जिनमन्दिरं। भौन० ॥६॥ बिंब अठ एकसौ

मत्र मवतर मवतर। संवौषट्, मत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। मत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

कंचनमणिमय भृ'गार तीरथ नीरभरा।
तिहु' धार दयी निरवार, जामन मरन जरा॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम बावन पुञ्ज करों।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो (इस मंत्र प्रत्येक मन्त्रसे भरतमें बोलना चाहिये) जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

भवतपहर शीतलवास सो चंदन नाहीं।
प्रभु यह गुन कोजे सांच आयो तुम ठाहीं॥ नन्दी०॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे भवाताप विनाशनाय चन्दनं॥२॥

उत्तम अक्षत जिनराज पुञ्ज धरे सोहैं।
सब जीते अक्षसमाज तुम सम अरु को हैं॥ नन्दी०॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वर द्वीपे अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्॥३॥

तुम कामविनाशक देव ध्याऊ' फूलनसों।
लहि शील लक्ष्मी एव छूटें सूलनसों॥ नन्दी०॥

ॐ ह्रीं नन्दीश्वरद्वीपे कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं॥४॥

नेवज इन्द्रियबलकार, सो तुमने चूरा।
चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा॥ नन्दी०॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य॥५॥

दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम तनमांहि लसै।
टूटे करमनकी राश, ज्ञानकणी दरसै॥ नन्दी०॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिथंकर निर्वाणक्षत्रेभ्यो चंद्नं ॥ २ ॥

मोतीसमान अखड़ तदुल, अमल आनंदधरि तरौं।
औगुन हरो गुन करौ हमको, जोर कर विनती करौं ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्शिशतिथंकर निर्वाणक्षेत्रभ्यो अक्षतान् ॥ ३ ॥

शुभफूलरासै सुवासवासित, खेद सब मनके हरौं।
दुखधाम काम विनाश मेरो जोर कर विनती करौं ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्रभ्यो पुष्प ॥ ४ ॥

नेवज अनेक प्रकार जोग मनोग धरि भय परिहरौं।
वह भूख दुखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौं ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विशति तीथंकर निर्वाणक्षत्रेभ्यो नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीपक प्रकाश उजास उज्जवल, तिमरसेती नहि डरौ।
सशयविमोहविभरम—तुमहर, जोरकर बिननो करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्वशतितीर्थंकरनिर्वानक्षेत्रोभ्यो दीप ॥ ७ ॥

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौ।
सब करम पुंज जलाय दीजै, जोर कर विनतो करौं ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाण क्षेत्रोभ्यो धूप ॥ ६ ॥

बहु फल मगाय चढाय उत्तम, चारगतिसों निरवरौं।
निहचै मुकति फल देहु मोकौं जोर कर विनती करौं ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रभ्यो फलं ॥ ८ ॥

जल गंध अच्छत फूल चरुफल, दीप धूपायन धरौ।
"द्यानत" करो निरभय जगततैं, जोर कर विनती करौं ॥ सम्मे०॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ॥ ९ ॥

रतनमई सोहही। देव-देवी सत्य नयनमन मोहही॥ पांचसे धनुष तन पद्मआसनपरं। मोक्ष०॥७॥ जास नक मुख नयन श्याम अरु स्वेत हैं। श्यामरङ्ग भौंह सिर केश छवि देत हैं। वचन बोलत मनो हंसत कालुषहर॥ मौक्ष०॥८॥ कोटिशशिभानु द्युति तेज छिप जात है महावैराग परिणाम ठहरात हैं॥ वयन नहिं कहैं लखि होत सम्यकधरं। मोक्ष०॥९॥

सोरठा—मनोहर जिनधाम प्रतिमा महिमा को कहै॥
"द्यानत" लीनों नाम यही भगति सब सुख करै॥१०॥

ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्व पश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

१६१—निर्वाणक्षेत्र पूजा।

परम पूज्य चौबीस जिह जिह थानक शिव गये
सिद्ध भूमि निशदीस, मनवचतन पूजा करौं॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर निर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत। संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट्।

शुचि छीर दधि सम नीर निरमल, कनक भारीमें भरौं।
संसारपार उतार स्वामी, जोर कर विनती करौं॥
सम्मेदगिरि गिरनार चम्पा पावापुरी कैलासकौं।
पूजौं सदा चौबीस जिन निर्वाण भूमिनिवासकौं॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं॥१॥

केशर कपूर सुगंध चन्दन सलिल शीतल विस्तरौं।
भव पापको सन्ताप मेटो जोर कर विनती करौं॥ सम्मे०॥

तुम पदपूजा करत हूं , हमपै करुना होहि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशदगुणसहित श्रीजिनेन्द्रभगवन् अत्र अवतरअवतर। संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्रमम सन्निहितो भव भव ? वषट् ।

बहु तृषा सतायो, अति दुःख पायो तुमपै आयो जल लायो ।
उत्तम गगाजल, शुचि अति शीतल प्राशुक निर्मल गुन गायो ॥
प्रभु अन्तरजामी त्रिभुवननामी सबके स्वामी दोष हरो ।
यह अरज सुनीजे ढील न कीजै न्याय चरीजै दया करो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषटचत्वारिषसद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्यो जन्मजरामृत्युविनाशाय जलं निर्वपामीति स्वहा। अघतपत निरन्तर अगनि पठन्तर मो उर अन्तर खेद करयौ। ले वावन चन्दन दाहनिकन्दन तुमपदवन्दन हरष धरयो ॥ प्रभु० ॥ॐ ह्रीं अष्टादशदोपरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो चन्दन। औगुन दुख दाता कह्यो न जाता मोहि असाता बहुत करे। तंदुल गुनमण्डित अमल अखण्डित पूजन पंडित प्रीति धरे ॥प्र०॥ ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित अक्षतान॥ सुर नर पशुको दलकाम महाबल बात कहत छल मोहि लिया। ताकेशरलाऊं फूल चढ़ाऊं भगति बढाऊं खोल हिया ॥ प्रभु० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारि शद्गुणसहित पुष्प ।

सब दोषनमाहीं भूख सदा ही मो लागे ॥
सद घेवर बावर लाडू बहुधर थार कनक भर तुम आगे।

ॐ ह्री अष्टादशदोपरहित षट्,चत्वारिंशद्गुणसहित नैवेद्य ० ॥

अज्ञान महातम छाय रह्यो मम ज्ञान ढक्यो हम दुख पावें ।

अथ जयमाला

सोरठा—श्रीचौबीस जिनेश गिरिकैलाशादिक नमों।
तीरथ महाप्रदेश महापुरुष निरवाणतैं ॥ १ ॥

नमों ऋषभ कैलासपहारं। नेमिनाथ गिरनार निहारं ॥ वासुपूज्य चंपापुर वन्दौं। सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥२॥ वन्दौं अजित २ पदधाता। वन्दौं संभव भवदुखघाता ॥ वन्दौं अभिनन्दन गणनायक वन्दौं सुमति सुमतिके दायक ॥३॥ वन्दौं पदम मुकतिपदमाकर। वन्दौं सुपार्श आशपासाहर ॥ वन्दौं चन्द्रप्रभ प्रभुचन्दा। वन्दौं सुविधि २ निधि कन्दा ॥ ४ ॥ वन्दौं शीतल अघ तप शीतल। वंदौं श्रियांस श्रियांस महीतल ॥ वन्दौं विमल विमल उपयोगी वन्दौं अनन्त अनन्त सुखभोगी ॥ ५ ॥ वन्दौं धर्म धर्म विसतारा। वन्दौं शांति शांतिमनधारा ॥ वन्दौं कुन्थुकुन्थु रखवालं। वन्दौं अरि अरिहर गुणमालं ॥ ६॥ वन्दौं मल्लि कामदल चूरन वंदौं मुनिसुव्रत व्रतपूरन। वन्दौं नमि जिन नमित सुरासुर। वन्दौं पार्श्व पास भ्रम जगहर ॥ ७ ॥ बीसों सिद्ध भूमि जा ऊपर। शिखर सम्मेद महागिरि भूपर ॥ एकबार वन्दे जो कोई। ताहि नरक पशुगति नहिं होई ॥८॥ विघन विनाशक मंगलकारी। गुण विलास वन्दौं नरनारी ॥ ९॥

घत्ता—जो तीरथ जावै पाप मिटावै ध्यावै गावै भगति करै। ताको जस कहिये संपति लहिये गिरिके गुणको बुध उचरै ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ।

१६२—देव पूजा।

दोहा—प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह।

विधि जाने। बाइस बंध नवम गुन थाने ॥ तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर। सो पूजै चौबीस जिनेश्वर ॥ ७ ॥ नाश पचीस कषाय करे हैं। देशघाति छब्बीस हरो हैं ॥ तत्वद्रव्य सत्ताइस देखे। मति विज्ञ अठाइस पेखे उनतीस अंक मनुष्य सब जाने। तीस कुलाचल सर्व बखाने ॥ इकतीसपटलसुधम निहारै। बत्तिस दोपसमाइकटारै ॥ ९ ॥ तेतिस सागर सुखकर आये। चौंतिस भेद अलब्धि बताये पैंतिस अक्षर जप सुखदाई। छत्तिस कारन रीति मिटाई ॥ १० ॥ सैंतिस मग कहि ग्यारह गुनमें। अड़तिस द्रुपद लहि नरक अपुनमें उनतालीस उदीरन तेरम। चालिस भवन इन्द्र पूजें नम ॥ ११॥ इकतालीसभेदआराधन। उदै बियालीस तीर्थंकरमनतैंतालीसबंधज्ञाता नहि द्वार चवालीस नरचौथे नहिं ॥१२॥ पेंताली पल्यके अक्षर। छियालीस बिनु दोप मुनीश्वर। नरक उदै नाछियालिस मुनि धुनि प्रकृति चियालिस नाश दशमगुन ॥ १३ ॥ छियालीस धनराजु सात भुवे। अङ्क छियालीस सरसो कहिकुव। भेद छियालीसअन्तरतपवर छियालीस पूरन गुन जिनवर ॥ १४॥ अडिल्ल—मिथ्या तपन निवार चन्द नमान हो। मोहितिमिर वारनकोकारनभान हो ॥ कामकषाय मिटावन मेघ मुनीश हो द्यानत सम्यकरतनत्रय गुनईस हो ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोपरहितपट् चित्वारिंशद्गुणसहित श्रीजिनेन्द्र भगवद्भ्यो पूर्णाऽर्घ्यं निर्वपामी ॥ इयि श्रीदेवपूजा समाप्त ॥

१६२—सरस्वती पूजा।

दोहा—जनम जरामृतु छय करै हरै कुनय जड़ रीति ॥
भवसागर सो ले तिरै पूजैं जिनवचप्रीति ॥ १॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीबाग्वादिनी अत्र अवतर अवतर

तम मेटन हारा तेज अपारा दीप संभारा जस गावै ॥ प्रभु० ॥
ॐ ह्रीं अष्टापदपर्वतोपरविराजित चत्वारिंशत्गुणसहित दीपं ॥
दह कर्म महावन भूल रह्यो जन शिवमारग नहिं पावत हैं।
कृष्णागर धूप अमल अनूप सिद्धस्वरूप ध्यावत हैं प्रभु० ॥
ॐ ह्रीं अष्टापदपर्वतोपरविराजित चत्वारिंशत्गुणसहित धूप० ॥
सबसौ जोरावर अंतराय अरि सुफल विघ्न करि डारत हैं।
फल पुंज विविधि भर नयनमनोहर श्रीजिनवरपद धारत हैं प्रभु०॥
ॐ ह्रीं अष्टापदपर्वतोपरविराजित चत्वारिंशत्गुणसहित फलं० ॥
आठों दुखदानी आठनिशानी तुम ढिंग आनी निवारन हो।
दीनन निस्तारन अधम उधारन द्यानत तारन कारन हो प्रभु० ॥
ॐ ह्रीं अष्टापदपर्वतोपरविराजित चत्वारिंशत्गुणसहित अर्घ्यं।

अथ जयमाला

दोहा—गुण अनन्त को कहि सके छियालीस जिनराय।
प्रगट सुगुन गिनती कहूँ तुमही होहु सहाय ॥ १ ॥
एक ज्ञान केवल जिनस्वामी। दो आगम अध्यातम नामी ॥
तीन काल विधि परगट जानी। चार अनंत चतुष्टय ज्ञानी ॥ २ ॥
पंचपरावर्तन परकासी। छहों दरबगुनपरजयभासी॥सात भंगवानी परकाशक आठों कर्म महारिपुनाशक ॥३॥ नव तत्वनके भाखनहारे दशलच्छनसौं भविजन तारे। ग्यारह प्रतिमाके उपदेशी बारह सभा सुखी अकलेशी ॥४॥ तेरहविधि चारितके दाता चौदह मारगनाके ज्ञाता ॥ पंद्रहभेद प्रमादनिवारी सोलहभावन फल अविकारी ॥५॥
तारे सत्रह अंक भरत भुव। ठारे थान दान दाता तुव ॥ भवउनीस कहके प्रथम गुन। बीसअंकगणधर जीकीधुन ॥६॥ इकईसर्वघात

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामि ॥ ७ ॥

बादाम छुहारी लौंग सुपारी, श्रीफल भारी ल्यावत हैं।
मनवांछित दाता मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ॥ तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, वज्वलभारी मल धरै।
शुभगन्धसम्हारा, वसननिहारा तुमतर धारा ज्ञान करै ॥
तीर्थंकरकी धुनि गणधरने सुनि अङ्ग रचे चुनिज्ञानमई।
सो जिनवरवानी शिवसुखदानी त्रिभुवनमानी पुज्य भई ॥ तीर्थं० ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै वस्त्रं निर्वपामि ॥ ९ ॥

जलचन्दन अच्छन फूल चरु चत दीप धूप अति फल लावै।
पूजाको ठानत जो तुम जानत सो नर"द्यानत,, सुख पावै ॥तीर्थं०॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामि ॥ १० ॥

अथ जयमाला

सोरठा—ओंकार धुनिसार द्वादशांग वाणी विमल।
नमों भक्ति उरधार, ज्ञान करै जड़ता हरै ॥

वेसरी छन्द—पहलोआचारांग वखानो, पद अष्टादश सहसप्रमानो दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं। पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ॥१॥ तीजा ठाना अंग सुजानं। सहस बियालिस पदसरधानं चौथो समवायांग निहारं। चौसठि सहस लाख इक धारं ॥२॥ पंचम व्याख्याप्रगपति दरसं। दोय लाख अट्ठाइस सहसं॥छट्ठाज्ञातृकथा विस्तार॥पांचलाख छप्पन हजारं ॥३॥ सप्तम उपासकाध्ययनंगं। सत्तर सहस ग्यारलख भंगं ॥ अष्टम अंतकृतदश ईसं। सहस अठाइस लाख तेईसं ॥४॥ नवम अनुत्तरदश सुविशालं। लाख वानवे सहस चवालं ॥ दशम

संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्रमम सन्निहितो भवभव । वषट्

क्षीरोदधि गङ्गा विमल तरङ्गा सलिल अभङ्गा सुखसङ्गा ।
भरि कंचन झारी, धारनिकारी तृषा निवारी हित चङ्गा ।
तीर्थंकरकी धुनि गणधरने सुनि अङ्ग रचे चुनि ज्ञानमई ।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी, पूज्य भई ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै जलं निर्वपामि ।

करपूर मङ्गाया चन्दन आया केशर लाया रङ्ग भरी ।
शारदपद वन्दौं मन अभिनन्दौं पापनिकन्दौं दाहहरी ॥ तीर्थं०॥२॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै चन्दनं निर्वपामि ।

सुखदास कमोदं धारक मोदं अतिअनमोदं चन्दसमं ।
बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई होहु सहाई, मातमम ॥ तीर्थ० ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै अक्षतान् निर्वपामि०॥३॥

बहु फूल सुवासं विमल प्रकाशं आनन्दरासं लाय धरे ।
मम काम मिटायो, शील बढ़ायो, सुख उपजायो, दोषहरे ॥तीर्थं०॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

पकवान बनाया बहुघृत लाया सब विधि भाया मिष्ट महा ।
पूजूं थुति गाऊं प्रीति बढ़ाऊं क्षुधा नशाऊं हर्ष लहा ॥तीर्थं ०॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै नैवेद्य निर्वपामि ॥ ५ ॥

कर दीपक ज्योतं मतछय होतं ज्योति उदोतं तुमहिं चढ़ै ।
तुम हो परकाशक, भरमविनाशक, हम घट भासक,ज्ञानबढ़ै ॥तीर्थं०

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि० ॥ ६ ॥

शुभगन्ध दशोंकर, पावकमें धरधूप मनोहर खेवत हैं ।
सब पाप जलावें पुण्य कमावें दास कहावें सेवत हैं ॥ तीर्थं० ॥

तिहुं जगतनाथ अधार साधुसु पूज नित गुन जपत हैं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्व साधु गुरुभ्यो चन्दनं नि० ॥

तंदुल कमोद सुवास उज्ज्वल सुगुरुपगतर धरत हैं।

गुनकार औगुनहार स्वामी वन्दना हम करत हैं ॥ भव भो० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्व साधुगुरुभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान्।

शुभफूलराशप्रकाश परिमल, सुगुरुपांयनि परत हों।

निरवार मार उपाधि स्वामी शील दृढ़ उर धरत हों ॥ भव० ॥४॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय सर्व साधुगुरुभ्यः पुष्पं।

पकवान मिष्ट सलोन सुन्दर, सुगुरु पायन प्रीतिसौं।

कर क्षुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतिसौं ॥ भव० ॥५॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय सर्वसाधुगुरुभ्यः नैवेद्यं।

दीपक उदोत सजोत जगमग सुगुरुपद पूजों सदा।

तमनाश ज्ञानउजास स्वामी मोहि मोहि न हो कदा। भव० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय सर्वसाधुगुरुभ्यो दीपं।

बहु अगर आदि सुगन्ध खेऊं, सुगुण पद पद्महिं खरे।

दुख पुञ्जकाट जलाय स्वामी गुण अछय चितमैं धरे। भव० ॥ ७ ॥

ॐ आचार्योपाध्याय सर्व साधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनायधूपं ॥

भर थार पूग बदाम बहुविधि सुगुरु क्रम आगें धरों।

मङ्गल महाफल करो स्वामी जोर कर विनती करों ॥ भव० ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय सर्व साधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तयेफलं ॥

जल गन्ध अक्षत फूल नेवज दीप धूप फलावली।

धानत सुगुरुपद देहु स्वामी हमहिं तार उतावली ॥ भव० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्याय सर्व साधुगुरुभ्योऽर्घ्यंपदप्राप्तये अर्घ्यं

प्रश्नव्याकरण विचार । लाख तिरानवे सोल हजार ॥ ५ ॥ ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखो । एक कोड़ चौरासी लाखो । चारकोड़ि अरु पन्द्रह लाखो । दो हजार सब पद गुरुशाखो ॥ ६ ॥ द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं । एकसौ आठ कोड़ि पन वेदं ॥ अड़सठ लाख सहस छप्पन हैं । सहित पञ्चपद मिथ्या हन हैं ॥ ७ ॥ इकसौ बारह कोड़ि बखानो । लाख तिरासी ऊपर जानो । ठावन सहस पंच अधिकाने । द्वादश अङ्ग सब पद माने ॥ ८ ॥ कोड़ि इकावन आठहि लाखं । सहस चुरासी छहसौ भाखं । साढ़े इकीस श्लोक बताये । एकएक पदके ये गाये

घत्ता—जा बानीके ज्ञानमें सूझे लोक अलोक ।
द्यानत जग जयवंत हो सदा देत हो धोक ॥ इत्याशीर्वाद ॥

१६४—गुरुपूजा ।

दोहा—चहुंगति दुखसागरविषै, तारनतरनजिहाज ।
रत्नत्रयनिधि नगन तन धन्य महा मुनिराज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह अत्रावतरावतरसंवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

शुचि नीर निरमल छीरदधिसम सुगुरु चरन चढ़ाइया ।
तिहुं धार तिहुं गदि टार स्वामी अति उछाह बढ़ाइया ॥
भवभोगतनवैराग धार निहार शिव तप तपत हैं ।
तिहुं जगतनाथ अधार साधु सुपूज नितगुण जपत हैं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्याय सर्व साधुगुरुभ्यो जलं नि० ।

करपूर चन्दन सलिलसौं घसि सुगुरुपद पूजा करौं ।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी धरम शीतल विस्तरौं ॥
भव भोगतन वैराग धार निहार शिवतप तपत हैं ।

ग्यारहवां अध्याय

१६५—मक्सीपार्श्वनाथ पूजा।

दोहा—श्रीपारस परमेसजी, शिखर शीर्ष शिवधार।
यहा पूजता भावसे, थापनकर, त्रयवार॥

ॐ ह्रीं श्रीमक्सीपार्श्वजिनेभ्यो अत्रवत्रवतरः सम्वौषटाह्ननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ स्थापनं॥ अत्र मम सन्निहितो भवभववषट् सन्धीकरणं॥

अथाष्ट अष्टपदो छन्द।

ले निर्मल नीर सुछान, प्रासुक ताहि करों। मन वचतन करवर आन, तुम ढिग धार धरों॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, ममवच ध्यावत हों॥ मम जन्म जरामृत्यु नाश, तुम गुणगावत हों॥ ॐ ह्रीं श्री मक्सीपारसनाथ, जिनेन्द्रभ्यो जलं॥ १॥ घिस चन्दन सार सुवास केशर माहि मिले। मैं पूजूँ चरण हुलाश मनमें आनन्द ले। श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों मम मोहाताप विनाश, तुम गुण गावत हों॥सुगन्ध॥ तंदुल उज्वल अति आन, तुम ढिग पूज्य धरों। मुक्ताफलके उन्मान, लेकर पूज करों॥ श्रीमक्सी पारसनाथ मन वच ध्यावत हों। संसार वास निर्वार, तुम गुण गावत हों॥ अक्षतं॥ ३॥ ले सुमन विविधके पत्र, पूजों तुम चरणा। हो काम विनाशक, देव काम व्यथा हरणा॥ श्रीमक्सीपारसनाथ, मन वच ध्यावत हों मनवच तन शुद्ध लगाय, तुम गुण गावत हों॥ पुष्पं॥ ४॥ सज थाल सु नेवजधार, उज्ज्वल तुरत किया। लाडू मेवा अधिकार, देखत हर्ष हिया॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वव पूज करों। मम क्षुधारोग निर्वार, चरणों चित्तधरों॥ नैवेद्यं॥५॥ अति

अथ जयमाला

दोहा—कनककामनी-विस्यवश, दीसै सब संसार।
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुनभंडार ॥ १ ॥
तीन घाटि नव कोड़, सब बन्दौ सीस नवाय।
गुन तिन अट्ठाईस लौं कहूंआरती गाय ॥ २ ॥

एक दया पालै मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन परं। तीनों लोक प्रगट सब देखैं चारौं आराधननिकरं॥ पञ्च महाव्रत दुद्धर धारैं छहोंदरब जानैं सुहितं। सातभङ्गवाणी मन लावै पावै आठ रिद्धि उचितं ॥३॥ नवों पदारथ विधिसों भाखैं बन्ध दशों चूरन करनं। ग्यारह शङ्कर जानै मानै उत्तम बारह व्रत धरनं। तेरह भेद काठिया चूरे चौदह गुणथानक लखियं। महाप्रमाद पञ्चदश नाशै सोल कषाय सबै नसियं ॥ ४ ॥ बन्धादिक सत्रह सब चूरै ठारह जन्म न मरन मुनं। एक समय उनईस परीषह बीस प्ररूपनिमें निपुणं ॥ भाव उदीक इकीसों जानै बाईस अभखन त्याग करं। अहिमिन्दर तेईसों वन्दे इन्द्र सुरग चौबीस वरं ॥ ५ ॥ पचीसों भावन नित भावे छब्बिस अङ्ग उपङ्ग पढ़े। सत्ताइसों विषय विनाशैं अट्ठाइसों गुण सुबढ़े ॥ शीतसमय सर चौहटवासी ग्रीषमगिरिसिर जोग धरे। वर्षा वृक्ष तरे थिर ठाड़े आठकरम हनि सिद्ध वरे ॥६॥
दोहा—कहौं कहां लौ भेद मैं बुध थोरी गुन भूर।
हेमराज सेवक हृदय भक्ति करौं भरपूर ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामि।

—:o:—

ग्यारहवां अध्याय

१६५—मक्सीपार्श्वनाथ पूजा।

दोहा—श्रीपारस परमेसजी, शिखर शीर्ष शिवधार।
यहां पूजता भावसे, थापनकर, त्रयवार॥

ॐ ह्रीं श्रीमक्सीपार्श्वजिनेभ्यो अत्रवत्रवतरः सम्वौषटाह्ननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ. स्थापनं॥ अत्र मम सन्निहितो भवभववषट् सन्धीकरणं॥

अथाष्ट अष्टपदो छन्द।

लै निर्मल नीर सुछान, प्रासुक ताहि करों। मन वचतन करवर आन, तुम ढिग धार धरों॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, ममवच ध्यावत हों॥ मम जन्म जरामृत्यु नाश, तुम गुणगावत हों॥ ॐ ह्रीं श्री मक्सोपारसनाथ, जिनेन्द्रभ्यो जलं॥ १॥ घिस चन्दन सार सुवास केशर मांहि मिले। मैं पूजूँ चरण हुलाश मनमें आनन्द ले। श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों मम मोहाताप विनाश, तुम गुण गावत हों॥सुगन्ध॥ तदुल उज्वल अति आन, तुम ढिग पूज्य धरों। मुक्ताफलके उन्मान, लेकर पूज करों॥ श्रीमक्सी पारसनाथ मन वच ध्यावत हों। संसार वास निर्वार, तुम गुण गावत हों॥ अक्षत॥ ३॥ ले सुमन त्रिविधके पत्र, पूजों तुम चरणा। हो काम विनाशक, देव काम व्यथा हरणा॥ श्रीमक्सीपारसनाथ, मन वच ध्यावत हों मनवच तन शुद्ध लगाय, तुम गुण गावत हों॥ पुष्पं॥ ४॥ सज थाल सु नेवजधार, उज्वल तुरत किया। लाडू मेवा अधिकार, देखत हर्ष हिया॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वत्र पूज करों। मम क्षुध[illegible] ॥५॥ अति

उज्ज्वल ज्योति अगाय, पूजत तुम चरणा। मम मोहांधेर महाय, आयो तुम शरणा ॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों तुम हो त्रिभुवनके नाथ तुम गुण गावत हों ॥ दीपं ॥६॥

वर धूप दशांग बनाय, सार सुगन्ध सही। अति हर्ष भाव उर ल्याय अग्नि मंझार दही ॥ श्रीमक्सी पारसनाथ मनवच ध्यावतहों, वसु कर्महि कीजे क्षार, तुम गुण गावत हों ॥ धूपं ॥ ७ ॥ बादाम छुहारे दाख पिस्ता धोय धरों। ले आम अनार सुपक्वसुथिकर पूज करों ॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों। शिवफल दीजे भगवान, तुम गुन गावतहों ॥ फलं ॥८॥ जल आदिक द्रव्य मिलाय वसु विधि अर्घ किया। धर ताल रकेबी ल्याय, नाचत हर्ष हिया। श्रीमक्सी पारसनाथ मन वच ध्यावत हों। तुम भव्योंको शिव साथ तुम गुन गावत हों अर्घं ॥ ९ ॥

दोहा—जल गंधाक्षत पुष्प सो नैवज ल्यायके। दीप धूप फल ले कर अर्घ बनायके ॥ नाचों गाय बजाय हर्ष उर धारकर पूरण अर्घ चढ़ाय सु जयजयकार कर ॥ पूर्णार्घं

अथ जयमाला।

दोहा—जयजयजय जिनराजजी श्री पारसपरमेश।
गुण अनन्त तुम मांहि प्रभु, पर काहू गावत शेष ॥१॥
श्रीबानारस नगरी महान। सुरपुर समान जानो सुथान।
जहां विश्वसेन नाम। सुभूप। वामा देवी रानी अनूप ॥
आये तसु गर्भविषै सुदेव। वैसाख बदी दोयज स्वयमेव।
मातांको सेवें शची आन। माता तिनकी घर श्रीमान ॥२॥
पुनः जन्म भया सामन्दकार। एकादशि पौष बदी विचार।

तब इन्द्र आय आनन्द धार। जन्माभिषेक कीनों सुसार ॥४॥
शतवर्ष तनी तुम आयु जान। कुवराव तीस बरस प्रमाण।
नव हाथ तुङ्ग राजत शरीर। तन हरित वरण सोहै सुधीर ॥५॥
तुम उरग चिन्ह वर उरग सोई। तुम राजरिद्धि भुगती न कोई
तप धारा फिर आनन्द पाय। एकादशि पौष वदी सुहाय ॥६॥
फिर कर्म घातिया चार नाश। वर केवल ज्ञान भयो प्रकाश ॥
वदि चैत्र चौथि वेला प्रभाव। हरि समोसरण रचियो विख्यात ॥७॥
नाना रचना देखन सुयोग। दर्शनको आवत भव्य लोग ॥ सावन
सुदि सप्तमि दिन सुधारि तवविधि अघातिया नाश चारि ॥ ८ ॥
शिव थान लयो वसुकर्म नाशि। पद सिद्ध भयो आनन्द राशि ॥
तुम्हरी प्रतिमा मक्सी मझार। थापी भविजन आनन्दकार ॥ ९ ॥
तहा जुरत बहुत भवि जीव आय। कर भक्ति भावसे शीश नाय ॥
अतिशय अनेक तहा होत जान। यह अतिशय क्षेत्र भयो महान् ॥
॥१०॥ तहा आय भव्य पूजा रचात। कोई स्तुति पढ़ते भांतिभांति
कोई गावत गान कला विशाल। स्वरताल सहित सुन्दर रसाल ॥
कोई नाचत मन आनन्द पाय। तत थेई थेई थेई थेई ध्वनि कराय ॥
छम छम नूपुर बाजत अनूप। अति नटत नाट सुन्दर सरूप ॥१२॥
द्रमद्रम द्रमता बाजत मृदंग। सननन सारंगी बजति संग ॥ झननन
नन झल्लरि बजे सोई। घननन घननन ध्वनि घण्ट होई ॥१३॥ इस
विधि भवि जीव करैं अनन्द। लहै पुण्यबंध करें पाप मन्द ॥ हम
भी वन्दन कीनी अबार। सुदि पौष पंचमी शुक्रवार ॥ १४ ॥ मन
देखत क्षेत्र बढ़ी प्रयोग। जुरिमल पूजन कीनी सुलोग ॥ जय-
माल गाय आनन्द पाय। जय जय श्रीपारस जगति राय ॥ १५ ॥

घत्ता—जय पार्श्व जिनेशं नुतनाकेशं चक्रधरेशं ध्यावत हैं। मनवच आराधैं भव्य समाध ते सुर शिवफल पावत हैं।

१६६—श्री गिरिनार क्षेत्र पूजा।

दोहा—वन्दों नेमि जिनेश पद, नेमधर्म दातार। नेमधुरन्धर परमगुरु भविजन सुखकरतार ॥१॥ जिनवाणीको प्रणमिकर गुरुगणधरउरधार सिद्धक्षेत्रपूजारचों सबजीवन हितकार ॥२॥ ऊर्जयंत गिरिनामतस कह्यो जगत विख्यात। गिरि नारीताको कहत देखत मन हर्षात ॥३॥

अडिल्ल—गिरि सुउन्नत सुभगाकार है। पंचकूट उतंग सुधार है, वन मनोहर शिला सुहावनी। लखत सुन्दर मनको भावनी ॥४॥ और कूट अनेक बने तहां। सिद्धथान सुअति सुन्दर जहां। देखि भविजन मन हर्षावते। सकल जन वन्दनको आवते ॥५॥

तह नेम कुमारा व्रत तप धारा कर्म विदारा शिव पाई। मुनि कोटि बहत्तर सात शतक धरतागिरि ऊपर सुखदाई ॥ भये शिव पुरवासी गुणकेराशी विधिथिति नाशी ऋद्धिधरा। तिनकेगुणगाऊ पूज रचाऊ मन हर्षाऊ सिद्धि करा ॥

दोहा—ऐसे क्षेत्र महान्। तिहि पूजों मनवच काय।
पापका नश बारकर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥

ॐ ह्रीं श्रीगिरिनारि सिद्धक्षेत्रेभ्यो ॥ अत्र अत्र अवतर संवौष आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन ॥ अत्र ममसन्निहितो भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टक

शीकर नीर सुक्षीरसमान महा सुखदान सुप्रासुक भाई।
दे त्रय धार गजो धरता हरता मम जन्म जरा दुख दाई ॥

नेमपती तज राजमती भये बालयती तहातें शिव पाई।
कोडि बहत्तरि सातसौ सिद्ध मुनीश भये सु जजो हरपाई॥
ॐ ह्रीं श्रीगिरिनारि सिद्धक्षेत्रभ्यो। जलं॥ १॥

चन्दनगारि मिलाय सुगंध सु ल्याय कटोरीमें धरना। मोह महातम मैटन काज सु चर्चतु हों तुम्हरे चरणा। नेमपनी०॥ चंदन॥ २॥ अक्षत उज्ज्वल ल्यायधरों तहां पुञ्ज करो मनको हर्षाई। देहु अखय पद प्रभुकरुणाकर फेर न या भव वास कराई॥ नेम० अक्षतं॥३॥ फूल गुलाब चमेली वेल कदंब सुचम्पक तीर सुल्याई। प्रासुकपुष्प लवग चढाय सुगाय प्रभू गुण काम नशाई॥ नेमपती॥ पुष्प॥४॥ नेवज नव्य करों भरथाल सुकंचन भाजनमें धर भाई। मिष्ट मनोहर क्षेपत हों यह रोग क्षुधा हरियो जिनराई॥ नेम० नैवेद्य॥ दीप बनाय धरों मणिका अथवा घृत बातिकपूर जलाई। नृत्य करों कर आरति ले मम मोह महातम जाय पलाई॥ नेम० दीप॥ ६॥ धूप दशांग सुगन्ध मई कर खेवहु अग्निमझार सुहाई। शीघ्रहो अर्जसुना जिनजी ममकर्म महावन देहु जराई॥ नेमपती० धूप॥७॥ ले फल सार सुगधमई रसनाहद नेत्रनको सुखदाई। क्षेपत हों तुम्हरे चरणा प्रभुदेहु हमें शिवकी ठकुराई॥ नेमपती०॥ फलं। लेवसु द्रव्य सुअर्घ करों धर थाल सुमध्य महाहर्षाई। पूजत हों तुम्हरे चरणा हरिये वसु कर्म बली दुखदाई०॥ नेमपती०॥ अर्घ्यं॥

दोहा—पूजत हों वसु द्रव्य ले, सिद्धक्षेत्र सुखदाय।
निजहित हेतु सुहावनो, पूर्ण अर्घ चढ़ाय॥ पूर्णार्घं॥१०॥

पंचकल्याणअर्घ

कार्तिक सुदिकी छट जानो। गर्भागम तादिन मानो॥

जब इन्द्र सबै उस थानी । इत पूजत हम दुर्खानी ॥

ॐ ह्रीं कार्तिक सुदी छठि गर्भमंगल प्राप्तेभ्यो अर्घ्यं ॥ १ ॥

श्रावण सुदि छठि सुखकारी । तब जन्म महोत्सव भारी ॥
सुरराजगिरि न्हवाई । हम पूजत इत सुख पाई ॥

ॐ ह्रीं श्रावण सुदीछठी जन्ममंगल धारकेभ्यो ॥ अर्घ्यं ॥ २ ॥

सित सावनकी छठि प्यारी । तादिन प्रभु दिक्षाधारी ॥
तप घोर वीर तहाँ करना । हम पूजत तिनके चरणा ॥

ॐ ह्रीं सावन सुदि छठि दिक्षा धारकेभ्यो अर्घ्यं ॥ ३ ॥

एकम सुदि आश्विन मासा । तब केवल ज्ञान प्रकाशा ॥
हरि समवशरण तब कीना । हम पूजत इत सुख लीना ।

ॐ ह्रीं आश्विन सुदि एकम केवल कल्याणप्राप्ताय ॥ अर्घ्यं ॥ ४ ॥

सित अष्टमि मास असाढ़ा । तब योग प्रभूने छांड़ा ॥
जिन लई मोक्ष ठकुराई इत पूजत चरणा भाई ॥

ॐ ह्रीं असाढ़ सुदि अष्टमी मोक्षमङ्गलप्राप्ताय ॥ अर्घ्यं ॥ ५ ॥

अडिल्ल—कोड़ि बहत्तर सात सैकड़ा जानिये ॥ मुनिवर मुक्ति गये तहांते सुप्रमाणिये ॥ पूजों तिनके चरण सुमनवचकायके । वसु विधि द्रव्य मिलाय सुगाय बजायके ॥ पूर्णार्घ्यं ॥

अथ जयमाला

दोहा—सिद्धक्षेत्र गिरनार शुभ सब जीवन सुखदाय ॥
कहों तास जयमालिका, सुनतहि पाप नशाय ॥ १ ॥

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान । गिरिनारि सुगिरि उन्नत बखान ।
तहाँ जूनागढ़ है नगर सार । सौराष्ट्र देशके मधिमिझार ॥ २ ॥
तिस जूनागढ़से चले सोई । समभूमि कोस वर तीन होई ॥

दरवाजेसे चल कोस आध । एक नदी वहत है जल अगाध ॥ ३ ॥
पर्वत उत्तर दक्षिण सुदोय । मधि वहति नदी उज्ज्वल सुतोय ॥ता
नदी मध्य कई कुण्ड जान । दोनों तट मंदिर घने मान ॥ ४ ॥
तहा वैरागी वेष्णव रहाय । भिक्षा कारण तीरथ कराय ।
इक कोस तहांयहमच्यो ख्याल । आगैं एकवर नदीवहत नाल ॥५॥
तहां श्रावकजन करते स्नान । धो द्रव्य चलत आगे सुजान ॥
फिर मृगीकुंड इक नाम जान । तहा वैरागिनके वने थान ॥ ६ ॥
वैष्णव तीरथ जहां रचो सोई । वैष्णव पूजत आनन्द होई ॥
आगे चल डेढ़ सु कोस जाव । फिर छोटे पर्वतको चढ़ाव ॥ ७ ॥
तहां तीन कुण्ड सोहै महान । श्रीजिनके युग मन्दिर वखान ॥
मंदिर दिगम्बर दोय जान । श्वेताम्बरके वहुते प्रमाण ॥ ८ ॥
जहां वनी धर्मशाला सुजोय । जलकुण्ड तहां निर्मल सतोय ॥
तहा श्वेताम्वरगण दिशा जाय । ता कुण्ड माहि नितही नहाय ॥९॥
फिर आगे पर्वतपर चढ़ाव । चढ़ प्रथम कूटको चले जाव ॥
तहा दर्शनकर आगे सुजाय । तहां द्वितीय टोंकका दर्श पाय ॥१०॥
तहां नेमनाथके चरण जान । फिर है उतार भारी महान ॥
तहांचढ़कर पंचमटोक जाय । अतिकठिन चढ़ाव तहांलखाय ॥११॥
श्रीनेमनाथका मुक्ति थान । देखत नयनों अति हर्षमान ॥
इक विम्ब चरण युग तहां जान । भवि करत वन्दना हर्ष ठान ।१२।
कोउ करते जय जय भक्ति लाइ । कोउ स्तुति पढ़तेतहां वनाइ
तुम त्रिभुवन पति त्रैलोक्य पाल । ममदुःख दूर कीजै दयाल ॥१३॥
तुम राज ऋद्धि भुगती न कोई । यह अथिररूप संसार जोई ॥
तज मातपिता घर कुटुम्बद्वार । तज राजमनीसी सती नार ॥१४॥

द्वादश भावन भाई निदान । पशुपक्षि छोड़ दे अभय थान ॥
होसालनमें दीक्षा सुधार । तपकरके कर्म किये सुछार ॥१५॥
लाधी-वन केवल रिद्धि पाय । इन्द्रादिक पूजे चरण आय ॥
तहां समोशरण रचियो विशाल । मणिपञ्च वर्णकर अतिरसाल ॥१६॥
तहां वेदी कोट सभा अनूप । दरवाजे भूमि बनी सुरूप ॥
वसु प्रातिहार्य छत्रादि सार वर । द्वादश सभा बनी अपार ॥१७॥
करके विहार देशों मझार भवि जीव करे भवसिन्धु पार ॥
पुन टोंक पञ्चमीको सुआय । शिव धाम लहो आनन्द पाय ॥१८॥
सो पूजनीक यह धाम जान । वन्दत जन तिनके पाप हान ॥
वहांतें सुवरदत्त कोड़ि और । मुनि सातशतक सबके ओर ॥१९॥
उस पर्वतसों सबमोक्ष पाय । सब भूमि पूजने योग्य थाय ॥
तहां देश देशके भव्य आय । वन्दन कर बहु आनन्द पाय ॥२०॥
पूजन कर कीनो पाप नाश । बहु पुण्य बन्ध कीनो प्रकाश ॥
यह ऐसो क्षेत्र महान् जान । हम करी वन्दना हर्ष ठान ॥२१॥
उनईस शतक उनतीस जान । सम्वत अष्टमि सित फाग मान ॥
सब संघ सहित वन्दन कराय । पूजा कीनी आनन्द पाय ॥२२॥
अब दुःख दूर कीजे दयाल । कहें चन्द्र कृपा कीजे कृपाल ॥
मैं अल्प बुद्धि जयमाल गाय । भवि जीव शुद्ध लीज्यो बनाय ॥२३॥
तुम दया विशाला सब क्षितिपाला तुम गुणमाला कण्ठधरी ।
ते भव्य विशाला तज जग जाला नावत माला मुक्तिवरी ॥२४॥

१६७—सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पूजा

अडिल्ल छन्द

जम्बूद्वीप मझार भरतक्षेत्र उत्तमकहो । आर्य-खण्ड सुजान भद्र

देश लहो ॥ सुवर्ण-गिरि अभिराम सुपर्वत है तहां । पंचकोड़ि अरु अर्द्ध गये मुनि शिव जहा ॥ १ ॥

दोहा—सोनागिरिके शीशपर बहुत जिनालय जान ।

चन्द्रप्रभू जिन आदि दे पूजों सव भगवान ॥२॥

ॐ ह्रीं अत्रवत्रचतर संवौषटाह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापननं ॥ अत्र ममऽसन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टक

सारंग छन्द-पद्मद्रहको नीर ल्याय गङ्गासे भरके कनककटोरी माहि हेम थारनमें धरके सोनागिरिके शीश भूमि निर्वाण सुहाई पंचकोड़ि अरु अर्द्ध मुक्ति पहुंचे मुनिराई ॥ चन्द्रप्रभु जिन आदि सकल जिन-वर पद पूजों । स्वर्ग मुक्ति फल पाय जाय अविचल पद हूजो ॥

दोहा—सोनागिरिके शीशपर जेते सव जिन राय ।

तिनपद धारा तीन दे तृषा हरणके काज ॥

ॐ ह्रीं सोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो ॥ जलं ॥ १ ॥

केशर आदि कपूर मिले मलयागिरि चन्दन । परमल अधिको तास और सव दाह निकन्दन । सोनागिरिके शीशपर जेते सव जि-नराज। ते सुगन्ध कर पूजिये दाह निकन्दन काज । सुगन्धं ॥ २ ॥

तन्दुलि धवल सुगन्ध ल्याय जल धोय पखारे । अक्षय पदके हेतु पुञ्ज द्वादश तहा धारे । सोनागिरिके शीशपर जेते सब जिनराज । तिन पद पूजा कीजिये अक्षय पदके काज ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

वेला और गुलाव मालती कमल मंगाये पारिजातके पुष्पल्याय जिन चरण चढ़ाये ॥ सोनागिरिके शीशपर जेते सब जिनराज । ते सब पूजों पुष्प ले मदन विनाशन काज ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ विंजन जो

जगमाहिं बाकृपूत मांहि पकाये । मीठे तुरत बनाय हेम थारी भर ल्याये । सोनागिरिके शीशपर जेते सब जिनराज । ते पूजों नैवेद्यके क्षुधा हरणके काज ॥ नैवेद्य ॥

मणिमय दीप प्रजाल भरों पङ्कति मनधारी । जिन मन्दिर तम हार करहु दर्शन नरनारी । सोनागिरिके शीशपर जेते सब जिनराज करो दीपके आरती ज्ञान प्रकाशन काज ॥ दीपं ॥ ६ ॥ दशविधि धूप अनूप अग्नि भाजनमें डालो । जाकीधूप सुगन्ध रहो भर सर्व दिशाओ । सोनागिरिके शीशपर जेते सब जिनराज । धूप कुम्भ आगे धरों कर्म दहनके काज ॥ ७ ॥ उत्तम फल जग मांहि बहुत मीठे अर पाके अमित अनार अनार आदि अमृत रस छाके । सोनागिरिके शीशपर जेते सब जिनराज । उत्तम फल तिनढे मिलो कर्म विनाशन काज ॥ फलं ॥ ८॥ जल आदिक वसु द्रव्य अर्घ करके घर नाचो । बाजे बहुत बजाय पाठ पढ़के सुख साचो सोनागिरिके शीशपर जेते सब जिनराज । ते हम पूजोंअर्घ ले । मुक्ति रमणके काज ॥ अर्घ ॥ ९॥ श्रीजिनवरकी भक्ति सो जो नर करत हैं फल वांचा कुछ नाहि प्रेम उर धरत हैं ॥ ज्यो जगमाहिं किसान सुखेतीको करें । नाज काज जिय जान सुगुम आपहि भरें ॥ ऐसे पूजादान भक्ति वश कीजिये । सुख सम्पति गति मुक्ति सहज पा लीजिये ॥ पूर्णार्घं ॥ १० ॥

अथ जयमाला

दोहा—सोनागिरिके शीशपर जिन मन्दिर अभिराम ।
तिन गुणकी जयमालिका वर्णत आशाराम ॥१॥
गिरि नीचे जिन मन्दिर सुचार । ते यतिन रचे शोभा अपार ।

तिनके अति दीरघ चौक जान। तिनमें यात्री मेलें सुआन ॥ २ ॥
गुमठी छज्जे शोभित अनूप। ध्वज पंकित सोहै विविधरूप।
वसु प्रातिहार्य तहां धरे आन। सब मङ्गल द्रव्यनकी सुखान ॥३॥
दरवाजोंपर कलशा निहार। कर जोर सु जय जय ध्वनि उचार।
इक मन्दिरमें यतिराजमान। आचार्य विजयकीर्ती सुजान ॥ ४ ॥
तिन शिष्य भागीरथ विबुध नाम। जिनराज भक्ति नहि और काम
अब पर्वतको चढ़ चलो जान। दरवाजो तहा इक शोभमान ॥५॥
तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार। तिन वन्दि पूज आगे सिधार।
वहा दुःखित भुखितको देत दान। याचक जन जहा हैं अप्रमाण॥६॥
आगे जिन मन्दिर दुहु ओर। जिन गान होत वाजित्र शोर।
माली बहु ठाढ़े चौक पौर। ले हार कलगी तहां देत दौर ॥ ७ ॥
जिनयात्री तिनके हाथ मांहि। बखशीस रीझ तहां देत जाहिं।
दरवाजो तहां दूजो विशाल। तहा क्षेत्रपाल दोउ ओर लाल ॥ ८ ॥
दरवाजे भीतर चौक माहिं। जिन भवन रचे प्राचीन आहि।
तिनकी महिमा वरणी न जाय। दो कुण्ड सजलकर अतिसुहाय॥६॥
जिन मन्दिरको वेदी विशाल। दरवाजे तीनों बहु सुढ़ाल।
ता दरवाजे पर द्वारपाल। ले लकुट खडे अरु हाथ माल ॥ १० ॥
जे दुर्जनको नहिं जान देयं। ते निन्दकको ना दरश देयं ॥
चल चन्द्रप्रभूके चौक मांहिं। दालाने तहा चौतर्फ आयं ॥ ११ ॥
तहा मध्य सभा-मण्डल निहार। तिसकी रचना नाना प्रकार।
तहां चन्द्रप्रभुके दरश पाय। फल जात लहो नरजन्म आय ॥१२ ॥
प्रतिमा विशाल तहां हाथ सात। कायोत्सर्ग मुद्रा सुहात।
वन्दे पूजें तहां देय दान। जन नृत्य भजनकर मधुर गान ॥ १३ ॥

तार्थेई थेई थेई बाजत सितार। मृदङ्ग बीन मुहचंग सार।
तिनकी ध्वनि सुनि भवि होत प्रेम। जयकार करत नाचत सुक्षेम॥
ये स्तुतिकर फिर नाय शीश। भवि चले मानो कर कर्म खीस।
यह सोनागिरि रचना अपार। वरणन कर को कवि लहै पार॥१५॥
मति तनक बुद्धि आज्ञासुपाय। बस भक्ति कही इतनी सुगाय।
मैं मन्दबुद्धि किम लहों पार। बुधिवान चूक लीजो सुधार॥१६॥

दोहा—सोनागिरि जयमालिका लघुमति कही बनाय।
पढ़े सुने जो प्रीतिसे सो नर शिवपुर जाय॥१७॥इति

१६८—रविव्रत पूजा।

यह भवजन हितकार सु रवि-व्रत जिन कही। करहु भव्यजन लोग समन देके सही॥ पूजो पार्श्व जिनेंद्र त्रियोग लगायके। मिटै सकल सन्ताप मिले निध आयके॥ मति सागर इक सेठ कथा ग्रन्थ कही। उन्हींने यह पूजा कर आनन्द लही॥ ताते रविव्रत सार सो भविजन कीजिये। सुख सम्पति सन्तान अतुल निध लीजिये।
दोहा—प्रणमों पार्श्व जिनेशको हाथ जोड़ सिर नाय। परभव सुखके कारने पूजाकरूं बनाय। एतवार व्रतके दिना एही पूजन ठान। ता फल सम्पति सम्पति लहै निश्चय लीजै मान॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो।

अष्टक—उज्ज्वल जल भरके अति लायो रतन कटोरन माहीं धार देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म जरा मिट जाहीं॥ पारसनाथ जिनेश्वर पूजों रविव्रत दिन भाई। सुख सम्पति बहु होय तुरतही आनन्द मङ्गलदाई॥ ॐ ह्रीं पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय

शिकार चित्र

सप्तव्यसन चित्रावली

मांस खानेसे और शराब पीनेसे दुर्गति होती है।

जल निर्वपामीति स्वाहा ॥ मलयागिरि केशर अति सुन्दर कुमकुम रङ्ग बनाई । धार देव जिन चरनन आगे भव आताप नसाई । पारस नाथ० सुगन्धं ॥ मोती सम अति उज्वल तन्दुल ल्यावो नीर पखारो अक्षय पदके हेतु भावसो श्रीजिनवर ढिग धारो । पारस०॥ अक्षतं॥ केला अर मचकुन्द चमेली पारजातके ल्यावो । चुन चुन श्रीजिन अग्र चढ़ाऊं मनवाञ्छित फल पावो । पारस० पुष्पं ॥ वावर फैनी गोजा आदिक घृतमे देत पकाई । कञ्चन थार मनोहर भरके चरनन देत चढ़ाई । पारस० नैवेद्यं ॥ मनमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोत जगाई । जिनके आगे आरतो करिके मोह तिमिर नस जाई । पारस० दीपं । चूरनकर मलयागिरि चन्दन धूप । दशाङ्ग बनाई । तट पावकमें खेय भावसों कर्म नाश हो जाई । पारस० ॥ धूपं ॥ श्री फल आदि वदाम सु पारी भांति भांतिके लावो । श्रीजिनचरण चढ़ाय हर्ष कर तातें शिव फल पावो । पारस० ॥फल॥ जल गन्धादिक अष्ट दरवले अर्घ बनावो भाई । नाचत गावत हर्ष भावसों कञ्चन थार भराई । पारस०॥अर्घ॥ गीताका छन्द । मन वचन काय विशुद्ध करके पार्श्वनाथ सु पूजिये । जल आदि अर्घ बनाय भविजन भक्तिवन्त सु हूजिये । पूज्य पारसनाथ जिनवर सकल सुख दातारजी । जे करत हैं नर नार पूजा लहत सुक्ख अपारजी । पूर्णार्घं ।

दोहा—यह जगमें विख्यात है, पारसनाथ महान ।
जिनगुनकी जयमालिका भाषा करो बखान ॥

जय जय प्रणमों श्रीपार्श्वदेव । इन्द्रादिक तिनकी करत सेव ।
जय जय सु बनारस जन्म लीन । तिहुं लोकविषैं उद्योत कीन ॥१॥
जय जिनके पितु श्री विश्वसेन । तिनके घर भए सुख चैन एन । जय

वामा देवी मात बखान, तिनके उपजे पारस महान ॥ २ ॥ जग तीन लोक आनन्द देन । भविजनके दाता भये हैं ऐन । जय जिनने प्रभुका शरण लीन । तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन ॥ ३ ॥ जय नाग नागनी भये अधीन । प्रभु चरणन लाग रहे प्रवीन । तजके सो देह स्वर्ग सु जाय । धरणेन्द्र पद्मावती भये आय ॥४॥ जे चोर अंजना अधम जान । चोरी तज प्रभुको धरो ध्यान । जे मति सागर इक सेठ जान जिन रविव्रत पूजा करी ठान ॥५॥ तिनके सुत थे परदेश मांहि । जिन अशुभ कर्म काटे सु ताहि ॥६॥ जे रविव्रत पूजन करो सेठ । ताफल कर सबसे भई भेंट । जिन जिनने प्रभुका शरण लीन । तिन रिद्धि सिद्धि पाई नवीन ॥७॥ जे रविव्रत पूजा करहिं जेह । ते सुक्ख अनन्तानन्त लेय। धरणेन्द्र पद्मावति हुये सहाय प्रभु भक्ति जान ततकाल आय ॥ ८॥ पूजा विधान इहि विधि रचाय । मन वचन काय तीनों लगाय जो भक्तिभाव जैमाल गाय । सोही सुख सम्पति अतुल पाय ॥९॥ बाजत मृदंग बीनादि सार । गावत नाचत नाना प्रकार । तन नन नन नन ताल देत । सन नन नन नन सुर भरत सेत ॥१०॥ ता थेई थेई थेई पग धरत जाय । छमछमछमछम घुंघरू बजाय । जे करहिं निरत इहि भांति भांति । ते लहहिं सुक्खशिवपुर सुजात ॥ ११ ॥

दोहा—रविव्रत पूजा पार्श्वकी करै भविक जन कोय । सुख सम्पति इहि भव लहै । तुरत सुरग पद होय । अडिल्ल—रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र पूज्य भव मन धरे । भव भवके आताप सकल छिनमें टरे ॥ होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहै । सुख सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी रहै ॥ फेर सर्व विधि पाय भक्ति प्रभु अनुसरे । नाना विधि सुख भोग बहुरि शिव तियवरे ॥

१६६—समुच्चय चतुर्विंशति जिनपूजा ।

छन्द कवित्त—वृषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पदम सुपास जिनराय । चन्द पुहुप शीतल श्रेयांस नमि वांसपूज्य पूजित सुर राय । विमल अनन्त धरम जस उज्ज्वल, शाति कुंथु अर मल्लि मनाय । मुनि सुव्रत नमि नेमि पास प्रभु । वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय ॥१॥ ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरान्तचतुर्विंशतिजिन समूह अत्र अवतर अवतर, सवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ॥ २ ॥

अष्टक—मुनि मनसम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गंधभरा । भरि कनक कटोरी धीर, दीनीं धार धरा ॥ चौवीसों श्रीजिनचन्द, आनन्दकन्द सही । पदजजत हरत भवफन्द, पावत मोक्ष मही ॥१॥ ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाश नाय ॥ जलं० ॥ गोशीर कपूर मिलाय, केशररङ्ग भरो । जिन चरनन देत चढ़ाय भव आताप हरी ॥ चौवीसौं० ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्तेभ्यो भव तापविनाशनाय ॥ चन्दनं ॥ तंदुल तिस सोमसमान, सुन्दर अनियारे । मुक्ता फलकी उनमान पुञ्जधरोंप्यारे ॥ चौ० ॥३॥ ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरातेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् ॥ वर कञ्ज कदम्ब करंड, सुमन सुगन्ध भरे । जिन अग्र धरौं गुनमंड, काम कलङ्क हरे ॥चौ०॥४॥ ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं ॥ मनमोहन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने । रस-पूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने ॥ चौ० ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं श्रीवृभादिवीरान्तेभ्य. क्षुक्षारोगविनाशनाय ॥ नैवेद्यं ॥ तम खंडन दीप जगाय धारों तुम आगे । सब तिमिर मोहछै जाय, ज्ञानकला जागे ॥ चौ० ॥६॥ ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकार विनाशाय ॥ दीपं ॥

दरश रोग दुखताकनमाहिं है प्रभु सेवत हों। सिस पूज करम अरि आहि तुम पद सेवत हों ॥ चौ० ॥ ७ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽष्ट कर्मदहनाय ॥धूपं॥ शुचि पक्व सरस फल सार सब ऋतुके ल्यायो। देखत दृगमनको प्यार पूजत सुख पायो ॥ चौ० ॥ ८ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योमोक्षफलप्राप्तये ॥ फलं नि० ॥ जलफल आठों शुचिसार ताको अर्घ करौं। तुमको अरपों भवतार भवतरि मोक्ष वरौं ॥ चौ० ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घं ॥

जयमाला।

दोहा—श्रीमत तीरथनाथ पद, माथ नाथ हितहेत।
गावौं गुणमाला अबै अजर अमर पद देत ॥ १ ॥

छंद—जय भवतम भञ्जन जनमन कञ्जन रञ्जन दिन मनि स्वच्छ करा। शिवमग परकाशक अरिगन नाशक चौबीसौं जिन राज वरा ॥ २ ॥

छंद पद्धरी—जय रिषभदेव रिषिगन नमन्त। जय अजित जीत वसु अरि तुरंत। जय संभव भवभय करत चूर। जय अभिनंदन-आनंद पूर ॥३॥ जय सुमति-सुमति दायक दयाल। जय पद्म पद्म दुति तन रसाल ॥ जय जय सुपास भव पासनास। जय चन्द चन्द तन दुति प्रकास ॥४॥ जय पुष्पदन्त दुति दंत सेत। जय शीतल शीतल गुण-निकेत। जय श्रेयनाथ नुतसहस भुज। जय वासव पूजित वासु पुज्ज ॥ ५ ॥ जय विमल विमल पद देनहार। जय जय अनन्त गुणगण अपार। जय धर्म धर्म शिवशर्म देत। जय शांति शांति पुष्टी करेत ॥ ६ ॥ जय कुन्थ कुन्थु आदिक रखेय। जय अर जिन वसुअरि छय

करेय ॥ जय मल्लि मल्ल हत मोह मल्ल । जय मुनिसुव्रत व्रत सल्ल दल्ल ॥७॥ जय नमि नित वासव नुत सपेम । जय नेमनाथ वृष चक्र-नेम॥ जय पारसनाथअनाथनाथ । जय वर्द्धमान शिवनगर साथ॥८॥

घत्ता छंद—चौवीस जिनन्द, आनन्द कंदा पापनिकंदा सुखकारी ।
तिनपद जुगचंदा उदय अमंदा वासववंदा हितधारी ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वहा ॥

सोरठा—भुक्तिमुक्ति दातार चोवीसौ जिनराज वर ।
तिनपद मन वच धार, जो पूजै सो शिव लहैं ॥ १०

इत्याशीर्वाद [पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्]

१७०—श्रीचन्द्रप्रभ जिनपूजा

चारुचरन आचरन चरन, चित हरन चिह्नचर । चन्दचन्दतन चरित चन्दथल चहर चतुर नर । चतुक चन्ड चकचूरि चारि चिद चक्र गुनाकर । चञ्चल चलित सुरेश चूल नुत चक्र धनुरधर ॥ चर अचरहितु तारनतरन सुनत चहकि चिरनन्द शुचि । जिनचन्द-चरन चरच्यो चहत चित चकोर नचि रचि रुचि ॥ १ ॥

दोहा—धनुष डेढ़ सौ तुङ्ग तन महासेन नृपनन्द ।
मातुलछमा उर जये थापों चन्दजिनन्द ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठ ठ अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ॥

अष्टक—गङ्गाह्रदनिरमलनीर हाटक भृङ्गभरा । तुम चरन जजों वरवीर मेटो जनमजरा ॥ श्रीचन्दनाथदुति चन्द चरनन, चन्द लगे मनवच तन जजत अमन्द आतमजोति जगै ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं। श्रीखण्डकपूर सुचंग केसररङ्ग भरी। घसि प्रासुकजलके संग भव आताप हरी ॥श्री०॥ ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामि ॥ तदुंलि सित सोम समान सम्हय अनि यारे। दिय पुञ्ज मनोहर आन तुम पदतर प्यारे श्री० ॥ ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥ सुरद्रु मके सुमन सुरङ्ग गन्धित अलि आवे। तासो पद पूजत चङ्ग काम विथा जावे श्री० ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ नेवज नानाप्रकार इन्द्रियबलकारी। सो लै पद पूजों सार आकुलता हारी ॥ ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य ॥ तम भञ्जन दीप सँवार तुम ढिग धारतु हों। मम तिमिर मोह निरवार यह गुन धारत् हों ॥श्री०॥ ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीप ॥ दशगन्धहुतासनमाहि हे प्रभु खेवतु हों। मम करमपुञ्ज जरि जांहि यातैं सेवत् हों ॥श्री०॥ ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ अति उत्तमफलसुमगाय तुम गुन गावतु हों पूजों तनमन हरषाय विघन नशावतु हों ॥ श्री० ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ सजि आठों दरब पुनीत आठों अंग नमों। पूजों अष्टमजिन मीत अष्टम अवनि गमों ॥ श्री० ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्यं ॥

पञ्च कल्याणक

छन्द तोटक—कलि पञ्चमचैत सुहात अली गरभागम मंगल मोद भली। हरि हर्षित पूजत मातु पिता। हम ध्यावत पावत शर्मसिता ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण पञ्चम्यां गर्भमङ्गलप्राप्तये

अर्घं । कलि पौष इकादशि जन्म लयो । तब लोक विषैं सुखथोक भयो ॥ सुरईशजजैं गिरशीश तबै । हम पूजत हैं नुत शीश अबै ॥२॥ ॐ ह्रीं पोष कृष्णैकादश्या जन्ममंगलप्राप्तय । अर्घं । तप दुर्द्धर श्रीधर आप धरा । कलि पौष इग्यासि पर्व वरा ॥ निज ध्यानविषै लवलीन भये । धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्या निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय अर्घं ॥ वर केवलभानु उद्योत कियो । तिहुं लोक तणो भ्रम मेट दियो ॥ कलिफाल्गुण सप्तमि इन्द्र जजे ॥ हम पूजहि सर्व कलङ्क भजे ॥४॥ ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्ण सप्तम्यी मोक्षमङ्गलमण्डिताय ॥अर्घं॥ सित फाल्गुण सप्तमी मुक्ति गये । गुणवन्त अनन्त अबाध भये ॥ हरि आय जजै तित मोद धरे । हम पूजतही सब पाप हरे ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय अर्घं ॥

जयमाला

दोहा—हे मृगाङ्क अंकित चरण तुम गुण अगम अपार ।
गणधरसे नहिं पार लहिं तौ को बरनत सार ॥१॥
पै तुम भगति हिये मम, प्रेरे अति उमगाय ।
तातैं गाऊं सुगुण तुम तुम ही होउ सहाय ॥२॥

छन्द पद्धरि (१६ मात्र)

जय चन्द्र जिनेन्द्र दयानिधान । भवकानन हानन दौंप्रमान ॥ जय गरभजनम मङ्गल दिनद । भवि जीवविकाशनशर्मकंद ॥ ३ ॥ दशलक्षपूर्वकी आयु पाय । मन वाछित सुख भोगे जिनाय ॥ लखि कारण ह्वै जगते उदास । चिन्त्यो अनुप्रेक्षा सुखनिवास ॥४॥ तित लौकांतिक बोध्यो नियोग । हरि शिविका सजि धरियो अभोग ॥

तापै तुम यदि जिन चन्द्राय। ताछिनको शोभाको कहाय ॥ ५ ॥ जिन अङ्ग सेत सित चमर ढार। सित छत्र शीस गलगुल हार॥ सित रतन जड़ित भूषण विचित्र। सित चन्द्र चरण चरचे पवित्र॥ सित तन द्युति नाकाधीश आप। सित शिविका कांधे धरि सचाप॥ सित सुजस सुरेश नरेश सर्व। सित चितमें चिन्तत जात पर्व ॥७॥ सितचन्द्रनगरतें निकसि नाथ। सित वनमें पहुंचे सकल साथ॥ सितशिलाशिरोमणि स्वच्छ छांह। सित तप तित धार्यो तुम जिनाह ॥८॥ सित पयको पारण परम सार। सित चन्द्रदत्त दीनों उदार॥ सित करमें सो पयधार देत। मानो बांधत भवसिन्धु सेत ॥९॥ मानोसुपुण्य धारा प्रतच्छ। तित अचरज पन सुर किय ततच्छ॥ फिर जाय गहन सित तप करंत। सित केवल ज्योति जग्यो अनंत॥ लहि समव-सरण रचना महान। जाके देखत सब पाप हान॥ जंह तरु अशोक शोभै उतङ्ग। सब शोकतनो चूरै प्रसंग ॥११॥ सुर सुमनवृष्टि नभतैं सुहान। मनु मनमथ तज हथियार जान॥ बानी जिन मुखसों खिरत सार। मनु तत्त्व प्रकाशन मुकुर धार ॥१२॥ जंहं चौसठ चमर अमर ढुरन्त। मनु सुजस मेघ झरि लगिय तंत॥ सिंहासन है जंह कमल जुक्त। मनु शिव सरवरको कमल शुक्त ॥१३॥ दुन्दुभि जित बाजत मधुर सार। मनु करम जीतको है नगार॥ शिर छत्र फिरै त्रय श्वेत वर्ण मन रतन तीन त्रयताप हर्ण ॥ १४ ॥तनप्रभातनो मण्डल सुहात। भवि देखत निजभव सात सात॥ मनु दर्पण द्युति यह जगमगाय। भवि जन भव मुख देखत सुआय॥ १५ ॥ इत्यादि विभूति अनेक जान। बाहिज दीसत महिमा महान॥ ताको वरणत नहिं लहत

पार। तौ अन्तरङ्ग को कहै सार॥ १६॥ अनअन्त गुणनिजुन करि विहार। धरमोपदेश दे भव्य तार॥ फिर जोगनिरोध अघाति हान। सम्मेद थकी लिय मुकतिथान ॥ १७॥ वृन्दावन वंदन शोश नाय। तुम जानतहो मम उर जु भाय ॥ तातौंका कहौं सुवार वार। मनवांछित कारज सार सार॥ १८॥

छन्द घतानन्द।

जय चन्दजिनन्दा आनन्दकन्दा, भवभयभंजन राजै हैं॥ रागादिक द्वन्दा हरि सब फन्दा, मुकतिमाहि थिति साजै हैं॥ १६॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द चौवोला—आठों दरव मिलाय गुण, जो भविजन जिनचन्द जजैं॥ ताकैं भवभवके अघ भाजैं, मुक्तसार सुख ताहि सजैं। ॥ २०॥ जमके त्रास मिटै सब ताके, सकल अमंगल दूर जजैं। वृन्दावन ऐसो लखि पूजत, जातें शिवपुरि राज रजैं॥ २१॥

इत्याशीर्वाद परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

१७१—शांतिनाथजिनपूजा।

या भव काननमें चतुरानन, पापपनानन घेरि हमेरी। आतम जान न मान न ठान न, वान न होन दई सठ मेरी॥ तामद भानन आपहि हो, यह छान न आन न आनन टेरी॥ आन गही शरनागतको अब श्रीपतजी पत राखहु मेरी॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्र! अत्र अवतर। संवौषट्॥

हिमगिरिगतगङ्गा धार अभंगा, प्रासुक संगा भरि भृङ्गा जरमरन मृतङ्गा, नाशि अघङ्गा, पूजि पदङ्गा मृदुहींगा॥ श्री शाति जिनेश नुत शक्रेशं वृष चक्रेशचक्रेशं। हनि अरि चक्रेश हे गुनधेश

तृषा सुतेरी भाके री ॥१॥ वर बावन चन्दन, कदलीनंदन घन आनन्दन सहित घसौं । भव ताप निकन्दन ऐरानन्दन वंदि अमंदन चरनबसौं ॥ श्री० ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं ॥ हिमकरकरि लज्जत मलय सु सज्जत अच्छतजज्जत, भरि थारी । दुखदारिद गज्जत सदपदसज्जत भव भय भज्जत अतिभारी ॥ श्री० ॥३॥ ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं ॥ मंदार सरोजं कदली जोजं पुञ्ज भरोजं मलयभरं भरि कंचन थारी, तुम ढिग धारी, मदन विदारी धीर धरं ॥श्री०॥ ॥४॥ ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्राय काम बाण विध्वंसनाय पुष्पं । पकवान नवीने पावन कीने षटरस भीने सुखदाई । मनमोदन हारे, छुधा विदारे आगे धारे गुन गाई ॥ श्री० ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य ॥ तुम ज्ञान प्रकाशे 'भ्रमतम नाशे' ज्ञेय विकाशे सुखरास । दीपक उजियारा यातें धारा मोह निवारा निजभासे ॥ श्री० ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं श्रीशांति नाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं ॥ चन्दन करपूर करिचर चूर पावकभूर माहि सुरं । तसु धूम उड़ावें नाचत जावें अलिगुंजावें मधुर सुरं ॥ श्री० ॥ ८ ॥ ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिने न्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपंनिर्वपामीतिस्वाहा ॥ बादाम खजूर दाड़िम पूर निबुक भूर लै आयो । तासों पद जज्जौं शिवफल सज्जौं निजरस रज्जौं उमगायो ॥ श्री०॥८॥ ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोक्ष फलप्राप्तये फलं । वसु द्रव्य संवारी तुम ढिग धारी आनन्द कारी दृग प्यारी । तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातें थारी शरनारी ॥ श्री० ॥ ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं ॥

पञ्च कल्याणक

असित सातयं भादव जानिये। गरभमंगल ता दिन मानिये॥ सचि कियो जननी पद चर्चनं। हम करें इनये पद अर्चन॥ १॥ ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तसम्या गर्भमङ्गलमण्डिताय अर्घं नि०॥ जनम जेठ चतुर्दशि श्याम हैं। सकल इन्द्र सुआगत धाम हैं॥ गजपुरे गज साजि जवे तवे। गिरि जजे इत मैं जजिहों अवै॥२॥ ॐ ह्रीं ज्येष्ठ-कृष्णचतुर्दश्यां जन्म मंगलप्राप्ताय अर्घं॥ २॥ भव शरीर सुभोग असार हैं। इमि विचार तवे तप धार हैं भ्रमर चौदश जेठ सुहावनी धरमहेत जजों गुन पावनो॥३॥ ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दश्यां निःक्रमहोत्सवमण्डिताय अर्घं॥३॥ शुक्ल पौष दशें सुखरास है। परम केवल ज्ञान प्रकाश है॥ भवसमुद्र उधारन देवकी। हम करे नितमंगल सेवकी॥४॥ ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्या केवलज्ञान प्राप्ताय अर्घं॥४॥ असित चौदस जेठ हनें अरी। गिरि समेद थकी शिवतिय वरी। सकल इन्द्र जजें तित आयकं हम जजें इत मस्तक नाइके॥ ५॥ ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्या मोक्षमगलप्राप्ताय अर्घं॥ ५॥

छन्द—शान्ति शान्तिगुनमण्डिते सदा। जाहि ध्यावत सुपडिते सदामैं तिन्हें भगत मडिते सदा पूजि हों कलुपहडिते सदा॥ १॥ मोक्षहेतु तुमही दयालु हो हे जिनेश गुनरत्नमाल हो॥ मैं अवै सुगुनदामही धरों। ध्यावतैं तुरित मुक्ति ती वरों॥ २॥

छन्द पद्धरी [१६ मात्रा]

जय शातिनाथ चिद्रूपराज। भवसागरमें अद्भुत जहाज॥ तुम तजि सरवारथसिद्धथान। सरवारथजुत गजपुर महान॥ १॥ तित जनमलियो आनन्द धार। हरि ततछिन आयो राजद्वार। इन्द्रानीजाय

प्रसुतथान। तुमको करमें ले इन्द्र मान ॥ २ ॥ हरि गोद देय सो मोदधार। सिर चमर अमर ढारत अपार॥ गिरिराज जाय तित शिलापांडु। तापै थाप्यो अभिषेक मांड ॥३॥ तित पंचम उदधितनों सुवार। सुर कर कर करि ल्याये उदार॥ तब इन्द्र सहसकर करि अनन्द। तुम सिरधारा ढारयौ सुनन्द ॥४॥ अघ घघ घघ घघ धुनि होत घोर। भभ भभ भभ धध धध कलश शोर॥ दृम २ दृम २ बाजत मृदङ्ग। झन नन नन नन नन नूपुरङ्ग ॥ ५ ॥ तन नन नन नन नन तनन तान। घन नन नन घंटा करत ध्वान॥ ताथेई थेई थेई थेई थेई सुचाल। जुत नाचत नावत तुमहिं भाल ॥६॥ चट चट चट अट पट नटत नाट। झट झट झट हट नट शट विराट॥ इमि नाचत राचत भगत रङ्ग। सुर लेत जहाँ आनन्द सङ्ग ॥७॥ इत्यादि अतुल मङ्गल सुठाट। तित बन्यो जहाँ सुरगिरि विराट। पुनि करि नियोग पितु सदन आय हरि सौंप्यो तुम तित वृद्ध थाय॥ पुनि राज माँहि लहि चक्र रत्न। भोग्यो छ खण्ड करि धरम जत्न॥ पुनि तप धरि केवल रिद्धि पाय॥ भवि जीवनकों शिव मग बताय॥ शिवपुर पहुँचे तुम हे जिनेश गुणमण्डित अतुल अनन्त भेष॥ मैं ध्यावतु हौं नित शीश नाय हमारी भवबाधा हरि जिनाय ॥१०॥ सेवक अपनो निज जान जान। करुना करि भौभय भान भान॥ यह विघन मूल तरु खंड खंड। चितचिन्तित आनन्द मंड मंड ॥११॥

श्रीशान्ति महंता, शिवतियकन्ता सुगुण अनन्ता, भगवन्ता। भवभ्रमन हनंता सौख्य अनन्ता दातारं तारनवन्ता ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं शान्तिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

शांतिनाथ जिनके पदपंकज, जो भवि पूजै मनवच काय। जनम

जनमके पातक ताके, ततछिन तजिकें जाय पलाय ॥ मनवांछित सुख पावै सो नर वाचौ भगति भाव अति लाय। तातैं वृन्दावन नित वन्दै, जातं शिवपुर राज्य कराय ॥ १ ॥ इत्याशीर्वादः

१७२—श्रीपार्श्वनाथ पूजा

वर सुरग आनतको विहाय सुमातवामा सुत भये। विश्वसेनके पारस जिनेसुर चरन तिनके सुर नये ॥ नव हाथ उन्नत तन विराजे उरग लच्छन अति लसे। थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठहु करम मेरेसब नसे ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ॥ अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

क्षीर सोमके समान अम्बुसार लाइये, हेमपात्र धारकेसु आपको चढ़ाइये ॥ पार्श्वनाथ देव सेव आपको करूं सदा। दीजिये निवास मोक्ष, भूलिये नहीं कदा ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जम जरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चादनादि केशरादि स्वच्छ गंध लीजिये। आप चर्न चर्च मोह तापको हनीजिये ॥ पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा। दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्र भवातापविनाशनाय चदनं निर्वपामीति स्वाहा।

फेन चन्द्रके समान अक्षते मगाइकें। पादके समीप सारपूजाको रचाइकें ॥ पार्श्वनाथ० ॥३॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षय पद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥

केवड़ा गुलाव और केतकी चुनाइये। धारचर्नके समीप कामको

नशाइये । पार्श्वनाथ० ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय काम बाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

घेवरादि बावरादि मिष्ट सर्पिमें सने । आपचर्न चर्चितें क्षुधादि रोगको हने । पार्श्वनाथ० ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा ॥

लाय रत्न दीपको सनेह पूरके भरू । वातिका कपूर वारि मोह ध्वांतको हरू । पार्श्वनाथ० ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ धूप गंध लेयके सुवर्ण सङ्ग जारिये । तास धूपके सु सङ्ग अष्टकर्म वारिये ॥ पार्श्व नाथ० ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ खारिकादि चिर्मटादि रत्नथालमें भरू । हर्षधारके जजों सु मोक्ष सुक्खको वरू ॥ पार्श्वनाथ० ॥ ८ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिने न्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति० ॥ नीरगन्ध अक्षतं सु पुष्प चारु लीजिये । दीप धूप श्रीफलादि अर्घतें जजीजिये ॥ पार्श्व०॥९॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति ॥

पञ्च कल्याणक—चाल छंद

शुभ प्रानत स्वर्ग विहाये । वामा माता उर आये । वैशाख तनी दुतिकारी, हम पूजैं विघ्न निवारी ॥१॥ ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥ जनमे त्रिभुवन सुखदाता एकादशि पौष विख्याता । श्यामा तन अ द्भुत राजै । रवि कोटिक तेजसु लाजै ॥२॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीतिस्वाहा कलि पौष एकादशि आई, तब बारह भावना भाई । अपने कर लौंच

सुकीना। हम पूजैं चर्न जजीना ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥ कलि चैत चतुर्थी आई प्रभु केवलज्ञान उपाई ॥ तब वृष उपदेश जु कीना भवि जीवनको सुखदीना ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थी दिने केवल ज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥ सित श्रावन सातै आई शिव-नारि वरी जिनराई। सम्मेदाचल हरि माना हम पूजैं मोक्ष कल्याना ॥६॥ ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तमीदिने मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वहा ॥ ७ ॥

अथ जयमाला।

कवित्त—पारसनाथ जिनेंद्र तने वच पौनभखी जरते सुन पाये। कियो सरधान लियो पद आन भये पद्मावती शेष कहाये। नामप्रताप टरै संताप सुभव्यनको शिव शर्म दिखाये। हो विश्वसेनके नन्द भले गुन गावतु हैं तुमरे हरखाये ॥ १ ॥

दोहा—केकीकंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ।
लक्षण उरग निहार पग, वन्दु पारसनाथ ॥ २ ॥

रची नगरी षट मास अगार। बने चहु गोपुर शोभ अपार ॥ सुकोट तनी रचना छवि देत। कंगूरनपैलहके बहुकेत ॥३॥ वनारसकी रचना छवि सार। करी बहु भाति धनेश तयार ॥ तहा विश्वसेन नरेन्द्र उदार। करै सुख वाम सुदे पटनार ॥४॥ तज्यो तुम आनत नाम विमान। भये तिनके वर नन्दन आन ॥ तबै पुर इन्द्र नियोग जु आय। गिरिन्द करी विधि न्होन सु जाय ॥५॥ पिता घर सौंपि गये निज धाम। कुवेर करै वसु जन्म सुकाम ॥ बढ़ै जिन दोज मयङ्क

समान। रमें बहु बालक मिलिके भान ॥६॥ भये जब अष्टम वर्ष कुमार धरे अणुव्रत महा सुखकार ॥ पिता जब आन करी अरदास करो तुम ब्याह वरो मम आस ॥७॥ करी तब नाहिं रहे जगचन्द। किये तुम काम कषाय जु मन्द ॥ चढ़े गजराज कुमारन संग। सुदेखत गंगतणी सुतरङ्ग ॥८॥ लख्यो इक रंक करे तप घोर। चहूँ दिशि अग्नि बली अति जोर। कह्यो जिननाथ अरे सुन भ्रात। करे बहु जीव तणी मत घात ॥९॥ भयो तब कोपि कहै कित जीव। जले तब नाग दिखाय सजीव ॥ लख्यो इह कारन भावन भाय। नये दिव ब्रह्म ऋषीश्वर आय ॥१०॥ तबे सुर चार प्रकार नियोगि। धरी शिविका निज कंध मनोगि कियो वन माहिं निवास जिनन्द। धरे व्रत चारित आनन्दकंद ॥११॥ गहे तहं अष्टमके उपवास। गये धनदत्त तने जु अवास ॥ दियो पयदान महासुखकार। भई पन वृष्टि तहां तिहँ बार ॥१२॥ गये तब कानन माहिं दयालु धरयो तुम योग सबे अघ टाल ॥ तबै वह धूम सुकेतु अयान। भयो कमठाचरको सुर आन ॥१३॥ करै नभगौन लखे तुम धीर। सुपूरब बैर विचार गहीर कियो उपसर्ग भयानक घोर। चली बहु तीक्षण पौन झकोर ॥१४॥ रह्यो दशहूँ दिशिमें तम छाय। लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय ॥ सु रुण्डनके बिन मुण्ड दिखाय परे जल मूसलधार अथाय ॥ १५ ॥ तबे पदमावतिकंथ धनिन्द। चले जुग आय तहां जिनचन्द ॥ भग्यो तब रंक सुदेखत हाल। लह्यो तब केवल ज्ञान विशाल ॥१६॥ दियो उपदेश महा हितकार। सुभव्यनि बोधि समेद पधार ॥ सुवर्णभद्र सुकूट प्रसिद्ध। वरी शिवनारि लही वसुरिद्ध ॥१७॥ जजूं तुम चर्न दुहूं कर जोर। प्रभू लखिये अब

हो मम ओर ॥ कहै 'बखतावर' रत्न बनाय । जिनेश हमें भवपार लगाय ॥ १८ ॥

घत्ता—जे पारस देवं सुकृतसेवं वन्दत चर्म सुनागपती करुणाके धारी पर उपकारी शिवसुखकारी कर्म हती ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छन्द—जो पूरे मन लाय भव्य पारस प्रभु नित ही । ताके दुख सल जाय भीति व्यापै नहि कितही ॥ सुख सम्पतिअधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे । अनुक्रमते शिव लहैं 'रत्न' इमि कहैं पुकारे ॥२०॥

इत्याशीर्वादः ।

१७३—पावापुर सिद्ध क्षेत्र पूजा

दोहा—जिहि पावपुर छिति अघति, हत सन्मत जगदीश ॥ भये सिद्ध शुभ थानसो जजों नाय निज शीश ॥ ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्र अवतर अवतर । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठ स्थापनं अत्र ममसन्निहितो भवभव वषट् सन्निधिकरणं परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत् । अथ अष्टक ॥गीताका छन्द॥ शुचि सलिल शीतो कलिल रीत श्रमन चीतो लै जिसो । भर कनक भारी त्रिगद हारी दे त्रिधार जित त्रिषो ॥ वरपद्म वन भर पद्मसरवर वहिर पावा ग्रामही । शिव धाम सन्मत स्वामिपायो जजों,सो सुखदामही ॥ ॐ ह्रीं श्रीपावापुर क्षेत्रे वीरनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ भव भ्रमत २ अशर्मं तपकी तपन करतप ताइयो तसु वलय कन्दन मलय चदन उदय सद्गु घिस ल्याइयो ॥ वरपद्म० ॥ सुसंध । तदुल नवीने अखंड लीने लै महीने ऊजरे । मणि कुन्दइन्दु

तुषारत् तिमिर कस रकावीमें धरे ॥ वरपद्म० ॥ अक्षतं ॥ मकरन्द लोभन सु मन शोभन सुरभि चोभन लेयजी । मद समर हरवर अमर तरुके प्राण द्रग हरवेयजी ॥ वरपद्म० । पुष्पं० ॥ पावन सुप मिष्टान्न सिप्य भावन युत किया । रस मिष्ट पूरत इष्ट सूरत लेय कर प्रमुदित हिया ।वरपद्म०। नैवेद्य ॥ तम भ्रम नाशक स्वपरभासक दीप परकाशक सही । हिमपात्रमेंधर मोक्ष्य विमवर द्योतवरमणि दीपही ॥ वरपद्म०॥ दीपं ॥ आमोदकारी वस्तु सारी सिधि सुवारी जारको वसु रुप कर २ धूप खै दश दिश सुरभ विस्तारिणी॥वरपद्म० धूपं ॥ फल पक्व पक्व सु थाल सोहन मुक्त जनमन मोहने । वररस पुरन त्वव तुरत मधुरत लेयकर अतिसोहने।।वरपद्म०॥ फलं॥ जल गंध आदि मिलाय वसु विधि थार स्वर्ण भरायके । मन प्रमुदभाव उपाय कर लै आय अर्घ बनायके ॥ वरपद्म० ।।अर्घं ॥

अथ जयमाला

दोहा—परमतीर्थंकरतार श्री वर्द्ध मान जगपाल । कल्प मल्लमल विषि विकल हुये गाऊं तिन जयमाल ॥१॥पद्धरि छंद ॥ जय जय सु वीर जिन मुक्ति धाम । पावापुर वनसर शोभदाम ॥ जित अंतिम छठ स्वर्गधाम तजपुष्पोत्तर सु विमान ठाम ॥१॥ कुण्डलपुर सिद्धार्थ नृपेश । आये त्रिशला जननी उरेश ॥ शित चैत्रत्रियोदश पुत्र जिनाल जनमे तममङ्ग निवार भाल ॥२॥ पूर्वाह्न धवल चारु दृति हिमेश । किय न्हवन कनकगिरि गिरसुरेश । वय वर्ष तीस कुमार काल । सु बल तृण्य भाग मुगति विशाल ॥३॥ मारगशिर असितदशमी पवित्र वर चन्द्रप्रभुशिवका विचित्र । चन्दपुरसे सिद्धन शीश नाय । धारो स धम पर शर्मदाय ॥४॥ गत वर्ष दुवशाकर तप विधान । दिनशित

वैशाखदशैं महान। रिजुकुला सरितट स्वस्व सोध उपजाईजिनवर चरम बोध ॥५॥ तबही हरि आज्ञा शिर चढ़ाय । रचियो कमवाश्रित धनद् राय । चतुसंघ प्रभृत गौतम गनेश। युत तीस बरष विहरे जिनेश ॥६॥ भविजोवन देशन विविध देत । आये वरपावा नग्रखेत कार्तिक अलि अन्तिम दिवस ईस । व्युतसर्गासन दिधि अघतिपीस ॥७॥ ह्वे अकल अमल इक समय मांहि । पञ्चमगति निवशे श्रीजि-नाह ॥ तब सुरपति जिन रवि अस्त जान। आये जु तुरत स्व स्व विमान ॥८॥ कर वपु अरचा थिति-बिविध भाति । ले विविध द्रव्य परमल विख्यात ॥ तव ही अगनींद्र नवाय शीश । संस्कार देह श्री त्रिजगदीश ॥९॥ कर भस्म वन्दना स्व स्व महीय । निवसे प्रभुगुन चितन स्वहीय । सुर नर मुनि गनपति आय आय । बन्दे सरोज सिर ल्याय ल्याय ॥१०॥ तवहींसे सोदिन पूज्यमान । पूजत जिनग्रह जन हर्ष मान । मैं पुनिपुनि तिस भुविशीश धार । वन्दों तिनगणधर हृद मझार ॥११॥ जिनहीका सब भो तीर्थ एह । वर्णन दायक अति शर्म गेह ॥ अरु दुषम रहे अवसान ताहि । वर्तें गौमवथित हरसदाहि ॥१२॥ छन्द ॥ श्रीसन्मत जिन अंघ्रि पद्मजो युग जजै भव्य जो मन वच काय । ताके जन्म जन्म सतत अघ जावहिं इक छिनमांहि पलाय । धनधान्यादि शर्म्म इन्द्रीजन लहे सो शर्म्म अतेन्द्री पाय । अजर अमर अविनाशी शिवथल वर्णी दौल रहैं थिर थाय । इत्यादि आशीर्वाद ॥

१७४—चंपापुर सिद्धक्षेत्र पूजा

दोहा—उतसव किय पनवार जहं, सुरगन युत हरि आय । जजों सुथल वसुपुज्य सुत, चम्पापुर हर्षाय ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर

सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रावतरावतर संवौषट् इत्याह्वाननम् ॥१॥ अत्रतिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥२॥ अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ॥

अथ अष्टकं चन्द्रोदयछन्द ॥

सम अमिय विगत त्रस वारि ले हिम कुंभ भरा। जन्म सुखर विगत हरनार दे त्रय धार धरा॥ श्री वासुपूज्य जिनराय निर्वृति थान प्रिया। चम्पापुर थल सु खराय पूजो हर्ष हिया॥ ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्रेभ्योजन्मजरा मृत्यु विनाशनाय जलं। काश्मीरी केशरसार मलि ही पवित्र करो। शीतलचन्दन सङ्गसार लौकिक ताप हरो॥श्रीवासु पूज्य०॥ सु गन्धं ॥२॥ मणिद् तिसमखंडविहीन तंदुल लो नीके॥सौरभयुत भवयरबीन ब्राखि महा नीके॥श्रीवासुपूज्य०॥अ क्षतं॥३॥मल्लि सुमन सुमन दृग माण स मन सु रज द्र मके। लौवादिम अम्बुजवान सु मन दमन भ्रमके॥ श्रीवासु पूज्य० ॥ पुष्पं ॥४॥ रस पुरित तुरित पकवान पकव पयोक धृती। सुध पवमद प्रदमन जान लो थिय युक्तबती। श्रीवासु ॥ नैवेद्य ॥ ५ ॥ तमतमप्रमनाशक सूर, शिवमगपरकाशी। लो रत्नदीप द्युतिपूर, अनुपम सुखराशी॥ श्री वासुपूज्य ॥ दीपं० ॥ वर परिमल दृव्य अनूप सोध पवित्र करो। तसु चूरण करकर धूप लो शिव कंजहरो॥ श्रीवा० ॥धूपं॥ फल पक्व मधुररस वान। प्रासुक बहुविधके। सति सुन्दर रसन दृग मान लो प्रद पद सिधके॥ श्रीवासु ॥८ फलं॥ जलफल वसुद्रव्य मिलाय लेकर हिमथारी॥ वसु अङ्ग धरापर ल्याय प्रमुदित चित धारी॥ श्रीवासु॥ अर्घं॥ अथ जयमाला ॥दोहा॥मये प्रानराम तीर्थंपति चम्पापुर निर्वान तिन गुणकी जयमालका कहुं कहों श्रवन सुखदान ॥पद्धड़िछन्द॥ जय जयभो चम्पापुर सो धाम। जहं राजत

नृप वसुपुञ्ज नाम ॥ जाव पौन पल्यसे धर्महीन । भवभ्रमन दुखमय लख प्रवीन ॥१॥ उर करुणा धर सो तम विडार । उपजे किरणावलि धर अपार ॥ श्रीवासुपूज्य तिनकेजु बाल । द्वादश तीर्थकर्ता विलाश ॥२॥ भवभोग देहतें विरत होय । वय वाल माहिं ही नाथ सोय ॥ सिद्धन नमि महाव्रत भार लीन । तप द्वादशविधि उग्रोग्र कीन ॥३॥ तह मोह सप्तत्रय आयु येह । दशप्रकृति पूर्वहो क्षय करेह ॥ श्रेणीजु क्षपक आरूढ होय । गुण नवम भाग नव माहिं सोय ॥४॥ सोलह वसु इक इक षठ इकेय । इकइक इकइम इन क्रम सहेय ॥ पुनदशम थान इक लोभ टार । द्वादशमान सोलह विडार ॥ ५ ॥ ह्वै अनन्त चतुष्टय युक्त स्वाम । पायो सब सुखद संयोग ठाम ॥ तह काल त्रिगोचर सर्वज्ञेय । युगपत-हि समय इक महि लखेय ॥ ६ ॥ कछु काल दुविध वृष अमिय वृष्टि । कर पोषे भवि भुवि धान्य श्रष्टि॥इक मास आयु अवशेष जान । जिन योगनकी सु प्रवतहान ॥ ७ ॥ ताही थल तृतिशित ध्यान ध्याय । चतुदशम थान निवसे जिनाय तहं दुचरम समय मझार ईश । प्रकृति जु बहत्तर तिनहिं पीश ॥८॥ तेरहनठ चरम समय मझार । करके श्रीजगतेश्वर प्रहार ॥ मह मि अवनी इकसमय मद्ध । निवसेपाकर निज अचल रिद्ध ॥९॥युत गुण वसु प्रमुख अमित गुणेश । ह्वै रहे सदाही इमहि वेश ॥ तवहीतें मो थानक पवित्र । त्रैलोक्य पूज्य गायो विचित्र । मैं तसु रज निज मस्तक लगाय । वन्दौ पुन पुन भुवि शीष नाय ॥ ताही पद वांछा उर मझार । धर अन्य चाह वुद्धी विडार ॥ १ ॥

दोहा—श्रीचम्पापुर जो पुरुष, पूजै मनवचकाय ।

वरणो "दौल" सो पायही सुख सपति अधिकाय ॥

अदोष, तिनका अर्घ करों। तुम पद पूजों गुण कोष, पूरन पद सुधरों ॥ हरि मेरु० अर्घ ।

आरती जोगीरासा।

जन्म समय उच्छव करनेको इन्द्रशची युत धायो। तिहको कछु वरणन करनेको मेरो मन उमगायो ॥ बुधिजन मोंको दोष न दीजो थारी बुद्धि भुलायो। साधू दोषक्षमै सबहीके मेरी करो सहायो॥१॥ जन्म जिनराजको जबहिं निज जानियो। इन्द्र धरनीन्द्र सुर सकल अकुलानियों ॥ देव देवाङ्गना चलिय जयकरती। शचिय सुरपति सहित करति जिन आरती ॥ २ ॥ साजि गजराज हरि लक्ष जोजन बनो वदन शत वदन प्रति दंत वशु सोहनो ॥ सजलभरिपूर सरदंत प्रति धारती। शचिय सुरपति सहित करति जिन आरती ॥३॥ सरहिं सर पञ्चदुय एक कमलिनि बनी। तास प्रति कमल पच्चीस शोभा घनी ॥ कमलदल एकसो आठ विसतारती। शचिय सुरपति सहित करत जिन आरतीं ॥४॥ दलहिं दल अप्सरा नाचहिं भावसो। करहिं सङ्गीत जयकार सुर चावसों ॥ तगड़दा तगड़थई करतपग धारती शचियं सुरपति स० ॥५॥ तासु करि वैठि हरि सकल परिवारसों देहि परदक्षिणा जिनहि जयकारसों। आनि कर शचिय जिन नाथ उर धारतीं। शचिय सुरपति स० ॥६॥ आनि पाडुकशिला पूर्वमुख थाप जिन। करहिं अभिषेक उच्छाहसो अधिक तिन ॥ देखि प्रभु वदन छवि कोटि रवि वारतीं। शचिय सुरपति सहित कर० ॥७॥ जोजनह आठ गम्भीर कलशा वने। चारि चौडाई मुखएक जोजन तने ॥ सहस अरु आठ भरि कलश शिर ढ़ारती। शचिय सुरपति सहि० ॥ ८ ॥ छत्र मणि खचित ईशान करतारहीं। सनत महेन्द्र

कोड़ अमर गिर डारहीं ॥ देव देवीय पुष्पांजलिय डारहीं। शचिय सुरपति सहित करत जिन० ॥६॥ कलसु अमल पुहुप शाकि चरु ले धरों। दीपमल धूपफल अर्घ पूजाकरों ॥ विविका और गोरांजन वारती। शचिय सुरपति सहित कर०॥१०॥ किये श्रृङ्गार सब अंग समानहीं। मानि मातहिं दियोबहुरि जिनराजकों ॥ रूपत नहिशोत दृग रूप निहारतीं। सचिय सुरपति सहित करतजिन मार०॥११॥ लाख सुवक्र धुनि सत सुर बाजहीं। नृत्य तांडव करत इन्द्र मति छाजहीं ॥ करत उच्छाहसो निज सु पद धारतीं। शचिय सुरपति सहित कर०॥१२॥ मध्य जग माय जिन जन्म उत्सव करै। मापके जन्मसे सकलपातक हरैं ॥ मक्ति गुरुदेवकी पार उतारती। शचिय सुरपति सहित करहि जिन आरती ॥ १३ ॥

घत्ता—जिनवर पदपूजा सरवसु दूजा पूरण लिख अर्चनमया अयर्वन सुखुो मागा पूजो ज्ञाक विनोदी भाक मया।

ॐ ह्रीं अष्टदशदोषरहित षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमलक्ष्मधर मैदिन पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई—मंगल गर्भ समयमें होय। मंगल भयो जन्ममें सोय मंगल दीक्षा धारण होय। मंगल ज्ञान प्राप्तिमें होय ॥ मंगल मोक्ष गमनमें होय। इन्द्रन कीनो हर्षित होय। आवैं वार २ हों सोय है प्रभु! दीजै मङ्गल सोय। इत्याशीर्वादः।

१७६—श्रीसम्मेद शिखरपूजा विधान

दोहा—सिद्धक्षेत्र तीरथ परम है उत्कृष्ट सु थान ॥ शिखिर सम्मेद सदा नमो होय पापकी हान ॥१॥ अगनित मुनि जहँते गए

लोक शिखरके तीर। तिनके पद पंकज नमौं, नाशैं भवकी पीर॥२॥ अडिल्ल छन्द—है वह उज्जल क्षेत्र सु अति निमल सही परम पुनीत सुठौर महा गुनकी मही॥ सकल सिद्धि दातार महा रमणीक है। वन्दौं निज सुख हेत अचल पद देन है॥३॥ सोरठा—शिखिर समेद महान जगमें तीर्थ प्रधान है॥ महिमा अद्भुत जान, अल्पमती मैं किम कहों॥४॥ पद्धरी छन्द—सरस उन्नत क्षेत्र प्रधान है। अति सु उज्जल तीर्थ महान है। करहि भक्तिसों जे गुन गायकें। वरहिं शिव सुरनर सुख पाइकें॥५॥ अडिल्ल छन्द—सुर हरि नरपतिआदि सु जिन वन्दन करैं। भवसागरतें तिरे नहीं भवदधि परैं सुफल होय जो जन्म सुजे दर्शन करैं। जन्म २ के पाप सकल छिनमें टरैं॥६॥ पद्धरी छन्द—श्रीतीर्थंकर जिनवर सुवीस। अरु मुनि असंख्य सब गुनन ईश॥ पहुचे जह थे केवल सुधाम। तिन सवकों अव मेरी प्रणाम॥ ७॥ गीतका छन्द—सम्मेद गढ़ है तीर्थ भारी सबनको उज्वल करैं। चिरकालके जे कर्म लागे दरशते छिनमें टरं॥ है परम पावन पुन्य दाइक अतुल महिमा जानिये। है अनूप सरूप गिरिवर तासु पूजा ठानिये॥८॥ दोहा—श्रीसम्मेद शिखिर महा पूजों मन-वचकाय॥ हरत चतुरगति दुखकौ, मनवांछित फलदाय॥ ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रावतरावतर संवौषट् इत्याह्वा-ननम् परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत्।

अष्टक

अडिल्ल छन्द—क्षीरोदधि सम नीर सु उज्वल लीजिये। कनक कलशमैं भरकें धारादीजिये॥ पूजों शिखिर सम्मेद सुमन वचकाय जू। नरकादिक दुख टरैं अचल पदपाय जू॥ ॐ ह्रीं श्रीसम्मेद-

शिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं । पयसों घिस मलयागिरि चंदन ल्याइये । केशर आदि कपूर सुगंध मिलाइये ॥ पूजौं शिखर सम्मेद । तन्दुल धवल सुउज्ज्वल धासे धोयके । हेम वरन थार भरौं शुचि होयके ॥ पूजौं शिखर०। सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षय पदप्राप्ताय अक्षतं ॥ ३ ॥ फूल सुगंध सु ल्याय हरषसो आन चढ़ायो । रोग शोक मिटजाय मदन सब दूर पलायो॥ पूजौं० पुष्पं षट्रस कर नैवेद्य कनक थारीभर ल्यायो ॥ क्षुधा निवारण हेतु सु पूजौं मन हरषायो ॥ पूजौं शिखर० नैवेद्य ॥ लेकर मणिमय दीप सुज्योति उद्योत हो । पूजत हो स्वज्ञान मोह तम नाश हो ॥ पूजौं शिखर० ॥ दीपं ॥ ६ ॥ दश विधि धूप अनूप अग्निमें खेवहू । अष्ट कर्मोकौं नाश होत सुख पावहू ॥ पूजौं शिखर०धूप ॥ किसा लौंग सुपारी श्रीफल ल्याइये । फल चढ़ाय मनवांछित फल सु पाइये ॥ पूजौं शिखर० । फलं ॥८॥ जलगंधाक्षत फूल सु नेवज लीजिये । दीप धूप फल लेकर अर्घ चढ़ाइये ॥ पूजौं शिखर० । अर्घ ।

पद्धरी छन्द—श्री बीस तीर्थंकर हैं जिनेन्द्र । अरु हैं असंख्य बहुते मुनेन्द्र॥ तिनकौं करजोर करों प्रणाम । जिनको पूजौं तज सकल काम ॥ ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घं ॥ द्वारयोगी रायसा—श्री सम्मेदशिखर गिरि उन्नत शोभा अधिक प्रमानो । विंशति तिहपर कूट मनोहर अद्भुत रचना जानो ॥ श्रीतीर्थंकर बीस तहांसे शिवपुर पहुंचे जाई । तिनके पद पंकज युग पूजौं प्रत्येक अर्घ चढ़ाई । ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥ प्रथम सिद्धवर कूट मनोहर आनन्द मङ्गलदाई । अजित प्रभू जहँते शिव पहुंचे पूजौं मनवचकाई ॥ जोरै

जु अस्सी एक अर्ब मुनि चौवन लाख सुगाई। कर्म काट निर्वाण पधारे तिनकौं अर्घ चढ़ाई। ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर सिद्धकूटते श्री अजितनाथ जिनेन्द्रादि एक अर्ब अस्सी कोड़ि चौवन लाख मुनि सिद्ध पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥ धवल कूट सो नाम दूसरो है सबको सुखदाई। संभव प्रभुसों मुक्ति पधारे पाप तिमिर मिट जाई। धवलदत्त है आदि मुनीश्वर नव कोड़ाकोड़ि जानों। लक्ष बहत्तर सहस बयालिस पञ्च शतक ऋषि मानों॥ कर्म नाशकर अमरपुरी गए बन्दौ सीस नवाई। तिनके पद युग जजौं भावसों हरष चितलाई॥ ॐ ह्रीं श्रीसम्मेदशिखर धवल कूटते सम्भवनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नव कोड़ाकोड़ि बहत्तर लाख ब्यालिस हजार पचिसे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥३॥ चौपाई आनन्द कूट महासुखदाय। प्रभु अभिनन्दन शिवपुर जाय। कोड़ाकोडि बहत्तर जानौ। सत्तर कोड़ि लाख छत्तीस मानौ॥ सहस बयालिस शतकजु सात। कहे जिनागममैं इस भात॥ ये ऋष कर्म काट शिव गये, तिनके पद युग पूजते भये॥ ॐ ह्रीं श्रीआनन्दकूटतें अभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि मुनि बहत्तर कोडाकोडि अरु सत्तर कोड़ि छत्तीस लाख बयालीसहजार सातसै मुनि सिद्धपदप्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥ अडिल्ल छन्द—अवचल चौथो कूट महा सुख धामजी। जहते सुमति जिनेश गये निर्वाणजी॥ कोड़कोडी एक मुनीश्वर जानिये। कोड़ि चौरासी लाख बहत्तर मानिये॥ सहस इक्यासी और सातसे गाइये। कर्म काटि शिव गये तिन्हे सिर नाइये सो थानिक मैं पूजो मन वच काय जू। पाप दूर हो जाय अचल पद पाय जू॥ ॐ ह्रीं श्रीअविचलकूटतें श्रीसुमति जिनेन्द्रादि मुनि

एक कोड़ाकोड़ि चौरासी कोड़ि बहत्तरलाख इक्यासी हजार सातसै मुनि सिद्धपदप्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ॥५॥ अडिल्ल छन्द। मोहन कूट महान परम सुन्दर कह्यो॥ पद्मप्रभु जिनराय जहां शिव पद लह्यो कोड़ि निन्याणवे लाख सतासी जानिये। सहस तैतालिस और मुनीश्वर मानिये॥ कहै जवाहरदास सुधीयकर जोयके। भविजनयो पद वैर कर्मने खोयके॥ ॐ ह्रीं श्रीमोहनकूटते श्री पद्मप्रभु मुनि निन्याणवे कोड़ि सतासीलाख तेतालीस हजार सातसे सैंतालीस मुनि निर्वाणपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥६॥ सोरठा—कूट प्रभास महान सुन्दर जगमणि मोहिनो। श्रीसुपार्श्व भगवान मुक्ति गये अघ नाश कर। कोड़ाकोड़ी उनचास कोड़िचौरासी जानिये॥लाख बहत्तर जान सात सहस अब सातसे। और कहे ब्यालिस गयेतेमुनि मुक्ति गये। तिनकों नमों नित शीश दास जवाहर जोर कर॥ ॐ ह्रीं प्रभासकूटते श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि मुनि उनचास कोड़ाकोड़ी बहत्तर लाख सात हजार सातसे ब्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥७॥ दोहा—पावन परम उतंग है ललित कूट है नाम॥ चन्द्रप्रभु मुक्ते गये बन्दो आठो याम॥ नवसे अरु चउ जानियो चौरासी ऋषि मान। कोड़िबहत्तर ऋषि कहै, अस्सी लाख परवान। ललितकूटतैं शिव गये बन्दों शीश नवाय। तिन पद पूजों भावसो जिन हित अर्घ चढ़ाय॥ ॐ ह्रीं ललितकूटते चन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादि मुनि नवसे चौरासी अर्ब बहत्तर कोड़ि अस्सी लाख चौरासी हजार पांचसै पचपन मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामि॰ स्वाहा ॥८॥ पद्धरीछन्द—सुप्रभप्रभसो कूट जान। जहां पुष्प दन्तको मुक्त थान॥ मुनि कोड़ाकोड़ी कहै हु भाव। अब कहै

न्यानवे चार लाख ॥१॥ सौ सात सतक मुनि कहे सात। अपि
स्सी और कहे विख्यात। मुनि मुक्ति गये वसु कर्म काट। वदौंकर
ोर नवाय माथ ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं श्रीसुप्रभकूटतें पुष्पदंत जिनेंद्रादि
ुनि एक कोडाकोडो निन्यानवेलाख सातहजार चारसे अस्सीमुनि
सिद्ध पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ ६ ॥ सुंदरी छन्द—सुभग
विद्युत कूट सु जानिये। परम अद्भुतता परमानिये ॥ गये शिवपुर
शीतलनाथजो। नमहुं तिन पद कर धरि माथ जी ॥ मुनि वसु
कोडाकोडि प्रमानिये, और जो लाख व्यालीस जानिये ॥ कहे और
जु लाख वत्तीसजू। सहस व्यालिस कहे यतीशजू। और तहसैनौसै
पाचसु जामिये। गए मुदि शिवपुरको और जु मानिये॥ करहि पूजा
जे मन लायकें। धरहि जन्म न भवमें आयके ॥ ॐह्रीं सुभग विद्युत-
कूटतें श्रीशीतलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि अष्ट कोडाकोड़ी व्यालीसलाख
बत्तीस हजार नौसै पाच मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं
॥१०॥ ढाल योगीरासा-कूटजु संकुल परम मनोहर श्रीयांस जिनराई
कर्म नाश कर अमरपुरी गये, वंदों शीश नवाई॥ कोड़ा कोड़जु है
छ्यानवे, छ्यानवे कोड़ प्रमानौ ॥ लाख छ्यानवें साढ़े नवसै इकसठ
मुनिश्वर जानौ। ताऊपर व्यालीस कहे हैं श्रीमुनिके गुन गावें।
विविध योगकर जो कोई पूजै सहजानन्द पद पावे॥ ॐ ह्रीं संकुल
कूटतें श्रेयांसनाथ जिनेन्द्रादि मुनि छ्यानवे कोड़ाकोड़ी छ्यानवेकोड़
छ्यानवे लाख साढ़े नौ हजार व्यालिस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्ध-
क्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥११॥ कुसुमलता छन्द—श्रीमुनि संकुल कूट परम
सुन्दर सुखदाई। विमलनाथ भगवान् जहा पञ्चम गति पाई ॥सात
शतक मुनि ओर व्यालीस जानिये सत्तर कोड़ सात लाखहजार छ

मानिये ॥ दोहा—अष्ट कर्मको नाश कर, मुनि अष्टम छिति पाय। तिनको मैं वन्दन करौं, जन्म मरण दुख जाय ॥ ॐ ह्रीं श्रीसोहनकूटतैं श्रीविमलनाथ जिने न्द्रादिमुनि सत्तरकोड़ साठलाख छै हजार सातसै ब्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १२ ॥ अडिल्ल कूट स्वयंप्रभु नाम परम सुंदर कह्यौ। प्रभु अनंत जिननाथ जहांशिव पद लह्यौ। मुनिहु कोड़ाकोड़ी छयानवे जानिये। सत्तरकोड़ सुसत्तर लाख बखानिये ॥ सत्तर सहस सु और सातसै गाइये। मुक्ति गये मुनि तिनपद शीश नवाइये ॥ कहे जवाहरदास सुनो मन लायकै शिखरजीको नित पूजो मन हरषायकै ॥ ॐ ह्रीं स्वयंभू कूटतैं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्रादि मुनि छ्यानवे कोड़ाकोड़ी सत्तरलाख सात हजार सातसै मुनि सिद्ध पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १३ ॥ चौपाई-कूट सुदत्त महा शुभ जानों। श्रीजिनधर्मनाथको थानों ॥ मुनिहु कोड़ाकोड़ि उनतीस। और कहेअपि कोड़ उनीस ॥ नव्वे नौ लाखजु सहस सु जानी। सात शतक पंचानव मानों ॥ मोक्षगये वसु कर्मन चूर। तिनपद रैन हमारी भरपूर ॥ ॐ ह्रीं सुदत्त कूटतैं श्रीधर्म नाथ जिनेन्द्रादि मुनि उनतीस कोड़ाकोड़ी उनतीसकोड़ नव्वेलाख नौ हजार सातसै पंचानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ १४ ॥ है प्रभासी कूट सुन्दर अति पवित्र सो जानिये। शांतिनाथ जिनेन्द्र जहांतें परम धाम प्रमानिये। ॐ ह्रीं प्रभासकूटतें श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नौकोड़ाकोड़ी नौलाख नौ हजार नौसै निन्यानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १५॥ गीतिका छन्द—ज्ञानधर शुभ कूट सुन्दर परम मनको मोहनो। जहांतें श्रीप्रभुकुन्थु स्वामी गए शिवपुरको धनो ॥ कोड़ाकोड़ीछ्यानवे

मुनि कोड़ि क्ष्यानवे जानिये। लाख वत्तीस सहस क्ष्यानवे अरु सौ सात प्रमानिये ॥ दोहा—और कहे व्यालीस जो तुमरो हिये मझार जिनवर पूजौं भाव सो कर भवदधितैं पार ॥ ॐ ह्रीं ज्ञानधरकूटतै श्रीकुंथुनाथ स्वामी और क्ष्यानवे कोडाकोडी मुनि क्ष्यानवे कोडि वत्तीस लाख क्ष्यानवे हजार अरु सातसौ व्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्तय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १६ ॥ दोहा—कूट जुनाटक परम शुभ शोभा अपरपार। जहते अरह जिनेन्द्रजो पहुचे मुक्त मझार। कोडि निन्यानवे जानि मुनि लाख निन्यानवै और। कहे सहस निन्यानवै वंदो कर जुग जोर ॥ अष्ट कर्मको नाश कर अविनाशी पद पाय। ते गुरु मम हृदय वसौ भवदधि पार लगाय ॥ ॐ ह्रीं नाटक कुटते श्रीअरहनाथ जिनेन्द्रादि मुनि निन्यानवै कोड़ि निन्यानवैलाख निन्य-नवै हजार मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ १७ ॥ अडिल्ल छंद—कूट सवल परम पवित्र जू ॥ गये शिवपुर मल्लि जिनेश जू ॥ मुनिज क्ष्यानवे कोड़ि प्रमानिये। पद जिनेश्वर हृदय मानिये ॥ॐ ह्रीं संवलकूटतैं श्रीमल्लिनाथ जिनेन्द्रादि क्ष्यानवै कोडाकोडि मुनिसिद्ध पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥१८॥ ढारपरमादीकी चालमें—मुनि सुव्रत जिनराज सदामानंदके दाई। सु दर निर्जरकूट जहातैं शिवपुर पाई ॥ निन्यानवै कोडाकोड़ कहे मुनि कोड़ सतावन। नौलाख जोर मुनेन्द्र कहे नौसे निन्यावन। सोरठा-कर्मनाश ऋषिराज पंचमगतिके सुख लहे। तारन तरन जिहाज मो दुख दूर करो सकल ॥ ॐ ह्रीं श्रीनिर्जरकूटतै श्रीमुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्रादिमुनिनिन्यानवै कोडाकोड संतावन कोड नौलाख नौशतक निन्यानवे मुनि सिद्ध प्राप्ताय अर्घं ढ़ार जोगीरासा—पद मिथ्यर कर प्रनोह [illegible]

धाजमा जिनराज मुनि आदिने सिवपुर पहुंचे जाई । सबको कोड़ा कोडि मुनीश्वर एक सब मानि जानो । साथ सेनापति गणवाहन मद मौसिलपामीन माना । छन्द—चतुष्कमसको माथाकर पवित्रसी पद पाय । पूजो परम समाज सों समतोलिन पन्न पाय ॥ ॐ ह्रीं श्रीमिश्रपासकुन्ना श्रीसमितनाथ जिनेन्द्रादि मुनिसीन कोड़ाकोड़ी एक सब सेनातोमन्नाय सानदशास्त्रोने स्वामिसमुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥२०। दोहा—सुवर्ण भद्र कूटसे श्रीसमुदायम नाथ । अहो जिनगुण्य सब समा आदि सुगदाय ॥ ॐ ह्रीं सुवर्ण भद्रकूटसे पापाश्चनाथ स्वामीसिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं निवपामीति स्वाहा ॥२१॥ या विधि बोस जिनन्दके पोसी शिखिर महान ॥ बार असंख्य मुनि महाजो पहुंच शिवपुर थान । ॐ ह्रीं सावीसकूट सहित अनंत मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ २२ ॥ ढाल कार्तिकपी—पावो आदीश्वर महाराजजी सहायक शिवथान हो । वासपूज्य जिनराजजी चम्पापुर शिवपद जान हो ॥ प्राणो पूजो अर्घ चढ़ाइके हद नासो भयभीत हो । प्राणी पूजो मन वचकायके ॥ ॐ ह्रीं ऋषभनाथ कैलाशगिरिते श्रीमहावीरस्वामी पावापुरसे श्रीवासुपूज्य चम्पापुरसे नेमिनाथ गिरिनारसे सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ २३ ॥ दोहा—सिद्धक्षेत्र जे और हैं भरत क्षेत्रके मांहि । और जु अतिशयक्षेत्र हैं कहे जिनागम मांहि । तिनको नामसु लेत ही पाप दूरको जाय । तेसब पूजौं अर्घ ले सब सरनूं सुखदाय । ॐ ह्रीं भरतक्षेत्र सम्बन्धि तीर्थेभ्यो अर्घं सोरठा—द्वीप अढ़ाई मेरु सिद्धक्षेत्र जे और हैं । पूजों अर्घ चढ़ाय भव भवके अघ नाश हैं । ॐ ह्रीं अढ़ाई द्वीपसम्बन्धी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ २४ ॥

सप्तव्यसन चित्रावली

वेश्या गमनका फल।

पर स्त्री गमन का फल।

अथ जयमाला

चौपाई—मन मोहन तीरथ शुभ जानो। पावन परम सुक्षेत्र प्रमानो॥ उनतिस शिखिर अनूप सोहैं। देखत ताहि सुरासुर मोहैं। दोहा—तीरथ परम सुहावनो शिखिर सम्मेद विशाल॥ कहत अल्प वुध उक्तसो, सुखदायक जयमाल॥ २॥ चौपाई—सिद्धक्षेत्र तीरथ सुखदाई। वंदत पाप दूर हो जाई। शिखर शीसपर कूटमनोज्ञ। कहे वीस अतिशय संयोग॥३॥ प्रथम सिद्ध शुभ कूट सुनाभ। अजित-नाथको मुक्ति सुधाम॥ कूट तनौ दर्शन फल कहो। कोड़ि वत्तीस उपास फल लहौ॥४॥ दूजौ धवल कूट है नाम। सम्भव प्रभु जहते निर्वाण॥ कूट दरश फल प्रोषध मानौ। लाख व्यालिस कहैं वखानौ॥५॥ आनन्द कूट महा सुखदाई। जहतें अभिनन्दन शिव जाई॥कूट तनौ वदन हम जानौ। लाख उपवास तनौ फल मानौ॥६॥ अवचल कूट महासुख वेश। मुक्ति गये जह सुमत जिनेश॥कूट भाव धर पूजें कोई। एक कोड प्रोषध फल होई॥७॥ मोहन कूट मनोहर जान। पद्म प्रभु जहते निर्वाण॥ कूट पुन्य फल लहै सुजान। कोड़ उपवास कहैं भगवान॥८॥ मनमोहन शुभ कूट प्रभासा। भक्ति गये जहंते श्रीयासा॥ पूजैं कूट महाफल सोई। कोड़ वत्तीस उपवासफल होई॥९॥ चन्द्रप्रभुको मुक्ति सुधामा। परम विशाल ललित घट नामा॥ दर्शन कूट तनौ हम जानौ। प्रोषध सोला लाख वखानौ॥१०॥सुप्रभ कूट महासुखदाई। जंहते पुष्पदंत शिव जाई॥ पूजें कूट महाफल होय। कोड उपास कहौ जिनदेव॥११॥ सो विद्युतवर कूट महान मोक्ष गये शीतल धर ध्यान॥ पूजै विविध योगकर कोई। कोड़ उपास तनौ फल होई॥ १२॥ संकुल कूट महा शुभ जानौ। जंह

ते प्रोषध भगवानो ॥ संकुल कूट तनो मन सुनो । कोड़ उपवास जिनेश्वर भनो ॥ १३ ॥ संकुल कूट परम सुखदाई । विमल जिनेश्वर यहां शिव जाई ॥ मनवच दर्श करे जो कोई । कोड़ उपवास तनो फल होई ॥१४॥ कूट स्वयंप्रभ सुभगसु ठाम । गये अनन्त अमर पुरधाम ॥ यही कूट कोई दर्शन करै । कोड़ उपवास तनो फल धरे ॥ १५ ॥ है सुदत्तवर कूट महान । शोभते धर्मनाथ निर्वाण ॥ परम विशाल कूट है सोई । कोई उपवास दर्श फल होई ॥ १६ ॥ परम विशाल कूट शुभ कहो । शांतिप्रभुशोभते शिव लहो ॥ कूट तनोदर्शन है सोई । एक कोड़ प्रोषध फल होई ॥ १७ ॥ परम ज्ञानधर है शुभ कूट शिवपुर कुन्थु गये जगभूर ॥ उनको पूजो होयकर जोर । फल उपवास कहो एक कोड़ ॥१८॥ नाटक कूट महा शुभ जान । शोभतें अरह मोक्ष भगवान ॥ दर्शन करे कूटको कोई । छयानवे कोड़ उपवास फल होई ॥१९॥ संबल कूट मल्लि जिनराय । शोभतें मोक्ष गये जिन काय ॥ कूट दरश फल कहो जिनेश । कोड़ि एक प्रोषध फल पेश ॥२० ॥ निर्जर कूट महासुखदाई । मुनिसुव्रत शोभते शिव जाई ॥ कूट तनो दर्शन है सोई । एक कोड़ प्रोषध फल होई॥२१॥कूट मित्र धरतें नमि मोक्ष । पूजत भाव सुरासुर जक्ष कूटतनो फल है सुनव कोड़उपवास कहो जिनराई ॥२२॥ श्रीप्रभु पार्श्वनाथजिनराज । सुर गति ते कूटेमहाराज, सुवर्णभद्र कूटको है नाम । शोभते मोक्षगयेजि नधाम ॥२३॥ तीन लोक हित करत अनूप । मंगलमय जगमें चिद्रूप चिन्तामणी स्वर वृक्ष समान । रिद्ध सिद्ध मङ्गल सुख दान ॥ २४ ॥ पार्श्व मोर कामदार पेम । नानाविध आनन्दको देन । व्याध विकार जांहि सब भाज । मन चिंतें पूरे सब काज ॥ २५ ॥ मनवपि पेम

विनाशक होई। जोपद जगमें और न कोई। निर्मल परम धाम उत्कृष्ट वन्दत पाप भजै अरु दुष्ट ॥ २६ ॥ जोनर ध्यावत पुन्यकमाय। जश गावत ये कर्म नशाय। करे अनादि कर्मके पाप। भजें सकल छिनमें संताप ॥२७॥ सुर नर इंद्र फणिन्द्र जु सवे। और खगेन्द्र महेन्द्र जु नशे। नित सुरसुरी करं उच्चार। नाचत गावत विविध प्रकार ॥२८॥ बहु विधि भक्ति कर मन लाय। विविध प्रकार वाजित्र वजाय ॥२९॥ द्रम द्रुम द्रुम वाजौ मृदङ्ग। घन घन घट वजो मुह चङ्ग। झन झन झनिया करे उच्चार। सरसा रंगी धुन उच्चार ॥३०॥मुरली वीनवजै धन मिष्ट। पट हातुरी स्वरान्वत पुष्ट॥नित सुरगण थित गावतसार सुरगण नाचत बहुन प्रकार ॥ ३१ ॥ झननन झननन नूपुर तान। तननन तननन टोरत तान। ता थेईथेई थेई थेईथेई चाल। सुर नाच निज नाचत भाल ॥ ३२ ॥ गावत नाचत नाना रङ्ग। लेत जहाशुभ आनन्द सङ्ग॥ नित प्रति सुर जहा वन्दे जाय। नाना विध मङ्गलको गाय ॥३३॥ आनन्द धुन सुन मोर जु सोय। प्रापत व्रतकी अति ही होय। तातैं हमकूँ है सुख सोई। गिरिवर वादों कर धर दोई ॥३४॥ मारुत मंद सुगध चलेय। गन्धोदक तहां वरषे सोय। जियकी जात विरोध न होई गिरवर वन्देकर धरदोई ॥३५॥ ज्ञान चरित तपसा धन होई। निज अनुभौको ध्यान धरेई। शिव मन्दिरको धारै सोई। गिर वर वंन्दे कर धर दोई ॥३६॥ जो भव वंदे एकजु वार। नरक निगोद पशू गतिटार। सुर शिवपदकूं पावे सोय। गिरवर वन्दे करधर दोय ॥३७॥ ताको महिमा अगम अपार गणधर कवहु न पवे पार। तुम अद्‌भुत मैं मतिकर हीन। कहो भक्त वसु केवल लीन ॥३८॥ घत्ता-श्रीसिद्धक्षेत्र अति सुखदेत सेवतु नासौ विघ्न हरा। अरु कर्म विनाशै

धवल अक्षत थाल चढ़ावही । करि सुपुञ्ज महामन भावही ।
चरम० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं ॥३॥

पुहुप माल बनाय हिरायके । जुगतिसो प्रभु पास लियायके ॥ चरम
देव० । चरण पूजत ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथजिनेन्द्राय कामवाणविनाशनाय पुष्पं ॥४॥

नवल घेवरबावर लायके घृत सुलोलित पूर्व बनायके । चरम० ।
देव० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यम् ॥५॥

करि अमोलक रत्नमई दिया । जगत ज्योति उद्योतमई किया ॥
चरमदेव० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं॥६॥

उठत धूम्र घटावलि जासुते । इम सुधूप सुगन्धित तासुते ॥ चरम०
चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥

फलसुदाड़िम आम्र उके भये कनक भाजनमें भरके लये ॥ करक०

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय मोक्षपद प्राप्तयेफलं ॥ ८ ॥

अरघलै शुभ भाव चढ़ायके । धवल मङ्गलतूर बजायकै । चरम०देव

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय सर्वसुखप्राप्तये अर्घं ॥ ९ ॥

अथ पंचकल्याणक गाथा

मास असाढ़ सुदीमें । षष्टोदिन जानि महा सुखकारी ॥
त्रिसला गरभ पधारे । तुमपद जजत अर्घ सारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अषाढ़ सुदी६गर्भकल्याणकायअर्घं॥

जय कर्म कुलाचल छेद नमों, जय मोह विना निरखेद नमों।
जय पूज्य प्रताप सदा सुथिरा, प्रगटी चहुंओर प्रशस्त गिरा ॥ ४ ॥
तन सात सुहाथ विशाल नमों, कनकाम महा दसताल नमों ।
शुभमूरति मोमन माहि बसी, सिगरी तबसे भव भ्राति नसी ॥ ५ ॥
जय क्रोध दवानल मेघ नमों, जय त्याग करौ जगनेह नमों।
जय अम्बर छाडि दिगम्बर भी, गति अम्बरकी धरि अम्बर भो ॥६॥
जय धारक पञ्चकल्याण नमों, जय रोजनमें गुणवान नमों।
जय पाद गहें गणराज रहें, सचिनायकसे मुहताज रहें ॥ ७ ॥
जय भौदधि तारण सेत नमों, जय जन्म उधारन हेत नमों।
जय मूरतिनाथ भली दरसी, करुणामय शाति छया करसी ॥८॥
जय सार्थिक नाम सुवीर नमों, जय धर्म धुराधर वीर नमों।
जय ध्यान महान तुरी चढ़के, शिवखेत लिया अति ही बढ़के ॥६॥
जय पारनवार अपार नमों, जय मार विना निरधार नमों। जय रूप रमाधर नो कथनी, कथि पार न पावन नागधणी ॥१०॥ जय देव महा कृतकृत्य नमो, जगजीव उधारण वृत्यनमो। जय भवविनासव लोक जई, ममता तुमते प्रभु दूर गई ॥११॥ जय केवल लब्धि नवीन नमों, सब बातनमें परवीन नमों। जय आतम महारस पीवन हौ, तुम जीवन मूल सजीवन हौ ॥१२॥ जय तारण देव सिपारसमों, सुनिले चित दे इह वार समों। दुख दूखित मो मनकी मनसा, नहिं होन अराम इकौ क्षणसा ॥१३॥ तकितो पद भेषज नाथ भले, तुम पास गरीब निवाज चले। मनकी मनसा सबपूजनको, तुमही इहि लायक दूज न को ॥ १४ ॥ इह कारजके तुम कारण हौ, चित ल्याय सुनो तुमकारण हौ। जगजीवनके रखवाल भले, जय धन्यधन्य किरपाल

मिले ॥१५॥ सबकी मनकी मनसा पुरिहैं, मन और केईव नहीं सुमिहैं । सुमिहैं तुमरे गुन गावनको सुमि हैं तृष्णा नशावनको ॥१६॥

छन्द काव्य—पूरन पद जयमाल भई अन्तिम जिन केरी बहुत सुनत मनप्रभु कहीं नसिहैं मद फेरी । नसिहैं त्रिभुवन माँहि जहाँ काया नहि हेरी । सम्मति मनधान आप है गुण ढेरी ॥ १७ ॥ हरो मोह तमजाल ज्ञान शिवपाठ निहारो । हरो मिथ्यापाठ नाम जग विदित पसारो सारो कारज देहदेह सम्मान न धारो, धारो निज गुण चित्त नित्त जिनराज पुकारो ॥ १८ ॥ मारो न कहो काल माल मिथ्याको डार्यो । डारो गुण भार सुमिपाको धार्यो । धारो नहि निज रीति प्रीति दुर्गतिको मार्यो । मार्यो सम्यक होय होय रत्नत्रय न बिचार्यो ॥ १९ ॥

[यह पढ़कर जयमालाका अर्घ चढ़ावे] छन्द छप्पै ।

होहु मनप्रभु सरूप भूपको पद विस्तार्यो । तार्यो जगमहुँ मुझे मन माया मार्यो । डारहु नहिं निज मानि मानि ममताको गार्यो । गारो ना कुल कानि आदिके मदन प्रहार्यो । मनप्रभु बहुत धन्य धान्य मद पुत्र पौत्र करि पर सारे । श्रीवीरचन्द जिनराजके तुमको यह कारज सरो ॥ २० ॥

[इति आशीर्वाद—यह पढ़कर पुष्प चढ़ावे]

(श्री सरस्वती पूजा नीचे लिखी भांति करे)

श्रीशारदास्तुति ।

भुजंगप्रयात छन्द

जिनादेश जाता जिनेन्द्रा विख्याता । विशुद्धा प्रबुद्धा नमो लोक माता । दुराचार दुर्नैहरा शंकरानी नमोदेवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥१॥

सुधा धर्म संसाधनै धर्मशाला। आताप निर्नाशयी मेघमाला। महा मोह विध्वंसनी, मोक्षदानी नमों देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥२॥अखै वृक्षशाखा व्यतीताभिलाखा कथासंस्कृता प्राकृतादेशभाषा, चिदानंद भूपालकी राजधानी, नमोंदेवि वागेश्वरी जैनवाणी।३।समाधानरूपा अनूपा अक्षुद्रा। अनेकान्त धा स्याद्वादाक मुद्रा॥ त्रिधा सप्तधा द्वादशांगी बखानी नमों देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥ ४ ॥ अकोपा अमाना अदम्भा अलोभा श्रुतज्ञानरूपी मतिज्ञान शोभा। महापावनी भावना भव्यमानी। नमों देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥ ५ ॥ अतीता अजीता सदा निर्विकारा, विषैवाटिका खडिनी खड्गधारा। पुरापाप विक्षेप कर्तृ कृपानी। नमों देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥६॥ अगाधा अवाधा निरध्रा निराशा। अनंता अनादीश्वरी कर्मनाशा॥ निशंका निरङ्का चिदङ्का भवानी। नमोंदेवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥७॥ अशोका मुदेका विवेका विधानी। जगज्जंतु मित्राविचित्रावसानी। समस्ताव लोका निरस्ता निदानी। नमों देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥८॥

इतना पढकर थालीमें पुष्प चढावे सरस्वती पूजा पीछे छपी है सो करे

१७८—श्री खंडगिरि क्षेत्रपूजन।

अङ्गवङ्गके पास है देश कलिङ्ग विख्यात। तामें खंडगिरी लसत दर्शनभव्य सुहात। दशरथ राजाके सुत अति गुणवानजी। और मुनीश्वर पञ्च सैकड़ा जानना॥ अष्ट करम कर नष्ट मोक्षगामी भये, तिनके पूजहुं चरण सकल मंगल ठये॥ २॥

ॐ ह्रीं श्रीकलिंगदेशमध्ये खंड गिरिजी सिद्धक्षेत्र सिद्धपद प्राप्त दशरथ राजाके सुत तथा पंचशतक मुनि अत्र अवतर अवतर, तिष्ठ तिष्ठ ठ ठ। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अथाष्टक।

अति उत्तम शुचि जल ल्याय, कंचन कलश भरा। कर धार सुमनमय काय, नाशन जन्म जरा॥१॥ श्री खंडगिरीके शीश दशरथ तनय कहे। मुनि पञ्चशतक शिवलीन देशकलिंग दहे॥
ॐ ह्रीं श्रीखंडगिरि क्षेत्रेभ्यो जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं॥
केशर मलयागिरि सार, घिसके सुगन्ध किया। संसार तापनिरवार, सुमपद प्रगट दिया॥ श्रीखंड०॥ चन्दनं॥ मुक्ताफलकी उनमान, अक्षत शुद्ध लिया। मम सर्वदोष निरवार, निजगुण मोद दिया॥ श्री खंडगिरि०॥ अक्षतं॥ ले सुमन कल्पतरु धार, गुन गुन ल्यायधरूं। शुभ पद्म ढिग धरतहिं बाण काम समूल हरूं॥ श्रीखंडगिरि०॥ पुष्पं॥ लाडू घेवर शुचि ल्याय, प्रभुपद पूजकरों। धरू चरणन ढिग आय मम क्षुध नाशकरो॥ श्रीखंडगिरी॥ नैवेद्य॥ कीमणिमय दीपक धार, दीपकर जोड़ धरो, मम मोहतिमिर निरवार, ज्ञानप्रकाश करो॥ श्रीखंडगिरि०॥ दीपं०॥ ले दशविधि गंधकुटाय अग्निमझार धरौं मम अष्ट करम वन जाय पातें पाप टरौं॥ श्रीखंडगिरि॥ धूपं॥ श्रीफल पिस्ता सु बदाम, आम नारंगि धरू। ले प्रासुक हेमके थार भवतर मोक्ष वरू॥ श्रीखंडगिरि०॥ जलफल वसु द्रव्य पुनीत, लेकर अर्घ करूं। नाचूं गाऊं इह भांति, भवतर मोक्ष वरूं॥ श्री खंडगिरि०॥ अर्घं॥

अथ जयमाला।

दोहा—देश कलिंगके मध्य है, खंडगिरि सुखधाम।
उदयागिरि तसु पास है, पाऊं जय जय धाम॥

श्रीसिद्धि खण्डगिरि क्षेत्र जान, अति सघन वृक्ष तहां मान।

अति सघन वृक्ष फल रहे आय,तिनकी सुगन्ध दशदिश जु छाय॥१॥ ताके सुमध्यमें गुफा आय नवमुनि सुनाम ताको कहाय तामेंप्रतिमा दश योग धार, पद्मासन है हरि चवर ढार ॥ २ ॥ ता दक्षिण दिशा इक गुफा जान, तामें चौविस भगवान मान । प्रति प्रतिमा इन्द्रखड़े दुओर कर चंवर धरें प्रभु भक्ति जोर ॥ ३ ॥ आजू बाजू खडि देवि द्वार, पद्मावति चक्रेश्वरीसार, करद्वादस भुजिहथियार धार मानहु निन्दक नहिं आवें द्वार ॥ ४ ॥ ताके दक्षिण चलि गुफा आय, सत घरा हैं ताको कहाय । तामें चौवीसी बनीसार,अरुत्रह प्रतिमासब योगधार॥५॥ सबमें हरि चमर सुधरहिं हाथ । नितआय भव्यनावहीं सुमाथ । ताके ऊपर मंदिर विशाल, देखत भविजन होते निहाल॥६॥ ता दक्षिण टूटो गुफाआय,तिनमें ग्यारह प्रतिमा सुहाय । पुनिपवतके ऊपर सुजाय,मंदिर दीरघ मनको लुभाय ॥७॥' बुन्देलखण्डसे यहां आय, परवार जाति भूपण कहाय । "मजू" जु नाम उनका लखाय जिन मंदिर था दीना बनाय ॥ ८॥ तामें प्रतिमा भगवान जान खड्गासन योग धरें महान । ले अष्ट द्रव्य तसु पूज्य कीन, मनवचतन करि मम धोक दीन ॥ ६ ॥ भयो जन्म सफल अपनो सुमाय, दर्शन अनूप देखो जिनाय । अब अष्ट करम होंगे जु चूर जाते सुख पाहैं पूर पूर ॥१०॥ पूरव उत्तर द्विय जिन सुधाम प्रतिमा खड्गासन अति महान । दर्शन करके मन शुद्ध होय, शुभ बन्ध होय निश्चय जु कोय ॥ ११ ॥ पुनि एक गुफामें बिम्बसार, ताको पूजनकर फिर उतार । पुनि और गुफा खाली अनेक तेहैं मुनिजनके ध्यानहेत।१२। सुनि चलकर उदयागिरि सुजाय, भारी भारो गुफा लखाय । इक गुफामाहिं जिनराज जान, पद्मासन धर प्रभु करें ध्यान ॥१३॥ जो

पूजन है भ्रमनाशनकाय, सो मन मनके पातक नशाय। तिनमें इक वापी गुफस्थान प्राचीन जैन शोभै महान ॥१४॥ महाराज खारवेल नाम आस, जिनने जिनमतका किया प्रकाश। बनवाई गुफामंदिर अनेक। मध करी प्रतिष्ठा भी अनेक ॥ १५ ॥ इसका प्रमाण यह शिलालेख बतलाता है जैनस्व पक्ष ॥ प्रारम्भ लेखमें यह बखान, सिद्धोंको वन्दन नव प्रणाम ॥१६॥स्वस्तिकवरका चिन्ह विराजमान जो जैनधर्मका है महान। मथुरापतिसे रनयुद्ध कीन। प्रतिमा भाजी स्वर फेर लीन ॥ १७ ॥ तालाव कूपवापी अनेक, पुरवाई जन कर्तव्य येक। रानी भी दानी थीं विशेष बनवाई गुफा उनने अनेक ॥१८॥ पुनि और गुफामें लेखस्थान पढ़ते जिनमतमानत प्रधान,तहाँ दशरथ नपके पुत्र भाय मुनि सग पाँच सौ भी सहाय ॥ १९ ॥ तप बारह विधिका यह करंत बाईस परीषह यह सहन्त। प्रति समितिपंचयुत चले सार। छयालीस दोष टलकर अहार ॥२०॥ इसविधि तपयुत्त र करन लोप सो उपजे कैवल ज्ञान सोय। तब इन्द्र आय भति भक्ति धार, पूजा कीनी आनन्द धार ॥२१॥ पुनि धर्मोपदेश है भव्य पार नाना देशमें कर विहार। पुनि आये यही गिरनार धाम सो ध्यान योग्य भाना महान ॥ २२ ॥ भये सिद्ध अनन्त गुणमन ईस तिनके युगपदपर धरत शीस। निज सिद्धनको पुनि पुनि प्रणाम जिनगुण अविचल भाना सुधाम ॥२३॥ वन्दन सब पूजा आदि पनाय सेवक अनुक्रम जिनपद सहाय। पूजन करताहूँ मैं जिनदास करजोड़ नमत है सुखवास ॥ २४ ॥ घत्ता—उदयागिरि क्षेत्र भनि गुणवेत सुरतर्दि भवदधि पार करें। जो पूजे ध्यावे करमनशावे वांछित पावे मुक्ति वरें ॥ २५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीखण्डगिरि सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा

दोहा—श्रीखण्डगिरि उदयगिरि, जो पूजैं त्रैकाल।

पुत्र पौत्र सम्पति लहै, पावै शिव सुख हाल ॥२६॥

१७६—आराधना पाठ।

मैं देवनित अरहंत चाहूं सिद्धका सुमिरन करौं, मैं सुरगुरु मुनि तीनि पद मैं साधुपद हृदय धरौं। मैं धर्मकरुणामयी चाहूं, जहां हिंसा रञ्जना। मैं शास्त्रज्ञान विराग चाहूं जासुमैं परपंचना ॥१॥ चौबीस श्रीजिनदेव चाहूं और देव न मन बसै। जिन बीस क्षेत्रविदेहचाहूं वंदिते पातिक नसै॥ गिरनार शिखर सम्मेद चाहूं चम्पापुर पावापुरी कैलास श्रीजिनधाम चाहूं भजत भाजैं भ्रम जुरी ॥ २ ॥ नवतत्वका सरधान चाहूं और तत्व न मन धरों षट्द्रव्य गुण परजाय चाहूं ठीक तासों भय हरों॥ पूजा परम जिनराज चाहूं और देव नहू सदा। तिहूंकालकी मैं जाप चाहूं पापनहि लागे कदा॥३॥ सम्यक्त दर्शन ज्ञान चारित्र सदा चाहूं भावसों। दशलक्षणी मैं धर्म चाहूं महाहर्ष उछावसों। सोलहजु कारण दुखनिवारण सदा चाहूं प्रीतिसों॥ मैं चित्त अठाईं पर्व चाहूं लहा मङ्गल रीतिसों ॥ ४ ॥ मैं वेद चारौं सदा चाहू आदि अन्त निवाहसों। पाये धरमके चार चाहूं अधिक चित्त उछाहसों॥ मैं दान चारों सदा चाहू भुवनवशि लाहो लहूं। आराधना मैं चारि चाहूं अन्त मैं जेई गहू ॥५॥ भावन बारह सदा भाऊं भाव निरमल होत हैं। मैं व्रतजु बारह सदाचाहूं त्याग भाव उद्योत हैं॥ प्रतिमा दिगम्बर सदाचाहू ध्यान आसन सोहना। वसुकर्मतें मैं छुटा चाहूं शिव लहूं जहं मोहना ॥ ६ ॥

मैं साधुजनको संग न पाई प्रीति तिनहीं सोकरौं। मैं पर्वके उपवास न पाई मारम्भ मैं परिहरौं ॥ इस दुःख पंचमकाल माहीं कुल श्रावकमैं लह्यो। मद महाव्रत धरि सकौं नाहीं निबल तन मैंने गह्यो ॥ ७ ॥ आराधना उत्तम सदा चाहूँसुनो जिनरायजी। तुम कृपानाथ अनाथ पालत दया करना न्याय जी ॥ वसुकर्मनाश विकाश ज्ञान प्रकाश मोको कीजिये। करि सुगति गमन समाधिमरण सुभक्ति चरणन दीजिये ॥ ८ ॥

१८०—शांति पाठ।

(शांतिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्प वृष्टि करो)

दोधकवृत्तम

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम्।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥
पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ॥ २ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥
तं जगदर्चितशांति जिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ॥ ४ ॥
येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ॥५॥
संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥

स्रग्धरावृत्तम—क्षेमं सर्वप्रजाना प्रभवतु वलवान धार्मिको भूम पाल. । काले काले च सम्य'वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥ दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगता मस्मभूजीवलोके । जैनेन्द्र'धर्म-चक्र'प्रभवतु सतत सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप्—प्रध्वस्तघातिकर्माण. केवलज्ञानभास्करा. । कुर्वन्तु जगतः शाति वृषभाद्या जिनेश्वरा ॥ ८ ॥ प्रथम करणं चरणं द्रव्यं नम' ।

अथेष्ट प्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः सङ्गति सर्वदार्यै. । सद्वृत्तानाँ गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् । सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्वे । समपद्यन्ता मम भवभवे यावदेतेऽपवर्ग' ॥ ६ ॥

आर्यावृत्ताम—तव पादौ ममहृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्ति ॥ १० ॥

आर्या—अक्खरपयत्थहीण मत्ताहीण च जं मये भणियं । तं खमउ णाणदे्व य मज्झवि दुःक्खय दितु ॥ ११ ॥ दुःक्खखओ कम्मखओ समाहिमरणं च वोहिलाहो य । मम होउ जगतवन्धवतव. जिणवर चरणशरणेण ॥ १२ ॥ (परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

विसर्जन पाठ—ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्त' न कृत मया तत्सर्व पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर. ॥१॥ आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम् । विसर्जन' नजानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥२॥ म'त्रहोनं क्रियाहीन द्रव्यहीनं तथैव च । तत्सर्वं क्षम्यता देव रक्ष २ जिनेश्वर ॥ ३ ॥ अहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम् ते मया-भ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यातु यथास्थितिम् ॥ ४ ॥

१८१—भाषास्तुति पाठ।

तुम तरणतारण भवनिवारण भविकमन आनन्दनों । श्रीनाभिनन्दन जगतवन्दन आदिनाथ निरंजनो ॥ १ ॥ तुम आदिनाथ अनादि सेऊं सेयपद पूजा करूं । कैलासगिरिपर ऋषभ जिनवर पदकमल हिरदै धरूं ॥२॥ तुम अजितनाथ अजीत जीते अष्टकर्म महाबली। यह विरद सुनकर सरण आयो कृपाकीजो नाथजी ॥३॥ तुम चन्द्रवदन सुचन्द्रलक्षण चन्द्रपुरि परमेश्वरो। महासेननन्दन जगतवन्दन चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥ तुमशांति पांच कल्याण पूजों शुद्ध मनवच कायजू। दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन विघनजाय पलायजू ॥५॥ तुम बालब्रह्म विवेकसागर भव्यकमलविकाशनो। श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर पाप तिमिरविनाशनो ॥६॥ जिन तजी राजुल राज कन्या कामसेन्या—वश करी। चारित्र रथ चढ़ि भये दूलह जाय शिवरमणी वरी ॥७॥ कन्दर्प दर्प सुसर्प लच्छन कमठशठ निर्मदकिय अश्वसेननन्दन जगतवंदन सकल संघमंगल कियो ॥८॥ जिन धरी बालकपने दीक्षा कमठ मान विदारके। श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद मैं नमों शिरधारके ॥९॥ तुम कर्मघाता मोक्षदाता दीन जान दया करो। सिद्धार्थनन्दन जगतवन्दन महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥ छत्र तीनसोहैं सुर नर मोहैं वीनती अब धारिये। करजोड़ि सेवक वीनवै प्रभु आवागमन निवारियो ॥ ११ ॥ अब होउ भव भव स्वामि मेरे मैंसदासेवक रहों करजोड़ यों वरदान मांगूं मोक्षफल जावत लहो ॥ १२ ॥ जो एक माहीं एक राजै एक माहि अनेकनो। इक अनेक कि नहीं संख्या नमोंसिद्ध निरंजनो ॥१३॥ मैं तुम चरणकमल गुण गाय। बहुविधि भक्ति करौ मन लाय। जनम २ प्रभु पाऊं तोहि

सप्तव्यसन चित्रावली

जुआ खेलने का फल।

सप्तव्यसन चित्रावली

चोरी का फल।
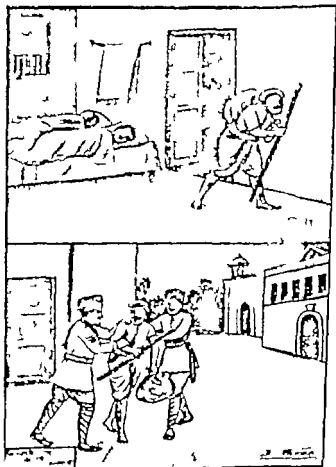
स्वार्थत्यागकी कठिन तपस्या बिना खेद जो करते हैं,

ऐसे ज्ञानी साधु जगतके दुख समूहको हरते हैं ॥ २ ॥

रहे सदा सत्सङ्ग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहे,

उन हीं जैसी चर्यामें यह चित्त सदा अनुरक्त रहे ।

नहीं सताऊं किसी जीवको, झूठ कभी नहिं कहाकरूं,

परधन वनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं॥३॥

अहङ्कारका भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूं,

देख दूसरोंकी बढतीको कभी न ईर्षा भाव धरूं ।

रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करू,

बने जहांतक इस [illegible]में औरोंका उपकार करूं ॥४॥

मैत्रीभाव जगतमें मेरा सब जी[illegible]से नित्य रहे,

दीन दुखी जीवोंपर मेरे उरसे करुणास्रोत वहे ।

दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतोंपर क्षोभ नहीं मुझको आवे,

साम्यभाव रक्खूं मैं उनपर ऐसी परिणत हो जावे ॥५॥

गुणीजनोंको देख हृदयमें मेरे प्रेम उमड आवे,

बने जहा तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे ।

होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,

गुण ग्रहणका भाव रहे नित, दृष्टि न दोषोंपर जावे ॥६॥

कोई-[illegible]हे या अच्छा, लक्ष्मी आये या जावे,

[illegible] वर्षोंतक जीऊं या मृत्यु आज हीं आ जावे ।

[illegible] भय या लालच देने आवे,

[illegible]से मेरा कभी न पद डिगने पावे ॥७॥

शुभ स्याद्वादनयका सुपथ सबको दिखाया आपने।
　　दृढ़ आत्मबलका मर्म भी सबको सिखाया आपने॥
समता सभीके साथ सब दिन आपकी रहती रही।
　　इस हेतु सेवा आपकी निष्फल नहीं करती रही॥५॥
यद्यपि अहिंसा धर्म सभीमें श्रेष्ठ सब माना सही।
　　पर वास्तविक उसके निधानोंको कभी जाना नहीं॥
किस भाँति करना चाहिये जगमें अहिंसा धर्मको।
　　अतिशय सरल करके दिखाया आपने इस मर्मको॥६॥
करके कृपा यदि भवतरिन होते न भूपर आप तो।
　　मिटता नहीं संसारका भवकालमें भव ताप तो॥
जितकाम हो निष्काम हो सब शांतिके सुखधाम हो।
　　योगीन्द्र भोगोंसे रहित गुणहीन हो गुणग्राम हो॥७॥
जय जय महावीर प्रभो! जगको जगा कर आपने।
　　संसारके हिंसा मलिन मयको भगाकर आपने॥
इस लोकको सुरलोकसे भी परम पावन कर दिया।
　　अज्ञान भाकर विश्वको प्रकाशका सागर किया॥८॥

१८३—मेरी भावना।

जिसने रागद्वेष कामादिक जीते सब जग जान लिया
　　सब जीवोंको मोक्षमार्गका निस्पृह हो उपदेश दिया।
बुद्ध वीर जिन हरि हर ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो
　　भक्ति भावसे प्रेरित हो यह चित्त उसीमें लीन रहो॥१॥
विषयोंकी आशा नहिं जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं,
　　निज परके हित साधनमें जो निशदिन तत्पर रहते हैं॥

गजगृह नाम । श्रेणिक राज करे अभिराम ॥ नाम चेलना गृह पटरानि । चंद्ररोहिणी रूप समान ॥ २ ॥ नृप बैठो सिंहासन परे वनमाली फल लायो हरे ॥ कर प्रणाम वच नृपसे कहो चित्त प्रमोद से ठाडो रहो ॥३॥ वर्द्धमान आये जिन स्वामि । जिन जीतो उद्यम अरि काम ॥ इतनी सुनत नृपति उठ चलो । पुरजन युत दलवलसैं मलो ॥ ४ ॥ समोशरण वन्दे भगवान । पूजा भक्ति धारि बहुमान ॥ नर कोठो बैठो नृपजाय । हाथ जोड़ पूछे शिर नाय ॥ ५ ॥ सुगन्ध दशमी व्रत फल भाषि । तानरकी कहिये अब साखि ॥ गणधर कहैं सुनो मगधेश । जम्बद्वीप विजयार्द्ध देश ॥ ६ ॥ शिव मन्दिरपुर उत्तरश्रेणी । विद्याधर प्रीति कर जैनी ॥ कमलावती नारि अति रूप सुरकातासे अधिक अनूप ॥ सागरदत्त वसे तहां साह । जाके जिन व्रतमें उत्साह ॥ धनदत्त वनिता गृह कही । मनोरमा ता पुत्री सही ॥ ८ ॥ सुगुप्ताचार्य गृह आइयो । देख मुनींद्र दु ख पाइयो ॥ कन्या मुनिकी निन्दा करी । कुछ मनमें नहि शङ्का धरी ॥ ९ ॥ नग्न गात दुर्गंध,शरीर । प्रकट पने देहो नहिं चीर । मुख ताम्बूल हतो मुनिअङ्ग मानो सुखको कीनो भङ्ग ॥ १० ॥ भोजन अन्तराय जब भयो मुनि उठ जाय ध्यान वन दियो ॥ समताभावधरैउरमाहि । किञ्चित खेद चित्तमें नाहिं ॥११॥ जोते अवधि समय कछु गयो । मनोरमाका [illegible] सुभयो । भई गधी पुनि कुकरि ग्राम । अपर ग्रामभई सूकरी ॥१२॥ [illegible] तिलकपुर जान । विजसेन तहका नृप [illegible] चित्ररेखा [illegible] गो । ता पुत्री दुर्गन्धा भई ॥१३॥ एक [illegible] विनतीको ठयो ॥ मो पुत्री दुर्गंधा [illegible] ॥ १४ ॥ राजा वचन मनिश्वर

होकर सुखमें मग्न न फूले दुखमें कभी न घबड़ावे

पर्वत-नदी श्मशान-भयानक अटवीसे नहि भय खावे।

रहे अडोल-अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे,

इष्टवियोग अनिष्ट योगमें सहनशीलता दिखलावे॥ ८॥

सुखी रहें सब जीव जगतके कोई कभी न घबरावे

बैर पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मङ्गल गावे।

घर २ चर्चा रहे धर्मकी दुष्कृत दुष्कर हो जावे

ज्ञान चरित्र उन्नत कर अपना मनुज जन्मफल सब पावें॥९॥

ईति भीति व्यापे नहि जगमें वृष्टि समयपर हुआ करे,

धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजाका किया करे।

रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांतिसे जिया करे

परम अहिंसा धर्म जगतमें फैल सर्वहित किया करे॥१०॥

फैले प्रेम परस्पर जगमें मोह दूरपर रहा करे,

अप्रिय कटुककठोर शब्द नहि कोई मुखसे कहा करे।

बनकर सब युग-वीर हृदयसे देशोन्नति रत रहा करे

वस्तुरूप विचार खुशीसे सब दुख संकट सहा करे॥११॥

तेरहवां अध्याय

१८४—सुगन्ध दशमी व्रत कथा

चौपाई—वर्द्धमान वन्दौं जिनराज। गुरु गौतम वन्दों सुखदाय

सुगन्धदशमीव्रत की कथा नम भाष सुखकारी यथा॥१॥ मगधदेश

विद्यावन्त सुगुणको खान ॥ जो सुगन्ध मदनावलि जाय । सो पुरु षोत्तमको परनाय ॥ २८॥ राजा मदन सुन्दरी बाल । सुखसे जात । जानो काल ॥ एक दिवस मुनिवर वंदियो । धर्म श्रवण मुनिवरपर कियो ॥२६॥ हाथ जोड पूछे तब राय । महा मुनींद्र कहो समझाय मो गृह रानी मदनावली । ता शरीर शोभता भली ॥ ३० ॥ कौन पुन्यसे सुभग सुरूप सुरवनितासे अधिक अनूप ॥ राजा वचनमुनीं-श्वर सुने । सब वृत्तान्त रायसे भने ॥३१॥ जैसे दुर्गन्धा व्रत लहो तैसी विधि नरपतिसे कहो ॥ सुने भवातर जोड़े हाथ । दिक्षाव्रत दीजे मुनिनाथ ॥ ३२॥ राजाने जब दीक्षा लई । रानी तबे अर्जिका भई ॥ तपकर अन्त स्वर्गको गई । सोलम स्वर्ग प्रतेन्द्र सो भई ।३३ बाईस सागर कालजो गयो । अन्तकालना दिवसे चयो॥भरत मु-क्षेत्र मगध तहं देश । वसुधा अमर केतुपुर वेश ॥३४॥ ता नृप गेह जन्म उन लहो । जो प्रतेन्द्र अच्युत दिव कहो ॥ कनककेतु कञ्चन द्युति देह । बनिता भाग करे शुभगेह ॥३५॥ अमरकेतु मुनि आगम भयो कनककेतु तह वदत गयो ॥ सुनो सुधर्म श्रवग सयोग तजे परिग्रह अरु भव भोग ॥ ३६ ॥ घाति घातिया केवल लयो । पुनि अघाति हनि शिवपुर गयो ॥ व्रतसुगन्धदशमी विख्यात । ता फल भयो सुरभि युत गात ॥३७॥ यह व्रत पुरुष नारि जो करे । सोदुख सकट भूल न परे॥शहर गहेली उत्तमवास । जैन धर्मको जहाप्रकाश ॥३८॥ सब श्रावक व्रत सयम धरे । पूजा दानसे पातक हरें ॥ उप-देशी विश्व भूपण सही । हेमराज पडितने कही ॥३६॥ मन वच पढ़े सुने जो कोय । ताको अजर अमर पद होय ॥ यासे भविजन पढो त्रिकाल । जो छूटे विधिके भ्रम जाल ॥ ४० ॥

॥ श्रीसुगन्ध दशमी व्रत कथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

सुन । मुनि वृत्तांत रायसे भने । सब वृत्तांत हाकिमो जान । मुनि राजासे कहो बखान ॥१५॥ सुन सुगंधा जोड़े हाथ । मोपर कृपाकरो मुनिनाथ । ऐसा व्रत उपदेशो मोहि । जासे तनु नियोग अव होहि ॥१६॥ दयावंत बोले मुनिराज । सुन पुत्री व्रत जिनराजगाय॥समता भाव चित्तमें धरो ॥ तुम सुगंध दशमी व्रत करो॥१७॥यह व्रतकीजे मनवच काय । जासे रोग शोक सब जाय सुगंधा जिनवैं जिनुराय कहिये सविधि महा मुनिराय ॥ १८ ॥ ऐसी वचन सुने मुनि जवै । तब बोले पुत्री सुन सबै ॥ भादों शुक्ल पक्ष जब होय । दशमी दिन करना जोय ॥१९॥ चारों दसकी धारादेव । मनमैंराखो श्रीजिन देव ॥ शीतलनाथको पूजा करो । मिथ्या मोह दूर परिहरो ॥ २० ॥ दशके दिन छोड़ो आरम्भ । यासे मिटै कर्मका दम्भ ॥ याके करत पाप सब जाय । सो दश वर्ष करो मन लाय ॥२१॥ अब यह व्रत सम्पूर्ण होय उद्यापन कीजे चित जोय। दश श्रीफल मधुरफल जान । नीवू सरस महा फल मान ॥ २२ ॥ दश कीजे पुस्तक लिखवाय । यह विधि सब मुनि दई सनाय ॥ विधि सुन सुगंधा व्रत लयो । सब दुर्गंध तत्क्षण गयो ॥ २३ ॥ व्रतकर आयु जो पूरण करी । इशान स्वर्ग भई अपसरी ॥ जिन चैत्यालय वन्दन करै । सम्यक्भाव सदा उर धरै ॥ २४ ॥ भरतक्षेत्र मई मगध सुदेश । मूनि तिलकपुर वसे महेश ॥ राजा महीपाल तहां जान । मदन सुन्दरी त्रिया बखान ॥२५॥ बड़ो वित्रमैं दैनी भास । ताके पुत्री भई निवास ॥ मदनावली नाम धर तासौं भनि सुरूप नृनु सकल सुवास ॥२६॥ बहुत वानको करी बखान । सुर कन्या मानों उन्मान ॥ कौशांबीपुर मदन नरेन्द्र । रानी सती करै आनन्द ॥ २७ ॥ पुरुषोत्तम सुन सुन्दर जान ।

विद्यावन्त सुगुणको थान ॥ जो सुगन्ध मदनावलि जाय । सो पुरुषोत्तमको परनाय ॥ २८॥ राजा मदन सुन्दरी बाल । सुखसे जात । जानो काल ॥ एक दिवस मुनिवर वंदियो । धर्म श्रवण मुनिवरपर कियो ॥२९॥ हाथ जोड पूछे तब राय । महा मुनींद्र कहो समझाय मो गृह रानी मदनावली । ता शरीर शोभता भली ॥ ३० ॥ कौन पुन्यसे सुभग सुरूप सुरवनितासे अधिक अनूप ॥ राजा वचनमुनीश्वर सुने । सब वृत्तान्त रायसे भने ॥३१॥ जैसे दुर्गन्धा व्रत लहो तैसी विधि नरपतिसे कहो ॥ सुने भवातर जोडे हाथ । दिक्षाव्रत दीजे मुनिनाथ ॥ ३२॥ राजाने जब दीक्षा लई । रानी तबे अर्जिका भई ॥ तपकर अन्त स्वर्गको गई । सोलम स्वर्ग प्रतेन्द्र सो भई ।३३ बाईस सागर कालजो गयो । अन्तकालता दिवसे चयो॥भरत सुक्षेत्र मगध तहं देश । वसुधा अमर केतुपुर वेश ॥३४॥ ता नृप गेह जन्म उन लहो । जो प्रतेन्द्र अच्युत दिव कहो ॥ कनककेतु कञ्चन द्युति देह । वनिता भाग करे शुभगेह ॥३५॥ अमरकेतु मुनि आगम भयो कनककेतु तह वन्दन गयो ॥ सुनो सुधर्म श्रवण सयोग तजे परिग्रह अरु भव भोग ॥ ३६ ॥ घाति घातिया केवल लयो । पुनि अघाति हनि शिवपुर गयो ॥ व्रतसुगन्धदशमा विख्यात । ता फल भयो सुरभि युत गात ॥३७॥ यह व्रत पुरुष नारि जो करे । सोदुख सकट भूल न परे॥शहर गहेली उत्तमवास । जैन धर्मको जहाप्रकाश ॥३८॥ सब श्रावक व्रत सयम धरे । पूजा दानसे पातक हरे ॥ उपदेशी विश्व भूषण सहो । हेमराज पडितने कही ॥३९॥ मन वच पढे सुने जो कोय । ताको अजर अमर पद होय ॥ यासे भविजन पढो त्रिकाल । जो छूटे विधिके भ्रम जाल ॥ ४० ॥

॥ श्रीसुगन्ध दशमी व्रत कथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

दश भव इहिविधि थाय दशों जन्म नरकहि गया। दुगति कारण पाय फलो पार वट वोजवत्

दोहा—निशि भोजन करिये नहीं, प्रगट दोष अविलोय।
परभव सव सुख संपजे, यह भव रोग न होय॥

छप्पय (छन्द)

कीडो बुध बल हरे,कम्प गद करे कसारी। मकडी कारण पाय कोढ उपजे दुख भारी॥ जुयाँ जलोद्र जने फांस गल विथा बढ़ावे वाल सवे सुरभंग वमन माखी उपजावे॥ तालवे छिद्र वीछू भखत और व्याधि बहु करहि सव। यह प्रगज दोष निशा असनके परभव दोष परोक्ष फलि॥

जो अघ इहि भव दुख करे, परभव क्यों न करेय, डसत सांप पोड़े तुरत लहर क्यों न दुख देय। सुवचन सुन डाहारजे मूरख मुदित न होय। मणिधर फण फेरे सही नहीं साप नहि होय॥ सुव-चन सत गुरुके वचन और न सुवचन कोय। सत गुरु वही पिछा-नियेआ उर लोभ न होय॥ ५॥ भूधर सुवचन साँभलो स्वपर पक्षकर वीन। समुद्र रेणुका जो मिले नोड़े तें गुण कौन॥ इति॥

१६२—श्रीरविव्रत कथा

चौपई—श्रीसुखदायक पार्श्वजिनेश सुमति सुगति दाता पर-मेश सुमिरों शारद पद अरविन्द। तिनकर व्रत प्रगटो सानन्द॥१॥ वाणारस नगरो सुविशाल। प्रजापाल प्रगटो भूपाल॥ मतिसागर सेठ सुजान, ताका भूप करे सन्मान॥ तासु त्रिया गुणसुन्दरि नाम आठ पुत्र ताके अभिराम। पट् सुत भोग करे परणीत। वाल रूपगुण धर सुविनीत॥२॥ सहस्र कूट शोभित जिन धाम। आये यति पनि

अनन्त चौदस व्रत कथा ।

दोहा—अनन्तनाथ वन्दों सदा, मनमें कर बहु भाव ।
सुर असुर सेवत जिन्हैं, होय मुक्ति पर चाव ॥ १ ॥

जम्बूद्वीप द्वीपनमें सार । लख योजन ताका विस्तार ॥ मध्य सुदर्शन मेरु बखान । भरत क्षेत्र ता दक्षिण जान ॥२॥ मगध देश देशों शिरमणी । राजगृह नगरी अति बनी ॥ श्रेणिक महाराज गुणवन्त । रानी चेलना गृह शोभन्त ॥३॥ धर्मवन्त गुण तेज अपार । राजा राय महागुण सार ॥ एक दिवस विपुलाचल वीर । आये जिनवर गुण गम्भीर ॥४॥ चार ज्ञानके धारक कहे । गौतम गण धर सो संग रहे ॥ छह ऋतुके फल देखे नयन । बनमाली लेचलो ऐन ॥५॥ हर्ष सहित बन माली गयो । पुष्प सहित राजा पर गयो। नमस्कार कर जोड़े हाथ । मो पर कृपा करो नरनाथ ॥६॥ विपुलाचल उद्यान कहन्त । महा मुनीश्वर तहां वसन्त ॥ सुन राजा अति हर्षित भयो । बहुत दान मालीको दयो ॥७॥ सप्त ध्वनि बाजे बाजन्त । प्रजा सहित राजा चालन्त ॥ दे प्रदक्षिणा बैठो राव । जिनवर देख करो चित चाव ॥८ ॥ द्वै विधि धर्म कहो समुझाय । जासों पाप सर्व जर जाय ॥ खग तहां आयो एक तुरन्त । सुन्दर रूप महा गुणवन्त ॥९॥ नमस्कार जिनवरको करो । जय जयकार शब्द उच्चरो ॥ ताहि देख आश्चर्यित भयो । राजा श्रेणिक पूछतभयो ॥१०॥ सेना सहित महागुण खानि । को यह आयो सुन्दर वाणि ॥ याकी बात कहो समुझाय । ज्ञानवन्त मुनिवर तुम आय ॥ ११ ॥ [illegible] बुद्धि अपार । विजय नगर कहो अतिसार ॥ मनो[illegible] । श्रीमती रानीको कन्त ॥ १२ ॥ ताका पुत्र [illegible] प्रयवन्त सुन्दर गुणधाम ॥ पूरव नप कीनो इन [illegible] भुगते शुभ सोय ॥ १३ ॥ नाकी कथा कहूं त्रि[illegible] सार ॥ भरतक्षेत्र तामें सुखकार । कौशल [illegible] ॥ परम सुखद नगरी तह जान । विप्र सोम

ताते मिले स्वर्गका वास ॥ २७ ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय। कीजे व्रत दूनों भवि लोइ ॥ विप्र कियो व्रत विधिसों आय। सब दुख तसु गयो विलाय ॥२८॥ अन्तकाल धरके सन्यास। ताते पायो स्वर्ग निवास ॥ चौथे स्वर्गदेव सो जान। महा ऋद्धताके सो वखान ॥२९॥ विजयार्द्ध गिरी उत्तम ठौर। कांचीपुर पत्तन शिर-मौर। राजा तहं अपराजित वीर। विजया तासु प्रिया गम्भीर ॥३०॥ ताको पुत्र अरिञ्जह नाम। तिन यह आय कियो परणाम ॥ कञ्चनमय सिंहासन आन ॥ ता पर भूप बैठो सुख खान ॥ ३१ ॥ व्योम पटल विनशत लख सन्त। उपजो चित वैराग महंत। राज पुत्रको दयो बुलाय। आप लई दीक्षा शुभ भाय ॥ ३२ ॥ सही परीषह द्रड चित धार। ताते कर्म भये अति क्षार ॥ घाति घातिया केवल भयो। सिद्धि वुद्धि सो पद निर्भयौ ॥ ३३ ॥ रानीने व्रत कीनो सही। देव देह दिव अच्युत लही ॥ तहा सु सुख भुगते अधिकाय। तहासे आय भयो नर राय ॥ ३४ ॥ राज ऋद्धि पाई शुभ सार। फिर तप कर विधि कीने क्षार ॥ तहांसों मुक्तिपुर को गयो। ऐसो तिन व्रत को फल लयो ॥ ३५ ॥ ऐसा व्रत पाले जो कोई। स्वर्ग मुक्ति पद पावे सोई ॥ विनय सागर गुरु आज्ञा करी। हरि किल पाठ चित्तमें धरी ॥३६॥ तव यह कथा करी मन ल्याय। यथा शास्त्र मैं वरणी आय ॥ विधि पूर्वक पाले जो कोय। ताको अजर अमर पद होय ॥ ३७ ॥

रत्नत्रय व्रत कथा।

दोहा—अरहनाथको वन्दिके, वन्दों सरस्वति पांय।
रत्नत्रय व्रतकी कथा, कहू सुनो मनलाय ॥ १ ॥

धर्मी गुण जान ॥ सोमिल्या मामिन ता कही। दुख दरिद्रकी पूरित मही ॥ १५ ॥ पूरब पाप किये मनै। ताको दुख भुगतेहो घने ॥ सुन राजा मेघका वृतांत। नगर२ डोलमें दुखवन्त ॥ १६ ॥ देश विदेश फिरै दुखमाहा। तोहु न पावै सुखका निवास ॥ भ्रमतर सो आयो तहां। समोशरण जिनवरको जहां ॥ १७ ॥

दोहा—अनन्तनाथ जिनराजका, समोशरण तिहि बार।

सुर नर मनि हर्षित भये, देख महा द्युति सार ॥१८॥

विप्र देख मति हर्षित भयो। समोशरण वन्दनको गयो ॥ वन्दि जिनेश्वर पूछे सोई। कहा पाप मैं कीनो होई ॥ १९ ॥ दरिद्र पीड़ा यहि शरीर। सोतो व्याधि हरो गम्भीर ॥ गणधर कहैं सुनो द्विजराज। अनन्तव्रत कीजे सुखदाय ॥ २० ॥ तब विप्र बोलाकर भाय। किस विधि होई सो देहु बताय ॥ किस प्रकार या व्रतको करो। कहा विधान चित्तमें धरो ॥ २१ ॥ भादों मास सुकलकी जान। चौदश शुक्ल कही सुख दान ॥ कर स्नान शुद्ध हो जाय। तब पूजे जिनवर सुखदाय ॥ २२ ॥ शुद्ध वन्दना करै जिनराय या विधसो मन प्रेम बढाय ॥ त्रिकाल पूजै श्रीजिनदेव। रात्रि जागरण कर सुख लेव ॥२३॥ गीत व नृत्य महोत्सव जान। धारा जिनवर करो बखान ॥ अर्घ चतुर्दश विधिसे धरै। ता पीछे उद्यापन करै ॥ २४ ॥ करै प्रतिष्ठा चौदह सार। पा से पाप होय बर छार ॥ झारी थारी अधिक अनूप। चरण कलश देवै शुभ रूप ॥ २५ ॥ दी यह प्रकार सहुत भाव। और कीजे उत्तम आव ॥ छत्र सिंघा सन विधि से करै। तातें सबै पाप परिहरे ॥२६॥ चार प्रकार दान दीजिये। याहि मनुष्य सुफल कीजिये ॥ अनन्तावस्था मै उपवास।

चौपाई।

जंबूद्वीप अलंकृत हेर। रह्यो ताहि लवणोदधि घेर॥ मेरु सु दक्षिण दिश है सार। है सो विदेह धर्म अवतार॥१२॥ कच्छवती सुदेश तहां वसे। वीतशोकपुर तामें लसे॥ वस्त्रिव नाम तहाका राय, करे राज सुरपति सम भाय॥१५॥ मालीने आय जनावो दयो। विपुल बुद्धि प्रभु वनमें ठयो॥ इतनी सुन नृप वन्दन गयो दान बहुत मालीको दयो॥१६॥ हे स्वामी रत्नत्रय धर्म। मोसों कहौ मिटै सब भर्म॥ तब स्वामीने सब विध कही। जो पहिले सो प्रकाशी सही॥१७॥ पञ्चामृत अभिषेक सु ठयो। पूजा प्रभुकी कर सुख लयो॥ जागिरनादि ठयो बहु भाव इस विधि व्रत कर विस्त्रिव राय॥१८॥ भाव सहित राजा व्रत करो। धर्म प्रतीत चित्त अनुसरो॥ षोडश भावना भावत भयो। अन्त समाधिमरण तिन करो॥१९॥ गोत्र तीर्थंकर बांध्यो सार। जो त्रिभुवनमें पूज्य अपार॥ सर्वार्थ सिद्धि पहुचो जाय। भयो तहां अहमेन्द्र सुभाय॥२०॥ हस्त मात्र तन ऊचो भयो। तेंतिस सागर आयु सो लयो॥ दिव्य रूप सुखको भण्डार। सत्य निरूपण अवधि विचार॥२१॥ सौधर्मेन्द्र विचारी धरी। यक्षेश्वरको आज्ञा करी॥ वेग देश निर्माप्यो जाय। थापो सुथरापुर अधिकाय॥२२॥ कुम्भपुर राजा तहा बसे। देवी प्रजावती तिस लसे॥ श्रीआदिक तहा देवी आय। गर्भसे सोधना कीनी जाय॥२३॥ रत्न वृष्टि नृप आंगन भई। पन्द्रह मास लो बरसत गई॥ सर्वार्थ-सिद्धिसे सुर आय। प्रजावती सुकुक्ष उपजाय॥२४॥ नेमिनाथ सो नामजो पाय। द्वैज चंद्रसम बढत सुभाय॥ जब विवाह मंगल विधि भई। तब प्रभु चित विरागता

चौपाई—जंबूद्वीप् भरत शुभ क्षेत्र। मगध देश सुख सम्पति हेत। राजगृह तहाँ नगर बसाय। राजा श्रेणिक राज कराय ॥ २ ॥ विपुलाचल जिनवीर कुमार। केवल ज्ञान विराजत सार। माली आय जनायो दयो। तत्क्षण राजा वन्दन गयो ॥ ३ ॥ पूजा वन्दन कर शुभ सार। लागो पूछन प्रश्न विचार। हे स्वामी रत्नत्रय सार। व्रत कहिये जैसा व्यवहार ॥ ४ ॥ दिव्यध्वनि भगवान बताय। भादौं सुदि द्वादश शुभ भाय। कर स्नान स्वच्छ पट श्वेत। पहिलो जिन पूजनके हेत ॥ ५ ॥ मासों द्रव्य श्रेय शुभ लाय। पूजो जिनवर मन वच काय ॥ औरम नूतन जिनके गेह। बिंब धरामो तिनमें तेह ॥ ६ ॥ हेम रुप्य पीतलके यन्त्र। तांबा पत्रा भोजके पत्र ॥ यन्त्र करो बहु मन थिर देय। रत्नत्रयके शुभ लिख लेय ॥ ७ ॥ निर्शंकादि दर्शन गुण सार। संशय रहित सो ज्ञान अपार ॥ अहिंसादि महाव्रत सार। चारित्र के ये गुण हैं धार ॥ ८ ॥ ये तीनोंके गुण हैं आदि। इन्हें आदि अंत गुण बाद ॥ शिव मारगके साधन हेत। ये गुण धारे भवी सुचेत ॥ ९ ॥ भादौं माघ चैत्रमें जान। तीनों काल करो भवि मान ॥ या विधि तेरह वर्ष प्रमाण। मावना माये गुणहि निधान ॥ १० ॥ मवञ्जादि महोत्सव मान। जपो मन्त्र मन कर श्रद्धान ॥ पुनि उद्यापन विधि को यह। कलशा चमर छत्र शुभ देह ॥ ११ ॥ संघ चतुर्विधको आहार। वस्त्राभरण देह शुभसार। बिंब प्रतिष्ठा आदि अपार। पूजो श्री जिन हो भव पार ॥ १२ ॥

दोहा—इस विध श्रीगुरु धर्म सुन, मगध बिस्तपर भाय।
कौन फल पायो प्रभू सो भाषो समभाय ॥ १३ ॥

चौपाई ।

जंबूद्वीप अलंकृत हेर। रह्यो ताहि लवणोदधि घेर॥ मेरु सु दक्षिण दिश है सार। है सो विदेह धर्म अवतार ॥ १२ ॥ कच्छ-वती सुदेश तहां बसे। वीतशोकपुर तामें लसे॥ वस्त्रिव नाम तहाका राय,करै राज सुरपति सम भाय॥१५॥ मालीने आय जनावो दयो। विपुल बुद्धि प्रभु वनमें ठयो॥ इतनी सुन नृप वन्दन गयो दान बहुत मालीको दयो॥ १६ ॥ हे स्वामी रत्नत्रय धर्म। मोसों कहौ मिटै सब भर्म॥ तब स्वामीने सब विध कही। जो पहिले सो प्रकाशी सही ॥१७॥ पञ्चामृत अभिषेक सु ठयो। पूजा प्रभुकी कर सुख लयो॥ जागिरनादि ठयो बहु भाव इस विधि व्रत कर विस्त्रिव राय॥ १८ ॥ भाव सहित राजा व्रत करो। धर्म प्रतीत चित्त अनुसरो ॥ षोडश भावना भावत भयो। अन्त समाधिमरण तिन करो ॥१९॥ गोत्र तीर्थंकर बांध्यो सार। जो त्रिभुवनमें पूज्य अपार॥ सर्वार्थ सिद्धि पहुचो जाय। भयो तहां अहमेन्द्र सुभाय ॥२०॥ हस्त मात्र तन ऊंचो भयो। तेंतिस सागर आयु सो लयो॥ दिव्य रूप सुखको भण्डार। सत्य निरूपण अवधि विचार ॥२१॥ सौधर्मेन्द्र विचारी घरी। यच्छेश्वरको आज्ञा करी॥ वेग देश निर्माप्यो जाय। थापो सुथरापुर अधिकाय॥ २२ ॥ कुम्भपुर राजा तहा बसे। देवी प्रजावती तिस लसे॥ श्रीआदिक तहा देवी आय। गर्भसे सोधना कीनी जाय ॥२३॥ रत्न वृष्टि नृप आगन भई। पन्द्रह मास लो वरसत गई॥ सर्वार्थ-सिद्धिसे सुर आय। प्रजावती सुकु-च्छ उपजाय ॥२४॥ नेमिनाथ सो नामजो पाय। द्वैज चंद्रसम वढत सुमाय॥ जब विवाह मंगल विधि भई। तब प्रभु चित विरागता

धर्म ॥ २५ ॥ दीक्षा धर वनमें प्रभु गये। घाति कर्म हनि निर्मल ठये ॥ केवल ले निर्वाण सो जाय। पूजा करी सुरासब आय ॥२६॥ यह विधान श्रेणिकके सुनो। व्रत कीने चित अपने गुणो ॥ भक्ति विनय कर उत्तम भाय। पढ़ै जे भपनै घरको जाय ॥ २७ ॥ या विधि जो नर नारी कहो। ब्रह्मज्ञान भाया निमही ॥ २१ ॥

दशलक्षण व्रत कथा।

दोहा—प्रथम बन्दि जिनराजके, शारद गणधर पाय।
दशलक्षणव्रतको कथा कहुं अगम सुखदाय ॥ १ ॥

चौपाई—विपुलाचल श्रीवीर कुमार। आये भवभंजन करतार ॥ सुन भूपति तहां वन्दन गयो। सकल लोक मिलि आनन्द भयो ॥ २ ॥ श्रीजिन पूजे मनधर चाव। स्तुति करी जोड़कर भाव ॥ धर्म कथा तहां सुनी विचार। दान शील तप भेद अपार ॥ ३ ॥ भव दुख नाशक दायक शर्म। भाखो प्रभु दशलक्षण धर्म ॥ ताके सुन श्रेणिक हर्षित धरी। गुरु गौतमसे विनती करी ॥ ४ ॥ दशलक्षण व्रत कथा विशाल। मुझसे भाखो दीनदयाल ॥ बोले गुरु सुन श्रेणिक भूप। दिव्य ध्वनि कही वीर जिनेन्द्र ॥ ५ ॥ धातकी खण्डकी पूरव भाग। विदेहकी दक्षिण अनुराग ॥ सीतो दाउ पर्वतें सही। नगरी विशालाक्ष शुभ कही ॥ ६ ॥ नाम प्रीतंकर भूपति बसे। प्रीयकरी रानी सुख लसे। मृगांकलेखा सुता सुजान। मति शेखर नाम सो प्रधान ॥ ७ ॥ शशिप्रभा ताके घर नार। सुता कामसेना निरधार ॥ राजसेठ गुणसागर जान। शील सुभद्रा नारि प्रधान ॥ ८ ॥ सुता मदनवेगा तसु धरी। लक्ष्मी लक्षण शुभ

भरी ॥ लक्षण भद्र नामकुनवाल । शशिरेखा नारी गुणमाल ॥ ६ ॥ कन्या तास घरे रोहनी । ये चारों वरणी गुरु तनी ॥ शास्त्र पढ़े गुरु पास विचार । स्नेह परस्पर वढ़ा अपार ॥ १० ॥ मास वसन्त भयो निरधार । कन्या चारों वनहि मंझार ॥ गई मुनीश्वर देखे तहा । तिनको वन्दन कीनो वहां ॥११॥ चारों कन्या मुनिसे कही त्रिया लिङ्ग ज्यों छूटे सही ॥ ऐसा व्रत उपदेशो अवै । यासे नर तनु पावे सवे ॥ १२ ॥ वोले मुनि दसलक्षण सार । चारों करो होहु भवपार ॥ कन्या वोली किम कीजिये । किस दिन व्रतको लीजिये ॥ ८३ ॥ तव गुरु वोले वचन रसाल । भादो मास कहो गुणमाल ॥ धवल पंचमी दिनसें सार । पंचामृत अभिषेक उतार ॥ १४ ॥ पूजार्चन कीजे गुणमाल । जिन चौवीस तनो शुभ साल । उत्तम क्षमा आदि अतिसार । दशमो ब्रह्मचर्य गुणधार ॥ १५ ॥ पुष्पांजलि इस विधि दीजिये । तीनों काल भक्ति कीजिये ॥ इस विधि दस वासर आचरो । नियमित व्रत शुभ कार्य करो ॥ १६ ॥ उत्तम दश अनशन कर योग । मध्यम व्रत काजी का भोग । भूमि शयन कीजे दस राति । ब्रह्मचर्य पालो सुख पांति ॥ १७ ॥ इस विधि दश वर्ष जव जाय । तव तक व्रत कीजे धर भाय ॥ फिर व्रत उद्यापन कीजिये । दान सुपात्रीको दीजिये ॥ १८ ॥ औषधि अभय शास्त्र आहार । पंचामृत अभिषेकहिसार ॥ माडनों रचि पूजा कीजिये । छत्र चमर आदिक दीजिये ॥ १६ ॥ उद्यापन की शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कोजे खोय ॥ पुण्य तनो सचय भण्डार । परभव पावे मोक्ष सो द्वार ॥ २० ॥ तव चारों कन्या व्रत लियो । मुनिवर भक्ति भाव लखि दियो ॥ यथा शक्ति व्रत

पूरण कयो । उद्यापन विधिसे आचरो ॥ २१ ॥ अन्तकाल वै कन्या चार । सुमिरण करो पञ्च नवकार ॥ चारों मरण समाधि सु कियो । सुरगें स्वर्ग जन्म तिन लियो ॥ २२ ॥ षोडश सागर आयु प्रमाण । धर्म ध्यान सेवें तहां जान ॥ सिद्ध क्षेत्रमें करे विहार । क्षायक सम्यक उदय अपार ॥ २३ ॥ सुभग अवन्ती देश विशाल । उज्जैनी नगरी गुणमाल ॥ स्थूलभद्र नामा नरपती । रानी चार सो मति गुणवती ॥ २४ ॥ देव गर्भमें आये चार । ता रानीके उदर मझार ॥ प्रथम सुपुत्र देवप्रभु भयो । दूजो सुत गुणचन्द्र भाषियो ॥ २५ ॥ पद्मप्रभा तीजो बलवीर । पद्म स्वारथी चोथो धीर ॥ अन्य महो त्सव तिनको करे । अशुभ होय सब दोनों हरे ॥ २६ ॥ निकलङ्क प्रभा राजाकी सुता । ते चारों परणी गुण युता ॥ प्रथम सुता सो मालती नाम । दुतिय कुमारी सो गुणधाम ॥ २७ ॥ रूपवती तीजी सुकुमार । मृगाक्ष चौथी सो गुणमाल ॥ करो ब्याह घर कों आइयो । सकल लोक घर आनन्द कियो ॥ २८ ॥ स्थूलभद्र राजा इक दिना । भोग विरक्त भयो मनतना ॥ राजपुत्रको दोनो सार । बनमें जाय योग शुभ धार ॥ २९ ॥ तपकर उपजो केवल ज्ञान । दस विधि हनि पायो निर्वाण ॥ अब पै पुत्र राजको करें । पुण्यका फल पावें ते घरे ॥ ३० ॥ चारों बांधव चतुर सुजान । मन्त्रि मित्रि धर्म नमो पञ्च मान ॥ एक समय विरक्त सो भये । भानम जाये जिनराज हये ॥ ३१ ॥ चारों बान्धव दिक्षा लई । बनमें जाय तपस्या ठई ॥ निज मनमें चिद्रूपाराधि । शुक्ल ध्यानको पायो साधि ॥ ३२ ॥ सर्व विमल केवल ऊपजो । सुरन अमल नवही सों हजो ॥ करो महोत्सव देव कुमार । जय जय शब्द भयो निद्धि

वार ॥ ३३ ॥ शेष कर्म निर्वल तिन करे । पहुचे मुक्तिपुरीमें खरे । अगम अगोचर भव जल पार । दशलक्षण व्रतके फल सार ॥ ३४ ॥ वीर जिनेश्वर कही सुजान । शीतल जिनके वाड़े मान ॥ गौतम गणधर भाषी सार । सुनि श्रेणिक आये दरवार ॥ ३६ ॥ जो यह व्रत नरनारी करे ताके गृह सम्पति अनुसरे ॥ भट्टारक श्री भूषण वीर । तिनके चेला गुण गम्भीर । ३५ ॥ ब्रह्मज्ञान सागर सुविचार । कही कथा दशलक्षण सार ॥ मन वचतन व्रत पाले जोइ । मुक्ति वारागणा भोगे सोइ ॥ ३७ ॥ सम्पूर्ण

मुक्तावली व्रत कथा ।

दोहा—ऋषभनाथके पद नमों, भवि सरोज रवि जान ।
मुक्तावलि व्रतकी कथा, कहूं सुनो धर ध्यान ॥ १ ॥

चौपाई—मगध देश देशोंमें प्रधान । तामें राजगृह शुभ थान । राज्य करे तहां श्रेणिकराय । धर्मवन्त सबको सुखदाय ॥२॥ ता गृह नारि चेलना सती । धर्म शील पूरण गुण वती ॥ इकदिन समोशरण महावीर । आयो विपुलाचल पर धीर ।' ३ ॥ सुन नृप अत्यानन्दित भयो । कुटुम सहित वन्दनको गयो ॥ पूजा कर बैठो सुख पाय । हाथ जोड कर अर्ज कराय ॥ ४ ॥ हे प्रभु मुक्तावलि व्रत कहो । यह कर कोने क्या फल लहो ॥ तव गौतम बोले हर्षाय । सुनों कथा मुक्तावलिराय ॥ ५ ॥ याही जम्बूद्वीप मंझार । भरत क्षेत्र दक्षिण दिशि सार ।। अङ्गदेश सो है रमनीक । नगर बसे चम्पापुर ठीक ॥ ६ ॥ नगर मध्य इक ब्राह्मण बसे । नाम सोम शर्मा तसु लसे ॥ ता गृह एक सुता जो भई । योवन मद

कर पूरण थई ॥७॥ एक दिन ऐसे श्रीगुरु आये। नगन गात सो निरखे तबे ॥ अति कोरे दुर्वचन कहाय। बहुनाही ग्लानि चितमें लाय ॥८॥ ताकरि महा पाप बांधियो। आयु अतीते मरण जु कियो ॥ नरक जाय नाना दुःख सहे। छेदन भेदन जाय न कहे ॥९॥ नरक आयु पूरी कर सोइ। भव भ्रमि फिर गूढ पुत्री होय ॥ निर्नामिका पड़ा तिस नाम। अति दुर्गन्धा देह निकाम ॥ १० ॥ कोई निम आवे नहिं तहां। कमकर बड़ी भई सो यहां ॥ अन्य पापकर दुःखित महा। सूतन अजे कछ अति सहा ॥ ११ ॥ एक दिवस देखे मुनिराय। कर प्रणाम निसधि सिर नाय॥ कौन पाप मैं कौन देव। मैं पायो अति दुःख अभेव ॥ १२ ॥ तब मुनिवर पूरव भव कहे। गुरुकी निन्दासे दुःख लहे। तब दुर्गंधा जोड़े हाथ। ऐसा व्रत दीजै मोहि नाथ ॥ १३ ॥ जासे रोग शोक सब जाय। उत्तम भव पाऊं गुरुराय ॥ तब श्रीगुरु बोले हर्षाय। सुगन्ध-दशमी करो सुभाय ॥ १४ ॥ तासे सर्व पाप जर जाय। सुख सम्पत्ति मिले अधिकाय ॥ तब दुर्गंधा कह्यो विचार। कौन भांति कीजै व्रत सार ॥ १५ ॥ तब मुनिवर इमि वचन कहाय। सुनो भेद व्रतका चितलाय ॥ भादों सुदी सप्तम दिन होय। ता दिन व्रत कीजे भवि लोय ॥ १६ ॥ प्रात समय जिन मन्दिर जाय। पूजा कथा सुनो मन लाय। सब आरम्भ तजो दिन मान। संयम शील सजो गुणखान ॥ १७ ॥ भोर भये जिन दर्शन करे। शुद्ध असन कीजे तब करे ॥ दूजो व्रत पूर्ववत करो। अष्टिम वदि छठि पापनि हरो ॥ १८ ॥ तीजो व्रत कीजे वर धीर। अष्टिम वधि तेरसि सुखकार ॥ कर उपवास पाओ गुण रसी। चौथा

अश्विन सुदी ग्यारसी ॥१६ ॥ पञ्चम व्रत कीजो मनलाय । कार्तिक वदी बारसि सुखदाय ॥ फिर छठवा उपवास सुजान । कार्तिक शुक्ल तीज गुणखान ॥ २० ॥ सप्तम व्रत जिनवरने कहो । कार्तिक सुदि ग्यारसि शुभ लहो ॥ फेर करो अष्टम व्रत लोय । मार्गसिर वदि ग्यारसि जब होय ॥२१॥ नवमों व्रत मार्ग सुदी तीज । ये व्रत धर्म वृक्षके बीज ॥ या विधि करो नव वर्ष प्रमान । मन वच काय शुद्धता ठान ॥ २२ ॥ जब व्रत पूरण होय निदान । उद्यापन कीजे गुण खान ॥ श्री जिनवर अभिषेक कराय । करो माड़नो जिनगृह जाय ॥ २३ ॥ अष्ट प्रकारी पूजा करो । जन्म २ के पातक हरो ॥ यथाशक्ति उपकरण बनाय । श्रीजिन धाम चढ़ाओ जाय ॥ २४ ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥ सब विधि सुन दुगंधा बाल । मन वच तन व्रत लीनो हाल ॥ २५ ॥ गुरू भणित तिन व्रत ये कियो । पूर्व भय अघ पानी दियो ॥ ता फल नारि लिङ्ग छेदियो । सौधर्म स्वर्ग देव सो भयो ॥ २६ ॥ तहा आयु पूरण कर सोय । चलत भयो मथुराको लोय ॥ श्रीधर राजा राज करन्त । ताके सुत उपजो गुणवन्त ॥ २७ ॥ नाम पद्मरथ पण्डित भयो । एक दिवस वन क्रीड़ा गयो ॥ गुफा मध्य मुनिवर को देख । वन्दन कर सुन धर्म विशेष ॥ २८ ॥ तहा पूछ मुनिवरसे सोय । तुमसे अधिक प्रभा प्रभु कोय ॥ तब मुनिवर बोले सुन बाल । वासपूज्य दिन दीप्त विशाल ॥ २९ ॥ चम्पापुर राज जिनराज । तेज पुंज प्रभु धर्म जहाज ॥ यह सुन धर्म विषे चित दयो । समोशरण जिन वन्दन गयो ॥ ३० ॥ नमस्कार कर दीक्षा लई । तब कर गणधर पदवी भई ॥ अष्ट कर्म इस विधिसे जार ।

पहुंचो शिवपुर सिद्ध मंझार ॥ ११ ॥ ऐसो भव्य व्रतका सो प्रभाव। राजा भोगि भयो शिवपुर राव ॥ जो नर नारि करै व्रत सार। सुर सुख लहि पावे भव पार ॥ १२ ॥

पुष्पांजलि व्रत कथा।

दोहा—वीर देवको प्रणमि कर, भर्ता करो त्रिकाल।
पुष्पांजलि व्रतकी कथा सुनो भव्य भवपाल ॥

चौपाई—पर्वत विपुलाचलपर आय। समोशरण जिनवरको पाय। तो सुन राजा श्रेणिकराय। वन्दन करी प्रियापुत आय ॥ २॥ वन्दन कर पूछे नप तबै। हे प्रभु पुष्पांजलि व्रत भवे। मोसे कहो कयो चित लाय। कोने करो कहा भई भाय ॥ ३ ॥ बोले गौतम वचन रसाल। जम्बू द्वीप भव्य सो विशाल। सीता नदी दक्षिण दिशि सार। मंगलावती सुदेश अपार ॥ ४ ॥

दोहा—रत्न संचयपुर जहां वज्रसेन नृप आय।
जयवंती वनिता लसे पुत्र बिहनी थाय ॥ ५ ॥

चौपाई—पुत्र चाह जिन मन्दिर गई। ज्ञानोदधि मुनि वंदित भई ॥
हे मुनिनाथ कहो समझाय। मेरे पुत्र होयके नाय ॥ ६ ॥

दोहा—मुनि बोले हे बालको पुत्र होय शुभ सार। मुनि छह खंड सुसाधि है मुक्ति लगो भरतार ॥७॥ सुनके मुनिके वचन तब,उपजो हर्ष अपार। क्रमसे पूरे मास नव पुत्र भयो शुभ सार ॥८॥ यौवन वयस सो पायके, क्रीडा मसाप सार। तहाँ व्योमसे आइयो खग नृप इति सवार ॥ ९ ॥ रत्नशेखरको देखकर, बहुत प्रीति मनहि। मेघवाहनने पांच सो विद्या दीनी ताहि ॥ १०॥

चौपाई—दोनों मित्र परस्पर प्रीति । गये मेरु वन्दन तज भीति ॥ सिद्धकूट चैत्यालय वन्दि । आये पंचपिता आनन्दि ॥११॥ ताको जनाई सार । वेग स्वयम्वर करो तयार ॥ भूरि भूप आये तत्काल माल रत्नशेखर गल डाल ॥ १२ ॥ धूमकेत विद्याधर देख । क्रोध कियो मन माहि विशेष ॥ कन्या काज दुष्टता धरी विद्या वल वहुमाया करी ॥ १३ ॥ रत्नशेखरसे युद्ध सो करो । वहुत परस्पर विद्याधरो । जीतो रत्नशेखर तिसवार । पाणिग्रहण कियो व्यवहार ॥१४॥ मदन मजूषा रानी सङ्ग । आयो अपने ग्रेह असङ्ग व्रजसेनको कर नमस्कार । मात तात मन सुक्ख अपार ॥१५॥एक दिना मंदिर गिर योग । पहुंचे मित्र सहित सव लोग ॥ चारण मुनि वंदे तिहि वार । सुनो धर्म चित भयो उदार ॥१६॥ हे मुनि पूर्व जन्म सम्वन्ध तीनोंके तुम कहो निवन्ध ॥ तव मुनि कहें सुनो चित धार । एक मृणालनगर सुखकार ॥१७॥नृप मंत्री एक तहा श्रुतिकीर्ति । वन्धु मती वनिता अति प्रीति ॥ एक दिना वन क्रीडा गयो । नारी सग रमत सो भयो ।१८। पापी सर्प सो भक्षण करी । मंत्री मृतक लखी निज नरी ॥ भयो विरक्त जिनालय जाय । दिक्षा लीनी मन हर्षाय ॥१९॥ यथाशक्ति तप कुछ दिन करो । पीछे भ्रष्ट गयो तप टरो ॥ गृह आरम्भ करन चित ठनो । तव पुत्री मुख ऐसे भनो ।२०। तात जो मेरु चढ़ो किहि काज । फिर भव सिंधु पड़े तज लाज ॥ यों सुन प्रभावती वच सार । मंत्री कोप कियो अविकार ॥ २१ ॥ तव विद्याको आज्ञा करी । पुत्रीको ले वनमें धरी ॥ विद्या जव वनमें ले गई । प्रभावती मन चिन्ता भई ॥२२॥ अरहन भक्ति चितमें धरी । तव विद्या फिर आई खरी ॥ हे पुत्री तेरा चित जहा । वेग वोल

पहुंचाऊं तहां ॥ २३ ॥ पुनी कही केवलीके साथ । जिन दर्शनको अधिक ही चाव ॥ पूजा करके पठो यहां । पद्मावती भाई सोतहां ॥२४॥ इतने मध्य देव माइयो । प्रभावती से पूछत भयो ॥ हे देवी कहिये किस काज । आये देवी देव सो भाज ॥ २५ ॥ पद्मावती बोली वच सार । पुष्पांजलि व्रत हैं सुखकार ॥ भादों मास शुक्ल पंचमी । पंच दिवस आरम्भ न भमी ॥ २६ ॥ प्रोषध यथा शक्ति व्यवहार । पूजो जिन चौबीसो सार ॥ नाना विधिके पुष्प जो लाय करो एक माला जो बनाय ॥२७॥ तीन काल यह माला देय ॥ बहुत भक्तिसे विनय करेय । जपे जाप शुभ मंत्र विचार । या विधि पंच वर्ष अवधार ॥ २८ ॥ उद्यापन कीजे पुनि सार । चार प्रकार दान अधिकार ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे सोय ॥२९॥ यह सुन प्रभावती मन भयो । पद्मावती कृपाकर दयो ॥ स्वर्ग मुक्ति फलका दातार । है यह पुष्पांजलि व्रतसार ।

दोहा—पद्मावती उपदेशसे, लीना व्रत शुभ सार ।

पृथ्वी परसो प्रकाशिके किया भक्ति चित धार ॥१॥
तप विद्या श्रुत कीर्तिने, पाई भक्ति जो प्रचण्ड ।
पद्मावती व्रत कीजिये, भाई सो बलवण्ड ॥२॥

चौपाई—वासर तीन ब्यतीते जबे । पद्मावती पुनि भाई तबे विद्या सब भागी तत्काल । करो सन्यास मरण तिस काल ॥३॥ कल्प सोलहवें सुख्य सो थान । देव भयो सो पुण्य प्रमाण ॥ तहां देवने कियो विचार । मैं तप्यो भाकार ॥ मैं सम्बोधो वाकों जबे । उत्तम गति वह पावे तबे ॥ यही विचार देव मनमें आदये । मरण सन्यास तातको कियो ॥५॥ वही स्वर्ग भयो सो देव । पुण्य प्रभाव भयो

फल एव ॥ वन्धुमती माताका जोव उपजा नाही स्वर्ग अतीव॥३६॥
दोहा—प्रभावतीका जोव तू, रत्नशेखर भयो आय ।
माताका जो जीव हैं, मदन मजूषा थाय ॥ ३७ ॥

श्रुतिकीर्तिको जीव जो तहां । मन्त्री मेघ वाहन है यहां ॥ ये तीनोंके सुन पर्याय । भई सो चिन्ता अङ्ग न माय ॥३८॥ सुन व्रत फल अस गुरुकी वानि । भई सुचित व्रत लीनों जानि ॥ अपने थान वहुरि आइयो । चक्रवर्ति पद भोग सु कियो ॥३९॥ समय पाय वैराग सो भयो । राज भार सब सुतको दयो ॥ त्रिगुप्ति मुनिके चरणों पास । दिक्षा लीनी परम हुलास ॥ ४० ॥ रत्नशेखर दिक्षा ली जवे । भये मेघवाहन मुनि तवे ॥ भवि जीवोंको अति सुखकार केवल ज्ञान उपार्जो सार ॥ ४१ ॥ घाति कर्म निर्मूल सु करे । पाछे मुक्तिपुरी अनुसरे ॥ या विधि व्रत पाले जो कोई । अजर अमरपद पावे सोई ॥४२॥ श्रीपुष्पाजलि व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

नन्दीश्वर व्रत कथा ।

दोहा—चरण नमों जिनरायके, जाते दुरित नशाय ।
शारद वन्दों भावसे, सद्गुरु सदा सहाय ॥ १ ॥

जम्बूदीप सुदर्शन मेरु । रहो ताहि लवणोदधि घेर ॥ मेरुसे दक्षिण भारत क्षेत्र । मगध देश सुख सम्पति हेतु ॥ २॥ राजगृह नगरी शुभ वसे । गढ़ मठ मंदिर सुन्दर लसे ॥ श्रेणिक राज करे सुप्रचड । जिन लीनों अरिगण पर दण्ड ३ पटरानी चेलना सुजान सदा करे जिन पूजा दान ॥ सभा मध्य बैठो सो जाय । वनमाली शिर नायो आय ॥४॥ दो कर जोड करे सो सेव । विपुलाचलआये

जिनदेव ॥ धर्म मारगको आगम सुनो । आस सुफल चित अपनै गुनो ॥५॥ राजा रानी पुरजन लोग । वन्दन चले पूजनै योग ॥ चलत चलत सो पहुंचे तहां । समोशरण जिनवरको जहां॥६॥ देवइसिया भीतर गये धर्म मोमके धरणों नये । पुनि गणधरको कियो प्रणाम हर्षित चित भयो अभिराम ॥७॥ दश विधि धर्म सुने जिन पास । वारी गयो चित्तका त्रास ॥ दोकर जोड़ नृपति वीनयो । अति प्रमोद मैरे मन भयो ॥ ८ ॥ प्रभुदयाल अब कृपा करेव । व्रत मेघोत्सव कहो जिन देव । अरु सब विधि कहिये समझाय । भाव सहित यों पूछो राय ॥९॥प्रवधि ज्ञान धर मुनिवर कहैं । कौशल देशस्वर्ग सम रहैं ॥ ताके मध्य अयोध्यापरी । धनकन सकी छत्तीसी पुरी ॥१०। तिहिपुर राज करै हरसेन । त्याग तेग बल पूरण सैन ॥ वंश इक्ष्वाक प्रगटै कलपे । ताको भानि चण्ड पद थपे ॥११॥ पाटवरण रानी नृप तीन । गन्धारी जेठी गुण लीन ॥ प्रिय मित्रा रूपाओ नाम । सावे धर्म अरु काम ॥ १२॥ सुखसे वहत बहुत दिन भये । ऋतु बसन्त वन राजा गये ॥ जल क्रीड़ा वन क्रीड़ा करें । हास्य विलास प्रीति मनुसरै ।१३ । ता वन मध्य कल्पद्रुम मूल । चन्द्र कांति मणि शिलानुकूल ॥ मण्डप रचा अधिक विस्तार । चारण मुनि आये तिहि बार ।१४।आदिजय अमितञ्जयनाम । सोमप्रभु धर्मके धाम ॥ राजारानी पुरजन नारि । देखि मुनि निजवुधि पसारि ॥ १५ ॥ सब नर नारि आनन्दित भये । क्रीड़ा तज मुनि वन्दन गये ॥ विया पूज्य चरणों मनुसरै अष्ट द्रव्य मुनि पूजे करै ॥१६॥ धर्म ध्यान कहो मुनिराज । श्रद्धा सहित सुनो नर आप ॥ राजा प्रश्न करि मुनि पास । सुनो धर्म भयो चित हुलास ॥ १७ ॥ दस

यल सहित सम्पदा घनो, और भूमि षट खंड जु तनी। महा पुण्य जो यह फल होय। गुरु विन ज्ञान न पावे कोय ॥१८॥ बारवार विनवे कर सेव। पूर्वकही भवान्तर देव ॥ अवधिज्ञान बल मुनिवर कहै। पर अहिक्षेत्र वनिक इक रहै ॥ सुखिन कुवेर मित्रता नाम साधे धर्म अर्थ अरु काम ॥ जेष्ठ पुत्र श्रीवर्म्मा कुमार। मध्यम जयवर्म्मा गुण सार ॥२०॥ लघु जयकीर्ति कीर्ति विख्यात, तीनों शुभ आनन्दित गात। एक दिवस उपजो शुभकर्म। वनमें मुनि वैठे सौधर्म ॥२१॥ सेठ पुत्र मुनिवर वन्दियो, श्रीवर्म्मा जु अठाई लियो ॥ नदीश्वर व्रत विधिसे पाल, भवभव पापपुञ्जको जाल ॥२२॥ अन्त समाधि मरणको पाय। इसपुर वज्रबाहु नृप आय ॥ ताके विमला रानीजान। तुम हरिसेन पुत्रभये आन ॥२३॥ पूरव व्रत पाले अभिराम। ताने लहो सुक्खको धाम ॥ जयवर्म्मा जयकीर्ति वीर। निकट भव्य गुण साहस धीर ॥ २४ ॥ वन्दे गुरु जो धुरंधर देव। मन वच काय करी वहु सेव ॥ नव मुनि पंच अणुव्रत दिये। दोनों भाव सहित व्रत लिये ॥ २५ ॥ अरु नदी-श्वर व्रत तिन लियो। अन्त समाधि मरण तिन कियो ॥ हस्तनाग पुर शुभ जहा वसे। तहां विमल वाहन नृप लसे ॥२६॥ ताके नारि श्रीधरा नाम, आरिंजय अमितञ्जय धाम ॥ पुत्र युगल हम उपजे तहा पुण्य फल पायो जहा ॥२७॥ गुरु समीप जिन दिक्षालई। तप वल चारण पदवी भई। यासे हम तुम पूरव भ्रात, देखत प्रेम उपजो गात ॥२८॥ पूर्व व्रत नन्दीश्वर कियो। ताते राज चक्र पद लियो ॥ अव फिर व्रत नन्दीश्वर करो। ताते अब स्वर्ग मुक्ति पद धरो ॥ २९॥ तब हरिसेन कहे करजोर। व्रत नन्दीश्वर कहो वहोर ॥ मुनि-

अथ तीजो दिन सुनियो लोइ । जिनपूजाकर पात्रहि दान । भोजन पानी भात प्रमान ॥४३॥ नाम त्रिलोकसार दिन कहो । साठ लाख प्रोषध फल लहो ॥ चतुर्थ दिनकर आमोदर्य । नामचतुर्मुख दिन सौहर्य ॥४४॥ तहां उपवास लक्ष फल होइ । पञ्चम दिन विधि करियो सोइ ॥ जिन पूजा एकाम्न करो । हय लक्षण जु नाम दिन धरो ॥४५॥ फल चौरासी लक्ष उपास । जासे जाय भ्रमण भव नास ॥ षष्ठम दिन जिन पूजा दान । भोजन भात आमिली पान ॥४६॥ तादिन नाम स्वर्ग सोपान । व्रत चालीस लक्ष फल जान ॥ सप्तम दिन जिन पूजा दान । कीजे भविजनका सन्मान ॥४७॥ सब सम्पति नाम दिन सोइ । भोजन भात त्रिवेली होय ॥ फल उपवास लक्षको जान । अष्टम दिन व्रत चितमें आन ॥ ४८ ॥ कर उपवास कथा रुचि सुनो पात्र दान दे सुकृत गुनो । इंद्रध्वजव्रत दिन त न नाम । सुमिरो जिनवर आठों जाम ॥४९॥ तीन करोड़ अनि लाख पचास । यह फल होय हरे सब त्रास ।। यह विधि आठ वर्षमें होइ । भाव सहित कीजे भवि लोइ ॥५०॥ उत्तम सातवर्ष विधि जान । मध्यम पांच तीन लघुमान ॥ उद्यापन विधिपूर्वक सचो । वेदीमाण्य माडनोरचो ॥ ५१ ॥ जिन पूजारु महा अभिषेक । चन्द्रोपम ध्वज कलश अनेक ॥ छत्र चमर सिंहासन करो । बहुविधि जिनपूजा अघ हरो ॥ ५२ ॥ चारोंदान सुपात्रहि देउ । बहुत भक्ति कर विनय करेउ ॥ बहु विधि जिनप्रभावना होइ । शक्ति समान करो भविलोय ॥५३॥ उद्यापानकी शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजो लोइ ॥ जिन यह व्रतकीनो अभिराम । निजपद लयो सुखको धाम ॥५४॥ यहव्रत पूर्व महा फल लियो । प्रथम ऋषभ जिनवरने कियो ॥ अनन्तवीर्य

अपराजित पाय चक्रवर्ति पदवी भई ताम ॥ ५५ ॥ श्रीपाल मैना सुन्दरी । धनकर पुर व्याधि सब हरी ॥ बहुतक नरनारी व्रतकरो तिन सब अमर अमर पद धरो ॥ ५६ ॥ सुनो निधानराय हरसैन । अति प्रमोद सुख उपजै चैन ॥ सब परिवार सहित व्रत कयो । मुनिवर धर्म प्रीतिकर भयो ॥५७॥ व्रतकर फिर उद्यापन करो । धर्म ध्यानकर शुभ पद धरो ॥ अन्त समाधि मरणको पाय । भयो देव हरिषेण सुराय ॥ ५८ ॥ पर्यायान्तर जैहै मुक्ति । ये निश्चय सुनो सकल मत युक्ति ॥ गौतम कह्यो सकल अधिकार । सुनो मगधपति चित्तधार ॥५९॥ जो नर नारी यह व्रत करै निश्चय स्वर्ग मुक्ति पद धरै ॥ सकल रोग शोक सब जाहिं । दुख दरिद्रता दूर पलाहिं ॥ ६० ॥ यह व्रत नन्दीश्वरकी कथा हिरदय शुभकारी यथा ॥ शकर स्वर्गो उत्तम धाम । श्रावक करैं धर्म शुभ ध्यान ॥६१॥ सुनै सदा जे जैन पुराण । गुण्यो जनोंका रावें मान । निश्चिन्त सुना धर्म सरूप । कीनी कथा चौपाई रूप ॥ ६२ ॥ कहैं सुनें देवें उपदेश । कहैं भावसे पुण्य महेश ॥ जावे नाम पाप मिटि जाय । ता जिनवरकै चर्न्नों पाय ॥ ६३ ॥

॥ श्रीनन्दीश्वर व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

वीर गुण गायन

१ श्रीजिनवाणी शारदा स्तुति।

(चाल—अरे रावण तू धमकी०)

प्रभु मुखसे हो आनी जिनवानी तुम्ही, गुरु गौतमने आन प्रचारा करो। ज्ञानभानु दिखाया नसाया भवतम, ऐसी जिनवानी मेरा उद्धारा करो॥ ॥१॥ मैं तो ध्याता मनाता हूं माता तुम्हें, भूले अक्षरका आन सुधारा करो। हूंगा मैं तो अजान मागूं बुद्धीका दान, मात बार न मेरी अवारा करो॥ २॥ पिंगल पेखा नहीं, शास्त्र देखा नहीं, बाल बुद्धि न दोष विचारा करो। कहै वीर मति मन्द बनै उत्तम ये छंद, आन कंठ मैं मेरे उजारा करो॥ ३॥

भजन (कृपा कर दीजै कृपा निधान)

दया मय दो ऐसा वरदान।

बसै हृदयमें सुयश रावरो, होय देश कल्यान—दया० (टेक)

मोह अविद्या अन्धकारसे, रहैं रक्षित ये प्राण।

हटे कुरीति सुरीति बढ़े नित, फैले सम्यज्ञान॥ दया०॥

तज प्रमाद आलस कायरता, बनैं वीर बलवान॥

धर्म, जाति, पावन स्वदेश, का सह न सकें अपमान॥ दया० २ ह

प्रेम परस्पर बढ़े हृदयमें, सत्य मधुर हो ज्ञान।

राग द्वेष या वैर फूटका, रहैं न मनमें ध्यान॥ दया० ३॥

वीर धर्म हो अचल वीरका फहरै अटल निशान।

गुरु मुकंद सब चरण कृपासे, करैं वीर गुण गान॥ ४॥

भजन ३

(चाल—श्रीराम मनुष्या बुलालो मुझे)

प्रभु घोर हरो भव पीर मेरी,
आयो चरण शरण में प्रभुजी तेरी ॥ टेक ॥
अब चौरासी भ्रमण करते काल बीते हैं अनन्त,
भेद कुछ पाता नहीं कर्मों का नहिं होता है अन्त।
कैसी कर्मन की है जंजीर घेरी ॥ प्रभु० १ ॥
अनेक रूप शरीर धारे चतुर्गतिके दुख सहे,
मैं क्या कहूं सबहि आप जानो मुझसे नहिं जाते कहें।
जानो घट घटकी नाथ हो मेरे सेरी ॥ प्रभु० २ ॥
पुष्पकी मेंढक चला ले साथ पूजनमें लगे
गज पग तले मर स्वर्ग पहुंचा कर्म बैरी सब भगे।
दुखी उस पे दया की थी तुमने फेरी ॥ प्रभु० ३ ॥
स्वच्छ निर्मल जलसुरस आदि अष्ट द्रव्योंके लिये
है भावना हृदय यही प्रभु वीरका पूजन किये।
नाशे कर्म कलंक मेरे बैरी ॥ प्रभु० ४ ॥
हाथ जोड़ निवाऊं मस्तक लाऊं ध्यान आठो याम मैं
ये भव भ्रमण मेरा मिटे इस हेत करूं प्रणाम मैं।
वीर जिनके हैं चिन्ह चरण केहरी ॥ प्रभु ५ ॥

भजन ४

(चाल—बहुत जगसे कबड़ाये हैं)

कर्म नचावे नचाये हैं—नाथ चहुंगति हो आये हैं।

जो दुख सहे तिर्यंच गतीमें मुखसे कहे न जाय।
कीडा कीड़ी भौंरा आदिक धरी अनेकी काय॥
कहीं आनन्द न पाये हैं॥ कर्म० १॥

नर्क गतिका कथन कहेसे, चित्त मेरो थर्राय।
तिल तिल खंड देहका करते, असुर दुख दें आय॥
कड़ो वस वेदना पाये हैं॥ कर्म० २॥

अकाम निर्जराके करनेसे देव गती ली पाय।
पर विषय चाहकी अग्नि वहा भी मेरी गई न हाय।
समय ये वृथा गवाये हैं॥ कर्म० ३॥

आज पुरवले पुन्य उदयसे, यह मानुष तन पायो।
सदा वीर भव पीर हरो—जां जासे कर्म नसायो॥
शीश तुम चरणों नाये हैं॥ कर्म० ४॥

भजन ५

(चाल—ना छेडो गाली दूंगी रे०)

मन चेतो चतुर सयाने रे मत कर विषयन का संग।
यह विषय महा दुखदाई नहिं किसीको मिली भलाई।
यह तें क्या कुमत कमाई रे, ये करत भजनमें भंग॥मन० २॥

मत नेह तू इनसे लावै, नहिं अन्त समय पछतावै।
सत गुरु तोहे यों समझावै रे है कारे भोग भुजंग॥ मन० ३॥

चहुंगतिमें तुझे रुलाया, कभि नर्क तिर्यंच दिखाया।
नाना विधि नाच नचाया रे, दुख दे दे कीना तंग॥मन० ४॥

जो नेह न इनसे लाया सिद्धि सत महंत कहाया।
वही अंत मोक्ष पद पायारे, वही रंगा गया शिवरंग॥मन० ४॥

क्यों नरतन पाय गमावे, फेर फेर न अवसर पावे।
थोरै भवसागर तरजावे है, तू म्हांकी मन वच अंग ॥ मन०५ ॥

भजन ६

(चाल—प्रभु तम मन तुमपर अपना वारू वार वार वार)

हम कर्म प्रबल शत्रु नसे प्रभुजी टार टार टार ॥ टेक ॥
पशु गतिमें जो दुख पाये नहि मुखसे जाय सुनाये।
कभी लात और डंडे खाये अरु बहु भार भार भार ॥ हम०१॥
गति नर्कमें यह दुख पाया कभी गिरिपर जाय गिराया।
नहि अन्न जल मैंने पाया पड़ी अति मार मार मार ॥हम० २॥
गति देवकी जब मैं पाई मुरत सम्पति देखि पराई।
नित किये वासना छाई लखि पर नार नार नार ॥ हम० ३ ॥
पुन्य उदयसे नरतन पाया, तन रोगी न धर्में माया।
कभी दुख संतानका पाया कभी सरकार कार कार ॥हम०४॥
नहि चहुंगतिमें सुख पायो, बहु कालसे फिरो भटकायो।
अब वीर शरणमें आयो भवदधि तार तार तार ॥ हम० ५ ॥

भजन ७

(चाल—श्रीराम अयोध्या०—रामुठ की पुकार)

प्रभू मैंमी गिरनार बुलाना मुझे।
दासी चरणों की अपनी बनाना मुझे।
कर्मो फर्मोंसे आज छुड़ाना मुझे ॥ ॥
मद मोर मुकट कंकन तोड़ा है हारको
जाने हैं भोग रोग तजा जग असारको।
ऐसो त्याग की रीति बताना मुझे ॥ २ ॥

गिरनार गिरिपर जाय प्रभु ध्यान लगाया,
महापंच व्रत धार अचल सिद्ध पद पाया।
स्वामी मुक्तीका मार्ग वताना मुझे ॥ ३ ॥
दीनोंके नाथ हो प्रभू दीनन दयाल हो,
विनती करूं मैं इस लिये मेरी प्रतिपाल हो।
कहैं वीर यों राजुल निभाना मुझे ॥ ४ ॥

भजन ८

(चाल—काहेको व्याही विदेश रे सुन वावल मोरे)

मतकर विषयन का सगरे, सुन ज्ञानी जियरा ॥ टेक ॥
यह विषय भाई सदा दुखदाई, करत भजनमें भंगरे-सुन ज्ञानी० १
स्पर्श इन्द्रियनके वश होकर, पडते है कूप मतंग-रे सुन ज्ञानी० २
चक्षु इन्द्री ही के कारण, दीपक जलत पतंग-रे सुन ज्ञानी० ३
कर्ण इन्द्री से राग सुननमें, मारे जात कुरङ्ग-रे सुन ज्ञानी० ४
जिम्या इन्द्रियन ही के कारण, मीन कण्ठ हो भङ्ग-रे सुन ज्ञानी० ५
भ्रमर नाशिका इन्द्रीवश हो, कमल पुष्प दे अङ्ग-रे सुन ज्ञानी० ६
पंच इन्द्री नर अव भी चेतो, न्हाले जिन वच गङ्ग-रे सुन ज्ञानी० ७
कर्म कलक छुटै तेरे वारा, हो शिवपुर सत सङ्ग-रे सुन ज्ञानी० ८

भजन ९

(चाल—उमर सव गफलत में खोई—किया शुभ कर्म न तैं कोई)

अनन्ते गुण अवार माया, पार प्रभु नहि गणधर पाया।
जवै प्रभु गर्भ उदर आये, के स्वप्ने सोलह दिखलाये।
रतन नगरीमें वरसाये, सुरगण हरप हरप धाये।

दोहा—छप्पन कुमारियां मातको, करें सेव चित लाय।
गूढ़ प्रश्न पूछें जबै दे उत्तर समझाय॥
आनन्द होय २ छाया-पार० १॥

जन्म प्रभु जब तुमने पाया इन्द्र सहू इन्द्राणी आया।
मेरु गिरि न्हवन कर हर्षाया भक्तिकर अमृत सुख पाया २

दोहा—निजा लोक लखि इन्द्रने कीनी गोद पसार।
तृप्त न फिर भी होत है कीने नेत्र हजार॥
हर्ष कर जन्म सुफल पाया-पार० २॥

ज्ञान क्षण भंगुर जगसारा, तज्ञासमि राज पाट प्यारा।
दिगम्बर भव भेष धारा करै सुर नर जै जै कारा॥

दोहा—लोकांतिक सुर आनकर, करी चरणकी सेव।
की पूजन पद्म भक्तिसे धन्य धन्य तुम देव॥
विरागी ज्ञान इन्द्र आया-पार० ३॥

प्रकृति जब त्रेसठ विनसाई, घातिया कर्म नसे भाई।
ज्ञान हुआ केवल सुखदाई, रचा समोशरण धनिन्द्र भाई॥

दोहा—केवल ज्ञान जैसा भया प्रभु पदारथ रूप।
जड़ चेतन कर भवरका वही बतलाया स्वरूप॥
धर्मका मेघ बरसाया-पार ४॥

अघातिया प्रकृति विघटायो तभी मोक्ष लक्ष्मीको पायो।
इन्द्र जै ध्वनि करते आयो सभी सुर नर मिल गुण गायो॥

दोहा—आयु वेदनी नाम गोत्र जो दीने कर्म खिपाय।
अष्ट कर्मको नष्टकर, किया मोक्ष पद पाय॥
शीस तुम्हें लीनो ओंक नाया-पार ५॥

अन्त नहि सुरनर मुनि पावै, सभी तुमरे गुणको गावें ।
जो तुमरे चरण कमल ध्यावें, पार भवसागर हो जावें ॥
दोहा—और न कुछ जाचूं प्रभू, दो भक्तोका दान ।
नहिं भव वनमें हो भ्रमण, हो आतम कल्याण ॥
भक्ति वश महावीर गाया-पार प्रभु० ६ ॥

भजन १०

(चाल—मेरे शभू०—एक पतिव्रता स्त्रीका पतिसे कहना)

हतनापुर क्षेत्र दिखाना मुझे,
निशि वन्दन दर्श कराना मुझे ॥
जिन शांति कुंथ अरह मल्लि, ऋषियोंके चरण चूम,
हुआ गर्भ जन्म तप वहा, ऐसी पवित्र भूम ।
ऐसी भूमीको शीश नवाना मुझे ॥ १ ॥
कार्तिक व फागुन साढ़के जो अन्त आठ दिन,
आते हैं चारों खूटसे, दिन रात जात्रिगन ।
जात्रा वेगीसे सुफल कराना मुझे ॥ २ ॥
न गदे नाच गाने, न मेलों में जाऊंगी,
पर तीर्थ क्षेत्रोंमें सदा, सर झुकाऊंगी ।
भक्ति भावसे पूजन कराना मुझे ॥ ३ ॥
क्या आज और कल कर रहे, पल २ की हो अबेर,
दिनका नहीं भरोसा है, स्वासों का है ये फेर ।
पाया औसर भला न गवाना मुझे ॥ ४ ॥
कौरव और पाडवों का जहा जन्म स्थान है,
अर्जुन व भीम योधा को जाने जहान है ।
वीर भूमी की याद दिलाना मुझे ॥ ५ ॥

भजन ११

(चाल—छोटी मोटी सुइयाँ रे जालीका मेरा काढ़ना)

प्रभु गुण गायनारे, फिर नहिं नरतन पावना—टेक।
भ्रमण कियारे जिया लख चौरासिया रे, लख चौरासिया धरि काय अनेकारे, मुझसे यों कहा जायना—प्रभु० १॥ एक तो स्वांरे जिया नरक निगोद में, रे नरक निगोदमें काल अनन्तारे, वहाँ पै दुख ठावना—प्रभु गुण० २॥ पशु रे भया जिया बोझ रे लदाया, जिया बोझ रे लदाया तन छेदा भेदा रे तोपै तो कहा जायना॥ प्रभु० ३॥ देव भया रे जिया पर धन देखा जिया पर धन देखा ते दुखा माना रे, सुरा देव भै सुरांगना—प्रभु० ॥४॥ अब तो मनुष देह प्यारी जिया पाई, प्यारी जिया पाई, वृथा न गमावना रे चित धीर धरन लावना—प्रभु० ॥५॥

भजन १२

(चाल—बालम पै मेरू तार)

जोगी जोग जुगत क्या करता पहिले मनको अपने मार।
मनको अपने मार रे योगी, मनको अपने मार, जोगी० टेक
वस्तर अपने रंगे गेरुआ भी गल सेली डार।
हाथमें चिमटा कांधे झोली, मुद्रे कानों फार ॥१॥ जोगी०
अङ्ग भभूत रमाई तूने सिरपर जटाजी धार।
हाथ सुमरनी, बगल कतरनी पोथी लीनी धार, जोगी० ॥२॥
बनमें बैठे तुम तप करते माड़ो पंच प्रकार।
भंग चरस गांजा पीनेमें माला फिरना डार ॥३॥

इन प्रपंचसे काज न सरता, अपना रूप निहार।
ब्रह्मरूप तेरा स्वरूप है, आतम रूप निहार ॥ ४ ॥
ज्ञान गुदड़ियाको तूं गहले, मन्त्र जपो नवकार।
अरहन्त नामकी फेरले माला, मुखसे वारम्वार ॥ ५ ॥
जैन वैनकी सीख मान तू, हो समकित हियेधार।
हे वीर तुझे जो सतगुरु मिलजां, होजा भवदधि पार ॥६॥

भजन १३

(चाल—एक तीर फेंकता जा)

दया धर्मको न त्यागो, जैनी कहाने वालो।
हो देश पर दयालू, दानी कहलाने वालो ॥ टेक० ॥
भूखोंको अन्न दीजे, पोषन तो उनका कीजे।
आहार दान देलो, सम्पति रखाने वालो ॥ दया० १ ॥
रोगीको चंगा कीजे, औषधिका दान दीजे।
कुछ यश तो जगमें लीजे, प्रेमी कहलाने वालो ॥ दया० २ ॥
अभय दान है ये मेवा, निर्बलकी करिये सेवा।
तुमरा हो पार खेवा, रक्षक कहाने वालो ॥ दया० ३ ॥
विद्याका दान प्यारो, दिल खोल करके वारो।
कालिजकी नीव डारो, ऊंचे कहलाने वालो ॥ दया० ४ ॥
दे दान वीर जावो, तिहु लोक यश जो चाहो।
सच्चा धरम निभाओ, नेकी कमाने वालो ॥ दया० ५ ॥

भजन १४

(राजुलका गिरनार परवत पर नेम प्रभूको देखकर भक्तिवश होना)
मेरी नेम प्रभूसे अखियां, अबतो लडगई लड़गई लड़गई, ॥ टेक०

आये थे जूनागढ़ सुखी छोड़ मेंने दृढ़ किया चित और।
बैठे हैं गिरनार किशोर, मारग पड़गई पड़गई पड़गई, मेरी॰ १॥
देखकर स्वामीका तब ध्यान, मैंने करी मसी पहचान।
यही है मेरे कंथ सुजान आयी बढ़गई बढ़गई बढ़गई, मेरी॰ २॥
देख पशु बंधे दया उर लाये तबही बन्धनको खुलवाये।
सबके प्रभूजी प्राण बचाये, बेड़ी कटगई कटगई कटगई, मेरी॰ ३॥
मेरी नव भवकी है प्रीत, स्वामी करो न ये अनरीत।
मेरे तुम्हीं हो सांचे मीत येही पड़गई पड़गई पड़गई मेरी॰ ४॥
राजुल नाम सुना भवतारी मैं हूं मूरख नार गंवारी।
वीर कहै आई शरणप्रभु प्यारी, चरणों पड़गई पड़गई पड़गई मेरी॰५॥

भजन १५

(चाल—वीरान अयुध्या॰)

(एक स्त्रीका वीर भगवानके चरणोंमें भक्ति वश तल्लीन होना)

मैंतो चरणोंकी दासी हूं प्रभूजी तेरी।
पार भव दधसे नैयाको कीजै मेरी॥

सुनकर शरणमें आई हूं प्रभु नाम आपका।
सिरै सिंह नवकसे ये फल तुमरे प्रतापका॥
सुना गजकी तुम्हींने सुनी थी टेरी-मैंतो॰ १॥

द्रौपदीकी बेर तुमने ही मान कीना सहाई।
थका बस था दुशासनका सती लाज बचाई॥
बढ़ा चीरको क्षणमें करी थी ढेरी-मैंतो॰ २॥

जब सीताको बेर रामने अग्नि कुंड रचाया।
तभी कुंडसे सतीके ये फल तुमने दिखाया॥

जल कमल रचे नहिं कीनी देरी-मैंतो० ३ ॥
अंजनसा चोर पापी कुटिल, दुष्ट घनेरा।
मर अन्तमें उसने भी किया स्वर्गमें डेरा ॥।
अब क्यों देर लगाई है मेरी बेरी-मैंतो० ४ ॥

भजन १६

(चाल—वेदोंका डंका आलममें०)

दया धर्मका झंडा भारतमें फहरा दिया वीर जिनेश्वर ने।
सच्चे शिवपुरके मारगको बतला दिया वीर जिनेश्वर ने ॥
बौद्धोंने देश जब घेरा था, हिंसाका घोर अन्धेरा था।
तभि ज्ञानके सूरजसे जगको चमका दिया वीर जिनेश्वर ने ॥ १ ॥
पशु यज्ञमें धर्म बताते थे, अश्वमेधा यज्ञ रचाते थे।
उपदेश दे सब यज्ञ मंडलको तुडवा दिया वीर जिनेश्वर ने ॥ २ ॥
चहुं ओरमें भ्रमण विहार किया, दयाधर्मका सबको पाठ दिया।
जिन धर्म नकारा भारतमें बजवा दिया वीर जिनेश्वर ने ॥ ३ ॥
जगका पाखंड हटाय दिया सच्चा शिव पथ बताय दिया।
न्याय युक्तीसे सीधा मारग बतला दिया वीर जिनेश्वर ने ॥ ४ ॥
भवसिन्धु से पार लगाय दिया, आपत्तिमें धर्म बचाय दिया।
हर वीरसे अहिंसा धर्मकी जय, बुलवा दिया वीर जिनेश्वरने ॥५॥

भजन १७

(मंदोदरी का रावणको समझाना)

तुम देदो हरकी सीता प्रीतम मान मान मान ॥ टेक ॥
वे योधा हैं बलकारी, पिया मानों सीख हमारी।
नहिं पडजा विपता भारी, छिनमें आन आन आन ॥ १ ॥

रन संग है लछमण भ्राता, रणधीर बड़ा बलकारी।
शत्रु को मसला डारे, धनुको तान तान तान ॥ २ ॥
संग हैं सुग्रीव की सेना सन्मुख कोई शूर पड़ेगा।
रण पीछे पैर धरेगा लेकर प्राण प्राण प्राण ॥ ३ ॥
सीता दे आप यश लीजे छोड़ो वीर हठ्य जा कीजे।
जाते न तुम्हारे छीजें प्रीतम मान मान मान ॥ ४ ॥

भजन १८

(चाल—पीले प्याला हो मतवाला प्याला प्रेम हरी रसका है)
अब प्रभु मालम हो उजियाला वेग छुड़ो तेरे घट घट कारे।
काल अनंत रुल्यो जग भीतर लख चौरासी में भटकारे ॥ अब० १ ॥
नर्क निगोद सहे दुख बहुते, तन तिर्यंच कलेश पटका है।
पशु भया अति बोझ लदाया भूखा न आस चाबुक सटकारे ॥ २ ॥
देव भया अति पुण्य उदयसे मिला न शांति अशुभ फटकारे।
फिरे भ्रमनमें झूठा तू निशदिन लख सुरांगना मन भटकारे ॥ ३ ॥
नर तन पाय गंवाया बालक तरुण कामिनी में अटकारे।
होते ही वृद्ध शिथिल भई इन्द्री, जगत सगा धमका मटकारे ॥ ४ ॥
अब भी चेत अरे मनमूरख पता लगा भवदधि तटकारे।
वीर प्रभो दया धर्मकी नौका जपो मगनमस्त रहि बटकारे ॥ ५ ॥

भजन १९

(चाल—लगो रे मन हरि विमुखन के संग)
करो रे मन सज्जन जनको संग।
नीचकी संगत नीच कहावे उत्तम जन सतसंग ॥ टेक ॥

चिन्तामणि नहिं काच कहावै, धेनु न होत कुरङ्ग ।
हंस न देखो वगुला कहतो, भुरंड न होत भुरंग ॥ १ ॥
चन्दनको कोऊ नीम न कहवत, सागर होत न गङ्ग ।
अमृतको नहि विष उच्चारत, खरको कहै न तुरङ्ग ॥ २ ॥
कोयलको कोई काक न कहवत, महिषि न होत मतंग ।
नहि सितार को कहत सरङ्गी, नहि मृदगको चंग ॥ ३ ॥
दिनको रैन नहीं कोइ कहवत रविको कहै न पतंग ।
चीर चन्द्र नहिं श्वेत दूधकों, कहै कोई कारो रङ्ग ॥ ४ ॥

भजन लावनी २०

चाल—रंगत ख्याल लंगड़ी ।

(एक गृहस्थीको एक महात्माको उपदेश)

पाकर के नरतन को प्राणी वृथा हाथसे नहिं खोना ।
जान सदा कंचन इसको तू कांचके धोके नहिं खोना ।
किये पुन्य शुभ कर्म पुरवले जव तैं यह नर तन पाई ।
तिसपर भी एक हाड़ मासको थैली ही तो है भाई ॥
मात पिताके रज वीरजसों, इस शरीरका उपजाई ।
है अशुचि घिनावनहार सदा जिसको तैं मलमलकर न्हाई ।
अव लागा तेल फुलेल लगानै तनिक ज्ञान लाता क्योंना ॥ १ ॥
वालपना तैं गयो खेल अव युवा अवस्थाने घेरा ।
कामिन संग कामांध हुआ और लगा करन मेरा मेरा ॥
धन कुटुम्ब और पुत्र मेरे हैं सकल सामग्री का डेरा ।
ज्ञानी ध्यानी धर्मी हूं मैं और सकल मान करैं वहुतेरा ॥
अरे वैठकर मदमें हस्ती पार न हो भवदधि छौना ॥जान०२॥

मैं ब्राह्मण हूं मैं क्षत्रिय हूं, मैं श्रेष्ठ मार्ग वैष्णव प्यारा।
भ्रम चौरासी चक्करका नहिं नाम मात्रसे छुटकारा॥
यद्यपि कष्ट होंगे समान सह भीम भस्म खोसा कारा।
पर गुण व नंव शुभ कर्म पूर्वक, देखो तो मानवमें धारा॥
तभी तो प्रात: सुप्रभ भास्कर राखृत चढ़ाते हैं क्योंना ॥श्राम॰३॥
चेत चेत नर है अचेत शिव मार्ग यही तोहे आमा है।
सीधा है मार्ग शुभ कर्म शाग, तेरा मनरुप होय कल्याना है॥
रिपु कर्मभार कर दया धार, सत्गुरु उपदेश सुनाना है।
महावीर मत हो अधीर, सब सुफल कार्य हो जाना है।
कहीं गुड मुकुट अठोनामका सावुन कर्म मैलको से धोना॥ ४॥

भजन २१

(चाल—मत बांधो गठरियां अपयश की)

मत बांधो गठरिया पापनकी।
कर कर अपरम सदा खिलायो महल मदरिया कंचनकी।
तनधन देह सभी क्षणभंगुर,बिनि बिनसै बिजुली घनकी ॥मत॰१॥
मनकी इच्छा सदा रही नहीं नारि सुता सुत धन जनकी।
रैन दिवस चिंतामें बीतत सुलगत ज्यों अग्नी वनकी॥ २॥
कौन है तू और कहांसे आया कौन सुखी इस नर तनकी।
पड़े करम फल सबहि भोगना पापी के मस्तक गिर गनकी॥ ३॥
परोपकार छोरसे धिसपी कूदी ये दया मनमोहन की।
कुड़ी करमकी घोले मनुवां हो बाह को मनवच वतरनकी॥ ४॥
प्राण पखेरू जब ये निकसे रहे आय सभी मनकि मनकी।
महावीर (भागचन्द) मत्रो अब कोई होय रही आपु तनकी॥५॥

भजन २२

(चाल—मै तो पियापै बलहारी पिया बोलै न बोलै)

प्रभु घटहीके पटमें तुम्हारी, जिया कहां कहां रे डोलै—टेक

पर्वत नदि श्मशान गया तू कुवे बावड़ी न्यारी-जिया० ॥ १ ॥

गोकुल जाय वृन्दावन ढूंढ़ा. पुरी अजुध्या सारी-जिया० ॥ २ ॥

भूत प्रेत काली कप्पाली, जंत्र मंत्र किये भारी जिया० ॥ ३ ॥

पीरों फकीरोंकी चादर चढ़ाई, कभी कवरोंपे सर दे मारी ॥ ४ ॥

मन्दिर जाय शिवाला देखा, तीरथ क्षेत्र हजारी ॥ जिया० ५ ॥

अव तो शांति सुधापियो प्यारी, वनो मन मन्दिरके पुजारी ॥ ६ ॥

भजन २३

—()—

गहो अब बांह प्रभु मेरी शरण तुमरी मैं हूं आया।
मोह दुष्ट ग्राहने मुझको भवोदधि आन अटकाया—टेक

मनुष्य तिर्यंच देवो नर्क ये चारों भंवर भारी।
अजी बस अष्ट कर्मों ने, मुझे इन बीच भटकाया ॥ १ ॥

जगत मिथ्यात सब पूजे, अहिंसा धर्मको भूला।।
निजातम त्याग मैं कंचन, वृथा ये कांचको ठाया ॥ २ ॥

दया दृष्टो करो स्वामी, तो उरझी वेग ही सुरझै।
तरन तारन तुम्हीं जिनजी, तुम्हारा ध्यानमें लाया ॥ ३ ॥

दयानिधि दीन रक्षक हो, निकालो दु:ख सागर से।
शरण "महावीर" है तुमरी, तुम्हारा पद कमल भाया ॥ ४ ॥

भजन २४

(चाल—बूढी काले का कैसा बहाना हुआ)

हाय कलियुगका कैसा जमाना हुआ
करके बचपन में ब्याह किया भारत तबाह
सोचे समझे कुछ नाह, हुई विधवा अब आह
कहीं विधवा का किस्सा उठाना हुआ ॥ हाय० १ ॥
बाल विधवा ये नार, रोवें ऐसे जिसप्रकार
कहें परियो परवार, किया हमको ख्वार
मेरे विपता में कोई सगा न हुआ ॥ हाय० २ ॥
सुनो विधवा कोई नार, हो पर पुरुषनके लार
करें छुप २ व्यभिचार, कुरीति होवे प्रचार
फिर तो पानी पुलिसको सुनाना हुआ ॥ हाय ३ ॥
जैनजाति प्रवीन तथा ऐसो क्यों कीन
बनती श्रावक हो दीन रोवें भारत पे दीन
जैनजातिका नाम घटाना हुआ ॥ हाय० ४ ॥
ब्याह बचपन का मात, छोड़ो सौभी समाज
करो विद्या रिवाज, त्यागो सारे कुकाज
होवे भारतको सबको जगाना हुआ ॥ हाय० ५ ॥
प्रथम ब्रह्मचर्य धराय, दूजे विद्या पढ़ाय
तीजे मनुष्य शुभपाय फिर कीजे विवाह
जागो महावीर होवे जमाना हुआ ॥ हाय० ६ ॥

भजन २५

(चाल—वता दे सखी कौन गली गये श्याम)

रे भजले प्राणी श्रीजिनवर गुणधाम (टेक)

हित चितसे तू करले सुमरन, त्याग मोह मद काम-तू० ॥१॥
नरतन पाय वृथा क्यों खोवत, जामन मरण ले थाम-तू० ।२॥
तन धन देख काहेको फूले, लोहू भरी यह चाम-तू० ॥ ३ ॥
गहो (वीर) अनमोल रत्नको, लगे न कछु भी दाम-तू० ॥ ४ ॥

भजन २६

(चाल—एक तीर फेंकता जा)

ऐ जैनके दुलारो ! मोह नींदको विसारो ।
निज देश जातिकी कुछ, अव तो दशा निहारो ॥ टेक ॥
अविद्याने देश सारा, किया नष्ट ये हमारा ।
ऐसी कलङ्कनीका, मुहकारा कर निकारो ॥ १ ॥ ऐ जैन०
आपसमें प्रेम राखो, नहिं फूट फलको चाखो ।
मैत्रिक हो भाव सबमें, सब राग द्वेष टारो ॥ २ ॥ ऐ जैन०
वनिये न तुम प्रमादी, वचपनकी त्यागो शादी ।
ब्रह्मचर्यकी धराकर, सन्तान, निज सुधारो ॥ ३ ॥ ऐ जैन०
विद्या प्रचार कीजै, इसमें न ढील दीजै ।
ब्रह्मचर्य आश्रम को, धन दे करो सहारो ॥ ४ ॥ ऐ जैन०
यदि उन्नति जो चाहो, शिल्पी कला बढाओ ।
मिश्रो स्वदेश वस्तु, मिलकर सभी प्रचारो ॥ ५ ॥ ऐ जैन०
कटि बांध मित्र आओ, कुछ करके तो दिखाओ ।
तभी देश जाति सुधरे, हो वीर जग उजारो ॥ ६ ॥ ऐ जैन०

भजन २७

(चाल—जय जय २ देव महेश पूजैं तुम्हें सकल नरनारी)

दीजै दर्शन आज जिनेश, भव वन भटकत बहु दिन बीते—टेक
क्व चौरासी जूनमें भटका कहिं आनन्द न पाया
आज कर्म शुभ उदय हुआ जो तुम शरणागत आया
निर्मल है तुमरा उपदेश, वैरी कर्म महारिपु जीते—दीजै० ॥ १ ॥
करकैं मिथ्या मतका खंडन सत्य मार्ग दिखलाया
ज्यों भानुकी किरण छिटकते तिमिर मैं करत हटाया
फिर कर तुमने देश विदेश, जगकी पुकारी मनरीतें—दीजै० ॥२॥
ऐसे देव छोड़ मैं सांची शरण काहुकी जाऊं
यह वरदान वीरचन्द मांगू नहिं भव वन भटकाऊं
मिटगये मम सम्पूर्ण कलेश कारज सरे है मोमन चीते—दीजै० ॥३॥

भजन २८

(चाल—यार यों झपि बतलाते है)

सभी स्वारथके नाते है तुम चेतो चेतन सभी सभी स्वारथके नाते हैं
मात कहै मै सेवक तुमरा, कह सेव जिनआप
तनिक भूमिके ऊपर दोनों कट कट मरते हाय
सर्व धन धान्य गंवाते हैं सभी स्वा० ॥ १ ॥
नार कहै मैं तुमरी पत्नी, तुम मेरे भरतार।
पती मारकर सतो होती, करती अत्याचार ॥
भेद नहि इसके पाते हैं सभी स्वा ॥ २ ॥
मित्र कहै बचपनसे हम तुम रहे हैं दोनो साथ
काम पड़े पर धोखा देत शुपकर करते घात ॥

भेद दिलहीमें छुपाते हैं, सभी स्वा० ॥ ३ ॥
पुत्र कहै मैं आज्ञाकारी, हूं चरणोंका दास ।
युवा होतही तनिक बातपर, अलग करे ग्रहवास ॥
बदल फिर नयन दिखाते हैं, सभी स्वा० ॥ ४ ॥
मात तात और कुटुम कबीला. सब स्वारथ संसार ।
महावीर भज श्रीजिनवरको, होजा भवदधि पार ॥
समय चूके पछताते हैं, सभी स्वा० ॥ ५ ॥

भजन २६

(चाल—थी किसे खबर ये धर्म पाल यवनों से आवेगा)

थी किसे खबर अकलंक गुरू आ हमें जगावेगा ?
कर सत्यधर्म परचार आन, जिन धर्म बतावेगा ॥
ब्रह्मचारी रूप निज करके, चटशाल बौद्धकी पढ़कै
दी पोल खोल सब बढके, धर्मका नाद बजावेगा ॥ १ ॥
बौद्धोंने देश जब घेरा, अकलंक बना तब चेरा ।
पा अवसर किया उजेरा, ज्ञान भानू चमकावेगा ॥ २ ॥
अहिंसा परमधर्म बतलाया, फिरसे दयाका वृक्ष बढ़ाया ।
आ सोतेसे हमें जगाया, धर्म उपदेश सुनावेगा ॥ ३ ॥
भाई छोटा सहोदर प्यारा,। निकलंक नयनका तारा ।
प्राण अपने धर्मपर वारा, धडसे सर जुदा करावेगा ॥ ४ ॥
अकलंक ऋषि तुम्हें, धन्य है दिया धर्म प्रचार तनमन हैं ।
रिपुका जो खडक तिरशन हैं, लहू भाईका चटावेगा ॥ ५ ॥
चेतो धर्मी भारत प्यारे, कैसे ऋषि तुमपै बलहारे ।
यशको बारम्बार पकारे. वीर नहटौरो गावेगा ॥

सकल धर्मका सार यही है, लेतू ग्रन्थ टटोल ॥ चेत० ॥ ४ ॥
जो भवसागर उतरा चाहे, नौका दया अमोल ।
कहत अहिंसा यह भारतसे, वीर वजाकर ढोल ॥ चेत० ॥ ५ ॥

भजन ३२

(चाल—छोड़ो न तुम धरमको०)

इतनी कृपा हो प्रभुजी, जव प्राण निकलें तनसे ।
हो समाधि मरण मेरा, छूटूं जनम मरणसे ॥ टेक ॥
यह लख चौरासी योनी, दिन रात घूमी दूनी ।
फिरू चारों गतिमें भ्रमता, दुखो होकै भवके वनसे ॥ १ ॥ इतनी०
धन धान्य मोह माया, परिग्रहने जो फंसाया ।
सवसे ममत्व छूटे, कहूं तन व मन वचनसे ॥ २ ॥ इतनी० ॥
गुरु जनसे नहीं सारे, पितु मात वन्धु प्यारे ।
सवसे क्षमा मैं चाहूं, छोटे वड़े स्वजनसे ॥ ३ ॥ इतनी० ॥
भागें कर्म चोर वैरी, वचै ज्ञान निधि ये मेरी ।
फिर वन्द न करै मुझको, इस चर्म पींजरनसे ॥ ४ ॥ इतनी० ॥
तप दर्श ज्ञान चरना, इनकी ही मुझको शरना ।
चारों करू अराधन, महावीर धीर पनसे ॥ इतनी० ५ ॥

३३ जिनवाणी शारदा स्तुति ।

(चाल—नाथ ऐसा दो आशिर्वाद)

मात दो विमल वुद्धि वरदान
शारद सरस्वति कहैं जिनवाणी, भगवती कृपानिधान ॥ मात०टेक
प्रभु मुखनसे प्रगट हुई, गुरू गौतम किये वखान ।
ज्ञान भानु त्रिभुवनमें फैला, हटा तिमिर अज्ञान ॥ १ मात० १ ॥

जिनेन्द्र गुण गानेमें ,नहिं तूने लगाया मनको
कुमतिके सङ्गहो भोगोमें गवाया धनको
हाय ज्ञान दर्पण न तेरे हाथ आया-जिया०
उत्तम नर देहपा हाय तूने नो योंही खोया
जानै मालूम नहि कवसे पडाथा सोया
अव भी उठहो सचेत मान्ले सत गुरूवानीं
प्यारे कुछ करले नहि कठिनहैं नर तन पानी
वीर चिन्तामणीको क्यों काच वनाया । जिया०

भजन ३६

(चाल—एक तीर फैंकनाजा तिरछी कमान वाले)

चेतन तु चेत प्यारे विरथा क्यों मन डुलावै
वैरीहै कर्म तेरे जिनसे तु नेह लावै ॥ टेक ॥
धन द्रव्य देख निसदिन, किस कारने तु फूला
चक्रीसे होगये है जिनका पता न पावै ॥ चेतन ० १ ॥
अर्जुन और भीम वलमें एक होगये हैं नामी
पर देखतो कहा है, जीवनको क्यों वितावै ॥ चेतन० २ ॥
कुछ कार्य श्रेष्ट करना, नेकीको लेके मरना
चाहे भलातो करले, मुह वाये काल आवै ॥ चेतन० ३ ॥
धन वाले मग्न धनमै, वलवाले मग्न तनमै
वीर हो मगन भजनमें, गुण क्योंन प्रभुके गावै ॥ चेतन० ४ ॥

भजन ३७

(चाल—अव तुम सोचो रे नर ज्ञानी)

अरे सुन मनवारे अभिमानी तने सीख न सतगुरु मानी,

मनुष देव तिर्यंच नर्कको ले चारों गति छानी।
पर वस्तुमें रहा सदा निज वस्तु नाय पिछानी ॥ अरे सुन० १॥
कुगुरु कुदेव कुमार्गमें लग को अपनी नित हानी।
काम मानुषको कभो न मिलो ऐसीकी नादानी ॥ अरेसुन० २॥
दर्शन ज्ञान चरन तोहि सम्पति कर्मोंने है ठगानी।
विषय वासनाके वसमेंहो सुध बुध सारी भुलानी ॥ अरे० ३॥
चतुर विना तोहि डोलत बीत्यो, इस भवदधिके पानी।
दया धर्मकी नौका चढ़के (धीरे) भजो जिनवानी ॥४ अरे० ॥

भजन १८

(चाल—बिदेशियोंको हम समझाने आयेगे)

कबतक भारत को अपने:सुचापे आयोगे
मोहकी निद्रामें सोकरके अंगो काम मार्गों—
और नास्तिक कहाये जाओगे, कब० (टेक)
भारती कुछ लाज नहीं अंग कहाते बाबा
कबतक अपनी को हाय नाम लजाते बाबा
अहिंसा धर्मके अंकुरको उठानेवाले
अबतो तुम जागिये है धर्म धरमे वालो
क्या तुम अंगोकी सच्चा घटाये जाओगे कबतक भारत० १॥
अबतो अवर्द्धमान वीरका तुम ध्यान कीजिये
आलस प्रमाद त्याग देश उपकार कीजिये
उठकरके सत्य धर्मका बस नाद कीजिये
मिथ्यामतकी तरहसे प्राण दान कीजिये
क्या दीपकसे भानु छिपाये जाओगे कबतक भारत २॥

ऊठ अबतो सत्य धर्मका डंका बजाइये
झंडा अहिंसा धर्मका चहुं दिशि फहराइये
नास्तिक और वाममार्गका निश्चय कराइये
जिन धर्मकी जय घोलकर संशय मिटाइये
वीर जबही तो उत्तम गिनाये जाओगे, कबतक भारत० ॥

भजन ३९

बड़ो है मेरो ये आतम बलवान,
निजको परखे लोकको जाने, ऐसो शक्तीवान।
सकल चराचर भेदको जानै हैगो नहीं अजान, बड़ो है मेरो० १॥
आतमामें परमातम पदको, करै आप पहिचान,
जैसी प्रभाहै सिद्ध जिनेशकी, निज करै तैसी बखान, बड़ोहै मेरो० २॥
जड़के बस, पड हुवो नहीं जड, हैं चेतन गुणवान।
कर्म पलटके अलग होतही, चमक उठेगो भान ॥ बडोहै मेरो० ॥३॥
भव बन तबतक भ्रमण करैये, जबतकये रहै मान
महावीर जब मन उचटैगो, जैहैं शिवपुर थान ॥ बडोहै मेरो० ॥४॥

भजन ४०

(चाल—पतीव्रत धर्मको जो पालन किया नार सीताने)
अबतो जागियोरे बहुते सोये जैन दुलारो (टेक)
जिस धनके सचय करनेमें, अतीपरिश्रम भरते,
उसी द्रव्यसे वेश्या नृत्य, और मौज माज हाय करते ॥ अबतो० १॥
बाल विवाह और कन्या विक्रय, वृद्ध विवाह मन भाया
सिरपर पोट पापकी बांधी भारतवर्ष डुबाया ॥ अबतो० २ ॥
[illegible] ल और मदिरा भावे

अपनको हाथ उत्तम कहते सनिक लाज नहीं आवे ॥भवतो०॥३॥

धर्म कर्मको भए किया, जनको बाहर ठहराया।
देव नागरी माया हमारी इसमें प्रेम घटाया ॥ भवतो० ॥४॥

शिल्प कलासे तुम्हें प्रमादी, काम नाम भव कीना।
मोह अविद्याके वस मैंहा तुमने ध्यान न दीना ॥ भवतो० ॥५॥

लाखों धनविना दम भरते, देते एक न पैसा।
जैन गुरुकुल और माश्रमको देते करो भरोसा ॥ भवतो० ६ ॥

दीन हीन भारतकी दशापर, ध्यान नहीं कुछ धरते
कितने भाई दुखी हमारे, भूखों नित्य है मरते ॥ भवतो० ॥७॥

वीर कभी कहलाओ जगमें बिछुड़े कंठ लगाओ
सत्य धर्मका भवतो प्यारो उठकर भाव बढ़ाओ ॥भवतो० ८॥

भजन ४१

जिया तूनो काहेको विरथा गमावे ऐसो नरजन फेर न पावे (टेक)

धारी पर्याय पशु थी सबते, कहो क्या तोहे बन आये
अब नरदेहो पाकर जियरा क्यों न प्रभु गुणगावे ॥जिया तूनो० २॥

इन्द्र धर्णेन्द्रये चाह करे निज कब मानुष तन पावे
करें तपस्या नरदेहीसों अमर मोक्षपद पाव ॥ जिया० तूनो० ३ ॥

तन धन धाम पे धाम सुता सुत, पुण्य उदयसे पावे।
कालके गालमें जगत रहेंहै, समो परी इह आवे ॥जिया तूनो० ॥३॥

सतगुरु सोख न मानरे भैया पार जो भवदधि आवो।
महावीर इस सिप मग चलिये जहांसे लौट न आये जियातूनो०॥४॥

भजन ४२

(चाल—श्रीराम मनुष्या बुलाओ मुझे)

पाके नरतनको,तूनेये क्या रे किया, औसर बढ़केमें फिर पछताओ जिया
तन धन सुता सुत जाल भरो फंस गया परवारमें

मोहके चक्करमें पड़, अटका अरे मझधार मैं
तूने सत गुरुका क्यों न सहारा लिया—पाके० १ ॥
नरतनसे कर उपकार कुछ, परभवमैं तू परवश पड़ै
इस कर्म वैरी संगसे, कहा कहा गले कहा २ लड़े
दया धर्म सुधा कोरे क्योंना पिया पाकै० २ ॥
कालरूपो देख हस्ती आ रहा वोह आ रहा।
आ अचानक कण्ठ दावे, कोई क्षण है जारहा ॥
चेतो वेग तो हे समझा रे दियो-पाके ० ३ ॥
दान पुन्यकर धर्म संचय, धार हिरदेमैं दया
पारहो भवदधसे तू, जप तपसे कर मनको नया
वीरो प्रभु के चरणमें लगाले जिया ॥ ४ ॥ पाकै०

भजन ४२

क्यों भटकै चहुगति चेतन, न सत गुरु सीख मानी है
विषय भोगोमें सुख माने, कुमति ये तूने ठानी है क्यों० १ ॥
भुजंग समभोग कहलावै, क्यों इनसे नेह तू लावै
नहीं फल अन्त कुछ पावै, चेत नहि तेरी हानी है क्यों० २ ॥
यही भव वन में भटकावे, जन्म मरणादि कर पावै
नर्क तिर्यंच दिखलावै, न पावे सुक्ख प्रानी है, क्यों० ३ ॥
जो इनसे प्रीति ना लाया, महत और सेख कहलाया
अचल उसनेही पद पाया, मिली शिव राजधानी है क्यों० ४ ॥
हुवा चेतन क्यों मदमाना, चित्त विषयनमें जो लाना
पाय नरतनको गर्माता, जो जल बुदबुद समाना है क्यों० ५ ॥
चेत चेतन जो बन आवै, फेर अवसर नहीं पावै
वीर तू क्यों नहीं ध्यावै, जो सत ओंकार बानी है क्यों० ६ ॥

भजन ४४

(चाल—अरेमन समझ गाफिल न हो सियाराम को सियाराम को)

अरेमन वृथा क्यों खोवता अरहन्तको २

बीते समय पछतायगा अरहन्तको अरहन्तको

ऐसे जो देव अरहन्त हैं, जिन कर्म कीने अस्त है

मव्योंको दे कोश पंथ हैं अरहन्तको ५ अरेमन० १ ॥

जिन तनकी ऐसी ज्योति है चन्द्र सूर्य फीके होत है

निर्मल ही मुख मुख होत है अरहन्तको २ अरेमन० २ ॥

जाके सदा उपदेशको धारें यति मुनि भेषको

छोडें परिग्रहक्लेशको अरहन्तको २ अरेमन० ३ ॥

मोह नवमें क्यों खोवता अवसर ये हाथसे जो रहा

अब देत कह क्यों जो रहा अरहन्तको २ अरेमन० ४ ॥

भजन ४५

(चाल— पहलूमें यार है मुझे उसकी खबर नहीं)

सबने हाय जैन धर्मको हमने छुपा दिया ॥

सम्मासियोंमें शास्त्र रख ताला लगादिया ॥

ऐसेमतिमन्द हम हुवे कुछ भी न मिली खबर ।

बस दीमकों चूहोंका हाय भोजन बनादिया ॥ १ ॥

चहुँओर शोर अबहुवा काम मार्ग का बड़ा

नहीं तो आपप्रभु वीरने हमको जगा दिया ॥ २ ॥

दिग विजय सकल जब किया मिथ्यातका खंडन

मंडन कर सत्य धर्म का डंका बजा दिया ॥३ ॥

सांचेको आंच है नहीं ये प्रगट जगतमें

उदयहो ज्ञान रविने अज्ञान तम हरा दिया ॥४॥

सता सतका निर्णय हुवा, भ्रम जाल हटगया

इस वीर जैनवानी ने शिवमग लगा दिया

भजन ४६

चाल—मात दो आशिर्वाद।

नाथ अव हरो मेरे भव फंद।

तुम स्वामि मैं सेवक तुमरा, हो तुम आनन्द कन्द।

सेवा करु सदा चरणों का वालक हूं मति मंद ॥ नाथ० १ ॥

मैं सदैव औगुणका धारी, तुम प्रभु गुणके वृन्द।

जन्म २ के पातक विनसै निर्खत जिन मुख चंद ॥ २ ॥

कभी शरीर एक इन्द्री धारा, कभी धरा चौ इन्द्र।

दो और तीनकी क्या है गिन्ती सहे अनेक दुख द्वन्द ॥ ३ ॥

वाल पना खेलतमें खोयो यन्या रहो अति अन्ध।

युवा अवस्थाके होते ही हाय हुवा कामंध ॥ नाथ० ४ ॥

वृद्ध अवस्था देखके रोयो नहिं गुंण गायो जिनंद।

अन्त मैं हाथ पसारे चल दिये छाड़ सकल जग धंध ॥ नाथ० ५ ॥

तुच्छ ये वालक दास आपका महावीर मतिमन्द।

सदा चर्णों में चाहे गिरना जैसे कमल मकरन्द ॥६ ॥

भजन ४७

चाल—ऐसे भौंदूसे फूटे मेरे भागरे।

चलना दूर पथिक तू जागरे

पी मद मोह वृथा क्यों सोवत

आलस अविद्याको वेगि तुम त्यागरे ॥चलना दूर० १॥

सत गुरु सीख धार कर माहीं,

झूठे गपोड़ोंसे दूर ही तू भाग रे ॥ चलना दूर० २ ॥

सत गुरु सीख धार उर माहीं—

काल बिसार विषय विष खावे
छाड़ मरास कयों पावें सु कागरे ॥ चलना दूर० ३॥

भक्ति में तन मन प्रभुको मगाले
गम्दे उधारो न मुलसी तू रागरे ॥चलना दूर० ४॥

आठों दिन होवे तेरा ये पीसे
छाड़ कुमारग सुमारगको लागरे ॥चलना दूर० ५॥

भजन ४८

चाल—मन तिरना भूमि पग धरना

मनुवा प्रभु-नाम सुमिरना
जैसी करनी तैसी भरनी पड़ेकरमोंका फल भरना ॥ मनु० टेक० ॥
तन धन य धाम सुत बंधु धामहो एक दिन सबसे बिछड़ना ॥मनु०१॥
कर पर उपकार नित दयाधार सतगुरु उपदेश ये धरना ॥मनु०२॥
श्री गुरु जिनेश मन भज हमेश जो चाहत भव दधि तरना ॥मनु० ३॥
सब काम काज गाज गये शंकराज रहवत ओऊ वीर समरना ॥मनु० ४॥

भजन ४९

(चाल—श्रीराम मनुष्या मुझको मुझे)

ऐसी छोड़ शरण प्रभु जाऊं कहां
मिले देव दया निधि मुझको जहां

तन मन है शांति मुद्रा-प्रदि नासापर करे
शांति छवि वैराग सूरत पदम आसन को धरे

इनके मैन दरस कर मैंने यहां —ऐसी० १ ॥
शुभ भाग्यसे अवसर मिला कैसे मैं आय बिसार दूं
साथ नहिं छोड़ू या अब तन मन तुम्हीपर वार दूं

मेरा पुन्य पकड़ ले आया यहां ऐसी० २ ॥

लाख चौरासीमें भटक कर सुख कहीं पाया नहीं

नरतन सिवा कहीं मोक्षमारग और वनलाया नहीं

भोगे दुक्ख हैं नर्कोंके मैंने महा ॥ ऐसीं० ३ ॥

हर भवमें रहूं चरणोंका चेरा' दासको ये आस है

छोड़ू नहीं संग एक पल, मुझको वड़ा विश्वास है

वीरा साथमै शिवपुर जाऊं वहां । ऐसी० ४ ॥

भजन ५०

(चाल—मधुवनमें, आज मचीहोरी-माधुवनमै)

दयासागर, मोरी सुनोंवानी, दयासागर

जडके सङ्गमें चेतन फस गया सगरो सुध बुध विसरानी दया० १॥

लेकर चतुर्गतिमें घूमा, अपनी कराई मन मानी दया० २ ॥

लख चौरासी भ्रमण कराया, मिला न कहीं अनजल-पानी दया० ३॥

कहां तक अपनी कहू विथामें, सब तुम जानो अन्तरयामी दया० ४॥

दर्शन ज्ञान चरित्र मेरोधन, कर्म चोर ठगा दुखदानी दया० ५ ॥

वैरन तृष्णा मोहे दुख देवें, मोह जलमें उरझानी दया० ६ ॥

भाग भले तुम दर्शन पाये, अवकृपा करो केवल ज्ञानी दया० ७ ॥

दो ऐसो वरदान वीरको, अन्त मिले शिव-सुख दानी दया० ८॥

भजन ५१

दादरा

वेगि भवदधिसे मोको निकारो प्रभू० (टेक)

पडकर चक्र करमके फन्दे नहि ज्ञान अज्ञान विचारो प्रभू० १ ॥

काल अनन्त चौरासी भटका' अव भुजवल वलहारी प्रभु० २ ॥

पुन्य उदयसे शुभकुल पाकर, अवमैं नरतन धारो प्रभु० ३॥

तिसमें सब स्वारथके साथी, मात पिता परिवारो प्रभु० ४ ॥

सुख सम्पतिके साथी सबके दुखमें नहिं कोउ थारो० ५ ॥

दास वीरको आस तिहारी कर कृपो दयाकी उधारो प्रभु० ६ ॥

भजन ५२

(चाल—ज्ञान दयागर गुणके सागर सीस निवाऊं तुम्हें परमेश)

ज्ञान प्रकाशक, भव तम नाशक, प्रथम मनाऊं तुम्हीं जिनेश ।

तुम गुण गावें, ध्यान लगावें सुर नर सारे शची दिनेश ॥

पापको सुमारे, धर्म विचारे, पाते नित्य शिव यही हमेश ।

मिथ्यात्व हटाया, सत्य दिखाया, दूरकिया सब मानका क्लेश ॥

दिया सोतेसे जगा, देख मोह तम भगा ।

सब मार्गमें लगा, जिन धर्म में लगा ॥

कृपा ऐसीहो जिनन्द छूटे सारी भवके फन्द ।

मति बुद्धिके हैं मंद, शरण आयो वीर चन्द ॥

ज्ञान प्रकाशक, भव तम नाशक, प्रथम मनाऊं तुम्हीं जिनेश ॥

भजन ५३

(चाल—हमारा मेरे कामका मोती)

पहनोरी पहनो धर्मशील धोती

कर्मों की कीच धुलावन कारन सत्यके साबुन धोती-पहनो १ ॥

दया धर्ममें रंगकर पहनो चमक उठेगी ज्योती-पहनो २ ।

सम्यक दर्शन ज्ञान चरणके, बहुत टांकदो मोती-पहनो० ३ ॥

हीरे साड़ी कुविदे पहने पहने न मानी गोती-पहनो० ४ ॥

मैली धरें जो शीलकी साड़ी भव भवमें फिरें रोत-पहनो ५ ॥

पहले पहनी इस साड़ीको सीता द्रोपदीसी होती-पहनो ६ ॥

मिले मनुष भवहीमें ये साड़ी या अवसर क्यों खोती-पहनो ७ ॥

ज्ञान वचन महावीर बोलके, मोह नींद क्यों सोती-पहनो ८ ॥